अंगुत्तर-निकाय

[प्रथम भाग]

भदन्त आनन्द कौसल्यायन

प्रकाशक
महाबोधि सभा

अंगुत्तर-निकाय

[प्रथम भाग]

[एकककनिपात, दुकनिपात तथा तिकनिपात]

Buddhist Research Library,
Buddha Vihar, Risaldar Park,
LUCKNOW-226001.

अनुवादक
भदन्त आनन्द कौसल्यायन

प्रकाशक
महाबोधि सभा, कलकत्ता

प्रकाशक
देवप्रिय बलीसिंह
मंत्री,
महाबोधि सभा, कलकत्ता
● ● ●

मूल्य—
सात रुपये
● ● ●

मुद्रक—
मोहनलाल भट्ट
राष्ट्रभाषा प्रेस, वर्धा
● ● ●

Buddhist Research Library.
Buddh Vihar ... dar Park,
LUCKNOW-226001.

गौरवार्हं

विद्यालंकारपरिवेणाधिपति

किरिवत्तुडुवे पञ्ञासार नायकमहास्थविरपादयन्‌वहंसे

वेतटयि



प्रकाशकीय

पवित्र पालि-त्रिपिटक के सुत्तपिटक के पांच निकायों में अंगुत्तर-निकाय का विशिष्ट-स्थान है। शेष चार निकायों का अधिकांश भाग अनूदित हो चुकने पर भी अंगुत्तर-निकाय अभी तक हिन्दी में अनूदित नहीं ही हुआ था। हम भदन्त आनन्द कौसल्यायन के चिर-कृतज्ञ हैं कि उन्होंनें 'जातक' जैसे महान अनुवाद-कार्य को समाप्त कर अब अंगुत्तर-निकाय के अनुवाद-कार्य को हाथ में लिया है और हमें यह सूचना देते हुये हर्ष होता है कि अपेक्षाकृत कम ही समय में उन्होंने हमें इस योग्य बनाया है कि हम अंगुत्तर-निकाय के प्रथम-भाग का हिन्दी अनुवाद अपने प्रेमी पाठकों की भेंट कर सकें।

हम केन्द्रीय सरकार के भी कृतज्ञ हैं जिसकी कृपा से हमें शास्त्रीय ग्रन्थों के मूल तथा अनुवाद छापने के लिये चार हजार रुपये वार्षिक का अनुदान प्राप्त है।

यदि हमें यह सरकारी अनुदान प्राप्त न हो तो हमें इसमें बड़ा सन्देह है कि हम इस पवित्र-कार्य्य को करने में समर्थ सिद्ध होंगे।

४ ए, बंकिम चटर्जी स्ट्रीट,
कलकत्ता—१२

मंत्री
महाबोधि सभा

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स ।

प्रस्तावना

सूत्र-पिटक, विनय-पिटक तथा अभिधर्म-पिटक ही बौद्धधर्म के प्रामाणिक त्रिपिटक हैं। इनकी भाषा, इनका रचना-काल, इनका सम्पादन, इनमें विद्यमान् भगवान् के उपदेश विद्वानों की ऊहापोह के विषय हैं ही।

सूत्र-पिटक दीर्घ-निकाय, मज्झिम निकाय, संयुक्त-निकाय, अंगुत्तर-निकाय तथा खुद्दक-निकाय नामक पाँच निकायों में विभक्त माना जाता है। अंगुत्तर-निकाय की रचना-शैली सभी दूसरे निकायों से विशिष्ट है। इसके 'एकक' निपात में एक ही एक धर्म (= विषय) का वर्णन है, 'दुक निपात' में दो दो धर्मों (= विषयों) का; इसी प्रकार 'तिक-निपात' में तीन तीन विषयों का। यही क्रम पूरे ग्यारह निपातों तक चला जाता है। प्रत्येक निपात में अंकोत्तर बृद्धि होती चली गई है, इसी से अंगुत्तर-निकाय नाम सार्थक है।

दीर्घ-निकाय, मज्झिम-निकाय, संयुक्त-निकाय, तथा खुद्दक-निकाय के भी कुछ ग्रन्थों का हिन्दी रूपान्तर हो चुकने के बाद अंगुत्तर-निकाय ही सूत्र-पिटक का वह महत्वपूर्ण-निकाय शेष रहा था, जिसका अनुवाद आज से बहुत पहले होना चाहिये था। खेद है कि वर्तमान अनुवादक को भी इससे पहले इस पुण्य-कार्य को हाथ में लेने का सौभाग्य न प्राप्त हो सका।

जिस कालामा-सूक्त की बौद्ध वाङमय में ही नहीं, विश्वभर के वाङमय में इतनी धाक है; जो एक प्रकार से मानव-समाज के स्वतन्त्र-चिन्तन तथा स्वतन्त्र-आचरण का घोषणा-पत्र माना जाता है, वह कालामा-सूक्त इसी अंगुत्तर-निकाय के तिक-निपात के अंतर्गत है। भगवान् ने उस सूक्त में कालामाओं को आश्वस्त किया है--

"हे कालामो आओ। तुम किसी बात को केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात अनुश्रुत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात परम्परागत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात इसी प्रकार कही गई है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे धर्म-ग्रन्थ (पिटक) के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह तर्क-सम्मत है, केवल इस

लिये मत स्वीकार करो कि यह न्याय (-शास्त्र) सम्मत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि आकार-प्रकार सुन्दर है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे मत के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाले का व्यक्तित्व आकर्षक है, केवल इस लिअे मत स्वीकार करो कि कहने वाला श्रमण हमारा पूज्य है। हे कालामो ! जब तुम आत्मानुभव से अपने आप ही यह जानो कि ये बातें अकुशल हैं, ये बातें सदोष हैं, ये बातें विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दित हैं, इन बातों के अनुसार चलने से अहित होता है, दुःख होता है—तो हे कालामो ! तुम उन बातों को छोड़ दो। (पृष्ठ १९२)

इन पंक्तियों का लेखक तो इस सूक्त का विशेष ऋणी है, क्योंकि आज से पूरे ३० वर्ष पूर्व, भगवान् का जो उपदेश विशेष रूप से उसके त्रिशरणागमन का निमित्त कारण हुआ था, वह यही कालामा-सूक्त ही था।

उसके तीन वर्ष बाद लंदन में रहते समय उसे एक वयो-वृद्ध अंग्रेज द्वारा लिखित एक ग्रन्थ पढ़ने को मिला। नाम था——संसार का भावी-धर्म। देखा, उसके मुख-पृष्ठ पर भी यही कालामा-सूक्त ही उद्धृत है।

जहाँ तक अंगुत्तर-निकाय के मूल पालि-पाठ की बात है अनुवादक ने यह अनुवाद कार्य्य मुख्य रूप से रैवरैण्ड रिचर्ड मारिस एम. ए., एल. एल. डी. द्वारा सम्पादित तथा सन १८८५ में पाली टैक्सर सोसाइटी, लंदन द्वारा प्रकाशित पालि-संस्करण से ही किया है। यूँ बीच-बीच में वह सिंहल-संस्करण तथा स्यामी संस्करण को भी देख लेता ही रहा है।

निस्सन्देह विनम्र अनुवादक की प्रवृत्ति अर्थकथाओं को मूल के प्रकाश में ही समझने की है, तो भी आचार्य्य बुद्धघोषकृत अंगुत्तर-निकाय की मनोरथ-पूर्णी अट्ठकथा का भी उस पर अनल्प उपकार है।

इस पहले भाग में अंगुत्तर-निकाय के प्रथम तीन निपातों का ही समावेश हो सका है। शेष आठ निपातों के लिये अनुमानतः पाँच अन्य भाग अपेक्षित होंगे। किसी भी प्रस्तावना में अंगुत्तर-निकाय के विस्तृत अध्ययन का समय तो कदाचित् उसका अनुवाद-कार्य पूरा होने पर ही आयेगा।

महाबोधि सभा के मन्त्री श्री देवप्रिय बलीसिंह का मैं चिर-कृतज्ञ रहूँगा जिन्होंने अंगुत्तर-निकाय के प्रकाशन का भार ग्रहण कर मुझे इस ओर से निश्चिन्त किया।

अपने स्नेह-भाजन भिक्षु धर्म रक्षित का भी में आभारी हूँ कि जिन्हें जब यह मालूम हुआ कि मैं ने अंगुत्तर-निकाय के अनुवाद-कार्य को हाथ में लिया है, तो उन्होंने अपनी अजस्र लेखनी को अंगुत्तर-निकाय के अनुवाद-कार्यकी ओर से मोड़ कर 'संयुक्त-निकाय' तथा 'विशुद्धि-मार्ग' सदृश महान ग्रन्थों के अनुवाद की ओर मोड़ दिया। वर्षों पूर्व भिक्षु धर्म रक्षित की लेखनी से जो आशायें बंधीं थीं, वे सर्वांश में पूरी हो रही हैं। बधाई।

राष्ट्रभाषा प्रेस (वर्धा) के सम्पूर्ण सहयोग के बिना भी यह 'स्वल्पारम्भ' इतना 'क्षेमकर' न होता, जिसके लिये मैं राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के मन्त्री भाई मोहनलालजी भट्ट तथा प्रेस के सभी सम्बन्धित कर्मचारियों का विशेष ऋणी हूं।

राजेन्द्र-भवन, वर्धा
२८-९-५७

आनन्द कौसल्यायन

Buddhist Research Library,
Buddha Vihar, Risaldar Park,
LUCKNOW-226001.

अंगुत्तर निकाय

उन भगवान अरहत सम्यक सम्बुद्धको नमस्कार है।

पहला–निपात

(१)

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान[1] श्रावस्ती में अनाथपिण्डिक के आराम जेतवन में विहार करते थे।

उस समय भगवान ने भिक्षुओं को सम्बोधित किया—

"भिक्षुओ।"

"भदन्त" कह कर भिक्षुओं ने प्रति-वचन दिया।

भगवान ने ऐसा कहा—

"भिक्षुओ, मैं और किसी दूसरे रूप को नहीं देखता जो पुरुष के चित्त को इस प्रकार दबोच कर बैठ जाता है, जैसे स्त्री का रूप।

"स्त्री का रूप, भिक्षुओ! पुरुष के चित्त को दबोचकर बैठ जाता है।

"भिक्षुओ, मैं और किसी दूसरे शब्दको नहीं देखता जो पुरुष के चित्त को इस प्रकार दबोच कर बैठ जाता है जैसे स्त्री का शब्द।

---

१ भगवा ति वचनं सेट्ठं, भगवा ति वचनमुत्तमं,
गरुगारवयुत्तो सो भगवा तेन वुच्चति ॥

['भगवान' श्रेष्ठ वचन है, 'भगवान' उत्तम वचन है, गौरव-युक्त होने से वे (तथागत) भगवान कहलाते हैं।]

"स्त्री का शब्द, भिक्षुओ ! पुरुष के चित्त को दबोच कर बैठ जाता है।

"भिक्षुओ, मैं और किसी दूसरी गन्ध को नहीं देखता जो पुरुष के चित्त को इस प्रकार दबोच कर बैठ जाती है जैसे स्त्री की गन्ध।

"स्त्री की गन्ध, भिक्षुओ ! पुरुष के चित्त को दबोच कर बैठ जाती है।

"भिक्षुओ, मैं और किसी दूसरे रस को नहीं देखता जो पुरुष के चित्त को इस प्रकार दबोच कर बैठ जाता है जैसे स्त्री का रस।

"स्त्री का रस, भिक्षुओ ! पुरुष के चित्त को दबोच कर बैठ जाता है।

"भिक्षुओ, मैं और किसी दूसरे स्पर्श को नहीं देखता जो पुरुष के चित्त को इस प्रकार दबोच कर बैठ जाता है जैसे स्त्री का स्पर्श।

"स्त्री का स्पर्श, भिक्षुओ ! पुरुष के चित्त को दबोच कर बैठ जाता है।

"भिक्षुओ, मैं और किसी दूसरे रूप को नहीं देखता जो स्त्री के चित्त को इस प्रकार दबोच कर बैठ जाता है जैसे पुरुष का रूप।

"पुरुष का रूप, भिक्षुओ ! स्त्री के चित्त को दबोचकर बैठ जाता है।

"भिक्षुओ, मैं और किसी दूसरे शब्द को नहीं देखता जो स्त्री के चित्त को इस प्रकार दबोच कर बैठ जाता है जैसे पुरुष का शब्द।

"पुरुष का शब्द, भिक्षुओ ! स्त्री के चित्तको दबोच कर बैठ जाता है।

"भिक्षुओ, मैं और किसी दूसरी गन्ध को नहीं देखता जो स्त्री के चित्त को इस प्रकार दबोच कर बैठ जाती है, जैसे पुरुष की गन्ध।

"पुरुष की गन्ध, भिक्षुओ ! स्त्री के चित्त को दबोच कर बैठ जाती है।

"भिक्षुओ, मैं और किसी दूसरे रस को नहीं देखता जो स्त्री के चित्त को इस प्रकार दबोचकर बैठ जाता है जैसे पुरुष का रस।

"पुरुष का रस, भिक्षुओ ! स्त्री के चित्त को दबोच कर बैठ जाता है।

"भिक्षुओ, मैं और किसी दूसरे स्पर्श को नहीं देखता जो स्त्री के चित्त को इस प्रकार दबोच कर बैठ जाता है जैसे पुरुष का स्पर्श।

"पुरुष का स्पर्श, भिक्षुओ ! स्त्री के चित्त को दबोचकर बैठ जाता है।"

(२)

"भिक्षुओ, मैं और कोई ऐसी दूसरी बात नहीं देखता जिसके फलस्वरूप अनुत्पन्न काम-चेतना उत्पन्न होती है और उत्पन्न काम-चेतना बार बार उत्पन्न होती तथा बढ़ती है, जैसे यह भिक्षुओ, शुभ-निमित्त।[1]

"शुभ-निमित्त का ही भिक्षुओ, बेढंगा विचार करने से अनुत्पन्न काम-चेतना उत्पन्न होती है और उत्पन्न काम-चेतना बारबार उत्पन्न होती तथा बढ़ती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई ऐसी दूसरी बात नहीं देखता जिसके फलस्वरूप अनुत्पन्न क्रोध उत्पन्न होता है, और उत्पन्न क्रोध बार बार उत्पन्न होता तथा वृद्धि को प्राप्त होता है जैसे यह भिक्षुओ विरोधी-भाव।

"विरोधी-भाव का ही भिक्षुओ, बेढंगा विचार करने से अनुत्पन्न क्रोध उत्पन्न होता है, उत्पन्न क्रोध बार बार उत्पन्न होता तथा बढ़ता है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई ऐसी दूसरी बात नहीं देखता जिसके फलस्वरूप अनुत्पन्न मानसिक तथा शारीरिक आलस्य उत्पन्न होता है और अुत्पन्न आलस्य बार बार उत्पन्न होता तथा बढ़ता है, जैसे यह भिक्षुओ अरुचि, अहदी-पन, जम्हाई लेना, भोजनान्तर प्रमाद तथा चित्त की तन्द्रा।

"जिसका चित्त तन्द्रा-ग्रस्त है, भिक्षुओ, उसीमें अनुत्पन्न आलस्य उत्पन्न होता है, उत्पन्न आलस्य बार बार उत्पन्न होता तथा बढ़ता है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई ऐसी दूसरी बात नहीं देखता जिसके फलस्वरूप अनुत्पन्न उद्धतपन तथा अनुताप उत्पन्न होता है और उत्पन्न उद्धतपन तथा अनुताप बार बार उत्पन्न होता तथा बढ़ता है, जैसे यह भिक्षुओ, चित्तकी अशान्ति।

"अशान्त-चित्त में ही भिक्षुओ, अनुत्पन्न उद्धतपन तथा अनुताप उत्पन्न होता है और उत्पन्न उद्धतपन तथा अनुताप बार बार उत्पन्न होता तथा बढ़ता है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई ऐसी दूसरी बात नहीं देखता जिसके फल-स्वरूप अनुत्पन्न संशय उत्पन्न होता है और उत्पन्न संशय बार बार उत्पन्न होता तथा बढ़ता है जैसे यह भिक्षुओ बेढंगेपनसे विचार।

---

१ पुरुष-लिंग अथवा स्त्री-लिंग का परस्पर एक दूसरे को सुन्दर करके देखना।

" बेढंगेपन से विचार करने से ही भिक्षुओ अनुत्पन्न संशय उत्पन्न होता है और उत्पन्न संशय बार बार उत्पन्न होता तथा बढ़ता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई ऐसी दूसरी बात नहीं देखता जिसके फलस्वरूप अनुत्पन्न काम-चेतना अनुत्पन्न रहती है और उत्पन्न काम-चेतना का प्रहाण होता है जैसे यह भिक्षुओ अशुभ-निमित्त[1]।

" अशुभ-निमित्त पर भिक्षुओ ढंगसे विचार करने से अनुत्पन्न काम-चेतना उत्पन्न नहीं होती और उत्पन्न काम-चेतनाका प्रहाण होता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जिसके फलस्वरूप अनुत्पन्न क्रोध अनुत्पन्न रहता है और उत्पन्न क्रोध का प्रहाण होता है, जैसे यह भिक्षुओ चित्तकी विमुक्ति मैत्री (-भावना)।

" चित्त की विमुक्ति मैत्री-(भावना) पर ढंग से विचार करने से अनुत्पन्न क्रोध उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न क्रोधका प्रहाण होता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जिसके फल-स्वरूप अनुत्पन्न मानसिक तथा शारीरिक आलस्य उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न आलस्यका प्रहाण होता है, जैसे यह भिक्षुओ, आरम्भिक-प्रयत्न, अधिक-प्रयत्न और सर्वाधिक-प्रयत्न।[2]

" जो प्रयत्न-शील है, भिक्षुओ, उस में अनुत्पन्न आलस्य उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न आलस्यका प्रहाण होता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिसके फल-स्वरूप अनुत्पन्न उद्धतपन तथा अनुताप उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न उद्धतपन तथा अनुताप का प्रहाण होता है, जैसे यह भिक्षुओ, चित्त की शान्ति।

" शान्त-चित्त में भिक्षुओ, अनुत्पन्न उद्धतपन तथा अनुताप उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न उद्धतपन तथा अनुताप का प्रहाण होता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिसके फल-स्वरूप अनुत्पन्न संशयालुपन उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न संशयालुपन का प्रहाण होता है, जैसे यह भिक्षुओ ढंग से विचार करना।

---

१ पुरुष-लिंग अथवा स्त्री-लिंग का परस्पर एक दूसरेके जिगुप्सित-रूपपर विचार करना।
२ आरम्भ-धातु, निक्खम-धातु तथा परक्कम-धातु।

" ढंग से विचार करने से भिक्षुओ, अनुत्पन्न संशयालुपन उत्पन्न नहीं होता उत्पन्न संशयालुपन का प्रहाण होता है।"

(३)

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी वस्तु नहीं देखता जो (योग)-अभ्यास न करने से इस प्रकार निकम्मी हो जाती है, जैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, अभ्यास न करने से चित्त निकम्मा हो जाता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी वस्तु नहीं देखता जो (योग)–अभ्यास करने से इतनी काम की हो जाती है, जैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, अभ्यास करने से चित्त काम का हो जाता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी वस्तु नहीं देखता जो (योग)-अभ्यास न करने से इतनी महान अनर्थकारी हो जाती है, जैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, अभ्यास न करने से चित्त महान अनर्थकारी हो जाता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी वस्तु नहीं देखता जो (योग)-अभ्यास करने से इतनी महान् कल्याणकारी हो जाती है, जैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, अभ्यास करने से चित्त महान कल्याणकारी हो जाता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता जो (योग)-अभ्यास न करने से, जो अप्रकट रहने से[१] इतनी महान् अनर्थ-कारी हो जाती है, जैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, अभ्यास न करने से, अप्रकट रहने से चित्त महान् अनर्थकारी हो जाता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता जो (योग)-अभ्यास करने से, जो प्रकट होने से इतनी महान् कल्याणकारी हो जाती है, जैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, अभ्यास करने से, प्रकट होने से चित्त महान कल्याणकारी हो जाता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता जो (योग)-अभ्यास न करने से, बार बार अभ्यास न करने से, इतनी महान अनर्थकारी हो जाती है, जैसे यह चित्त।

---

१ जिस चित्त की शक्तियाँ अप्रकट हैं, उस चित्त को भी अप्रकट ही जानना चाहिये।

" भिक्षुओ, अभ्यास न करनेसे, बार बार अभ्यास न करने से चित्त महान् अनर्थकारी हो जाता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता जो (योग)-अभ्यास न करने से, बार बार अभ्यास करने से इतनी महान कल्याणकारी हो जाती है, जैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, अभ्यास करने से चित्त महान् कल्याणकारी हो जाता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता, जो (योग)-अभ्यास करने से, बार बार अभ्यास न करने से इस प्रकार दुःख-दायी हो जाती है, जैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, अभ्यास न करने से, बार बार अभ्यास न करने से चित्त बहुत दुःख-दायी हो जाता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता, जो (योग)-अभ्यास करने से, बार बार अभ्यास करने से इतनी सुख-दायी हो जाती है, जैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, अभ्यास करने से, बारबार अभ्यास करने से चित्त सुख-दायी हो जाता है।"

(४)

" भिक्षुओ,मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता जिसका यदि दमन न किया जाय तो ऐसी अनर्थकारी हो, चैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, दमन न किया गया चित्त महान् अनर्थकारी होता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता जो दमन किये जानेपर इतनी कल्याणकारी हो, चैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, दमन किया गया चित्त महान् कल्याणकारी होता है।

" भिक्षुओ मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता जो अरक्षित रहने पर ऐसी अनर्थकारी हो, जैसे यह चित्त।

" भिक्षुओ, अरक्षित चित्त बहुत अनर्थकारी होता है।

" भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता, जो सुरक्षित रहने पर ऐसी कल्याणकारी हो, जैसे यह चित्त।

"भिक्षुओ, सुरक्षित चित्त बहुत कल्याणकारी होता है।

(शब्दों की भिन्नता है, अर्थ-भेद नहीं)

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता, जो असंयत होने पर महान् अनर्थकारी होती है, जैसे यह चित्त।

"भिक्षुओ, असंयत चित्त बहुत अनर्थकारी होता है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता, जो संयत रहने पर ऐसी कल्याणकारी हो, जैसे यह चित्त।

"भिक्षुओ, संयत चित्त बहुत कल्याणकारी होता है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता, जो दमन न किये जाने पर, अरक्षित रहने पर और असंयत रहने पर अैसी अनर्थकारी हो, जैसे यह चित्त।

"भिक्षुओ, चित्त दमन न किये जाने पर, अरक्षित रहने पर और असंयत रहने पर महान अनर्थकारी होता है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता जो दमन किये जाने पर, सुरक्षित रहने पर, और संयत रहने पर ऐसी कल्याणकारी हो, जैसे यह चित्त।

"भिक्षुओ, चित्त दमन किये जाने पर, सुरक्षित रहने पर और संयत रहने पर महान् कल्याणकारी होता है।"

(५)

"जैसे भिक्षुओ, शालि (धान) की बालि हो अथवा जौ की बालि हो और वह ठीक से न रखी गई हो तथा उस पर हाथ या पाँव पड़ जाय तो इसकी सम्भावना नहीं है कि उससे हाथ या पाँव बिंध जायगा अथवा उनमें से रक्त निकल आयेगा। यह ऐसा क्यों? भिक्षुओ, शालि की बालि के ठीक से न रखी होने के कारण। इसी प्रकार भिक्षुओ, यह सम्भव नहीं है कि कोई भिक्षु ठीक न रखे गये चित्त से अविद्या को बींध सकेगा, विद्या को प्राप्त कर सकेगा तथा निर्वाण को साक्षात कर सकेगा। यह ऐसा क्यों? चित्त के ठीक से रखे न रहने के कारण।

"जैसे भिक्षुओ, शालि (धान) की बालि हो अथवा जौ की बालि हो और वह ठीक से रखी गई हो तथा उस पर हाथ या पाँव पड़ जाय तो इसकी सम्भावना है कि उस से हाथ या पाँव बिंध जायगा अथवा उनमें से रक्त निकल आयेगा। यह

ऐसा क्यों ? भिक्षुओ, शालि की बालि के ठीक से रखे होने के कारण। इसी प्रकार, भिक्षुओ, यह सम्भव है कि वह भिक्षु ठीक रखे गये चत्त से अविद्या को बींध सकेगा, विद्याको प्राप्त कर सकेगा तथा निर्वाण को साक्षात कर सकेगा। यह ऐसा क्यों ? चित्त के ठीक से रखे रहने के कारण।

"यहाँ भिक्षुओ, मैं एक द्वेष-युक्त आदमी के चित्त को अपने चित्त से पहचानता हूँ कि यदि यह व्यक्ति इसी समय मर जाये तो ऐसा होगा जैसे कि लाकर नरक में डाल दिया गया हो। यह ऐसा क्यों? भिक्षुओ, इसका चित्त ही द्वेष-युक्त है। भिक्षुओ, चित्त के द्वेष-युक्त होने के कारण ही यहाँ कुछ प्राणी शरीर भेद होने पर मरने के अनन्तर अपाय, दुर्गति, नरक, जहन्नुम में पैदा होते हैं।

"यहाँ भिक्षुओ, मैं एक (श्रद्धा)-प्रसन्न-चित्त आदमी के चित्त को अपने चित्त से पहचानता हूँ कि यदि यह व्यक्ति इसी समय मर जाये तो ऐसा होगा जैसे कि लाकर स्वर्गमें डाल दिया गया हो। यह ऐसा क्यों ? भिक्षुओ, इसका चित्त ही श्रद्धा-युक्त है। भिक्षुओ, चित्त के श्रद्धा-युक्त होने के कारण ही यहाँ कुछ प्राणी शरीर-भेद होने पर, मरने के अनन्तर सुगति, स्वर्ग-लोक में उत्पन्न होते हैं।

"जैसे भिक्षुओ, पानी का तालाब गँदला हो, चंचल हो और कीचड़-युक्त, हो वहाँ किनारे पर खड़े आँखवाले आदमी को न सीपी दिखाई दे, न शंख, न कंकर दिखाई दें, न पत्थर और न चलती हुई अथवा स्थिर मछलियाँ ही दिखाई दें। यह ऐसा क्यों ? भिक्षुओ, पानी के गँदला होने के कारण। इसी प्रकार भिक्षुओ, इसकी संभावना नहीं है कि वह भिक्षु मैले चित्त से आत्म-हित को जान सकेगा, पर-हित को जान सकेगा, उभय-हित को जान सकेगा और सामान्य मनुष्य-धर्म से बढ़कर विशिष्ट आर्य-ज्ञान-दर्शन को जान सकेगा। यह ऐसा क्यों ? भिक्षुओ, चित्त के मैले होनेके ही कारण।

"जैसे भिक्षुओ, पानी का तालाब अच्छा हो, स्वच्छ हो, साफ हो वहाँ किनारे पर खड़े आँखवाले आदमी को सीपी भी दिखाई दे, शंख भी दिखाई दे, कंकर भी दिखाई दे, पत्थर भी दिखाई दे और चलती हुई अथवा स्थिर मछलियाँ भी दिखाई दें। यह ऐसा क्यों ? भिक्षुओ, पानीके साफ होने के कारण। इसी प्रकार भिक्षुओ, इसकी संभावना है कि वह भिक्षु निर्मल चित्त से आत्म-हित को जान सकेगा, पर-हित को जान सकेगा, उभय-हित को जान सकेगा और सामान्य

मनुष्य-धर्म से बढ़कर विशिष्ट आर्य-ज्ञान-दर्शन को जान सकेगा। यह ऐसा क्यों? भिक्षुओ, चित्त के निर्मल होने के ही कारण।

"भिक्षुओ, जितने भी वृक्ष हैं उनमें कोमलता तथा कमनीयता की दृष्टि से चन्दन ही श्रेष्ठ कहलाता है, उसी प्रकार भिक्षुओ, मैं एक भी ऐसी वस्तु नहीं देखता जो अभ्यास से ऐसी मृदु तथा कमनीय हो जाती हो, जैसे यह चित्त।

"भिक्षुओ, चित्त (योग)-अभ्यास करने से, बार बार अभ्यास करने से मृदु हो जाता है तथा कमनीय हो जाता है।

"भिक्षुओ, मैं दूसरी कोई भी एक ऐसी वस्तु नहीं देखता जो इतनी शीघ्र परिवर्तन-शील हो जैसे कि यह चित्त। भिक्षुओ, चित्त इतना शीघ्र परिवर्तन-शील है कि इस की उपमा देना भी आसान नहीं है।

"भिक्षुओ, यह चित्त स्वाभाविक रूप से शुद्ध है। यह बाह्यमल से दूषित है।

"भिक्षुओ, यह चित्त स्वाभाविक रूप से शुद्ध है। यह बाह्यमल से निर्मल है।"

(६)

"भिक्षुओ, यह चित्त स्वाभाविक रूप से शुद्ध है। यह बाह्यमल से दूषित है। इस बात को अज्ञानी पृथक-जन यथार्थरूप से नहीं जानता है। इसलिये मैं कहता हूँ कि अज्ञानी पृथक-जन का चित्त एकाग्र नहीं होता।

"भिक्षुओ, यह चित्त स्वाभाविक रूप से शुद्ध है। यह बाह्य मल से निर्मल है। इस बात को ज्ञानी-आर्य-श्रावक यथार्थ रूप से जानता है। इसलिये मैं कहता हूँ कि ज्ञानी-आर्य-श्रावक का चित्त एकाग्र होता है।

"भिक्षुओ, यदि भिक्षु चुटकी बजाने के समय भर भी मैत्री-भावना करता है तो भिक्षुओ, ऐसा भिक्षु ध्यान से अशून्य माना जाता है, शास्ता का आज्ञाकारी माना जाता है, शास्ता के उपदेश के अनुसार चलनेवाला माना जाता है, और यही माना जाता है कि वह राष्ट्र-पिण्ड को व्यर्थ नहीं खाता। जो बार बार मैत्री-भावना करता है उसका तो कहना ही क्या?

(आसेवन करना, भावना करना, मन में करना पर्याय-वाची हैं।)

"भिक्षुओ, जितने भी अकुशल-धर्म[1] हैं, वे सभी मन के पीछे पीछे चलने वाले हैं। मन उनमें पहले उत्पन्न होता है और अकुशल-धर्म बाद में। [2]

"भिक्षुओ, जितने भी कुशल-धर्म[3] हैं, वे सभी मन के पीछे पीछे चलने वाले हैं। मन उन में पहले उत्पन्न होता है और कुशल-धर्म बाद में।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जिस के फलस्वरूप अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न होते हैं, और उत्पन्न कुशल-धर्मोंकी हानि होती हो, जैसे कि भिक्षुओ, यह प्रमाद।

"भिक्षुओ, प्रमादी के अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जिस के फलस्वरूप अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न अकुशल-धर्मोंकी हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ, यह अप्रमाद।

"भिक्षुओ, अप्रमादी के अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जिसके फलस्वरूप अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न होते हैं, और उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है जैसे कि भिक्षुओ, यह आलस्य।

"भिक्षुओ, आलसी के अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है।"

(७)

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिससे अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न अकुश-धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ, यह प्रयत्न का आरम्भ।

---

१ अकुशल-धर्म = बुरी बातें।

२ यद्यपि शब्दार्थ 'पहले और बादमें' हैं, किन्तु यथार्थ आशय साथ ही उत्पन्न होने से है।

३ कुशल-धर्म = अच्छी बातें।

"भिक्षुओ, प्रयत्न करनेवाले के अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिस से अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ, यह इच्छा की अधिकता।

"भिक्षुओ, अधिक इच्छा करने वाले के अनुत्पन्न अकुशल धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिससे अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ यह अल्पेच्छता। [1]

"भिक्षुओ, अल्पेच्छ व्यक्ति के अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते और उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिससे अनुत्पन्न अकुशल धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ यह संतोष।

"भिक्षुओ, असंतोषी के अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिससे अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ यह संतोष।

"भिक्षुओ, संतोषी के अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिससे अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ यह बेढंगा विचार करना। [2]

---

१ अल्पेच्छता=अलोभ

२ अयोनिसो-मनसिकार।

"भिक्षुओ, बेढंगा विचार करने वाले के अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते है और उत्पन्न कुशल धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओं, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिससे अनुत्पन्न कुशल धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ यह ढंग से विचार करना। [1]

"भिक्षुओ, ढंग से विचार करने वाले के अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते है और उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिससे अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ यह मूढ़ता।

"भिक्षुओ, मूढ़ व्यक्ति के अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिससे अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और अुत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ यह प्रज्ञा।

"भिक्षुओ, प्रज्ञावान के अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिससे अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उन्त्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ यह कुसंगति। [2]

"भिक्षुओ, कुसंगति में रहने वाले के अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है।"

(८)

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिससे अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ यह भली संगति। [3]

---

१ योनिसो मनसिकार। २ पाप-मित्रता। ३ कल्याण-मित्रता।

"भिक्षुओ, भली-संगति करने वाले के अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिस से अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं, उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ यह अकुशल-धर्मों में लगना और कुशल-धर्मों में न लगना।

"भिक्षुओ, अकुशल-धर्मों में लगने और कुशल-धर्मों में न लगने से अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं, उत्पन्न कुशल धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिस से अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं, उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है, जैसे कि भिक्षुओ यह कुशल-धर्मों में लगना और अकुशल-धर्मों में न लगना।

"भिक्षुओ, कुशल-धर्मों में लगने और अकुशल-धर्मों में न लगने से अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं। उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि होती है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिस से अनुत्पन्न बोधि-अंग[1] उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न बोधि-अंग भावना की पूर्णता को नहीं प्राप्त होते, जैसे कि भिक्षुओ यह बेढंगा विचार करना।

"भिक्षुओ, बेढंगा विचार करने वाले के अनुत्पन्न बोधि-अंग उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न बोधि-अंग भावना की पूर्णता को नहीं प्राप्त होते।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जिस से अनुत्पन्न बोधि-अंग उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न बोधि-अंग भावना की पूर्णता को प्राप्त होते हैं, जैसे कि भिक्षुओ यह ढंग से विचार करना।

"भिक्षुओ, ढंग से विचार करने से अनुत्पन्न बोधि-अंग उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पन्न बोधि-अंग भावना की पूर्णता को प्राप्त होते हैं।

"भिक्षुओ, यह जो सगे-सम्बन्धियों का न रहना है, यह कोई बड़ी हानि नहीं है। भिक्षुओ, यह जो प्रज्ञा की हानि है यही सब से बड़ी हानि है।

"भिक्षुओ, यह जो सगे-सम्बन्धियों की वृद्धि है, यह कोई बड़ी वृद्धि नहीं है। भिक्षुओ यह जो प्रज्ञा की वृद्धि है यही सब से बड़ी बृद्धि है। इसलिये भिक्षुओ,

---

१ बोज्झंग अथवा बोधि-अंग सात हैं—स्मृति, धर्म-विचय, वीर्य, प्रीति, प्रश्रब्धि, समाधि तथा उपेक्षा।

यही सीखना चाहिये कि हम प्रज्ञा-वृद्धि द्वारा उन्नति करेंगे। ऐसा ही भिक्षुओ, सीखना चाहिये।

"भिक्षुओ, यह जो भोग-सामग्री की हानि है, यह कोई बड़ी हानि नहीं। भिक्षुओ, यह जो प्रज्ञा की हानि है यही सब से बड़ी हानि है।

"भिक्षुओ, यह जो भोग-सामग्री की वृद्धि है, यह कोई बड़ी वृद्धि नहीं है। भिक्षुओ, यह जो प्रज्ञा की वृद्धि है यही सब से बड़ी वृद्धि है। इसलिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि हम प्रज्ञा-वृद्धि द्वारा उन्नति करेंगे। ऐसा ही भिक्षुओ सीखना चाहिये।

"भिक्षुओ, यह जो ऐश्वर्य की हानि है, यह कोई बड़ी हानि नहीं। भिक्षुओ, यह जो प्रज्ञा की हानि है यही सब से बड़ी हानि है।

(९)

'भिक्षुओ, यह जो ऐश्वर्य की वृद्धि है, यह कोई बड़ी वृद्धि नहीं है। भिक्षुओ, यह जो प्रज्ञा की वृद्धि है यही सब से बड़ी वृद्धि है। इसलिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि हम प्रज्ञा-वृद्धि द्वारा उन्नति करेंगे। ऐसा ही भिक्षुओ, सीखना चाहिये।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जो इतनी महान् अनर्थकारी हो जैसे कि भिक्षुओ, यह प्रमाद।

"भिक्षुओ, प्रमाद महान् अनर्थकारी है।

"भिक्षओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जो इतनी महान् कल्याणकारी हो जैसे कि भिक्षुओ, यह अप्रमाद।

"भिक्षुओ, अप्रमाद महान् कल्याणकारी है।

इसी प्रकार आलस्य........................प्रयत्नारम्भ।

इसी प्रकार इच्छा की अधिकता..................अल्पेच्छता।

इसी प्रकार असंतोष..........................संतोष।

इसी प्रकार बेढंगा विचार करना...........ढंग से विचार करना।

इसी प्रकार मूढ़ता...............................प्रज्ञा।

इसी प्रकार कुसंगति........................भली-संगति।

इसी प्रकार अकुशल धर्मों में लगना तथा कुशल धर्मों में न लगना........कुशल धर्मों में लगना तथा अकुशल धर्मों में न लगना।

(१०)

"शरीर के भीतर की बातों में भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जो इतनी महान् अनर्थकारी हो जैसे कि भिक्षुओ, यह प्रमाद।

"भिक्षुओ, प्रमाद महान् अनर्थकारी है।

"शरीर के भीतर की बातों में भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जो इतनी महान् कल्याणकारी हो जैसे कि भिक्षुओ, यह अप्रमाद।

"भिक्षुओ, अप्रमाद महान् कल्याणकारी है।

इसी प्रकार आलस्य..........................प्रयत्नारम्भ

इसी प्रकार इच्छा की अधिकता................. अल्पेच्छता।

इसी प्रकार असंतोष.........................संतोष।

इसी प्रकार बेढंगा विचार करना.......... ढंग से विचार करना।

इसी प्रकार मूढ़ता...................................प्रज्ञा।

"शरीर से बाहर की बातों में भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जो इतनी महान् अनर्थकारी हो जैसे कि भिक्षुओ, यह कुसंगति।

"भिक्षुओ, कुसंगति महान् अनर्थकारी है।

"शरीर से बाहर की बातों में भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जो इतनी महान् कल्याणकारी हो जैसे कि भिक्षुओ यह भली-संगति।

"भिक्षुओ, भली संगति महान् कल्याणकारी है।

"शरीर के भीतर की बातों में भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जो इतनी महान् अनर्थकारी हो जैसे कि भिक्षुओ, यह अकुशल-धर्मों में लगना तथा कुशल-धर्मों में न लगना।

"अकुशल धर्मों में लगना तथा कुशल-धर्मों में न लगना भिक्षुओ, बहुत अनर्थकारी है।

"शरीर के भीतर की बातों में भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी बात नहीं देखता जो इतनी महान् कल्याणकारी हो जैसे कि भिक्षुओ, यह कुशल-धर्मों में लगना तथा अकुशल धर्मों में न लगना।

"कुशल-धर्मों में लगना तथा अकुशल-धर्मों में न लगना भिक्षुओ महान् कल्याणकारी है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जो इस प्रकार सद्धर्मके नाश, सद्धर्म के अन्तर्धान होनेका कारण हो जैसे कि भिक्षुओ, यह प्रमाद।

"भिक्षुओ, प्रमाद सद्धर्म के नाश, सद्धर्म के अन्तर्धान होने का कारण होता है।

"भिक्षुओ, मैं और कोई दूसरी ऐसी बात नहीं देखता जो इस प्रकार सद्धर्म की स्थिति, अविनाश तथा अन्तर्धान न होने का कारण हो जैसे कि भिक्षुओ, यह अप्रमाद।

"भिक्षुओ, अप्रमाद, सद्धर्म की स्थिति, अविनाश तथा अन्तर्धान न होने का कारण होता है।

इसी प्रकार आलस्य........................प्रयत्नारम्भ।

इसी प्रकार इच्छा की अधिकता....................अल्पेच्छता।

इसी प्रकार असंतोष............................संतोष।

इसी प्रकार बेढंगा विचार करना.............ढंग से विचार करना।

इसी प्रकार मूढ़ता..................................प्रज्ञा।

इसी प्रकार कुसंगति.........................भली संगति।

इसी अकुशल धर्मों में लगना तथा कुशल धर्मों में न लगना।..........
.............कुशल-धर्मों में लगना तथा अकुशल-धर्मों में न लगना।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु अधर्म को धर्म बताते हैं वे भिक्षु बहुतजनों के अहित में लगे हैं, बहुत जनों के असुख में लगे हैं; बहुत जनों के तथा देव-मनुष्यों के अनर्थ, अहित तथा दुःख में लगे हैं और वे भिक्षु बहुत अपुण्य लाभ करते हैं तथा सद्धर्म का अन्तर्धान करते हैं।

भिक्षुओ, जो भिक्षु धर्म को अधर्म बताते हैं वे.........करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु अविनय[1] को विनय बताते हैं वे............
....करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु विनय[2] को अविनय बताते हैं वे...........
...................................करते हैं।

---

१ भिक्षु-अनियम; २ भिक्षु-नियम।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु तथागत द्वारा अभाषित को, तथागतद्वारा न कहे गये वचन को, तथागत द्वारा भाषित, तथागत द्वारा कहा गया वचन बताते हैं वे..... ....करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु तथागत द्वारा भाषित को, तथागत द्वारा कहे गये वचन को, तथागत द्वारा अभाषित, तथागत द्वारा न कहा गया वचन बताते हैं वे.. ....करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु तथागत द्वारा अनाचरित को, तथागत द्वारा आचरित बताते हैं....................करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु तथागत द्वारा आचरित को तथागत द्वारा अनाचरित बताते हैं.................करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु तथागत द्वारा न बनाये गये नियम को, तथागत द्वारा बनाया गया (-प्रज्ञप्त) नियम बताते हैं, वे ....करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु तथागत द्वारा बनाये गये नियम को, तथागत द्वारा न बनाया गया नियम बताते हैं वे बहुत जनों के अहित में लगे हैं, बहुत जनों के असुख में लगे हैं, बहुत जनों के तथा देव-मनुष्यों के अनर्थ, हित तथा दुःख में लगे हैं और वे भिक्षु बहुत अपुण्य लाभ करते हैं तथा सद्धर्म का अन्तर्धान करते हैं।"

(११)

" भिक्षुओ, जो भिक्षु अधर्म को अधर्म बताते हैं वे बहुतजनों के हित में लगे हैं, बहुत जनोंके सुख में लगे हैं, बहुत जनों के तथा देव-मनुष्यों के अर्थ, हित तथा सुखमें लगे हैं और वे भिक्षु बहुत पुण्य-लाभ करते हैं और वे इस सद्धर्म की स्थापना करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु धर्म को धर्म बताते हैं वे..........करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु अविनय को अविनय बताते हैं वे........करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु विनय को विनय बताते हैं वे..........करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु तथागत द्वारा अभाषित को, तथागत द्वारा न कहे गये वचन को, तथागत द्वारा अभाषित, तथागत द्वारा न कहा गया वचन बताते हैं वे... ....करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु, तथागत द्वारा भाषित को, तथागत द्वारा कहे गये वचन को, तथागत द्वारा भाषित, तथागत द्वारा कहा गया वचन बताते हैं वे..... ....करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु, तथागत द्वारा अनाचरित को तथागत द्वारा अनाचरित बताते हैं वे..........................करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु तथागत द्वारा आचरित को तथागत द्वारा आचरित बताते हैं वे...............करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु, तथागत द्वारा न बनाये गये नियम को, तथागत द्वारा न बानाया गया नियम बताते हैं वे......करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु तथागत द्वारा बनाये गये नियम को, तथागत द्वारा बनाया गया (= प्रज्ञप्त) नियम बताते हैं वे बहुतजनों के हित में लगे हैं, बहुतजनों के सुख में लगे हैं, बहुत जनों के तथा देव-मनुष्यों के अर्थ, हित तथा सुखमें लगे हैं और वे भिक्षु बहुत पुण्य-लाभ करते हैं और वे इस सद्धर्म की स्थापना करते हैं।

(१२)

" भिक्षुओ,जो भिक्षु, अनपराध को अपराध[1] बताते हैं वे भिक्षु बहुत जनों के अहित में लगे हैं, बहुत जनों के असुख में लगे है, बहुत जनों के तथा देव-मनुष्योंके अनर्थ, हित तथा दुःख में लगे हैं और वे भिक्षु बहुत अपुण्य-लाभ करते हैं तथा सद्धर्म का अन्तर्धान करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु अपराध को अनपराध बताते हैं वे ....करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु, हलके-अपराध को भारी-अपराध बताते हैं वे.... ....करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु, भारी-अपराध को हलका-अपराध बताते हैं वे.. ....करते हैं।

" भिक्षुओ, जो भिक्षु गम्भीर-अपराध को अगम्भीर-अपराध बताते हैं वे....................करते हैं।

---

१ आपत्ति।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु, अगम्भीर-अपराध को गम्भीर-अपराध बताते हैं वे....................करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु सावशेष-अपराध को निर्विषेष-अपराध बताते हैं वे....................करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु, निर्विषेष-अपराध को सावशेष-अपराध बताते हैं वे....................करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु, प्रायश्चित्त की जा सकने वाली[1] आपत्ति को प्रायश्चित्त न की जा सकनेवाली आपत्ति बताते हैं वे....................करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु प्रायश्चित्त न की जा सकने वाली आपत्ति को प्रायश्चित्त की जा सकने वाली आपत्ति बताते हैं वे.......................करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु, अनपराध को अनपराध बताते है वे भिक्षु बहुत जनोंके हित में लगे हैं, बहुत जनों के सुख में लगे हैं, बहुत जनों के तथा देव-मनष्यों के अर्थ, हित तथा सुख में लगे हैं और वे भिक्षु बहुत पुण्य-लाभ करते हैं तथा सद्धर्म की स्थापना करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु अपराध को अपराध बताते हैं वे.......करते हैं

"भिक्षुओ, जो भिक्षु, हलके-अपराध को हलका-अपराध बताते हैं.................................करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु भारी-अपराध को भारी-अपराध बताते हैं..........................करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु, गम्भीर-अपराध को गम्भीर-अपराध बताते हैं.........................करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु अगम्भीर अपराध को अगम्भीर अपराध बताते हैं ....करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु, सावशेष-अपराध को सावशेष-अपराध बताते हैं ....करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु, निर्विषेष-अपराध को निर्विशेष-अपराध बताते हैं ....करते हैं।

---

१ सप्रतिकर्म-आपत्ति।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु प्रायश्चित्त की जा सकने वाली आपत्ति को प्रायश्चित्त की जा सकने वाली आपत्ति बताते हैं वे........................करते हैं।

"भिक्षुओ,जो भिक्षु,प्रायश्चित्त न की जा सकने वाली आपत्ति को प्रायश्चित्त न की जा सकने वाली आपत्ति बताते हैं वे भिक्षु बहुत जनों के हित में लगे हैं, बहुत जनों के सुख में लगे हैं, बहुत जनों के तथा देव-मनष्योंके अर्थ, हित तथा सुख में लगे हैं और वे भिक्षु बहुत पुण्य-लाभ करते हैं तथा सद्धर्म की स्थापना करते हैं।"

(१३)

"भिक्षुओ, लोक में एक व्यक्ति बहुत जनों के हितके लिये, बहुत जनों के सुख के लिये, लोकों पर अनुकम्पा करने के लिये तथा देव-मनष्यों के अर्थ, हित और सुख के लिये उत्पन्न होता है। कौनसा एक व्यक्ति ? तथागत अर्हत सम्यक सम्बुद्ध।

"भिक्षुओ, यह एक व्यक्ति लोक में बहुत जनों के हित के लिये..........................उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ एक व्यक्ति का लोक में प्रादुर्भाव दुर्लभ है। किस एक व्यक्ति का ? तथागत अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध का।

"भिक्षुओ एक व्यक्ति लोक में आश्चर्य-कर होता है। कौनसा एक व्यक्ति ? तथागत अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध। भिक्षुओ, यह एक व्यक्ति लोक में आश्चर्यकर होता है।

"भिक्षुओ एक व्यक्ति का शरीरांत बहुत जनों के अनुताप का कारण होता है। किस एक व्यक्तिका ? तथागत अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध का।

"भिक्षुओ इस एक व्यक्ति का शरीरांत...........अनुताप के लिये होता है।

"भिक्षुओ लोक में एक व्यक्ति उत्पन्न होता है जो अद्वितीय होता है, जिसके समान कोई नहीं होता, जो अप्रतिम होता है, जिसके जैसा कोई नहीं होता तथा जिसकी कोई बराबरी नहीं कर सकता और जो द्विपदों में श्रेष्ठ होता है। कौन सा एक व्यक्ति ? तथागत अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध।

"भिक्षुओ यह एक व्यक्ति लोक में......द्विपदों में अग्र होता है।

"भिक्षुओ एक व्यक्ति के प्रकट होने से आंख खुल जाती है, आलोक हो जाता है, प्रकाश फैल जाता है, छः श्रेष्ठ धर्म पैदा हो जाते हैं, चारों प्रति-

सम्बिधा ज्ञानों का साक्षात हो जाता है, अनेक धातुओं का ज्ञान हो जाता है, नाना धातुओं का ज्ञान प्राप्त हो जाता है, विद्या-विमुक्ति फल साक्षात हो जाता है, स्रोतापत्ति फल साक्षात हो जाता है, सकृदागामी फल साक्षात हो जाता है, अनागामी फल साक्षात हो जाता है, और अर्हत्वफल साक्षात हो जाता है। किस एक व्यक्ति के? तथागत अर्हत सम्यक सम्बद्ध के।

"भिक्षुओ इस एक व्यक्ति के प्रगट होने से .... अर्हत्वफल साक्षात हो जाता है।

"भिक्षुओ, मैं दूसरा कोई भी एक व्यक्ति ऐसा नहीं देखता जो तथागत द्वारा प्रवर्तित श्रेष्ठ धर्म-चक्र को सम्यक प्रकार अनुप्रवर्तित कर सके, जैसे भिक्षुओ, यह सारिपुत्र।

"भिक्षुओ सारिपुत्र तथागत द्वारा प्रवर्तित श्रेष्ठ धर्म-चक्र को सम्यक प्रकार अनुप्रवर्तित करते हैं।"

(१४)

"भिक्षुओ, मेरे भिक्षु-श्रावकों में ये अग्र हैं—

(ज्ञान) रात्रि के जानकारों में अग्र अञ्ञाकोण्डञ्ञ।[1]

महाप्रज्ञावानों में अग्र	सारिपुत्र[2]
ऋद्धिमानों में अग्र	महामौद्गल्यायन[3]
धुतंगधारियों में अग्र	महाकाश्यप[4]
दिव्यचक्षु वालों में अग्र	अनुरुद्ध[5]
उच्च कुलीनों में अग्र	कालिगोधा-पुत्र भद्दिय[6]

१ शाक्य देशमें कपिलवस्तु नगर के पास द्रोणवस्तु ग्राम में, ब्राह्मण-कुलमें जन्म।

२ मगध देशमें राजगृह नगरसे अविदूर उपतिष्य ग्राम=नालक ग्राम (=वर्तमान सारिचक, बड़गांव—नालन्दाके पास, जि० पटनामें ब्राह्मण-कुलमें जन्म।)

३ मगध-देशमें राजगृह से अविदूर कोलित ग्राम में, ब्राह्मण-कुल में जन्म।

४ मगध-देशमें, महातीर्थ ब्राह्मण-ग्राममें, ब्राह्मण-कुलमें जन्म।

५ शाक्य देशमें, कपिल-वस्तु नगरमें, भगवानके चचा अमृतौदन शाक्यके पुत्र; क्षत्रिय-कुलमें जन्म।

६ शाक्य देशमें, कपिल-वस्तु नगरमें, क्षत्रिय-कुलमें जन्म।

मधुर-स्वर वालों में अग्र	लकुण्टक-भद्दिय[७]
सिंहनादियों में अग्र	पिण्डोल भारद्वाज[८]
धर्म-कथिकों में अग्र	मन्त्राणीपुत्र पूर्ण[९]
संक्षिप्त कहे का विस्तार करने वालों में अग्र	महाकात्यायन[१०]

"भिक्षुओ, मेरे भिक्षु-श्रावकोंमें ये अग्र हैं—

मनोमय-कार्य निर्माणकर सकनेवालोंमें अग्र	चुल्लपन्थक[११]
चित्त-विवर्त चतुरोंमें अग्र	चुल्लपन्थक
पञ्ञा-विवर्त-चतुरोंमें अग्र	महापन्थक[१२]
क्लेश-मुक्तोंमें अग्र	सुभूति[१३]
दानके पात्रोंमें अग्र	सुभूति
आरण्यकोंमें अग्र	खदिरवनिय रेवत[१४]
ध्यानियोंमें अग्र	कंखारेवत[१५]
आरब्ध-वीर्य्यों (=साधकों) में अग्र	कोळिवीस सोण[१६]
सुवक्ताओंमें अग्र	कुटिकर्ण सोण[१७]
लाभियोंमें अग्र	सीवलि[१८]

---

७ कोसल देशमें, श्रावस्ती नगरमें, धनी कुलमें।

८ मगध, राजगृहमें, ब्राह्मण कुलमें।

९ शाक्य, कपिलवस्तुके समीप द्रोणवस्तु ब्राह्मण ग्राममें, ब्राह्मण कुल।

१० अवन्ती देश, अुज्जयिनीमें, ब्राह्मण कुलमें।

११ मगध, राजगृह, श्रेष्ठी-कन्या-पुत्र।

१२ मगध, राजगृह, श्रेष्ठी-कन्या-पुत्र।

१३ कोसल, श्रावस्ती, वैश्यकुलमें।

१४ मगध, नालक ब्राह्मण-ग्राममें (सारिपुत्रके अनुज)।

१५ कोसल, श्रावस्ती, महाभोग-कुलमें।

१६ अंगकेश, चम्पानगरमें, श्रेष्ठी-कुलमें।

१७ अवन्ती देश, कुरर-घरमें, वैश्य कुल में।

१८ शाक्य, कुंडिया (कोलीय-दुहिता सुप्रवासाका पुत्र) क्षत्रिय कुल।

श्रद्धावानोंमें अग्र	वक्कलि[१९]

" भिक्षुओ, मेरे भिक्षु-श्रावकोंमें अग्र हैं—

शिक्षाकामियोंमें अग्र	राहुल[२०]
श्रद्धासे प्रव्रजितोंमें अग्र	रट्ठपाल[२१]
प्रथमशलाका ग्रहण करनेवालोंमें अग्र	कुण्डधान[२२]
प्रतिभावानों (कवियों) में अग्र	वंगीश[२३]
सभी प्रकारसे सुंदरोंमें अग्र	वंगत-पुत्र उपसेन[२४]
शयनासन व्यवस्थापकोंमें अग्र	मल्लपुत्र दब्ब[२५]
देवताओंके प्रियोंमें अग्र	पिलिंदवच्छ[२६]
प्रखर बुद्धियोंमें अग्र	बाहिय दारुचिरिय[२७]
विचित्र वक्ताओंमें अग्र	कुमार काश्यय[२८]
प्रतिसम्भिदा-ज्ञान-प्राप्तोंमें अग्र	महाकोट्ठित[२९]

भिक्षुओ, मेरे भिक्षु-श्रावकोंमें ये अग्र हैं—

बहुश्रुतोंमें अग्र—आनंद। स्मृतिमानोंमें अग्र—आनंद। गतिमानोंमें अग्र—आनंद। धृतिमानोंमें अग्र—आनंद। सेवकोंमें अग्र—आनंद।[३०]

---

१९ कोसल, श्रावस्ती, ब्राह्मण कुल।

२० शाक्य, कपिलवस्तु (सिद्धार्थ कुमारके पुत्र) क्षत्रिय कुल।

२१ कुरुदेश, थुल्लकोट्ठित, वैश्य कुल।

२२ कोसल, श्रावस्ती, ब्राह्मण कुल।

२३ कोसल, श्रावस्ती, ब्राह्मण कुल।

२४ मगध, नालक ब्राह्मण ग्राम (सारिपुत्रके अनुज) ब्राह्मण कुल।

२५ मल्लदेश, अनूपियानगर, क्षत्रिय कुल।

२६ कोसल, श्रावस्ती, ब्राह्मण कुल।

२७ बाहिय राष्ट्र (=सतलज व्यासका द्वाबा, जलंधर, होशियारपुरके जिले और कपूरथला राज्य) में उत्पन्न।

२८ मगध, राजगृह।

२९ कोसल, श्रावस्ती, ब्राह्मण कुल।

३० शाक्य, कपिलवस्तु, अमृतौदन पुत्र, क्षत्रिय कुल।

बड़ी जमातवालोंमें अग्र	उरुवेल काश्यप[31]
कुलोंको प्रसन्न करनेवालोंमें अग्र	कालउदायी[32]
निरोगोंमें अग्र	बक्कुल[33]
पूर्व जन्म स्मरण करनेवालोंमें अग्र	सोभित[34]
विनयधरोंमें अग्र	उपाली[35]
भिक्षुणियोंके अुपदेशकोंमें अग्र	नन्दन[36]
जितेन्द्रियोंमें अग्र	नंद[37]
भिक्षुओंके अुपदेशकोंमें अग्र	महाकप्पिन[38]
तेज-धातु-कुशलों (ध्यानियों) में अग्र	सागत[39]
प्रतिभावानों (=पटिभानटचकों) में अग्र	राध[40]
रुक्ष चीवरधारियोंमें अग्र	मोघराज[41]

"भिक्षुओ, मेरी भिक्षुणी-श्राविकाओंमें ये अग्र हैं—

(ज्ञान)-रात्रिके जानकारोंमें अग्र	महाप्रजापति गौतमी[42]
महाप्रज्ञाओंमें अग्र	खेमा[43]

---

३१ काशी देश, वाराणसी नगर, ब्राह्मण कुल।

३२ शाक्य, कपिलवस्तु आमात्य गेहमें।

३३ वत्स्य देश, कोशाम्बी, वैश्य कुल।

३४ कोसल, श्रावस्ती, ब्राह्मण कुलमें।

३५ शाक्य, कपिलवस्तु, नाई कुल।

३६ कोसल, श्रावस्ती, कुलगृह।

३७ शाक्य, कपिलवस्तु (महाप्रजापतिपुत्र) क्षत्रिय कुल।

३८ सीमांत (प्रत्यंत) देश कुक्कुटवती नगर, राजवंश)।

३९ कोसल, श्रावस्ती, ब्राह्मण कुल।

४० मगध, राजगृह, ब्राह्मण कुल।

४१ कोसल, श्रावस्ती, (बावरि शिष्य) ब्राह्मण कुल।

४२ शाक्य, कपिलवस्तु, शुद्धोदन भार्य्या, क्षत्रिय कुल।

४३ मद्रदेश, सागल (स्यालकोट) नगर, राजपुत्री, मगधराज बिंबिसारकी भार्य्या।

ऋद्धिमतियोंमें अग्र	उत्पलवर्णा[४४]
विनय-धारियोंमें अग्र	पटाचारा[४५]
धर्म-कथा कहनेवालियोंमें अग्र	धम्मदिन्ना[४६]
ध्यान करनेवालियोंमें अग्र	नन्दा[४७]
आरब्ध-वीर्य्योंमें अग्र	सोणा[४८]
दिव्य चक्षुवालियोंमें अग्र	सकुला[४९]
क्षिप्र-अज्ञाओंमें अग्र	कुंडलकेशा भद्रा[५०]
पूर्वजन्म अनुश्रमणवालियोंमें अग्र	भद्रा कापिलायिनी[५१]
महा अभिज्ञाप्राप्तोंमें अग्र	भद्रा कात्यायनी[५२]
रुक्ष चीवरधारणियोंमें अग्र	कृशा गौतमी[५३]
श्रद्धावानोंमें अग्र	सिगाल माता[५४]

" भिक्षुओ, मेरे अुपासक श्रावकोंमें ये अग्र हैं—

सर्वप्रथम शरणमें आनेवालोंमें अग्र	तपस्सु[५५] और भल्लुकवणिक[५६]

---

४४ कोसल, श्रावस्ती, श्रेष्ठी कुल।

४५ कोसल, श्रावस्ती, श्रेष्ठी कुल।

४६ मगध, राजगृह, विशाख श्रेष्ठीकी भार्य्या।

४७ शाक्य, कपिलवस्तु, महाप्रजापति गौतमीकी पुत्री।

४८ कोसल, श्रावस्ती, कुलगृह।

४९ कोसल, श्रावस्ती, कुलगृह।

५० मगध, राजगृह श्रेष्ठी कुल।

५१ मद्रदेश, सागलनगर, ब्राह्मण कुल, (महाकाश्यपभार्य्या)।

५२ शाक्य, कपिलवस्तु, राहुलमाता (देवदहवासी सुप्रबुद्ध शाक्यकी पुत्री) क्षत्रिय।

५३ कोसल, श्रावस्ती, वैश्य।

५४ मगध, राजगृह, श्रेष्ठी कुल।

५५ असितञ्जन नगर, कुटुम्बिक गृहमें।

५६ असितञ्जन नगर, कुटुम्बिक गृहमें।

दायकोंमें अग्र	अनाथपिण्डक सुदत्त गृहपति[५७]
धर्मकथिकोंमें अग्र	मच्छिकसांडवासी चित्र गृहपति[५८]
चार संग्रह वस्तुओंसे जमातका संग्रह करनेवालोंमें अग्र	हस्तक आळवक[५९]
अुत्तम दान देनेवालोंमें अग्र	महानाम शाक्य[६०]
प्रिय दायकोंमें अग्र	वेशाली का उग्र गृहपति[६१]
संघसेवकोंमें अग्र	उग्गह गृहपति[६२]
अत्यन्त प्रसन्नोंमें अग्र	अम्बष्ठ शूर[६३]
व्यक्तिगत प्रसन्नोंमें अग्र	कौमार भृत्य जीवक[६४]
विश्वस्तोंमें अग्र	नकुलपिता गृहपति[६५]

"भिक्षुओ, मेरी अुपासिका श्रावकिाओंमें ये अग्र हैं—

प्रथम शरण आनेवालियोंमें अग्र	सेनानी दुहिता सुजाता[६६]
दाअिकाओंमें अग्र	विशाखा मृगार माता[६७]
बहुश्रुतोंमें अग्र	खुज्जुतरा[६८]

---

५७ कोसल, श्रावस्ती, सुमन श्रेष्ठी पुत्र।

५८ मगध, मच्छिकासंड, श्रेष्ठी कुल।

५९ पंचालदेश, आलवी, (=अरवल, जि० फर्रुखाबाद), राजकुमार।

६० शाक्य, कपिलवस्तु, (अनुरुद्धका ज्येष्ठ भ्राता), क्षत्रिय।

६१ वज्जीदेश, वैशाली, श्रेष्ठी कुल।

६२ वज्जीदेश, हस्तिग्राम, श्रेष्ठी कुल।

६३ कोसल, श्रावस्ती, श्रेष्ठी कुल।

६४ मगध, राजगृह, अभयकुमारसे सालवतिका गणिकामें अुत्पन्न।

६५ भग्ग (=भर्गदेश) (संसुमारगिरि) श्रेष्ठी कुल।

६६ मगध, उरुवेलाके सेनानी ग्राम, सेनानी कुटुम्बिककी पुत्री।

६७ कोसल, श्रावस्ती, वैश्य।

६८ वत्स्य, कौशाम्बी, घोसक श्रेष्ठीकी दाई की पुत्री।

मैत्री विहार (=भावना) करनेवालियोंमें अग्र	सामावती[६९]
ध्यानियोंमें अग्र	उत्तरा, नंदमाता[७०]
प्रणीत दायिकाओंमें अग्र	सुप्रवासा कोलीय दुहिता[७१]
रोगी सुश्रुषिकाओंमें अग्र	सुप्रिया उपासिका[७२]
अतीव प्रसन्नोंमें अग्र	कात्यायनी[७३]
विश्वस्तोंमें अग्र	नकुल माता गृहपत्नी[७४]
श्रवणमात्रसे श्रद्धावान होनेवालियोंमें अग्र	कुरर घरवाली काली अुपासिका[७५]

(१५)

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि (सम्यक्) दृष्टि-प्राप्त मनुष्य किसी भी संस्कारको नित्य करके ग्रहण करे, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पृथक-जन किसी भी संस्कारको नित्य करके ग्रहण करे, इस बातकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि (सम्यक्) दृष्टि-प्राप्त मनुष्य किसी भी संस्कारको सुख करके ग्रहण करे, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पृथक-जन किसी भी संस्कारको सुख करके ग्रहण करे, इस बातकी गुंजायश है।

---

६९ भद्रवति राष्ट्र, भद्दिया (=भद्रिका) नगर, भद्रवतिक श्रेष्ठी पुत्री; (पश्चात् वत्स, कौशाम्बी, घोषित, श्रेष्ठीकी धर्म-पुत्री), वत्सराज उदयनकी महिषी।

७० मगध, राजगृह, सुमन श्रेष्ठीके आधीन पूर्णसिंहकी पुत्री।

७१ शाक्य, कुंडिया, सीवलीमाता-क्षत्रिय कुल।

७२ काशी देश, वाराणसी, कुलगृह (वैश्य कुल)।

७३ अवन्ति, कुरर घर, (वैश्य कुल), सोण कुंटीकण्ण की माता।

७४ भग्ग देश, सुंसुमारगिरी, (नकुलपिता गृहपतिकी भार्य्या)।

७५ मगध, राजगृह, कुलगृहमें पैदा हुई; अवन्ती कुरर घरमें ब्याही।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि (सम्यक्) दृष्टि-प्राप्त मनुष्य किसी भी धर्मको 'आत्मा' करके ग्रहण करे, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पृथक-जन किसी भी 'धर्म' को 'आत्मा' करके ग्रहण करे, इस बातकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि (सम्यक्) दृष्टि-प्राप्त मनुष्य अपनी माताकी जान ले, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पृथक-जन अपनी माताकी जान ले, इस बातकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि (समयक्) दृष्टि-प्राप्त मनुष्य अपने पिताकी जान ले, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पथकजन अपने पिताकी जान ले, इस बातकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि (सम्यक्) दृष्टि-प्राप्त मनुष्य अर्हतकी जान ले, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पथक-जन अर्हतकी जान ले, इस बात की गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि (सम्यक्) दृष्टि-प्राप्त मनुष्य द्वेष-पूर्ण चित्त रखकर तथागतके शरीरसे खून निकाले, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पृथकजन द्वेषपूर्ण चित्त रखकर तथागतके शरीरसे खून निकाले, इस बातकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि (सम्यक्) दृष्टि-प्राप्त मनुष्य भिक्षु-संघमें भेद अुत्पन्न करनेका कारण बने, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पृथकजन भिक्षु-संघमें भेद अुत्पन्न करे, इस बातकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि (सम्यक्) दृष्टि-प्राप्त मनुष्य किसी दूसरे शास्ताकी शरण ग्रहण करे, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पृथकजन किसी दूसरे शास्ताकी शरण ग्रहण करे, इस बातकी गुंजायश है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि एक ही विश्वमें एक ही समयमें दो अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध एक साथ उत्पन्न हों, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि एक ही विश्वमें एक ही समयमें एक अर्हत सम्यक सम्बुद्ध उत्पन्न हों, इस बातकी गुंजायश है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि एक ही विश्वमें, एक ही समयमें दो चक्रवर्ती राजा एक साथ उत्पन्न हों, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि एक ही विश्वमें, एक ही समयमें एक चक्रवर्ती राजा हो, इस बातकी गुंजायश है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि स्त्री अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध हो, इस बातकी तनिक गुंजायश नहीं है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पुरुष अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध हो, इस बातकी गुंजायश है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है स्त्री चक्रवर्ती राजा हो सके, इस बातकी गुंजायश नहीं है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पुरुष चक्रवर्ती राजा हो सके, इस बातकी गुंजायश है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि स्त्री शक्र बन सके. . . . मार बन सके. . . . . ब्रह्म बन सके, इस बातकी गुंजायश नहीं।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि पुरुष शक्र बन सके. . . . .मार बन सके. . . . . .ब्रह्म बन सके, इस बातकी गुंजायश है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि शारीरिक दुष्कर्मका अच्छा, सुन्दर, भला परिणाम हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि शारीरिक दुष्कर्मका बुरा, असुन्दर, खराब परिणाम हो, इसकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि वाणीके दुष्कर्मका अच्छा, सुन्दर, भला परिणाम हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि वाणीके दुष्कर्मका बुरा—असुन्दर खराब परिणाम हो, इसकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि मानसिक दुष्कर्मका अच्छा, सुन्दर, भला परिणाम हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि मानसिक दुष्कर्मका बुरा, असुन्दर, खराब परिणाम हो, इसकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि शारीरिक शुभ-कर्मका बुरा, असुन्दर, खराब परिणाम हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि शारीरिक शुभ-कर्मका अच्छा, सुन्दर, भला परिणाम हो, इसकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि वाणीके शुभ-कर्मका बुरा, असुन्दर, खराब परिणाम हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि वाणीके शुभ-कर्मका अच्छा, सुन्दर, भला परिणाम हो, इसकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि मानसिक शुभ-कर्मका बुरा, असुन्दर, खराब परिणाम हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि मानसिक शुभ-कर्मका अच्छा, सुन्दर, भला परिणाम हो, इसकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि शरीरसे दुष्कर्म करनेवाला प्राणी उसके परिणाम-स्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर, सुगति स्वर्ग-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि शरीरसे दुष्कर्म करनेवाला प्राणी उसके परिणाम-स्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर, अपाय दुर्गति नरक-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायश है।

"भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि वाणीसे दुष्कर्म करनेवाला प्राणी उसके परिणामस्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर, सुगति स्वर्ग-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

" भिक्षुओ, अिस बातकी सम्भावना है कि वाणीसे दुष्कर्म करनेवाला प्राणी अुसके परिणाम-स्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर अपाय दुर्गति नरक-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायश है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि मनसे दुष्कर्म करनेवाला प्राणी अुसके परिणाम-स्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर सुगति स्वर्ग-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि मनसे दुष्कर्म करनेवाला प्राणी उसके परिणाम-स्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर अपाय दुर्गति नरक-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायश है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि शरीरसे शुभ-कर्म करनेवाला प्राणी उसके परिणाम-स्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर अपाय दुर्गनि नरक-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि शरीरसे शुभ-कर्म करनेवाला प्राणी, उसके परिणाम-स्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर सुगति स्वर्ग-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायश है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि वाणीसे शुभ-कर्म करनेवाला प्राणी, उसके परिणाम-स्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर अपाय दुर्गति नरक-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि वाणीसे शुभ-कर्म करनेवाला प्राणी,उसके परिणाम-स्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर सुगति स्वर्ग-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायश है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना नहीं है कि मनसे शुभ-कर्म करनेवाला प्राणी,उसके परिणाम-स्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर अपाय दुर्गति नरक-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायश नहीं है।

" भिक्षुओ, इस बातकी सम्भावना है कि मनसे शुभ-कर्म करनेवाला प्राणी उसके परिणाम-स्वरूप, उसके हेतुसे, शरीरके न रहनेपर, मरनेके अनन्तर सुगति स्वर्ग-लोकको प्राप्त हो, इसकी गुंजायशहै। "

(१६)

"भिक्षुओ, एक धर्म का अभ्यास, उसकी वृद्धि, भिक्षुके सम्पूर्ण निर्वेदके लिये, वैराग्यके लिये, निरोधके लिये, उपशमनके लिये, ज्ञान-प्राप्तिके लिये, बोधिके लिये तथा निर्वाण-लाभके लिये होती है। कौनसे एक धर्मका? बुद्धानुस्मृतिका।

"भिक्षुओ, इस एक धर्मका अभ्यास, इस एक धर्मकी वृद्धि भिक्षुके सम्पूर्ण निर्वेदके लिये............होती है।

"भिक्षुओ, एक धर्मका अभ्यास, उसकी वृद्धि, भिक्षुके सम्पूर्ण निर्वेदके लिये ....होती है। कौनसे एक धर्मका? धर्मानुस्मृतिका....संघानुस्मृतिका.........शीलानुस्मृतिका...........त्यागानुस्मृतिका......देवतानुस्मृतिका.........आनापानस्मृतिका........मरणानुस्मृतिका..........काय गतानुस्मृतिका.........उपशमानुस्मृतिका।

"भिक्षुओ, इस एक धर्मका अभ्यास, इस एक धर्मकी वृद्धि, भिक्षुके सम्पूर्ण निर्वेदके लिये, वैराग्यके लिये, उपशमनके लिये, ज्ञान-प्राप्तिके लिये, बोधिके लिये तथा निर्वाण-लाभके लिये होती है।

(१७)

१. "भिक्षुओ, मैं दूसरी कोई भी एक बात ऐसी नहीं जानता जिससे अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न होते हों तथा उत्पन्न अकुशल-धर्मोंमें बृद्धि होती हो, विपुलता होती हो, जैसे भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टि।

भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टिवालेमें अनुत्पन्न अकुशल-धर्म पैदा हो जाते हैं, उत्पन्न अकुशल-धर्म वृद्धिको, विपुलताको प्राप्त हो जाते हैं।

२. "भिक्षुओ, मैं दूसरी कोई भी एक बात ऐसी नहीं जानता जिससे अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हों तथा उत्पन्न कुशल-धर्मोंमें बृद्धि होती हो, विपुलता होती हो, जैसे भिक्षुओ सम्यक्-दृष्टि।

भिक्षुओ, सम्यक्-दृष्टिवालेमें अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं, उत्पन्न कुशल-धर्म बृद्धिको, विपुलताको प्राप्त हो जाते हैं।

३. "भिक्षुओ, मैं दूसरी कोई एक भी बात ऐसी नहीं जानता जिससे अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न न होते हों अथवा उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि हो जाती हो जैसे भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टि ।

"भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टिवालेमें अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते, उत्पन्न कुशल-धर्मों की हानि हो जाती है।"

४. "भिक्षुओ, मैं दूसरी कोई एक भी बात ऐसी नहीं जानता जिससे अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न न हों अथवा उत्पन्न अकुशल-धर्मों की हानि हो, जैसे भिक्षुओ, सम्यक्-दृष्टि ।

"भिक्षुओ, सम्यक्-दृष्टि वाले में अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न अकुशल-धर्मो की हानि हो जाती है।"

५. "भिक्षुओ, मैं दूसरी कोई एक भी बात ऐसी नहीं जानता जिससे अनुत्पन्न मिथ्या-दृष्टि उत्पन्न हो जाती हो अथवा उत्पन्न मिथ्या-दृष्टि बृद्धि को प्राप्त हो जाती हो, जैसे यह गलत ढ़ंग से सोचना ।

"भिक्षुओ, गलत ढ़ंग से सोचने से अनुत्पन्न मिथ्या-दृष्टि उत्पन्न हो जाती है, उत्पन्न मिथ्या-दृष्टि बृद्धि को प्राप्त हो जाती है।"

६. "भिक्षुओ, मैं दूसरी कोई एक भी बात ऐसी नहीं जानता जिससे अनुत्पन्न सम्यक्-दृष्टि उत्पन्न हो जाती है अथवा उत्पन्न सम्यक्-दृष्टि बृद्धि को प्राप्त हो जाती है, जैसे यह ठीक ढंग से सोचना ।

"भिक्षुओ, ठीक ढंग से सोचने से अनुत्पन्न सम्यक्-दृष्टि उत्पन्न हो जाती है अथवा उत्पन्न सम्यक्-दृष्टि बृद्धि को प्राप्त हो जाती है।"

७. "भिक्षुओ, मैं दूसरी कोई एक भी बात ऐसी नहीं जानता जिससे प्राणी इस प्रकार शरीर के न रहने पर, मरने के अनन्तर, अपाय, दुर्गति, विशिष्ट-पतन, नरक-लोक में उत्पन्न होते हैं जैसे कि भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टि।

"भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टि से युक्त प्राणी शरीर के न रहने पर, मरने के अनन्तर, अपाय, दुर्गति, विशिष्ट-पतन, नरक-लोक में उत्पन्न होते हैं।"

८. "भिक्षुओ, मैं दूसरी कोई एक भी बात ऐसी नहीं जानता जिससे प्राणी शरीर के न रहने पर, मरने के अनन्तर, सुगति, स्वर्ग-लोक में उत्पन्न होते हैं, जैसे कि भिक्षुओ, सम्यक्-दृष्टि ।

" भिक्षुओ, सम्यक्-दृष्टि से युक्त प्राणी शरीर के न रहने पर, मरने के अनन्तर, सुगति, स्वर्ग-लोक में उत्पन्न होते हैं ।"

९. " भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टिवाले प्राणी का जो भी मिथ्या-दृष्टि के अनुसार किया गया शारीरिक-कर्म है, जो भी वाणी का कर्म है.... जो भी मन का कर्म है.... जो भी चेतना है, जो भी कामना है, जो भी संकल्प हैं तथा जितने भी संस्कार हैं वे सभी धर्म अनिष्ट के लिये, अरुचि के लिये, बुराई के लिये, अहित के लिये तथा दुःख के लिये होते हैं। ऐसा किस लिये? भिक्षुओ, दृष्टि ही बुरी है ।

" भिक्षुओ, जैसे नीम का बीज हो, कोसातकी-बीज हो वा कड़वी लौकी का बीज हो और वह गीली पृथ्वी में गाड़ा गया हो, वह जितने भी पृथ्वी-रस को ग्रहण करता है, जितने भी उदक-रस को ग्रहण करता है. वह सब तिक्त ही होता है, कड़ुवा ही होता है, अरुचिकर ही होता है । यह किस लिये? भिक्षुओ, बीज ही खराब है । इसी प्रकार भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टिवाले प्राणी का जो भी ... शारीरिक-कर्म है ... जो भी वाणी का कर्म है.... जो भी मन का कर्म है.... भिक्षुओ, दृष्टि ही बुरी है ।"

" भिक्षुओ, सम्यक् दृष्टिवाले प्राणी का जो भी सम्यक्-दृष्टि के अनुसार किया गया शारीरिक-कर्म है, जो भी वाणी का कर्म है...... जो भी मन का कर्म है.... जो भी चेतना ह, जो भी कामना है, जो भी संकल्प हैं तथा जितने भी संस्कार हैं वे सभी धर्म इष्ट के लिये, रुचि के लिये, भलाई के लिये, हित के लिये तथा सुख के लिये होते हैं। ऐसा किस लिये? भिक्षुओ, दृष्टि ही अच्छी है।

" भिक्षुओ, जैसे ऊख का बीज हो, धान का बीज हो या अंगूर का बीज हो और वह गीली पृथ्वी में गाड़ा गया हो वह जितने भी पृथ्वी-रस को ग्रहण करता है, जितने भी उदक-रस को ग्रहण करता है, वह सब मधुर ही होता है, रुचिकर ही होता है, अनुकूल ही होता है । यह किस लिये? भिक्षुओ, बीज ही अच्छा है । इसी प्रकार भिक्षुओ, सम्यक्-दृष्टिवाले प्राणी का जो भी ...... शारीरिक-कर्म है...... जो भी वाणी का कर्म है...... जो भी मन का कर्म है...... भिक्षुओ, दृष्टि ही अच्छी है।"

(१८)

" भिक्षुओ, लोक में एक आदमी बहुत जनों के अहित के लिये, बहुत जनों के असुख के लिये, बहुत जनों के तथा देव-मनुष्यों के अनर्थ के लिये, अहित के लिये तथा दुःख के लिये पैदा होता है ।

"कौनसा एक आदमी ?

"मिथ्या-दृष्टि वाला विपरीत-दर्शी होता है, वह बहुत जनों को सद्धर्म की ओर से हटाकर असद्धर्म की ओर लगा देता है।

"भिक्षुओ, लोक में यह एक आदमी ....दुःख के लिये पैदा होता है।"

२. "भिक्षुओ, लोक में एक आदमी बहुत जनों के हित के लिये, बहुत जनों के सुख के लिये, बहुत जनों तथा देवमनुष्यों के अर्थ के लिये, हित के लिये तथा सुख के लिये पैदा होता है।

"कौनसा एक आदमी ?

"सम्यक्-दृष्टिवाला अविपरीत-दर्शी होता है, वह बहुत जनों को असद्धर्म की ओर से हटाकर सद्धर्म की ओर लगा देता है।

"भिक्षुओ, लोक में यह एक आदमी ....सुख के लिये पैदा होता है।"

३. "भिक्षुओ, मैं दूसरी कोई भी ऐसी बात नहीं देखता जो इतनी महान् दोषपूर्ण हो जितनी कि यह मिथ्या-दृष्टि।

"भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टि सर्वाधिक दोषपूर्ण है।"

४. "भिक्षुओ, मैं दूसरे किसी एक भी आदमी को नहीं देखता जो इस प्रकार बहुत जनों का अहित करने में लगा हो, बहुत जनों को दुःख पहुँचाने में लगा हो, बहुत जनों तथा देव-मनुष्यों के अनर्थ के लिये हो, अहित के लिये हो और दुःख के लिये हो, जैसे कि भिक्षुओ, यह मक्खली मूर्ख-आदमी।

"भिक्षुओ, जैसे नदी के मुहाने पर जाल फैला हो, जो बहुत सी मछलियों के अहित के लिये हो, दुख के लिये हो, क्लेश के लिये हो, कष्ट के लिये हो, इसी प्रकार भिक्षुओ, मक्खली मूर्ख-आदमी को आदमी-रूपी जाल मानना चाहिये, बहुत जनों के अहित के लिये, दुःख के लिये, क्लेश के लिये तथा कष्ट के लिये।"

५. "भिक्षुओ, अनुचित धर्म-विनय में जो किसी को दीक्षित करता है, जिसे दीक्षित करता है और जो तदनुसार आचरण करता है, ये सभी बहुत अपुण्यार्जन करते हैं। यह किस लिये ? भिक्षुओ धर्म के ही अनौचित्य के कारण।"

६. "भिक्षुओ, उचित धर्म-विनय में जो किसी को दीक्षित करता है, जिसे दीक्षित करता है और जो तदनुसार आचरण करता है, वे सभी बहुत पुण्यार्जन करते हैं। यह किस लिये? भिक्षुओ धर्म के ही औचित्य के कारण।"

७. "भिक्षुओ, अनुचित धर्म-विनय में दायक को (दान की) मात्रा जाननी चाहिये, प्रतिग्राहक को नहीं। यह किस लिये? भिक्षुओ, धर्म के अनौचित्य के कारण।"

८. "भिक्षुओ, उचित धर्म-विनय में प्रतिग्राहक को मात्रा जाननी चाहिये, दायक को नहीं। यह किस लिये? भिक्षुओ, धर्म के औचित्य के कारण।"

९. "भिक्षुओ, अनुचित धर्म-विनय में जो अति उत्साही होता है वह कष्ट पाता है। यह किस लिये? भिक्षुओ, धर्म के अनौचित्य के कारण।"

१०. "भिक्षुओ, उचित धर्म-विनय में जो मन्द-गति होता है वह कष्ट पाता है। यह किस लिये? भिक्षुओ, धर्म के औचित्य के कारण।"

११. "भिक्षुओ, अनुचित धर्म-विनय में जो मन्द-गति होता है वह सुख पाता है। यह किस लिये? भिक्षुओ, धर्म के अनौचित्य के कारण।"

१२. "भिक्षुओ, अनुचित धर्म-विनय में जो अति-उत्साही होता है वह सुख पाता है। यह किस लिये? भिक्षुओ धर्म के औचित्य के कारण।"

१३. "भिक्षुओ, जैसे थोड़ा भी गुँह दुर्गन्ध ही देता है इसी प्रकार भिक्षुओ, मैं थोड़े भी संसार की प्रशंसा नहीं करता, और तो और चुटकी-मात्र की भी नहीं।

१४. "भिक्षुओ, जैसे थोड़ा भी मूत्र दुर्गन्ध ही देता है, इसी प्रकार... ...चुटकी-मात्र की भी नहीं।

१५. "भिक्षुओ, जैसे थोड़ा भी थूक दुर्गन्ध ही देता है, इसी प्रकार... ...चुटकी-मात्र की भी नहीं।

१६. "भिक्षुओ, जैसे थोड़ी भी पीप दुर्गन्ध ही देती है, इसी प्रकार... ...चटकी-मात्र की भी नहीं।

१७. "भिक्षुओ, जैसे थोड़ा भी लहू दुर्गन्ध ही देता है, इसी प्रकार... ...चुटकी-मात्र की भी नहीं।"

(१९)

"भिक्षुओ, जैसे इस जम्बुद्वीप में रमणीय उद्यान, रमणीय-वन, रमणीय-भूमि तथा रमणीय पुष्करणियाँ थोड़ी ही हैं, अधिकता तो ऊँची-नीची, नदी से कटी, झाड़-झंखाड़वाली भूमि तथा विषम पर्वत-प्रदेशों की ही है।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, स्थल पर जन्म ग्रहण करनेवाले प्राणी अल्प-संख्यक हैं, उन्हीं की संख्या अधिक है जो जल में उत्पन्न होनेवाले हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, मनुष्य होकर जन्म ग्रहण करनेवाले प्राणी अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जो मनुष्येतर योनियों में जन्म ग्रहण करते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, मध्यम-जनपदों में जन्म ग्रहण करनेवाले प्राणी अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जो अशिक्षित म्लेच्छ जनपदों में जन्म ग्रहण करते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी प्रज्ञावान् हैं, जड़बुद्धि नहीं है, जिन के मुँह से लार नहीं टपकती तथा जो सुभाषित-दुर्भाषित का अर्थ समझने में समर्थ हैं वे अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जो प्रज्ञावान् नहीं हैं, जो जड़-बुद्धि हैं, जिन के मुँह से लार टपकती है तथा जो सुभाषित-दुर्भाषित का अर्थ जानने में असमर्थ हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ आर्य प्रज्ञा-चक्षु से युक्त प्राणी अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जो मूढ़ हैं, अविद्या-ग्रस्त हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जिन प्राणियों को तथागत का दर्शन-लाभ होता है, वे अल्प संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जिन्हें तथागत का दर्शन-लाभ नहीं होता।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जिन प्राणियों को तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनय सुनने के लिये मिलता है, वे अल्प-संख्यक हैं, उन्हीं की संख्या अधिक है जिन्हें तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनय सुनने के लिये नहीं मिलता है।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी सुनकर धर्म को मन में जगह देते हैं वे अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जो सुनकर धर्म को मन में जगह नहीं देते।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी सुने हुए धर्म के अर्थ पर विचार करते हैं वे अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जो सुने हुए धर्म के अर्थ पर विचार नहीं करते।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी अर्थ तथा धर्म को जानकर धर्मानुसार आचरण करते हैं वे अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जो अर्थ तथा धर्म को न जान कर धर्मानुसार आचरण नहीं करते ।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी प्रभावित होने के स्थान पर प्रभावित होते हैं वे अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जो प्रभावित होने के स्थान पर प्रभावित नहीं होते।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी प्रभावित होकर ठीक तरह से प्रयत्नवान होते हैं वे अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जो प्रभावित होकर ठीक से प्रयत्नवान नहीं होते।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी निर्वाण का ध्यान कर समाधि लाभ करते हैं, चित्त की एकाग्रता प्राप्त करते हैं, वे अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जो निर्वाण का ध्यान कर समाधि लाभ नहीं करते, चित्त की एकाग्रता लाभ नहीं करते।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी श्रेष्ठ-उत्तम रसके लाभी हैं वे अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है, जो श्रेष्ठ उत्तम रस के लाभी नहीं हैं, और कन्द-मूल खाकर या भिक्षाटन कर गुजारा करते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी अर्थ-रस, धर्म-रस तथा विमुक्ति-रस के लाभी हैं वे अल्प-संख्यक हैं, ऐसे ही प्राणियों की संख्या अधिक है जो अर्थ-रस, धर्म-रस, तथा विमुक्ति-रस के लाभी नहीं हैं। इस लिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि हम अर्थ-रस, धर्म-रस तथा विमुक्ति-रस के लाभी होंगे। भिक्षुओ, ऐसा ही सीखना चाहिये।"

२. "भिक्षुओ, जैसे इस जम्बुद्वीप में रमणीय उद्यान, रमणीय-वन, रमणीय-भूमि तथा रमणीय-पुष्करणियाँ थोड़ी ही हैं, अधिकता तो ऊँची-नीची, नदी से कटी, झाड़-झंखाड़ वाली भूमि तथा विषम पर्वत प्रदेशों की ही है।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो मनुष्य-योनि से मरकर फिर मनुष्य ही होकर जन्म ग्रहण करते हैं वे अल्प-संख्यक हैं, उन्हीं प्राणियों की संख्या अधिक है जो मनुष्य-योनि से मर कर नरक में पैदा होते हैं, पशु होकर पैदा होते हैं तथा प्रेत होकर पैदा होते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी मनुष्य-योनि से मर कर देव-लोक में जन्म ग्रहण करते हैं वे अल्प-संख्यक हैं, उन्हीं प्राणियों की संख्या अधिक है जो मनुष्य-योनि से मर कर नरक में पैदा होते हैं, पशु होकर पैदा होते हैं तथा प्रेत होकर पैदा होते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी देव-योनि से च्युत होकर देव-योनि में जन्म ग्रहण करते हैं वे अल्प-संख्यक हैं; उन्हीं प्राणियों की संख्या अधिक है जो देव-योनि से च्युत होकर नरकमें जन्म ग्रहण करते हैं, पशु होकर जन्म ग्रहण करते हैं, तथा प्रेत होकर जन्म ग्रहण करते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी देव-योनि से च्युत होकर मनुष्य-लोक में जन्म ग्रहण करते हैं वे अल्प-संख्यक हैं उन्हीं प्राणियों की संख्या अधिक है जो देव-योनि से च्युत होकर नरक में जन्म ग्रहण करते हैं, पशु होकर जन्म ग्रहण करते हैं तथा प्रेत होकर जन्म ग्रहण करते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी नरक से च्युत होकर मनुष्य लोक में जन्म ग्रहण करते हैं वे अल्प-संख्यक हैं, उन्हीं प्राणियों की संख्या अधिक है जो नरक से च्युत होकर नरक में जन्म ग्रहण करते हैं, पशु होकर जन्म ग्रहण करते हैं, तथा प्रेत होकर जन्म ग्रहण करते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी पशु-योनि से च्युत होकर मनुष्य-लोक में जन्म ग्रहण करते हैं वे अल्प-संख्यक हैं, उन्हीं प्राणियों की संख्या अधिक है जो पशु-योनि से च्युत होकर नरक में पैदा होते हैं तथा प्रेत होकर पैदा होते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी पशु-योनि से च्युत होकर देव-लोक में जन्म ग्रहण करते हैं वे अल्प-संख्यक हैं, उन्हीं प्राणियों की संख्या अधिक है जो पशु-योनि से च्युत होकर नरक में पैदा होते हैं, पशु-योनि में पैदा होते हैं तथा प्रेत-योनि में पैदा होते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी पशु-योनि से च्युत होकर देव-लोक में जन्म ग्रहण करते हैं वे अल्प संख्यक हैं, उन्हीं की संख्या अधिक है जो पशु-योनि से च्युत होकर नरक में जन्म ग्रहण करते हैं, पशु होकर पैदा होते हैं तथा प्रेत-योनि में जन्म ग्रहण करते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी प्रेत-योनि से च्युत होकर मनुष्य-लोक में जन्म ग्रहण करते हैं वे अल्प-संख्यक हैं, उन्हीं की संख्या अधिक है जो पशु-योनि से च्युत

होकर नरक में जन्म ग्रहण करते हैं, पशु-योनि में जन्म ग्रहण करते हैं तथा प्रेत-योनि में जन्म ग्रहण करते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जो प्राणी प्रेत-योनि से च्युत होकर देव-लोक में जन्म-ग्रहण करते हैं वे अल्प संख्यक हैं, उन्हीं की संख्या अधिक है जो प्रेत-योनि से च्युत होकर नरक-लोक में जन्म ग्रहण करते हैं, पशु-योनि में जन्म ग्रहण करते हैं तथा प्रेत-योनि में जन्म ग्रहण करते हैं।

(२०)

१. "भिक्षुओ, यह जो आरण्यकत्व है, यह निश्चय-पूर्वक लाभ है, यह जो पिण्ड-पात्रत्व (=भिक्षाटन) है, यह जो पांशुकूलिकत्व (=फटे-पुराने चीथड़ों के चीवर धारण करना) है, यह जो त्रीचिवरधारी होना है, यह जो धर्म-कथिक होना है, यह जो विनय-धर होना है, यह जो बहु-श्रुत होना है, यह जो स्थविर होना है, यह जो चीवर आदि का लाभ है, यह जो अनुयाइयों का होना है, यह जो बहुत अनुयाइयों का होना है, यह जो श्रेष्ठ-कुल का होना है, यह जो परिष्कृत-वर्णवाला होना है, यह जो कल्याणी-वाणीवाला होना है, यह जो अल्पेच्छता है तथा यह जो निरोगी होना है।"

"२. भिक्षुओ, यदि कोई भिक्षु चुटकी बजाने के समय भर भी प्रथम-ध्यान का अभ्यास करता है तो हे भिक्षुओ, इतने से ही वह भिक्षु ध्यानी कहलाता है, शास्ता के अनुशासन में रहने वाला, उनके उपदेश के अनुसार आचरण करने वाला। वह भिक्षु व्यर्थ ही राष्ट्र-पिण्ड खाने वाला नहीं होता। जो भिक्षु, इसका बहुत अभ्यास करते हैं उनका तो कहना ही क्या!

"भिक्षुओ, यदि कोई भिक्षु, चुटकी बजाने के समय भर भी दूसरे-ध्यान का अभ्यास करता है............

"तीसरे-ध्यान का अभ्यास करता है........................

"चौथे-ध्यान का अभ्यास करता है........................

"मैत्री रूपी चित्त-विमुक्ति का अभ्यास करता है...............

"करुणा रूपी चित्त-विमुक्ति का अभ्यास करता है..............

"मुदिता रूपी चित्त-विमुक्ति का अभ्यास करता है............

"उपेक्षा रूपी चित्त-विमुक्ति का अभ्यास करता है.............

"१०. काय के प्रति कायानुपश्यी होकर विहार करता है, प्रयत्नशील, ज्ञानी, स्मृतिमान् तथा लोक में राग-द्वेष के वश में न होने वाला..............

"वेदनाओं के प्रति वेदनानुपश्यी होकर..........................

"चित्त के प्रति चित्तानुपश्यी होकर..........................

"धर्मों के प्रति धर्मानुपश्यी होकर.........................."

१४. "अनुत्पन्न पापपूर्ण अकुशल धर्मों को उत्पन्न न होने देने के लिये संकल्प करता है, प्रयत्न करता है, पराक्रम करता है, चित्त को रोकता है, कोशिश करता है..........................

"उत्पन्न पापपूर्ण अकुशल-धर्मों के प्रहाण के लिये संकल्प करता है, प्रयत्न करता है, पराक्रम करता है, चित्त को रोकता है, कोशिश करता है......."

"अनुत्पन्न कुशल-धर्मों को उत्पन्न करने के लिये संकल्प करता है, प्रयत्न करता है, पराक्रम करता है, चित्त को रोकता है, कोशिश करता है.........

"उत्पन्न कुशल-धर्मों की स्थिति के लिये, लुप्त न होने देने के लिये, बढ़ाने के लिये, विपुलता को प्राप्त कराने के लिये, पूर्णता को प्राप्त कराने के लिये, संकल्प करता है, प्रयत्न करता है, पराक्रम करता है, चित्त को रोकता है, कोशिश करता है।"

१८. "छन्द (=संकल्प) -समाधि-प्रधान (=प्रयत्न) -संस्कार युक्त ऋद्धि का अभ्यास करता है............

"वीर्य्य-समाधि-प्रधान-संस्कार युक्त ऋद्धि का अभ्यास करता है......

"चित्त-समाधि-प्रधान-संस्कार-युक्त ऋद्धि का अभ्यास करता है.......

"विमंसा (=विवेक)-समाधि-प्रधान-संस्कार-युक्त ऋद्धि का अभ्यास करता है................."

२२. "श्रद्धा-इन्द्रिय का अभ्यास करता है..................

"वीर्य्य-इन्द्रिय का अभ्यास करता है......................

"स्मृति-इन्द्रिय का अभ्यास करता है......................

"समाधि-इन्द्रिय का अभ्यास करता है....................

"प्रज्ञा-इन्द्रिय का अभ्यास करता है......................

श्रद्धा-बलका अभ्यास करता है..........................

"वीर्य्य-बल का अभ्यास करता है..........................

"स्मृति-बल का अभ्यास करता है..............................

"समाधि-बल का अभ्यास करता है..............................

"प्रज्ञा-बल का अभ्यास करता है..............................

३२. "स्मृति-सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है..............

"धर्म-विचय-सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है...............

"वीर्य्य-सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है....................

"प्रीति-सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है............

"प्रश्रब्धि-सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है............

"समाधि-सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है............

"उपेक्षा-सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है............

"सम्यक्-दृष्टि का अभ्यास करता है..................

३४. "सम्यक्-संकल्प का अभ्यास करता है............

"सम्यक्-वाणी का अभ्यास करता है............

"सम्यक्-कर्मान्त का अभ्यास करता है...............

"सम्यक्-आजीविका का अभ्यास करता है..............

"सम्यक्-व्यायाम का अभ्यास करता है....................

"सम्यक्-स्मृति का अभ्यास करता है...............

"सम्यक्-समाधि का अभ्यास करता है..............."

४७. "अपने भीतर रूप-संज्ञावाला होकर बाहर सीमित सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपों को देखता है और उन्हें अपने वश में कर लेने पर उस की धारणा होती है कि मैं जानता हूँ, देखता हूँ................

"अपने भीतर रूप-संज्ञावाला होकर बाहर असीम सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपों को देखता है और उन्हें अपने वश में कर लेने पर उसकी धारणा होती है कि मैं जानता हूँ, देखता हूँ................

"अपने भीतर अरूप-संज्ञा वाला होकर सीमित सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोंको देखता है और उन्हें अपने वश में कर लेने पर उसकी धारणा होती है कि मैं जानता हूँ, देखता हूँ................

"अपने भीतर अरूप-संज्ञावाला होकर असीम सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपों को देखता है और उन्हें अपने वश में कर लेने पर उसकी धारणा होती है कि मैं जानता हूँ, देखता हूँ....................

"अपने भीतर अरूप-संज्ञावाला होकर बाहर नीले, नील-वर्ण के, नीली-रंगत के तथा नीली-चमक के रूपों को देखता है और उन्हें अपने वश में कर लेने पर उसकी धारणा होती है कि मैं जानता हूँ, देखता हूँ.................

"अपने भीतर अरूप-संज्ञा वाला होकर बाहर, पीले, पीत वर्ण के, पीली-रंगतके तथा पीली-चमक के रूपों को देखता है...............

"अपने भीतर अरूप-संज्ञावाला होकर बाहर लाल, रक्त-वर्ण के, लाल-रंगत के तथा लाल-चमक के रूपों को देखता है..........

"अपने भीतर अरूप-संज्ञावाला होकर बाहर सफेद, श्वेत-वर्ण के, सफेद-रंगत के, सफेद-चमक के रूपों को देखता है............."

५५. "रूप वाला होकर रूपों को देखता है.............

"अपने भीतर अरूप-संज्ञावाला होकर बाहर रूपों को देखता है......

"शोभन है' इसी धारणा वाला होता है...........

"सभी रूप-संज्ञाओं का अतिक्रमण कर, सभी प्रतिघ-संज्ञाओं को अस्त कर, सभी नानत्व संज्ञाओं को मन से दूर कर 'आकाश अनन्त है' ऐसा मान कर आकाशानञ्चायतन को प्राप्त कर विहार करता है..............

"सारे आकाशानञ्चायतन का अतिक्रमण कर 'विज्ञान अनन्त है' ऐसा मानकर विज्ञानञ्चायतन को प्राप्त कर विहार करता है.............

"सारे विज्ञानञ्चायतन का अतिक्रमण कर 'कुछ नहीं है' ऐसा मानकर 'अकिञ्चञ्जायतन' को प्राप्त कर विहार करता है..............

"सारे 'अकिञ्चञ्जायतन' का अतिक्रमण कर 'नेवसञ्जानासञ्जायतन' को प्राप्त कर विहार करता है.............

"सारे 'नेवसञ्जानासञ्जायतन' का अतिक्रमण कर 'सञ्जावेदयितनिरोध को प्राप्त कर विहार करता है............."

६३. "पृथ्वी कसिण (ध्यान-विधि) का अभ्यास करता है.........

"जल-कसिण का अभ्यास करता है............

"तेज (=अग्नि)-कसिण का अभ्यास करता है..........

"वायु-कसिण का अभ्यास करता है...........

"नील-कसिण का अभ्यास करता है............

"पीत-कसिण का अभ्यास करता है...........

"लोहित-कसिण का अभ्यास करता है.............

"ओदात (=श्वेत)-कसिण का अभ्यास करता है...........

"आकाश-कसिण का अभ्यास करता है............

"विज्ञान-कसिण का अभ्यास करता है...............

७३. अशुभ-संज्ञा का अभ्यास करता है............

"मरण-संज्ञा का अभ्यास करता है..............

"आहार के सम्बन्ध में प्रतिकूल-संज्ञा का अभ्यास करता है.........

"सारे लोक के प्रति अनासक्ति-भाव का अभ्यास करता है।.......

"अनित्य-संज्ञा का अभ्यास करता है.............

"अनित्य के बारे में दुःख संज्ञा का अभ्यास करता है...........

"दुःख के बारेमें अनात्म-संज्ञा का अभ्यास करता है...........

"प्रहाण-संज्ञा का अभ्यास करता है.........

"वैराग्य-संज्ञा का अभ्यास करता है............

"निरोध-संज्ञा का अभ्यास करता है............,..

"अनित्य-संज्ञा का अभ्यास करता है...............

"अनात्म-संज्ञा का अभ्यास करता है...............

"मरण-संज्ञा का अभ्यास करता है............

"आहार के सम्बन्ध में प्रतिकूल-भावना का अभ्यास करता है.......

"सारे लोक के प्रति अनासक्ति-भाव का अभ्यास करता है.........

"अस्थि-संज्ञा का अभ्यास करता है..............

"(लाश) फूल जाने की संज्ञा का अभ्यास करता है..........

"नीली पड़ जाने की संज्ञा का अभ्यास करता है.............

"छेद हो जाने की संज्ञा का अभ्यास करता है............

"सूज जाने की संज्ञा का अभ्यास करता है...........

"९३. बुद्धानुस्मृति का अभ्यास करता है...........

"धर्मानुस्मृति का अभ्यास करता है................

"संघानुस्मृति का अभ्यास करता है...............

"शील-अनुस्मृति का अभ्यास करता है...........

"त्यागानुस्मृति का अभ्यास करता है..........

"देवतानुस्मृति का अभ्यास करता है।............

"आनापानुस्मृति का अभ्यास करता है।.............

"मरण-स्मृति का अभ्यास करता है............

"काय सम्बन्धी-स्मृति का अभ्यास करता है.........

"उपशमानुस्मृति का अभ्यास करता है..............

"१०३. प्रथम-ध्यान सहित श्रद्धा इन्द्रिय का अभ्यास करता है.....

"प्रथम-ध्यान सहित वीर्य्य इन्द्रिय का अभ्यासक रता है........

"प्रथम-ध्यान सहित स्मृति इन्द्रिय का अभ्यास करता है.......

"प्रथम-ध्यान सहित समाधि इन्द्रिय का अभ्यास करता है........

"प्रथम-ध्यान-सहित प्रज्ञा इन्द्रिय का अभ्यास करता है.........

"प्रथम............श्रद्धा-बल का अभ्यास करता है.......

"प्रथम............वीर्य्य-बल का अभ्यास करता है......

"प्रथम............स्मृति-बल का अभ्यास करता है........

"प्रथम............समाधि-बल का अभ्यास करता है....

"प्रथम............प्रज्ञा-बलका अभ्यास करता है.......

"११३. द्वितीय-ध्यान-सहित..............

"१२३. तृतीय-ध्यान-सहित..............

"१३३. चतुर्थ-ध्यान-सहित........................

"१४३. मैत्री-सहित...............................

"१५३. करुणा-सहित...............................

"१६३. मुदिता-सहित...............................

"१७३. उपेक्षा-सहित...............................

"१८३. श्रद्धा इन्द्रिय का अभ्यास करता है.....................

"वीर्य्य इन्द्रिय का अभ्यास करता है........................

"स्मृति इन्द्रिय का अभ्यास करता है..........................

"समाधि इन्द्रिय का अभ्यास करता है.........................

"प्रज्ञा इन्द्रिय का अभ्यास करता है..........................

"श्रद्धा बल का अभ्यास करता है ....

"वीर्य्य बल का अभ्यास करता है ....

"स्मृति बल का अभ्यास करता है। ....

"समाधि बल का अभ्यास करता है । ....

"प्रज्ञा बल का अभ्यास करता है ....

"इस प्रकार के भिक्षु को हे भिक्षुओ! ध्यानी कहते हैं, शास्ता के अनुशासन में रहनेवाला, उनके उपदेश के अनुसार आचरण करनेवाला; वह भिक्षु व्यर्थ ही राष्ट्र-पिण्ड खानेवाला नहीं होता। जो भिक्षु इस का बहुत अभ्यास करते हैं, उनका तो कहना ही क्या!"

(२१)

"१. भिक्षुओ, जो कोई भी चित्त से महासमुद्र का स्पर्श करता है, समुद्र में पड़नेवाली छोटी नदियाँ भी उसके अन्तर्गत ही आ जाती हैं, इसी प्रकार भिक्षुओ जो कोई काय गत-स्मृति का अभ्यास कर लेता है, उसे बढ़ा लेता है, जितने भी विद्या-पक्षीय कुशल-धर्म हैं उन सबका समावेश उसके अन्तर्गत हो जाता है।

"भिक्षुओ, एक धर्म का अभ्यास, एक धर्म का संवर्धन महान् संवेग का कारण होता है"

"महान् अर्थ का कारण होता है।

"महान् कल्याण का कारण होता है।

"स्मृति-सम्प्रजन्य का कारण होता है।

"ज्ञान-दर्शन-लाभ का कारण होता है।

"इसी जन्म में सुख पूर्वक रहने का कारण होता है।

"विद्या-विमुक्ति-फल के साक्षात करने का कारण होता है।

"किस एक धर्म का अभ्यास? कायगतस्मृति का अभ्यास? भिक्षुओ, इस एक धर्म का अभ्यास........विद्या-विमुक्ति-फल के साक्षात करने का कारण होता है।

"९. भिक्षुओ, एक धर्म का अभ्यास करने पर, एक धर्म का संवर्धन करने पर, शरीर भी शान्त होता है, चित्त भी शान्त होता है, वितर्क-विचार भी शान्त हो जाते हैं तथा सारे के सारे विद्या-पक्षीय धर्म परिपूर्णता को प्राप्त हो जाते हैं। किस एक धर्म का अभ्यास करने पर ? कायगत-स्मृति का अभ्यास करने पर। भिक्षुओ, इस एक धर्म का ....प्राप्त हो जाते हैं।"

"१३. भिक्षुओ, एक धर्म का अभ्यास करने पर, एक धर्मका संवर्धन करने पर अनुत्पन्न अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते, उत्पन्न अकुशल-धर्मों का प्रहाण हो जाता है। किस एक धर्म का अभ्यास करने पर ? काय-गत-स्मृति का अभ्यास करने पर।

"भिक्षुओ, इस एक धर्म का ....प्रहाण हो जाता है।"

"१५. भिक्षुओ, एक धर्म का अभ्यास करने पर, संवर्धन करने पर अनुत्पन्न कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं, उत्पन्न कुशल-धर्म वृद्धि को, विपुलता को प्राप्त होते हैं। किस एक धर्म का ? काय-गत-स्मृति का।

"भिक्षुओ, इस एक धर्म का........प्राप्त होते हैं।"

"१७. भिक्षुओ, एक धर्म का अभ्यास करने पर, संवर्धन करने पर अविद्या का प्रहाण होता है, विद्या उत्पन्न होती है, अहंकार का नाश होता है, अनुशयों का घात होता है तथा संयोजनों का प्रहाण होता है। किस एक धर्म का ? काय-गत-स्मृति का।"

"भिक्षुओ, इस एक धर्म का.............प्राप्त होते हैं।

"२२. भिक्षुओ, एक धर्म का अभ्यास करने पर, संवर्धन करने पर प्रज्ञा फूट पड़ती है, (पांच स्कन्धों की) उत्पत्ति न होने से निर्वाण की प्राप्ति होती है। किस एक धर्म का ? काय-गत-स्मृति का।

"भिक्षुओ, इस एक धर्म का.......प्राप्त होती है।"

"२४ भिक्षुओ, एक धर्म का अभ्यास करने पर, संवर्धन करने पर अनेक धातुओं का ज्ञान होता है, नांना धातुओं का ज्ञान होता है तथा नाना धातुओं का विश्लेषण करने की सामर्थ्य पैदा होती है। किस एक धर्म का ? काय-गत-स्मृति का।

"भिक्षुओ, इस एक धर्म का..........पैदा होती है।"

"२७. भिक्षुओ, एक धर्म का अभ्यास करने पर, संवर्धन करने पर स्रोतापत्ति-फल का साक्षात होता है, सकृदागामी-फल का साक्षात होता है, अनागामी-

फल का साक्षात होता है, अर्हत-फल का साक्षात होता है। किस एक धर्म का? काय-गत-स्मृति का।

"भिक्षुओ, इस एक धर्म का..........होता है।"

"३१. भिक्षुओ, एक धर्म का अभ्यास करने से, संवर्धन करने से, प्रज्ञाका लाभ होता है, प्रज्ञा की बृद्धि होती है, प्रज्ञा विपुल होती है, महान-प्रज्ञ होता है, बहु-प्रज्ञ होता है, विपुल-प्रज्ञ होता है, गम्भीर-प्रज्ञ होता है, दूर की सोचनेवाला होता है, भूरि-प्रज्ञ होता है, बहुल-प्रज्ञ होता है, शीघ्र-प्रज्ञ होता है, स्फूर्तिवाला होता है, चतुर होता है, तुरन्त सोचनेवाला होता है, तीक्षण-बुद्धिवाला होता है, तथा बींधनेवाली प्रज्ञावाला होता है। किस एक धर्म का? काय-गत-स्मृति का।

"भिक्षुओ, इस एक धर्म का अभ्यास करने से......प्रज्ञावाला होता है।"

"४७. भिक्षुओ, जो कायगत-स्मृति का परि-भोग नहीं करते वे अमृत का परिभोग नहीं करते। भिक्षुओ, जो कायगत-स्मृति का परिभोग करते हैं वे अमृत का परिभोग करते हैं।"

"४९. भिक्षुओ, जिन्होंने कायगत-स्मृति का परिभोग नहीं किया, उन्होंने अमृत का परिभोग नहीं किया। भिक्षुओ, जिन्होंने कायगत-स्मृति का परिभोग किया, उन्होंने अमृत का परिभोग किया।"

"५१. भिक्षुओ, जिनकी कायगत-स्मृति नष्ट हो गई उन का अमृत नष्ट हो गया। भिक्षुओ, जिनकी कायगत-स्मृति नष्ट नहीं हुई उनका अमृत नष्ट नहीं हुआ।"

"५३. भिक्षुओ, जिनकी कायगत-स्मृति विरोधिनी रही, वे अमृत विरोधी रहे, जिन की कायगत-स्मृति विरोधिनी नहीं रही वे अमृत-विरोधी नहीं रहे।"

"५५. भिक्षुओ, जिन्होंने कायगत-स्मृति के प्रति प्रमाद किया, उन्होंने अमृत के प्रति प्रमाद किया। भिक्षुओ, जिन्होंने कायगत-स्मृति के प्रति प्रमाद नहीं किया उन्होंने अमृत के प्रति प्रमाद नहीं किया।"

"५७. भिक्षुओ, जो कायगत-स्मृति को भूल गये वे अमृत को भूल गये। भिक्षुओ, जो कायगत-स्मृति को नहीं भूले, वे अमृत को नहीं भूले।"

"५९. भिक्षुओ, जिन्होंने कायगत-स्मृति का सेवन नहीं किया, उन्होंने अमृत का सेवन नहीं किया। भिक्षुओ, जिन्होंने कायगत-स्मृति का सेवन किया उन्होंने अमृत का सेवन किया।"

" ६१. भिक्षुओ, जिन्होंने काय-गत-स्मृति का अभ्यास नहीं किया, उन्होंने अमृत का अभ्यास नहीं किया। भिक्षुओ, जिन्होंने कायगत-स्मृति का अभ्यास किया उन्होंने अमृत का अभ्यास किया। "

" ६३. भिक्षुओ, जिन्होंने कायगत-स्मृति की बृद्धि नहीं की, उन्होंने अमृत की बृद्धि नहीं की। भिक्षुओ, जिन्होंने कायगत-स्मृति की बृद्धि की, उन्होंने अमृत की बृद्धि की। "

" ६५. भिक्षुओ, जो कायगत-स्मृति से अपरिचित रहे, वे अमृत से अपरिचित रहे। भिक्षुओ, जो कायगत-स्मृति से परिचित रहे, वे अमृत से परिचित रहे। "

" ६७. भिक्षुओ, जिन्हें कायगत-स्मृति का ज्ञान नहीं हुआ, उन्हें अमृत का ज्ञान नहीं हुआ। भिक्षुओ, जिन्हें कायगत-स्मृति का ज्ञान हुआ, उन्हें अमृत का ज्ञान हुआ।"

" ६९. भिक्षुओ, जिन्होंने कायगत-स्मृति का साक्षातकार नहीं किया, उन्होंने अमृत का साक्षातकार नहीं किया।"

" ७०. भिक्षुओ, जिन्होंने काय-गत-स्मृति का साक्षातकार किया, उन्होंने अमृत का साक्षातकार किया। "

एक निपात के सहस्र सूत्र समाप्त ।

दूसरा निपात

"ऐसा मैंने सुना—एक समय भगवान् श्रावस्ती में, जेतवन में अनाथ-पिण्डिक के आराम में विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षओं को सम्बोधित किया—"भिक्षुओ!" उन भिक्षुओं ने भगवान् को प्रत्युत्तर दिया—"भदन्त!" भगवान् ने ऐसा कहा—

"भिक्षुओ, दो दोष हैं। कौनसे दो? इहलोक-सम्बन्धी दोष तथा परलोक-सम्बन्धी दोष। भिक्षुओ, इहलोक-सम्बन्धी दोष कौनसा है? भिक्षुओ, एक आदमी देखता है कि एक चोर को, एक अपराधी को राजा के आदमी पकड़ कर ले जाते हैं और नाना प्रकार के दण्ड देते हैं—चाबुक से भी पीटते हैं, बेंत से भी पीटते हैं, मुग्दर से भी पीटते हैं, हाथ भी छेद देते हैं, पाँव भी छेद देते हैं, हाथ-पाँव भी छेद देते हैं, कान भी छेद देते हैं, नाक भी छेद देते हैं, कान-नाक भी छेद देते हैं, खोपड़ी निकालकर उस में गर्म लोहा भी डाल देते हैं, बालों सहित सिर की चमड़ी उखाड़ कर खोपड़ीसे कंकरोंको भी रगड़ते हैं, संडासी से मुँह खोलकर उसमें दीपक भी जला देते हैं, सारे शरीर पर तेल-बत्ती लपेट कर उस में आग भी लगा देते हैं, हाथ पर तेल-बत्ती लपेट कर उसमें आग भी लगा देते हैं, गले से गिट्टे तक की चमड़ी भी उतार देते हैं, गले से कटि-प्रदेश तक की चमड़ी और कटि-प्रदेश से गिट्टे तक की चमड़ी भी उतार देते हैं, दोनों कोहनियों तथा दोनों घुटनों में मेखें ठोक कर जमीन पर भी लिटा देते हैं, उभय-मुख काँटे गाड़-गाड़कर चमड़ी, माँस तथा नसें भी नचोट लेते हैं, सारे शरीर की चमड़ी को कार्षापण कार्षापण भर काट डालते हैं, शरीर को जहाँ-तहाँ शस्त्रों से पीट कर उस पर कंघी भी फेरते हैं, एक करवट लिटा कर कान में से मेख भी गाड़ देते हैं, बिना चमड़ी को हानि पहुँचाये अन्दर-अन्दर हड्ड़ी भी पीस डालते हैं, उबलता उबलता तेल भी डाल देते हैं, कुत्तों से भी कटवाते हैं, जीते जी सूली पर भी लटकाते हैं तथा तलवार से सिर भी काट डालते हैं।

"उसके मन में यह होता है—जिस तरह के पाप-कर्म करने से एक चोर को, एक अपराधी को राजा के आदमी पकड़कर ले जाते हैं और नाना प्रकार के दण्ड देते हैं, चाबुक से भी पीटते हैं...... तलवार से सिर भी काट डालते हैं। मैं भी

यदि ऐसा पाप-कर्म करूँगा, तो मुझे भी राजा के आदमी पकड़कर ले जायेंगे और इसी प्रकार से नाना दण्डों से दण्डित करेंगे, चाबुक से भी पीटेंगे......तलवार से सिर भी काट डालेंगे।

"वह इसी जन्म में फल देनेवाले दुष्कर्म से डरकर दूसरों की वस्तुयें लूटता हुआ नहीं घूमता है। भिक्षुओ यह कहलाता है इसी जन्म में बुरा फल देनेवाला दुष्कर्म।"

"भिक्षुओ, परलोक में फल देने वाला दुष्कर्म क्या है ?"

"भिक्षुओ, कोई कोई इस प्रकार विचार करता है—कायिक-दुष्कर्म का परलोक में बुरा फल भुगतना पड़ता है, वाणी के दुष्कर्म का परलोक में बुरा फल भुगतना पड़ता है, मानसिक दुष्कर्म का परलोक में बुरा फल भुगतना पड़ता है, मैं शरीर से दुष्कर्म करता हूँ, वाणी से दुष्कर्म करता हूँ, मन से दुष्कर्म करता हूँ और यह क्या है जिससे मैं शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर नरक लोक में उत्पन्न होकर दुर्गति को, दुरवस्था को प्राप्त होऊं।

"वह परलोक में फल देने वाले दुष्कर्म से भयभीत हो जाने के कारण शरीर के दुष्कर्म का त्याग कर, शरीर के शुभ-कर्मों का अभ्यास करता है, वाणी के दुष्कर्मों का त्याग कर, वाणी के शुभ-कर्मों का अभ्यास करता है, मन के दुष्कर्मों का त्याग कर, मन के शुभ-कर्मों का अभ्यास करता है और अपने अपको शुद्ध बनाता है। भिक्षुओ, यह परलोक में फल देनेवाला दुष्कर्म कहलाता है। भिक्षुओ, ये दो प्रकार के दुष्कर्म हैं।

"इसलिये भिक्षुओ, यह सीखना चाहिये इसी जन्म में बुरा फल देनेवाले दुष्कर्म से डरेंगे, परलोक में बुरा फल देने वाले दुष्कर्म से डरेंगे, दोष में भय मानने-वाले होंगे, दोष में भय देखनेवाले। इसी प्रकार भिक्षुओ, सीखना चाहिये। भिक्षुओ, यह आशा करनी चाहिये कि दोष में भय माननेवाला, दोष में भय देखने-वाला सभी दोषों से मुक्त हो जायेगा।"

"भिक्षुओ, लोक में यह दो दुष्कर कार्य्य हैं,। कौन से दो ? एक तो गृहस्थों का घर में रहते समय (भिक्षुओं को) चीवर, पिण्डपात, शयनासन, ग्लान-प्रत्यय औषध आदि आवश्यक वस्तुओं का दान करने का दुष्कर कार्य्य ; दूसरा घर से बेघर हुए अनागारिक प्रव्रजितों का सभी चित्त-मलों को दूर करने का प्रयास।

भिक्षुओ, लोक में ये दो दुष्कर कार्य्य हैं। भिक्षुओ, इन दोनों दुष्कर कार्य्यों में यह जो सभी चित्त-मलों को दूर करने का प्रयास है, यह दुष्कर कार्य्य है। इसलिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि सभी चित्त-मलों को दूर करने का प्रयास करेंगे भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये।"

"३. भिक्षुओ, ये दो अनुताप पैदा करने वाली बातें हैं। कौनसी दो?

"भिक्षुओ, किसी ने शरीर से दुष्कर्म किया होता है, शुभ-कर्म नहीं किया होता; वाणी से दुष्कर्म किया होता है, शुभ-कर्म नहीं किया होता, मन से दुष्कर्म किया होता है, शुभ-कर्म नहीं किया होता।

"वह यह सोचकर अनुतप्त होता है कि मैंने शरीर से दुष्कर्म किया, शरीरसे शुभ-कर्म नहीं किया, यह सोचकर अनुतप्त होता है कि मैंने वाणी से दुष्कर्म किया, वाणी से शुभ-कर्म नहीं किया, यह सोचकर अनुतप्त होता हैं कि मन से दुष्कर्म किया, शुभ-कर्म नहीं किया। भिक्षुओ, ये दो अनुताप पैदा करनेवाली बातें हैं।"

"भिक्षुओ, ये दो अनुताप न पैदा करने वाली बातें हैं। कौनसी दो?

"भिक्षुओ, किसी ने शरीर से शुभ-कर्म किया होता है, दुष्कर्म नहीं किया होता......मन से दुष्कर्म......वह यह सोचकर अनुतप्त नहीं होता कि मैंने शरीर से शुभ-कर्म किया है, यह सोचकर अनुतप्त नहीं होता कि मैंने शरीर से दुष्कर्म नहीं किया है......मन से दुष्कर्म.........।

"भिक्षुओ, ये दो अनुताप न पैदा करनेवाली बातें हैं।"

"५. भिक्षुओ, मैंने दो बातों को गहराई से जाना है, एक तो कुशल-धर्मों में असन्तुष्ट रहने को, दूसरे सतत प्रयत्न करते रहने को। भिक्षुओ, मैंने सतत प्रयत्न किया है, यह सोचकर कि चाहे त्वचा, नसें और हड्डी ही शेष रह जायँ, शरीर का माँस-रक्त सूख जाये, जो कुछ पुरुष-सामर्थ्य, पुरुष-वीर्य्य तथा पुरुष-पराक्रम से प्राप्त हो सकता है, बिना उसे प्राप्त किये प्रयत्न नहीं रुकेगा। इस प्रकार भिक्षुओ, मेरी 'बोधि' अप्रमाद से ही प्राप्त हुई है, अनुत्तर-योगक्षेम भी अप्रमाद से ही प्राप्त हुआ है।

"भिक्षुओ, यदि तुम भी सतत प्रयत्न करते रहोगे—चाहे त्वचा, नसें और हड्डी ही शेष रह जायँ, शरीर का माँस-रक्त सूख जाये, जो कुछ पुरुष-सामर्थ्य, पुरुष-वीर्य्य, तथा पुरुष-पराक्रम से प्राप्त हो सकता है, बिना उसे प्राप्त किये प्रयत्न

12042

नहीं रुकेगा—तो भिक्षुओ, तुम भी जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिये कुल-पुत्र ठीक ही घर से बे-घर होकर प्रव्रजित हो जाते हैं, उस श्रेष्ठ, ब्रह्मचर्य्य-फल को इसी शरीर में अपने आप जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर, विहार करोगे।

"इसीलिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये : निरन्तर प्रयत्नशील रहेंगे—चाहे त्वचा, नसें और हड्डी ही शेष रह जायँ, शरीर का माँस-रक्त सूख जाये, जो कुछ पुरुष-सामर्थ्य, पुरुष-वीर्य्य, तथा पुरुष-पराक्रम से प्राप्त हो सकता है, बिना उसे प्राप्त किये प्रयत्न नहीं रुकेगा। भिक्षुओ, ऐसा ही सीखना चाहिये।"

"६. भिक्षुओ, दो धर्म हैं।

"कौनसे दो ?

"एक तो संयोजनीय-विषयों में मज़ा लेना और दूसरे संयोजनीय-विषयों की ओर से विरक्त होना। भिक्षुओ, संयोजनीय-विषयों में मज़ा लेनेवाला राग से मुक्त नहीं होता, द्वेष से मुक्त नहीं होता, मोह से मुक्त नहीं होता। राग, द्वेष तथा मोह से मुक्त न होने के कारण वह जाति, जरा, मरण, शोक, रोने-पीटने, दुःख, दौर्मनस तथा चिन्ता से मुक्त नहीं होता, मैं कहता हूँ कि वह दुःख से मुक्त नहीं हो सकता।

"भिक्षुओ, संयोजनीय-विषयों की ओर से विरक्त रहनेवाला, राग से मुक्त होता है, द्वेष से मुक्त होता है, मोह से मुक्त होता है,। राग-द्वेष तथा मोह से मुक्त होने के कारण वह जाति, जरा, मरण, शोक, रोने-पीटने, दुःख-दौर्मनस तथा चिन्ता से मुक्त होता है, मैं कहता हूँ कि वह दुःख से मुक्त होता है।"

"भिक्षुओ, दो कृष्ण-धर्म हैं ?

"कौनसे दो।

"निर्लज्ज होना तथा दुष्कर्म करने में निधड़क होना। भिक्षुओ, ये दो कृष्ण-धर्म हैं।"

"भिक्षुओ, दो शुक्ल-धर्म हैं ?

"कौन से दो ?

"लज्जी होना तथा दुष्कर्म करने में निधड़क न होना। भिक्षुओ ये दो शुक्ल-धर्म हैं।"

"९. भिक्षुओ, ये दो शुक्ल-धर्म लोक का पालन करते हैं। कौन से दो ?

"लज्जी होना तथा दुष्कर्म करने में निधड़क न होना। भिक्षुओं, यदि ये दो शुक्ल-धर्म लोक का पालन न करें तो न माता दिखाई दे, न मौसी दिखाई दे, न मामी दिखाई दे, न गुरु-पत्नी दिखाई दे अथवा न अपने से बड़े किसी की भार्य्या दिखाई दे ; लोक एक दम गड़-बड़ हो जाय। जैसे भेड़, बकरी, मुर्गी, सूअर, कुत्ते तथा गीदड़। क्योंकि भिक्षुओ, ये दो शुक्ल-धर्म लोक का पालन करते हैं, इसीसे माता भी दिखाई देती है, मौसी भी दिखाई देती है, मामी भी दिखाई देती है, गुरु-पत्नी भी दिखाई देती है और अपने से बड़े किसी की भार्य्या भी दिखाई देती है।"

"१०. भिक्षुओ, दो वर्षा-वास हैं ?

"कौन से दो ?

"पहला और पिछला ? भिक्षुओ, ये दो वर्षावास हैं।"

"भिक्षुओ, ये दो बल हैं।

"कौन से दो ?

"विचार-बल तथा अभ्यास-बल। भिक्षुओ, विचार-बल (प्रतिसंख्यान-बल) कौनसा है ?

"भिक्षुओ, एक (आदमी) यह विचार करता है कि शरीर से किये जाने-वाले दुष्कर्म का इस लोक तथा परलोक में बुरा परिणाम होता है, वाणी से किये जाने-वाले दुष्कर्म का इस लोक तथा परलोक में बुरा परिणाम होता है, मन से किये जानेवाले दुष्कर्म का इस लोक तथा परलोक में बुरा परिणाम होता है।

"वह यह विचार कर, शरीर के दुष्कर्मो का त्याग कर, शरीर के शुभ-कर्मो का अभ्यास करता है, ... मन के दुष्कर्मों का त्याग कर, मन के शुभ-कर्मों का अभ्यास करता है, वह पवित्र-जीवन व्यतीत करता है। भिक्षुओ, यह विचार-बल कहलाता है।

"भिक्षुओ, अभ्यास-बल (भावना-बल) कौनसा है ?

"भिक्षुओ, यह जो अभ्यास-बल है यह साधकों (=शैक्षों) का बल है। साधक (=शैक्ष) इसी बल से राग का त्याग करता है, द्वेष का त्याग करता है, मोह का त्याग करता है, राग, द्वेष तथा मोह का त्याग कर जो अकुशल-कर्म हैं, उन्हें नहीं करता है, जो पाप-कर्म हैं उनसे विरत रहता ह।

"भिक्षुओ, यह अभ्यास-बल कहलाता है। भिक्षुओ, ये दो बल हैं।"

" भिक्षुओ, ये दो बल हैं?

" कौनसे दो ?

" विचार-बल तथा अभ्यास-बल।

" भिक्षुओ, विचार-बल कौनसा है ? भिक्षुओ, एक आदमी यह विचार करता है...... (संख्या १)। भिक्षुओ, यह कहलाता है विचार-बल।"

" भिक्षुओ, अभ्यास-बल कौन सा है ?

" भिक्षुओ, भिक्षु स्मृति सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है जो कि विवेकाश्रित है, वैराग्य-आश्रित है, निरोधाश्रित है और जिसके अन्तमें सम्पूर्ण त्याग है।

" (शारीरिक तथा मानसिक) धर्मों का विचार करने के सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है, जो कि.......।

" वीर्य्य सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है...................।

" प्रीति सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है.................।

" प्रश्रब्धि सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है.................।

" समाधि सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है.................।

" उपेक्षा सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है.................।

" भिक्षुओ, इसे अभ्यास-बल कहते हैं। भिक्षुओ, ये दो बल हैं।"

३. " भिक्षुओ, ये दो बल हैं।

" कौन से दो ?

" विचार-बल तथा अभ्यास-बल।

" भिक्षुओ, विचार-बल कौनसा है ?

" भिक्षुओ, एक आदमी.......यह विचार-बल कहलाता है।... (देखें—सं० १)

" भिक्षुओ, अभ्यास-बल कौनसा है ?

" भिक्षुओ, यहाँ एक भिक्षु काम-भोगों से दूर हो, अकुशल-बातों से दूर हो, सवितर्क, सविचार, एकान्तज, प्रीतिसुख-युक्त प्रथम-ध्यान-लाभी हो विहार करता है ; वितर्क-विचारों का उपशमन होने के अनन्तर, आन्तरिक प्रसाद-युक्त, चित्त की एकाग्रता-युक्त, वितर्क-विचार-रहित, समाधिज प्रीति-सुख-युक्त द्वितीय-ध्यान का लाभी हो विहार करता है; प्रीति से भी वैराग्य-युक्त ही, उपेक्षावान् बन विहार

करता है, स्मृतिमान हो, ज्ञानवान हो, शरीर-सुख का स्पर्श करता है, जिस के बारे में आर्य-जन कहते हैं कि उपेक्षावान है, स्मृतिमान है, सुखपूर्वक विहार करनेवाला है, ऐसा तृतीय-ध्यान प्राप्त कर विहार करता है ; सुख और दुःख दोनों का भी लोप होकर, सौमनस्य-दौर्मनस्य भावों का पहले ही लोप हुआ रहने से, अदुःख-असुख रूप, उपेक्षा-स्मृति से परिशुद्ध चतुर्थ-ध्यान लाभी हो विहार करता है । भिक्षुओ, यह कहलाता है अभ्यास-बल । भिक्षुओ, ये दो बल हैं ।"

४. "भिक्षुओ, तथागत की धर्म-देशना दो प्रकार की होती है। कौन से दो प्रकार की ? संक्षिप्त तथा विस्तृत। भिक्षुओ, ये दो प्रकार की तथागत की धर्म-देशना है।

"भिक्षुओ, जिस किसी अधिकरण में प्रतिवादी-भिक्षु तथा वादी-भिक्षु स्वयं अपने बारे में सम्यक् विचार नहीं करते, भिक्षुओ, उस अधिकरण में इसी बात की आशा करनी चाहिये कि उनका कलह दीर्घ-काल तक जारी रहेगा, वे परस्पर कठोर बोलते रहेंगे और मार-पीट भी करते रहेंगे तथा भिक्षु सुखपूर्वक न रह सकेंगे।

"भिक्षुओ, जिस किसी अधिकरण में प्रतिवादी-भिक्षु तथा वादी-भिक्षु स्वयं अपने बारे में सम्यक् विचार करते हैं, भिक्षुओ, उस अधिकरण में इस बात की आशा रखनी चाहिये कि न उनका कलह दीर्घ-काल तक जारी रहेगा, न वे परस्पर कठोर बोलते रहेंगे और न मारपीट करते रहेंगे तथा भिक्षु सुखपूर्वक रह सकेंगे।

"भिक्षुओ, प्रतिवादी-भिक्षु अपने बारे में किस प्रकार सम्यक् विचार करता है ?

"भिक्षुओ, प्रतिवादी-भिक्षु अपने बारे में इस प्रकार सम्यक् विचार करता है :—मैंने शरीर से कुछ दोष किया । उस भिक्षु ने देख लिया कि मैंने शरीर से कुछ दोष किया । यदि मैंने शरीर से कोई दोष न किया होता तो वह भिक्षु न देखता कि मैंने शरीर से कोई दोष किया है । क्योंकि मैंने शरीर से दोष किया, इसीलिये उस भिक्षु ने देखा कि मैंने शरीर से दोष किया । यह देखकर कि मैंने शरीर से दोष किया वह भिक्षु असन्तुष्ट हुआ, असन्तुष्ट होने से उस भिक्षु ने मुझे असन्तुष्ट करनेवाले वचन कहे । उस भिक्षु से असन्तोषपूर्ण वचन सुनकर मैं असन्तुष्ट हुआ । असन्तुष्ट होकर मैंने दूसरों से कहना-सुनना किया । इसमें मेरा ही दोष

है, मेरा ही अपराध है जैसे माल पर बिना कस्टम–डयूटी [1] दिये उसे ले जानेवाला अपराधी हो।

"भिक्षुओ, वादी-भिक्षु अपने बारे में किस प्रकार सम्यक् विचार करता है ?

"भिक्षुओ, वादी-भिक्षु अपने बारे में इस प्रकार सम्यक् विचार करता है :– इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया। मैंने देखा कि इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया। यदि यह भिक्षु शरीर से कुछ दुष्कर्म न करता तो मैं यह न देखता कि इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया है। क्योंकि इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया है, तभी मैंने देखा है कि इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया है। यह देखकर कि इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया है, मैं असन्तुष्ट हुआ। असन्तुष्ट होकर मैंने इस भिक्षु को असन्तुष्ट करनेवाली बात कही। मेरी असन्तुष्ट करने वाली बात सुनकर यह भिक्षु असन्तुष्ट हुआ। असन्तुष्ट होकर इसने दूसरों से कहना-सुनना किया। इसमें मेरा ही दोष है, मेरा ही अपराध है, जैसे कोई माल पर बिना कस्टम-डयूटी दिये उसे लेजाने वाला अपराधी हो।

"भिक्षुओ, वादी-भिक्षु अपने बारे में इस प्रकार सम्यक् विचार करता है।

"भिक्षुओ, जिस किसी अधिकरण में प्रतिवादी-भिक्षु तथा वादी-भिक्षु स्वयं अपने बारे में सम्यक् विचार नहीं करते, भिक्षुओ, उस अधिकरण में इस बात की आशा रखनी चाहिये कि उनका कलह दीर्घ-काल तक जारी रहेगा, वे परस्पर कठोर बोलते रहेंगे और मारपीट भी करते रहेंगे तथा भिक्षु सुखपूर्वक न रह सकेंगे।

"भिक्षुओ, जिस किसी अधिकरण में प्रतिवादी-भिक्षु तथा वादी-भिक्षु स्वयं अपने बारे में सम्यक् विचार करते हैं, भिक्षुओ, उस अधिकरण में इस बात की आशा रखनी चाहिये कि न उन का कलह दीर्घ-काल तक जारी रहेगा, न वे परस्पर कठोर बोलते रहेंगे और न मार-पीट ही करते रहेंगे तथा भिक्षु सुखपूर्वक रह सकेंगे।

६. एक ब्राह्मण जहाँ भगवान् (बुद्ध) थे वहाँ गया। जाकर भगवान् के साथ बातचीत की और कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकने के बाद वह ब्राह्मण एक ओर जाकर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस ब्राह्मण ने भगवान् को कहा—"भो गौतम ! इसका क्या कारण है, क्या हेतु है, जिससे कुछ प्राणी शरीर

---

१. कस्टम–डयूटी=सुंक।

छूटने पर, मरने के अनन्तर दुर्गति को प्राप्त होते हैं, नरक-लोक में उत्पन्न होते हैं ?"

"ब्राह्मण ! इसका कारण, इसका हेतु अधर्म-चर्य्या है, विषम-चर्य्या है जिससे कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर, दुर्गति को प्राप्त होते हैं।"

"भो गौतम ! इसका क्या कारण है, क्या हेतु है जिससे कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर, सुगति को प्राप्त होते हैं, स्वर्ग-लोक में उत्पन्न होते हैं ?"

"ब्राह्मण ! इसका कारण, इसका हेतु धर्म-चर्य्या है, सम-चर्य्या है जिससे कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर सुगति को प्राप्त होते हैं, स्वर्ग-लोक में उत्पन्न होते हैं।"

"सुन्दर गौतम ! बहुत सुन्दर गौतम ! जैसे कोई उल्टे को सीधा कर दे, ढँके को उघाड़ दे, मार्ग-भ्रष्ट को रास्ता बता दे अथवा अन्धेरे में मशाल जला दे, जिससे आँखवाले चीजों को देख सकें। इसी प्रकार गौतम ने नाना प्रकार से धर्म को प्रकाशित किया है। मैं भगवान् गौतम, (उनके) धर्म तथा संघ की शरण जाता हूँ। भगवान् शरीर में प्राण रहने तक मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

७. तब जाणुस्सोणी ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे वहाँ आया और भगवान् के साथ बात चीत की...... एक और बैठे हुए जाणुस्सोणी ब्राह्मण ने भगवान् से कहा—"भो गौतम ! इसका क्या कारण है, क्या हेतु है जिससे कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर दुर्गति को प्राप्त होते हैं, नरक-लोक में उत्पन्न होते हैं ?"

"ब्राह्मण ! करने तथा न करने के कारण, यहाँ कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर दुर्गति को प्राप्त होते हैं, नरक-लोक में उत्पन्न होते हैं।"

"भो गौतम ! इसका क्या कारण है, क्या हेतु है जिससे कुछ प्राणी शरीर छूटने पर सुगति को प्राप्त होते हैं, स्वर्ग-लोक में उत्पन्न होते हैं ?"

"ब्राह्मण ! करने तथा न करने के कारण, यहाँ कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर सुगति को प्राप्त होते हैं, स्वर्ग-लोक में उत्पन्न होते हैं।"

"मैं भगवान् गौतम के इस संक्षेप से कथित तथा विस्तार से अकथित भाषण का विस्तार से अर्थ नहीं जानता। अच्छा हो यदि भगवान् मुझे इस प्रकार धर्मोपदेश करें जिससे मैं आप गौतम के संक्षिप्त भाषण को विस्तारपूर्वक जान लूँ।"

"तो ब्राह्मण सुन ! अच्छी तरह मन में कर, मैं कहूँगा।"

"बहुत अच्छा" कहकर जाणुस्सोणी ब्राह्मण ने भगवान् को प्रत्युत्तर दिया। भगवान ने यह कहा—

"ब्राह्मण ! यहाँ एक आदमी ने शरीर से दुष्कर्म किया होता है, शुभ-कर्म नहीं किया होता; वाणी से दुष्कर्म किया होता है, शुभ-कर्म नहीं किया होता; मन से दुष्कर्म किया होता है, शुभ-कर्म नहीं किया होता। इस प्रकार ब्राह्मण करने तथा न करने से यहाँ कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर दुर्गति को प्राप्त होते हैं, नरक-लोक में उत्पन्न होते हैं।

"ब्राह्मण ! यहाँ एक आदमी ने शरीर से शुभ-कर्म किया होता है, दुष्कर्म नहीं किया होता; वाणी से शुभ-कर्म किया होता है, दुष्कर्म नहीं किया होता; मन से शुभ-कर्म किया होता है, दुष्कर्म नहीं किया होता। इस प्रकार ब्राह्मण करने तथा न करने से यहाँ कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर सुगति को प्राप्त होते हैं, स्वर्ग-लोक में उत्पन्न होते हैं।"

"सुन्दर गौतम ! बहुत सुन्दर ! ....भगवान् ! शरीर में प्राण रहने तक मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

८. तब आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठे: एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्द को भगवान् ने यह कहा—"आनन्द ! मैं शरीर के दुष्कर्म, वाणी के दुष्कर्म तथा मन के दुष्कर्म को सम्पूर्ण रूप से अकरणीय कहता हूँ।"

"भन्ते ! भगवान् ने जो यह शरीर के दुष्कर्म, वाणी के दुष्कर्म तथा मन के दुष्कर्म को सम्पूर्ण रूप से अकरणीय कहा है, उस अकरणीय के करने पर किस दुष्परिणाम की आशा करनी चाहिये ?"

"आनन्द ! यह जो मैंने सम्पूर्ण रूप से अकरणीय कहा है......उस अकरणीय के करने पर इस दुष्परिणाम की आशा की जानी चाहिये—अपना-आप अपनी निन्दा करता है, विज्ञ लोग मालूम होने पर तिरस्कार करते हैं, अपयश होता है, मूढ़-स्मृति होकर मृत्यु को प्राप्त होता है, शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर दुर्गति को प्राप्त होता है, नरक-लोक में उत्पन्न होता है। आनन्द ! मैंने जो यह शरीर के दुष्कर्म, वाणी के दुष्कर्म तथा मनके दुष्कर्म को सम्पूर्ण रूप से अकरणीय कहा है, उस अकरणीय के करने पर, इस दुष्परिणाम की आशा करनी चाहिये।

"आनन्द ! मैं शरीर के शुभ-कर्म, वाणी के शुभ-कर्म और मन के शुभ-कर्म सम्पूर्ण रूप से करणीय कहता हूँ।

"भन्ते ! भगवान् ने जो यह शरीर के शुभ-कर्म, वाणी के शुभ-कर्म तथा मन के शुभ-कर्म को सम्पूर्ण रूप से करणीय कहा है, उस करणीय के करने पर किस सुपरिणाम की आशा करनी चाहिये ?"

"आनन्द ! यह जो मैंने सम्पूर्ण रूप से करणीय कहा है...... उस करणीय के करने पर इस सुपरिणाम की आशा की जानी चाहिये—अपना-आप अपनी निन्दा नहीं करता है; विज्ञ लोग मालूम होने पर तिरस्कार नहीं करते हैं; अपयश नहीं होता है; मूढ़-स्मृति होकर मृत्यु को प्राप्त नहीं होता है; शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर सुगति को प्राप्त होता है, स्वर्ग-लोक में उत्पन्न होता है। आनन्द ! यह जो मैंने सम्पूर्ण रूप से करणीय कहा है, उस करणीय के करने पर इस सुपरिणाम की आशा की जानी चाहिये।"

"९. भिक्षुओ, अकुशल को छोड़ो। भिक्षुओ, अकुशल छोड़ा जा सकता है। यदि भिक्षुओ यह न हो सकता कि अकुशल छोड़ा जा सकता, तो मैं ऐसा न कहता कि भिक्षुओ, अकुशल छोड़ो। लेकिन भिक्षुओ, क्योंकि अकुशल छोड़ा जा सकता है, इसलिये मैं ऐसा कहता हूँ 'भिक्षुओ, अकुशल छोड़ो।"

"भिक्षुओ, यदि अकुशल का प्रहाण होने से अहित और दुःख होता, तो मैं ऐसा नहीं कहता 'भिक्षुओ, अकुशल छोड़ो।' लेकिन क्योंकि भिक्षुओ अकुशल का प्रहाण हित तथा सुख का कारण होता है, इसलिये मैं ऐसा कहता हूँ, "भिक्षुओ, अकुशल छोड़ो।"

"भिक्षुओ, कुशल का अभ्यास करो। भिक्षुओ, कुशल का अभ्यास हो सकता है। भिक्षुओ, यदि यह न हो सकता कि कुशल का अभ्यास हो सकता, तो मैं ऐसा न कहता कि भिक्षुओ कुशल का अभ्यास करो। लेकिन क्योंकि भिक्षुओ, कुशल का अभ्यास हो सकता है, इसलिये मैं ऐसा कहता हूँ कि "भिक्षुओ, कुशलका अभ्यास करो।"

"भिक्षुओ, यदि कुशल का अभ्यास करने से अहित और दुःख होता, तो मैं ऐसा नहीं कहता, 'भिक्षुओ, कुशल का अभ्यास करो।' लेकिन क्योंकि भिक्षुओ, कुशल का अभ्यास हित और सुख के लिये होता है, इसलिये मैं यह कहता हूँ कि भिक्षुओ, कुशल का अभ्यास करो।"

"१०. भिक्षुओ, दो बातें सद्धर्म के नाश का उसके अन्तर्धान का कारण होती हैं। कौन सी दो बातें ?

"पाली के शब्दों का व्यतिक्रम तथा उनके अर्थ का अनर्थ करना।

"भिक्षुओ, पाली के शब्दों का व्यतिक्रम होने से उनके अर्थ का भी अनर्थ होता है। भिक्षुओ, ये दो बातें सद्धर्म के नाश का, उसके अन्तर्धान का कारण होती हैं।"

"भिक्षुओ, दो बातें सद्धर्म की स्थिति का, उसके नाश न होने का, उस के अन्तर्धान न होने का कारण होती हैं। कौन सी दो बातें ?

"पाली के शब्दों का ठीक-ठीक क्रम तथा उन का सही-सही अर्थ।

"भिक्षुओ, पाली के शब्दों का क्रम ठीक-ठीक रहने से उनका अर्थ भी सही-सही रहता है।

"भिक्षुओ, ये दो बातें सद्धर्म की स्थिति का, उसके नाश न होने का, उसके अन्तर्धान न होने का कारण होती हैं।"

"भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।

"कौनसे दो ?

"एक जो अपने दोष को दोष नहीं मानता, दूसरा जो अपने दोष को दोष माननेवाले को क्षमा नहीं करता। भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।"

"भिक्षुओ, ये दो पण्डित हैं।

"कौनसे दो ?

"एक जो अपने दोष को दोष मानता है, दूसरा जो अपने दोष को दोष माननेवाले को क्षमा करता है। भिक्षुओ, ये दो पण्डित हैं।"

"भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप करते हैं।

"कौनसे दो ?

"दुष्ट मनवाला द्वेषी तथा बे-समझ श्रद्धावान्। भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप करते हैं।"

"भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप करते हैं।

"कौनसे दो ?

"जिसका तथागत ने भाषण नहीं किया है, जो तथागत ने नहीं कहा है, उसे जो तथागत द्वारा भाषित अथवा तथागत द्वारा कहा गया कहता है, और जिसका

तथागत ने भाषण किया है, जो तथागत ने कहा है, उसे जो तथागत द्वारा अभाषित अथवा तथागत द्वारा नहीं कहा गया कहता है। भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्या-रोप करते हैं।?"

"४. भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप नहीं करते।

"कौनसे दो?

"जो तथागत द्वारा अभाषित है, जो तथागत द्वारा नहीं कहा गया है उसे जो तथागत द्वारा अभाषित, तथागत द्वारा नहीं कहा गया कहता है; जो तथागत द्वारा भाषित है, जो तथागत द्वारा कहा गया है, उसे जो तथागत द्वारा भाषित, तथागत द्वारा कहा गया कहता है। भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप नहीं करते।"

"भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप करते हैं। कौन से दो? जो नेय्यार्थ-सूत्र[1] को नीतार्थ-सूत्र[2] करके प्रकट करता है, और जो नीतार्थ-सूत्र को नेय्यार्थ-सूत्र करके प्रकट करता है। भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप करते हैं।"

"भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप नहीं करते हैं।

"कौनसे दो?

"जो नेय्यार्थ-सूत्र को नेय्यार्थ-सूत्र करके प्रकट करता है, जो नीतार्थ-सूत्र को नीतार्थ करके प्रकट करता है।

"भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप नहीं करते।"

"भिक्षुओ, पाप-कर्म करनेवाले के लिये दो गतियों में से एक गति की आशा करनी चाहिये—नरक या पशु-योनि।"

"भिक्षुओ, पुण्य-कर्म करनेवाले के लिये दो गतियों में से एक गति की आशा करनी चाहिये—देव-योनि या मनुष्य-योनि।"

"भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टि व्यक्ति के लिये दो गतियों में से एक गति की आशा करनी चाहिये—नरक या पशु योनि।"

"भिक्षुओ, सम्यक्-दृष्टि व्यक्ति के लिये दो गतियों में से एक गति की आशा करनी चाहिये—देव-योनि या मनुष्य-योनि।"

---

१. नेय्यार्थ=व्यवहार-भाषा; २. नीतार्थ=परमार्थ-भाषा

"भिक्षुओ, दुराचारी का दो जगह स्वागत होता है, नरक में या पशु-योनि में।"

"भिक्षुओ, सदाचारी का दो जगह स्वागत होता है देव-योनि में या मनुष्य-योनि में।"

"भिक्षुओ, मैं दो बातों का विचार कर जंगल में, बन में एकान्त-शयनासन का सेवन करता हूँ।

"कौनसी दो ?

"निजी इह-लौकिक सुख-विहार के लिये तथा बाद में आनेवाले लोगों पर अनुकम्पा करने के लिये। भिक्षुओ, मैं ये दो बातें विचार कर जंगल में, वन में एकान्त-शयनासन का सेवन करता हूँ।"

"भिक्षुओ, दो धर्म विद्या-पक्षीय हैं।

"कौनसे दो ?

"शमथ तथा विपश्यना। भिक्षुओ, शमथ के अभ्यास से किस उद्देश्य की सिद्धि होती है ? चित्त का विकास होता है। चित्त का विकास होने से किस उद्देश्य की सिद्धि होती है ? राग का प्रहाण होता है।

"भिक्षुओ, विपश्यना के अभ्यास से किस उद्देश्य की सिद्धि होती है ? प्रज्ञाका विकास होता है। प्रज्ञा का विकास होने से किस उद्देश्य की सिद्धि होती है ? अविद्या का प्रहाण होता है। भिक्षुओ, राग से अनुरक्त चित्त मुक्त नहीं होता और अविद्या से दूषित प्रज्ञा का विकास नहीं होता। भिक्षुओ, यह राग का विराग होने से चित्त की विमुक्ति तथा अविद्या का क्षय होने से प्रज्ञा की विमुक्ति है।"

"भिक्षुओ, मैं असत्पुरुष-भूमि तथा सत्पुरुष-भूमि की देशना करता हूँ। उसे सुनो, अच्छी तरह मन में धारण करो, कहता हूँ।"

"भन्ते, अच्छा" कहकर उन भिक्षुओं ने भगवान् को उत्तर दिया। भगवान् ने यह कहा–

"भिक्षुओ, असत्पुरुष-भूमि कौन सी है ?

"भिक्षुओ, असत्पुरुष अकृतज्ञ होता है, कृत-उपकार को न जाननेवाला। भिक्षुओ, इस अकृतज्ञता की, इस अकृतवेदिता की असत्पुरुषों ने ही प्रशंसा की है। भिक्षुओ, यह जो अकृतज्ञता है, यह जो अकृत-वेदिता है, यह सम्पूर्ण असत्पुरुष-भूमि है। भिक्षुओ, सत्पुरुष कृतज्ञ होता है, कृत-उपकार को जाननेवाला। भिक्षुओ,

इस कृतज्ञता की, इस कृतवेदिता की सत्पुरुषों ने ही प्रशंसा की है। भिक्षुओ, यह जो कृतज्ञता है यह जो कृत-वेदिता है, यह सम्पूर्ण सत्पुरुष-भूमि है।"

"भिक्षुओ, दो जनों का प्रत्युपकार सहज नहीं।

"किन दो का?

"माता का तथा पिता का। भिक्षुओ, सौ वर्ष तक एक कंधे पर माता को ढोये तथा एक कंधे पर पिता को ढोये, और वह उन की उबटन मलने, मर्दन करने, नहलाने तथा हाथ-पैर दबाने आदि की सेवा करे, और वे भी उस के कंधे पर ही मल-मूत्र कर दें, तो भी भिक्षुओ, यह न माता-पिता का कोई उपकार होता है और न प्रत्युपकार। भिक्षुओ, यदि इस सप्त-रत्न-बहुल पृथ्वी का ऐश्वर्य-राज्य भी माता-पिता को सौंप दिया जाये तो भी न उनका उपकार होता है और न प्रत्युपकार। यह किस लिये? भिक्षुओ, माता-पिता का पुत्रों पर बहुत उपकार है। वे उनका पालन करनेवाले हैं, पोषण करनेवाले हैं, वे उन्हें यह लोक दिखानेवाले हैं।

"भिक्षुओ, जो कोई अश्रद्धावान् माता-पिता को श्रद्धा में प्रतिष्ठित करता है, दुराचारी माता-पिता को सदाचार में प्रतिष्ठित करता है, कंजूस माता-पिता को त्याग में प्रतिष्ठित करता है, दु-प्रज्ञ माता-पिता को प्रज्ञा में प्रतिष्ठित करता है—तो इतने से माता-पिता का उपकार होता है, प्रत्युपकार होता है तथा अतिरिक्त-उपकार होता है।"

उस समय एक ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे वहाँ गया, जाकर भगवान् के साथ बातचीत की...... एक ओर बैठे हुए उस ब्राह्मण ने भगवान् से यह कहा :—

"आप गौतम का क्या वाद है, क्या मत है?"

"ब्राह्मण! मैं क्रिया-वादी हूँ तथा अक्रिया-वादी हूँ।"

"आप गौतम! क्रिया-वादी तथा अक्रिया-वादी किस प्रकार हैं?"

"मैं, ब्राह्मण, न करने की बात करता हूँ—शारीरिक दुष्कर्मों, वाणी के दुष्कर्मों, मन के दुष्कर्मों, अनेक प्रकार के पाप-कर्मों के न करने की बात करता हूँ। मैं, ब्राह्मण, करने की बात करता हूँ—शारीरिक शुभ-कर्मों, वाणी के शुभ-कर्मों, मन के शुभ-कर्मों, अनेक प्रकार के कुशल-कर्मों के करने की बात करता हूँ। ब्राह्मण! इस प्रकार मैं क्रिया-वादी तथा अक्रिया-वादी हूँ।"

"सुन्दर गौतम! बहुत सुन्दर! ......भगवान् शरीर में प्राण रहने तक मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

"४. उस समय अनाथ-पिण्डिक गृहपति जहाँ भगवान् थे वहाँ गया, जाकर भगवान् को प्रणाम कर ...... एक ओर बैठे हुए अनाथ-पिण्डिक गृहपति ने भगवान् से यह कहा—

"भन्ते ! लोक में दक्षिणार्ह कितने हैं ? दान कहाँ देना चाहिये ?"

"गृहपति ! लोक में दो दक्षिणार्ह हैं, शैक्ष तथा अशैक्ष। गृहपति ! ये दो दक्षिणार्ह हैं। इन्हें दान दिया जाना चाहिये।"

भगवान् ने यह कहा और यह कहकर तदनन्तर शास्ता ने यह कहा—

सेखो असेखो च इमस्मिं लोके
आहुणेय्या यजमानानं होन्ति
ते उज्जुभूता कायेन वाचाय उद चेतसा
खेत्तं तं यजमानानं एत्थ दिन्नं महप्फलं ॥

[यजमानों के लिये संसार में शैक्ष तथा अशैक्ष दो दक्षिणार्ह हैं। वे शरीर, वाणी तथा मन से ऋजु होते हैं। ये यजमानों के (पुण्य-) क्षेत्र हैं। इन्हें देने का महान् फल होता है।]

५. ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्ती में अनाथ-पिण्डिक के जेतवनाराम में विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् सारिपुत्र श्रावस्ती में मिगारमाता के पूर्वाराम प्रसाद में रहते थे। तब आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को सम्बोधित किया—"आयुष्मान् भिक्षुओ !" उन भिक्षुओं ने आयुष्मान् सारिपुत्र को प्रत्युत्तर दिया—

"आयुष्मान्।"

आयुष्मान् सारिपुत्र ने यह कहा—

"आयुष्मानो ! मैं भीतर-संयोजन वाले व्यक्ति के बारे में कहूँगा, बाह्य-संयोजन वाले व्यक्ति के बारे में कहूँगा, इसे सुनकर मन में अच्छी तरह स्थान दो। कहता हूँ।"

"आयुष्मान् ! बहुत अच्छा" कह उन भिक्षुओं ने आयुष्मान् सारिपुत्र को प्रत्युत्तर दिया। आयुष्मान् सारिपुत्र ने यह कहा—

"आयुष्मानो ! भीतर-संयोजनवाला व्यक्ति कौन सा होता है ?

"आयुष्मानो ! एक भिक्षु शीलवान् होता है, प्राति-मोक्ष के नियमों का पालन करनेवाला, आचर-गोचर से युक्त, अणु-मात्र-दोष से भी भयभीत होनेवाला तथा शिक्षा-पदों का सम्यक् पालन करने वाला।

"वह शरीर के छूटने पर, मरने के अनन्तर, किसी देव-योनि में जन्म ग्रहण करता है। वह वहाँ से च्युत होकर आगामी होता है, फिर इस लोक में आनेवाला।

"आयुष्मानो ! ऐसा व्यक्ति भीतर-संयोजनवाला व्यक्ति कहलाता है, आगामी, फिर इस लोक में आनेवाला।

"आयुष्मानो ! बाह्य-संयोजन व्यक्ति कौनसा होता है ?

"आयुष्मानो ! एक भिक्षु शीलवान् होता है, प्रातिमोक्ष के नियमों का पालन करनेवाला, आचर-गोचर से युक्त, अणु-मात्र दोष से भी भय-भीत होनेवाला तथा शिक्षा-पदों का सम्यक् पालन करनेवाला।

"वह अन्यतम चित्त के विमोक्ष को प्राप्त कर विहार करता है। वह शरीर के छूटने पर, मरने के अनन्तर किसी देव-योनि में जन्म ग्रहण करता है। वह वहाँ से च्युत होकर अनागामी होता है, फिर इस लोक में नहीं आने वाला।

"आयुष्मानो ! ऐसा व्यक्ति बाह्य-संयोजन वाला व्यक्ति कहलाता है, अनागामी, फिर इस लोक में न आने वाला।

"और भी फिर आयुष्मानो ! भिक्षु शीलवान् होता है...... सम्यक् पालन करने वाला।

"वह कामनाओं से ही निर्वेद प्राप्त करने के लिये, कामनाओं के ही विराग के लिये, कामनाओं के ही निरोध के लिये प्रयत्नवान् होता है। वह भव से ही निर्वेद प्राप्त करने के लिये, भव के ही विराग के लिये, भव के ही निरोध के लिये प्रयत्नवान होता है। वह तृष्णा का क्षय करने के लिये, प्रयत्नशील होता है। वह लोभ का क्षय करने के लिये प्रयत्नशील होता है। वह शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर किसी देव-योनि में जन्म ग्रहण करता है। वह वहाँ से च्युत होकर अनागामी होता है, फिर इस लोक में नहीं आनेवाला।

"आयुष्मानो ! ऐसा व्यक्ति बाह्य-संयोजन वाला व्यक्ति कहलाता है, अनागामी, फिर इस लोक में न आने वाला।"

६. उस समय बहुत से समान-चित्तवाले देवता जहाँ भगवान् थे वहाँ आये। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर स्थित उन देवताओं ने भगवान से यह कहा—

"भन्ते! मिगार-माता के पूर्वाराम प्रासाद में आयुष्मान सारिपुत्र ने भिक्षुओं को भीतर-संयोजनवाले तथा बाह्य-संयोजन वाले व्यक्ति के बारे में देशना की है। परिषद् प्रसन्न है। अच्छा हो यदि भन्ते! भगवान् कृपापूर्वक जहाँ सारिपुत्र हैं वहाँ चलें।" भगवानने चुप रहकर स्वीकार किया।

तब भगवान् जैसे कोई बलवान् पुरुष समेटी हुई बाँह को पसारे अथवा पसारी हुई बाँह को समेटे, उसी प्रकार जेतवन से अन्तर्धान होकर मिगार-माता के पूर्वाराम प्रासाद में आयुष्मान् सारिपुत्र के सामने प्रकट हुए। भगवान् बिछे आसन पर विराजमान् हुए। आयुष्मान् सारिपुत्र भी भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् सारिपुत्र को भगवान् ने यह कहा—

"सारिपुत्र! यहाँ बहुत से समान-चित्तवाले देवता जहाँ मैं था वहाँ आये। आकर मुझे प्रणाम कर एक ओर बैठ गये।

"सारिपुत्र! एक ओर स्थित उन देवताओं ने मुझे यह कहा—

"भन्ते! मिगार-माता के पूर्वाराम प्रासाद में स्थित आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को भीतर-संयोजनवाले व्यक्ति के बारे में तथा बाह्य-संयोजनवाले व्यक्ति के बारे में उपदेश दिया है। भन्ते! परिषद् प्रसन्न है। भन्ते! अच्छा हो यदि आप कृपा पूर्वक वहाँ चलें जहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र हैं। सारिपुत्र! वे देवता दस हों, बीस हों, तीस हों, चालीस हों, पचास हों, साठ हों वे सब सुई की नोक (गिरने) के स्थान पर खड़े हो जाते हैं और परस्पर एक दूसरे से रगड़ नहीं खाते।

"हो सकता है सारिपुत्र! तेरे मन में ऐसा हो कि उन देवताओं ने वहाँ इस प्रकार चित्त का अभ्यास किया है कि वे देवता चाहे दस हों, चाहे बीस हों, चाहे तीस हों, चाहे चालीस हों......सुई की नोक के स्थान पर रह सकते हैं और परस्पर एक दूसरे से रगड़ते नहीं। नहीं सारिपुत्र! ऐसा नहीं समझना चाहिये—यहीं उन देवताओं ने ऐसा चित्त-अभ्यास किया है कि वे चाहे दस हों......रगड़ते नहीं।

"इस लिये सारिपुत्र! यह सीखना चाहिये कि हम शान्त इन्द्रियोंवाले होंगे, शान्त मनवाले। हमारे शारीरिक-कर्म शान्त होंगे। वाणी शान्त होगी।

मन शान्त होगा। हम अपने सब्रह्मचारियों के प्रति शान्त ही व्यवहार करेंगे। सारिपुत्र! ऐसा ही सीखना चाहिये। जिन दूसरे अन्य-तैर्थिक परिव्राजकों ने इस धर्म को नहीं सुना वे विनाश को प्राप्त हुए।"

६. ऐसा मैंने सुना। एक समय आयुष्मान् महाकात्यायन कर्दम-दह के किनारे पर वर्णा में विहार कर रहे थे।

"उस समय आरामदण्ड ब्राह्मण जहाँ आयुष्मान् महाकात्यायन थे, वहाँ गया। जाकर आयुष्मान् कात्यायन के साथ बातचीत की और कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकने के बाद वह ब्राह्मण एक ओर बैठा।

एक ओर बैठे हुए आरामदण्ड ब्राह्मण ने आयुष्मान् महाकात्यायन को यह कहा—

"हे कात्यायन! इसका क्या हेतु है, इसका क्या कारण है कि क्षत्रिय भी क्षत्रियों के साथ विवाद करते हैं, ब्राह्मण भी ब्राह्मणों के साथ विवाद करते हैं, गृहपति (=वैश्य) भी गृहपतियों के साथ विवाद करते हैं?"

"काम-भोगों के प्रति आसक्ति के कारण, कामभोगों के जाल में फँसे होने के कारण, काम-भोगों के कीचड़ में धँसे होने के कारण, काम-भोगों के गर्त में पड़े होने के कारण हे ब्राह्मण! क्षत्रिय भी क्षत्रियों से विवाद करते हैं, ब्राह्मण भी ब्राह्मणों से विवाद करते हैं, गृहपति (=वैश्य) भी गृहपतियों के साथ विवाद करते हैं।"

"हे कात्यायन! इसका क्या हेतु है, इसका क्या कारण है कि श्रमण भी श्रमणों के साथ विवाद करते हैं?"

"दृष्टि (=मत-विशेष) के प्रति आसक्ति के कारण, दृष्टि के जाल में फँसे होने के कारण, दृष्टि के कीचड़ में धँसे होने के कारण, दृष्टि के गर्त में गड़े होने के कारण हे ब्राह्मण! श्रमण भी श्रमणों के साथ विवाद करते हैं।"

"हे कात्यायन! क्या कोई इस लोक में ऐसा है जो काम-भोगों की आसक्ति-बंधन आदि के तथा दृष्टि की आसक्ति और बंधन आदि के उस पार चला गया हो?"

"हे ब्राह्मण! लोक में ऐसा (व्यक्तित्व) है जो काम-भोगों की आसक्ति-बंधन आदि तथा दृष्टि की आसक्ति और बंधन आदि के उस पार चला गया है।"

"हे कात्यायन! लोक में ऐसा कौन है जो काम-भोगों की आसक्ति-बंधन आदि तथा दृष्टि की आसक्ति और बंधन आदि के उस पार चला गया है?"

"हे ब्राह्मण ! पूर्व जनपद में श्रावस्ती नाम का नगर है। इस समय वह भगवान् अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध वहाँ विहार करते हैं। हे ब्राह्मण ! वे भगवान् काम-भोगों की आसक्ति और बंधन आदि तथा दृष्टि की आसक्ति और बंधन आदि के उस पार चले गये हैं।"

ऐसा कहने पर आरामदण्ड ब्राह्मण ने आसन से उठ, वस्त्र को एक कंधे पर कर, दायें घुटने को पृथ्वी पर टेक, जिधर भगवान् थे उधर हाथ जोड़ तीन बार उदान वाक्य कहा—

"उन भगवान् अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध को नमस्कार है। उन भगवान् अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध को नमस्कार है। उन भगवान् अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध को नमस्कार है। उन भगवान् को जो काम-भोगों की आसक्ति और बंधन आदि तथा दृष्टि की आसक्ति और बंधन आदि के उस पार चले गये हैं।"

"सुन्दर है कात्यायन ! जैसे कोई उल्टे को सीधा कर दे, ढके को उघाड़ दे अथवा मार्ग-भ्रष्ट को रास्ता बता दे अथवा अन्धेरे में मशाल जला दे जिससे आँख वाले चीजों को देख सकें। इस प्रकार आप कात्यायन ने अनेक प्रकार से धर्म प्रकाशित किया है। हे कात्यायन ! मैं उन भगवान् गौतम, (उनके) धर्म तथा संघ की शरण जाता हूँ। हे कात्यायन ! आज से शरीर में प्राण रहने तक आप मुझे शरणागत उपासक जानें।"

७. एक समय आयुष्मान् महाकात्यायन मधुरा (मथुरा) में गुन्दवन में विहार करते थे। तब कण्डरायन ब्राह्मण जहाँ आयुष्मान महाकात्यायन थे, वहाँ आया। आकर आयुष्मान् महाकात्यायन के साथ......एक ओर बैठे हुए कण्डरायन ब्राह्मण ने आयुष्मान् महाकात्यायन को यह कहा—

"हे कात्यायन ! मैंने सुना है कि श्रमण कात्यायन बड़े, बूढ़े, ज्येष्ठ, आयु-प्राप्त ब्राह्मणों का न अभिवादन करता है, न सत्कार करता है, न उन्हें (आदरपूर्वक) आसन देता है। हे कात्यायन ! यदि यह ऐसा ही है कि श्रमण कात्यायन बड़े, बूढ़े, ज्येष्ठ, आयु-प्राप्त ब्राह्मणों का न अभिवादन करता है, न सत्कार करता है, न उन्हें (आदरपूर्वक) आसन देता है तो यह ठीक नहीं है।

"हे ब्राह्मण ! उन जाननेवाले, देखने वाले अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध ने ज्येष्ठ-भूमि तथा कनिष्ठ-भूमि की व्याख्या की है।

"हे ब्राह्मण ! यदि कोई आयु से अस्सी वर्षका हो, नब्बे वर्ष का हो अथवा सौ वर्ष का हो, किन्तु वह काम-भोग में रत हो, काम-भोग के बीच में रहता हो, काम-भोग की जलन से जलता हो, काम-भोग के वितर्कों द्वारा खाया जाता हो, काम-भोग के लिये उत्सुक रहता हो तो वह भी छोटा (बालक [१]) ही गिना जायेगा।

"हे ब्राह्मण ! यदि कोई छोटा भी हो, तरुण हो, काले बालोंवाला हो, श्रेष्ठ यौवन से युक्त हो, अपनी प्रथम-आयु में ही हो, किन्तु वह काम-भोग में रत न हो, काम-भोग के बीच में न रहता हो, काम-भोग की जलन से न जलता हो, काम-भोग के वितर्कों द्वारा न खाया जाता हो, काम-भोग के लिये उत्सुक न रहता हो तो वह पण्डित जेष्ठ ही गिना जायेगा।

"ऐसा करने पर कण्डरायन ने आसन से उठकर, वस्त्र को एक कन्धे पर कर, छोटे भिक्षुओं के चरणों में सिर से नमस्कार किया। आप लोग ज्येष्ठ हैं ज्येष्ठ-भूमि पर स्थित हैं, हम लोग कनिष्ठ हैं, कनिष्ठ-भूमि पर स्थित हैं।

"सुन्दर हे कात्यायन ! ...... हे कात्यायन ! आज से आप मुझे शरीर में प्राण रहने तक शरणागत उपासक समझें।

८. "भिक्षुओ, जिस समय चोर बलवान् होते हैं, उस समय राजागण दुर्बल हो जाते हैं, उस समय भिक्षुओ, राजाओं के लिये बाहर-भीतर आना-जाना सुकर नहीं रहता तथा प्रत्यन्त-जनपद का अनुशासन करना भी सुकर नहीं रहता, उसी प्रकार ब्राह्मण-गृहपतियों के लिये भी उस समय बाहर-आना जाना तथा बाहर के कामों का निरीक्षण करना सुकर नहीं रहता।

"उसी प्रकार भिक्षुओ, जिस समय पापी भिक्षु सबल हो जाते हैं, उस समय सज्जन भिक्षु दुर्बल हो जाते हैं, उस समय सज्जन भिक्षु संघ के बीच मुँह बंद किये बैठे रहते हैं अथवा प्रत्यन्त-जनपद की ओर चले जाते हैं ; भिक्षुओ, यह बहुत जनों के अहित के लिये होता है, बहुत जनों के असुख के लिये होता है, बहुत जनों के अनर्थ, अहित तथा देव-मनुष्यों के दुःख के लिये होता है।

"भिक्षुओ, जिस समय राजा बलवान् होते हैं, चोर दुर्बल होते हैं, उस समय भिक्षुओ, राजाओं के लिये बाहर-भीतर आना-जाना सुकर होता है तथा प्रत्यन्त

---

१. बाल=मूर्ख

जनपद का शासन करना भी सुकर होता है, उसी प्रकार ब्राह्मण-गृहपतियों के लिये भी उस समय बाहर आना-जाना तथा बाहर के कामों का निरीक्षण करना सुकर रहता है।

"उसी प्रकार भिक्षुओ, जिस समय सज्जन भिक्षु सबल रहते हैं, उस समय पापी भिक्षु दुर्बल हो जाते हैं, उस समय पापी भिक्षु संघ के बीच मुँह बन्द किये बैठे रहते हैं अथवा जहाँ-तहाँ चले जाते हैं; भिक्षुओ, यह बहुत जनों के हित के लिये होता है, बहुत जनों के सुख के लिये होता है, बहुत जनों के अर्थ, हित तथा देव-मनुष्यों के सुख के लिये होता है।"

"भिक्षुओ, मैं दो जनों की मिथ्या-चर्य्या की प्रशंसा नहीं करता हूँ, गृहस्थों की तथा प्रव्रजितों की। भिक्षुओ, चाहे गृहस्थ हो, चाहे प्रव्रजित हो यदि वह मिथ्या-प्रतिपन्न है तो अपनी मिथ्या-चर्य्या के कारण वह ज्ञेय कुशल-धर्म को प्राप्त नहीं कर सकता।

"भिक्षुओ, मैं दो जनों की सम्यक्-चर्य्या की प्रशंसा करता हूँ, गृहस्थ की तथा प्रव्रजित की। भिक्षुओ, चाहे गृहस्थ हो, चाहे प्रव्रजित हो, यदि वह सम्यक्-प्रतिपन्न है तो अपनी सम्यक्-चर्य्या के कारण वह ज्ञेय कुशल-धर्म को प्राप्त कर सकता है।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु अपने अक्षर-व्यञ्जन-युक्त दुर्गृहीत सूत्रों के अर्थ और धर्म (=सार-भाव) को श्रेष्ठ करके व्यक्त करते हैं, भिक्षुओ, वे भिक्षु बहुत जनों का अहित करने वाले हैं, बहुत जनों के असुख के लिये हैं, बहुत जनों के अनर्थ के लिये, अहित के लिये तथा देव-मनुष्यों के दुःख के लिये हैं, भिक्षुओ, वे भिक्षु बहुत अपुण्यार्जन करते हैं, तथा सद्धर्म का अन्तर्धान करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु अपने अक्षर-व्यञ्जन-युक्त सुगृहीत सूत्रों के अर्थ (सार-भाव) को यथार्थ रूप से व्यक्त करते हैं, भिक्षुओ, वे भिक्षु बहुत जनों का हित करने वाले हैं, बहुत जनों के सुखके लिये हैं, बहुत जनों के अर्थ के लिये, हित के लिये तथा देव-मनुष्यों के सुख के लिये हैं, भिक्षुओ, वे भिक्षु बहुत पुण्यार्जन करते हैं तथा सद्धर्म की स्थापना करते हैं।

(५)

"भिक्षुओ, परिषद् दो प्रकार की होती है।

"कौनसे दो प्रकार की?

"उथली-परिषद् तथा गम्भीर-परिषद् ।

"भिक्षुओ, उथली परिषद् कौनसी होती हैं ?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु उद्धत होते हैं, मानी होते हैं, चपल होते हैं, मुखर होते हैं, असंयत-भाषी होते हैं, विस्मृत-स्मृति होते हैं, मूर्ख होते हैं, चित्त की एकाग्रता से हीन होते हैं, भ्रान्तचित्त होते हैं, असंयत-इन्द्रिय होते हैं—भिक्षुओ, ऐसी परिषद् उथली-परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, गम्भीर-परिषद् कौन सी होती है ?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु अनुद्धत होते हैं, मान-रहित होते हैं, चपल नहीं होते, मुखर नहीं होते, संयत-भाषी होते हैं, उपस्थित-स्मृति होते हैं, बुद्धिमान् होते हैं, चित्त की एकाग्रता से युक्त होते हैं, भ्रान्त-चित्त नहीं होते हैं तथा संयत-इन्द्रिय होते हैं—भिक्षुओ, ऐसी परिषद् गम्भीर-परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, ये दो प्रकार की परिषदें हैं। भिक्षुओ, इन दो प्रकार की परिषदों में यही परिषद् श्रेष्ठ है जो कि यह गम्भीर-परिषद् है।"

२. "भिक्षुओ, दो तरह की परिषद् होती है।

"कौनसी दो तरह की ?

"बिखरी हुई परिषद् तथा समग्र-परिषद् ।

"भिक्षुओ, बिखरी हुई परिषद् कौनसी होती है ? भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु परस्पर झगड़ा करते हैं, कलह करते हैं, विवाद करते हैं, एक दूसरे को मुख रूपी शक्ति (=शस्त्र) से बींधते रहते हैं—भिक्षुओ, इस प्रकार की परिषद् बिखरी हुई परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, समग्र-परिषद् कौनसी होती है ?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु मिल-जुलकर प्रसन्नतापूर्वक, बिना विवाद करते हुए, दूध-पानी की तरह मिले हुए, एक दूसरे को प्रेम-भरी आँख से देखते हुए विहार करते हैं—भिक्षुओ, इस प्रकार की परिषद् समग्र-परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, ये दो तरह की परिषद् होती है।

"इन दो प्रकार की परिषदों में यही परिषद् श्रेष्ठ है जो कि यह समग्र-परिषद् है।"

३. "भिक्षुओ, दो तरह की परिषद् होती है ?

Buddhist Research Library,
Buddha Vihar, Risaldar Park,
LUCKNOW-226001.

"कौन सी दो तरह की ?

"अग्र-परिषद् तथा अनग्र-परिषद्।

"भिक्षुओ, अनग्र-परिषद् कैसी होती है ?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में स्थविर भिक्षु अल्पेच्छ नहीं होते, शिथिल होते हैं, पतन की ओर अग्रसर होते हैं, एकान्त-सेवन के प्रति उदासीन होते हैं, अप्राप्त की प्राप्ति के लिये, जो हस्तगत नहीं है, उसे हस्तगत करने के लिये, जिसका साक्षात नहीं हुआ है, उसका साक्षात करने के लिये, प्रयत्न-शील नहीं होते; उनके पीछे चलनेवाले अनुयायी भी उनका अनुकरण करते हैं, वे भी अल्पेच्छ नहीं होते, शिथिल होते हैं, पतन की ओर अग्रसर होते हैं, एकान्त-सेवन के प्रति उदासीन होते हैं, अप्राप्त की प्राप्ति के लिये, जो हस्तगत नहीं है उसे हस्तगत करने के लिये, जिसका साक्षात नहीं हुआ है उस का साक्षात करने के लिये, प्रयत्न-शील नहीं होते। भिक्षुओ, ऐसी परिषद् अनग्र-परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, अग्रपरिषद् कैसी होती है ?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में स्थविर भिक्षु अल्पेच्छ होते हैं, शिथिल नहीं होते, पतन की ओर अग्रसर नहीं होते, एकान्त-सेवन के प्रति उदासीन नहीं होते, अप्राप्त की प्राप्ति के लिये, जो हस्तगत नहीं है उसे हस्तगत करने के लिये, जिसका साक्षात नहीं हुआ है उसका साक्षात करने के लिये, प्रयत्न-शील होते हैं, उनके पीछे चलनेवाले अनुयायी भी उनका अनुकरण करते हैं, वे भी अल्पेच्छ होते हैं, शिथिल नहीं होते, पतन की ओर अग्रसर नहीं होते, एकान्त-सेवन के प्रति उदासीन नहीं होते, अप्राप्त की प्राप्ति के लिये, जो हस्तगत नहीं हुआ है उसे हस्तगत करने के लिये, जिसका साक्षात नहीं हुआ है उसका साक्षात करने के लिये, प्रयत्न-शील होते हैं। भिक्षुओ, इस प्रकार की परिषद् अग्र-परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, ये दो तरह की परिषद् होती है। इन दोनों तरह की परिषदों में यही श्रेष्ठ है, यह जो अग्र-परिषद् है।"

४. "भिक्षुओ, दो तरह की परिषद् होती है।

"कौनसी दो तरह की ?

"आर्य-परिषद् तथा अनार्य-परिषद्।

"भिक्षुओ, अनार्य-परिषद् कौन सी होती है ?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु यह दुःख है इसे यथार्थ-रूप से नहीं जानते हैं, यह दुःख-समुदय है इसे यथार्थ-रूप से नहीं जानते, यह दुःख-निरोध है इसे यथार्थ-रूप से नहीं जानते, यह दुःख निरोध की ओर ले जानेवाला मार्ग है, इसे यथार्थ रूप से नहीं जानते—भिक्षुओ, ऐसी परिषद् अनार्य-परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, आर्य-परिषद् कौन सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु यह दुःख है, इसे यथार्थ-रूप से जानते हैं, यह दुःख-समुदय है, इसे यथार्थ-रूप से जानते हैं, यह दुःख-निरोध है, इसे यथार्थ-रूप से जानते हैं, यह दुःख-निरोध की ओर ले जानेवाला मार्ग है, इसे यथार्थ-रूप से जानते हैं—ऐसी परिषद् आर्य-परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, ये दो तरह की परिषद् हैं? भिक्षुओ, इन दो तरह की परिषदों में यही श्रेष्ठ है, जो यह आर्य-परिषद है।"

५. "भिक्षुओ, दो तरह की परिषद् होती है।

"कौनसी दो तरह की?

"निस्सार-परिषद् तथा सारवान्-परिषद्।

"भिक्षुओ, निस्सार-परिषद् कोन सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु राग के वशीभूत हो अकरणीय करते हैं, द्वेष के वशी-भूत हो अकरणीय करते हैं, मोह के वशीभूत हो अकरणीय करते हैं, भय के वशीभूत हो अकरणीय करते हैं—ऐसी परिषद्, भिक्षुओ, निस्सार-परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, सारवान्-परिषद् कौनसी होती है!

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु राग के वशीभूत हो अकरणीय नहीं करते, द्वेष के वशी-भूत हो अकरणीय नहीं करते, मोह के वशीभूत हो अकरणीय नहीं करते, भय के वशीभूत हो अकरणीय नहीं करते—ऐसी परिषद् भिक्षुओ, सारवान्-परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, ये दो तरह की परिषद् होती है। इन दो तरह की परिषदों में यही परिषद् श्रेष्ठ है, यह जो सारवान्-परिषद् है।"

६. "भिक्षुओ, दो तरह की परिषद् होती है।

"कैसी दो तरह की?

"दुर्विनीत और प्रश्नोत्तर द्वारा अविनीत तथा प्रश्नोत्तर द्वारा विनीत और सुविनीत।

"भिक्षुओ, दुर्विनीत और प्रश्नोत्तर द्वारा विनीत परिषद् कैसी होती है ? भिक्षुओ, जिस परिषद् में जो तथागत द्वारा भाषित गम्भीर, गम्भीर-अर्थ-वाले, लोकुत्तर, तथा शून्यता-युक्त सूक्त हैं उनके कहे जाते समय न उन्हें सुनते हैं, न कान देते हैं, न ज्ञान प्राप्त करने के लिये उस ओर चित्त एकाग्र करते हैं, न उन धर्मों को सीखने-योग्य तथा धारण करने योग्य मानते हैं; किन्तु जो कवि-कृत काव्य सूक्त हैं, जिनके अक्षरों तथा व्यञ्जनों में विचित्रता है, जो बाह्य हैं, जो (अन्य-) श्रावक भाषित हैं, उनके कहे जाते समय उन्हें सुनते हैं, उधर कान देते हैं, ज्ञान प्राप्त करने के लिये उधर चित्त एकाग्र करते हैं, उन धर्मों को सीखने योग्य तथा धारण करने योग्य मानते हैं, वे उन धर्मों को धारण कर यह कैसे है, इसका क्या अर्थ है करके उनकी मीमांसा नहीं करते, वे उलझे को सुलझाते नहीं है, वे अस्पष्ट को स्पष्ट नहीं करते हैं, अनेक प्रकार के सन्दिग्ध स्थलों को वे सन्दिग्ध-स्थल ही रहने देते हैं। भिक्षुओ, ऐसी परिषद् दुर्विनीत और प्रश्नोत्तर द्वारा अविनीत परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, प्रश्नोत्तर द्वारा विनीत और सुविनीत परिषद् कैसी होती है ? भिक्षुओ, जिस परिषद् में जो कवि-कृत काव्य-सूक्त हैं, जिनके अक्षरों तथा व्यञ्जनों में विचित्रता है, जो बाह्य हैं, जो (अन्य-) श्रावक भाषित हैं उनके कहे जाते समय न उन्हें सुनते हैं, न कान देते हैं, न ज्ञान प्राप्त करने के लिये उस ओर चित्त एकाग्र करते हैं, न उन धर्मों को सीखने योग्य तथा धारण करने योग्य मानते हैं, किन्तु जो तथागत द्वारा भाषित गम्भीर, गम्भीर अर्थ-वाले, लोकुत्तर तथा शून्यता-युक्त सूक्त हैं उन के कहे जाते समय उन्हें सुनते हैं, उधर कान देते हैं, ज्ञान प्राप्त करने के लिये उधर चित्त एकाग्र करते हैं, उन धर्मों को सीखने तथा धारण करने योग्य मानते हैं। वे उन धर्मों को धारण कर यह कैसे है, इसका क्या अर्थ है करके उनकी मीमांसा करते हैं, वे उलझे को सुलझाते हैं, वे अस्पष्ट को स्पष्ट करते हैं, वे अनेक प्रकार के सन्दिग्ध-स्थलों को सन्दिग्ध-स्थल नहीं रहने देते। भिक्षुओ, ऐसी परिषद् प्रश्नोत्तर द्वारा विनीत और सुविनीत परिषद् कहलाती है ?

"भिक्षुओ ये दो प्रकार की परिषदें हैं। इन दो प्रकार की परिषदों में यह श्रेष्ठ परिषद् है जो यह प्रश्नोत्तर द्वारा विनीत और सुविनीत परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, परिषद् दो तरह की होती है ?

"कौनसी दो तरह की ?

"भौतिक-चीजों को महत्व देनेवाली किन्तु धर्म को महत्व न देनेवाली; धर्म को महत्व देनेवाली किन्तु भौतिक-चीजों को महत्व न देनेवाली।

"भिक्षुओ, भौतिक-चीजों को महत्व देने वाली किन्तु धर्म को महत्व न देने वाली परिषद् कैसी होती है ? भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु श्वेत-वस्त्र-धारी गृहस्थों के सम्मुख परस्पर यह कह कर कि अमुक भिक्षु दोनों भागों से मुक्त है, अमुक प्रज्ञा-विमुक्त है, अमुक काय-साक्षी है, अमुक दृष्टियों के अन्त तक पहुँच गया है, अमुक श्रद्धा-विमुक्त है, अमुक श्रद्धानुसारी है, अमुक धर्मानुसारी है, अमुक धार्मिक सदाचारी है, तथा अमुक पापी दुराचारी है कहकर प्रशंसा करते हैं, उससे उन्हें कुछ लाभ होता है, उस लाभ को प्राप्त कर, उस लाभ में गड़े हुए, उससे मूर्छित हुए, उसमें धँसे हुए, उसके दुष्परिणामों की ओर से लापरवाह, बिना प्रत्यवेक्षा किये उन वस्तुओं का परिभोग करते हैं। भिक्षुओ भौतिक-चीजों को महत्व देने वाली किन्तु धर्म को महत्व न देनेवाली परिषद् ऐसी होती है।

"भिक्षुओ, धर्म को महत्व देनेवाली किन्तु भौतिक-चीजों को महत्व न देने वाली परिषद् कैसी होती है ? भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु श्वेत वस्त्र धारी गृहस्थों के सम्मुख परस्पर यह कहकर कि अमुक भिक्षु दोनों भागों से मुक्त है, अमुक प्रज्ञा-विमुक्त है, अमुक काय-साक्षी है, अमुक दृष्टियों के अन्त तक पहुँच गया है, अमुक श्रद्धा-विमुक्त है, अमुक श्रद्धानुसारी है, अमुक धर्मानुसारी है, अमुक धार्मिक सदाचारी है तथा अमुक पापी-दुराचारी है कहकर प्रशंसा नहीं करते, उससे उन्हें लाभों की प्राप्ति होती है, उन लाभों को प्राप्त कर, उन लाभों में न गड़े हुए, उन लाभों से मूर्छित न हुए, उन लाभों में न धँसे हुए, उनके दुष्परिणामोंके प्रति सजग, प्रत्यवेक्षा करके उन वस्तुओं का परिभोग करते हैं। भिक्षुओ, धर्म को महत्व देनेवाली किन्तु भौतिक-चीजों को महत्व न देनेवाली परिषद् ऐसी होती है।

"भिक्षुओ, दो तरह की परिषद् होती है।"

"कौन सी दो तरह की ?

"विषम तथा सम।

"भिक्षुओ, विषम-परिषद् कौनसी होती है ?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में अधार्मिक कार्य्य होते हैं, धार्मिक कार्य्य नहीं होते; अविनय-कर्म होते हैं विनय-कर्म नहीं होते; अधार्मिक-कार्य्य चमकते हैं, धार्मिक-कार्य्य नहीं चमकते, अविनय-कर्म चमकते हैं, विनय-कर्म नहीं चमकते—भिक्षुओ, ऐसी परिषद् विषम-परिषद् कहलाती है। भिक्षुओ, परिषद् की विषमता के कारण अधार्मिक कार्य्य होते हैं, धार्मिक-कार्य्य नहीं होते, अविनय-कर्म होते हैं, विनय-कर्म नहीं होते, आधार्मिक-कार्य्य चमकते हैं, धार्मिक-कार्य्य नहीं चमकते, अविनय-कर्म चमकते हैं, विनय-कर्म नहीं चमकते।

"भिक्षुओ, सम-परिषद् कौनसी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में धार्मिक-कार्य्य होते हैं, अधार्मिक-कार्य्य नहीं होते; विनय-कर्म होते हैं, अविनय-कर्म नहीं होते; धार्मिक-कार्य्य चमकते हैं, अधार्मिक कार्य्य नहीं चमकते, विनय-कर्म चमकते हैं, अविनय-कर्म नहीं चमकते—भिक्षुओ, ऐसी परिषद् सम-परिषद् कहलाती है। भिक्षुओ, परिषद् की समता के कारण धार्मिक-कार्य्य होते हैं, अधार्मिक-कार्य्य नहीं होते; विनय-कर्म होते हैं, अविनय-कर्म नहीं होते; धार्मिक-कार्य्य चमकते हैं, अधार्मिक-कार्य्य नहीं चमकते; विनय-कर्म चमकते हैं, अविनय-कर्म नहीं चमकते। भिक्षुओ, यह दो प्रकार की परिषद् होती है। भिक्षुओ, इन दो प्रकार की परिषदों में यही श्रेष्ठ परिषद् है जो यह सम-परिषद्।"

"भिक्षुओ, दो प्रकार की परिषद होती है।

"कौनसी दो प्रकार की?

"अधार्मिक-परिषद् तथा धार्मिक-परिषद्...... (सं. ८) ... भिक्षुओ, यह दो प्रकार की परिषद् है। भिक्षुओ, इन दो प्रकार की परिषदों में यही श्रेष्ठ है जो यह धार्मिक-परिषद्।"

"१०. भिक्षुओ, दो प्रकार की परिषद् होती है?

"कौनसी दो प्रकार की?

"अधर्मवादी-परिषद् तथा धर्म-वादी परिषद्।

"भिक्षुओ, अधर्मवादी-परिषद् कौनसी होती है।

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु धार्मिक अथवा अधार्मिक विवाद उपस्थित करते हैं, वे उस विवाद को लेकर एक दूसरे को जनाते नहीं हैं, न उसे जनाने

के लिये इकट्ठे होते हैं, एक दूसरे से न प्रकट करते हैं, न प्रकट करने के लिये इकट्ठे होते हैं, वे अपने अज्ञान-बल के कारण, अप्रकट करने के बल के कारण, पक्ष-विशेष को ग्रहण करने वाले, उसी विवाद को दृढता से ग्रहण कर, पकड़कर मान लेते हैं कि यही ठीक है और सब गलत है—भिक्षुओ, ऐसी परिषद् अधर्मवादी परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, धर्मवादी परिषद् कैसी होती है ?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु धार्मिक अथवा अधार्मिक विवाद उपस्थित करते हैं, वे उस विवाद को लेकर एक दूसरे को जनाते हैं, उसे जनाने के लिये इकट्ठे होते हैं, एक दूसरे पर प्रकट करते हैं, प्रकट करने के लिये इकट्ठे होते हैं, वे अपनी जानकारी के बल से, वे अपने प्रकट करने के बल से, पक्ष-विशेष को न ग्रहण करनेवाले, उसी विवाद को दृढता से ग्रहण कर, पकडकर नहीं मान लेते कि यही ठीक है और सब गलत है—भिक्षुओ, ऐसी परिषद् धर्मवादी परिषद् कलहाती है।

"भिक्षुओ, ये दो परिषदें हैं। इन दो परिषदों में यही परिषद् श्रेष्ठ है जो यह धर्मवादी परिषद है।"

(६)

"भिक्षुओ, लोक में दो व्यक्ति बहुजन-हित के लिये, बहुजन-सुख के लिये उत्पन्न होते हैं, बहुत जनों के अर्थ, हित तथा देव-मनुष्यों के सुख के लिये उत्पन्न होते हैं।

"कौनसे दो व्यक्ति ?

"सम्यक्-सम्बुद्ध अर्हत, तथागत और चक्रवर्ती-राजा। भिक्षुओ, ये दो व्यक्ति लोक में बहुजन-हित के लिये, बहुजन-सुख के लिये उत्पन्न होते हैं, बहुत जनों के अर्थ, हित तथा देव-मनुष्यों के सुख के लिये उत्पन्न होते हैं।"

"भिक्षुओ, लोक में दो आश्चर्यजनक मनुष्य जन्म लेते हैं।

"कौनसे दो ?

"सम्यक् सम्बुद्ध अर्हत तथागत और चक्रवर्ती-राजा। भिक्षुओ, लोक में ये दो आश्चर्य्य-जनक मनुष्य जन्म लेते हैं।"

"३. भिक्षुओ, इन दो व्यक्तियों की मृत्यु बहुत जनों के अनुताप का कारण होती है।

"कौनसे दो जनों की ?

"सम्यक् सम्बुद्ध अर्हत तथागत की और चक्रवर्ती-राजा की। भिक्षुओ, इन दो व्यक्तियों की मृत्यु बहुत जनों के अनुताप का कारण होती है।"

४. "भिक्षुओ, ये दो स्तूप-पूज्य हैं।

"कौन से दो?

"सम्यक् सम्बुद्ध अर्हत तथागत तथा चक्रवर्ती-राजा।

"भिक्षुओ, ये दो स्तूप-पूज्य हैं।

५. " भिक्षुओ, ये दो बुद्ध होते हैं।

"कौन से दो?

"सम्यक् सम्बुद्ध अर्हत तथागत तथा प्रत्येक-बुद्ध।

"भिक्षुओ, ये दो बुद्ध होते हैं।"

६. " भिक्षुओ, ये दो बिजली के कड़कने पर डरते नहीं।

"कौनसे दो?

"क्षीणश्रव भिक्षु तथा श्रेष्ठ हाथी। भिक्षुओ, ये दो बिजली के कड़कने पर डरते नहीं।"

७. " भिक्षुओ, ये दो बिजली के कडकने पर डरते नहीं।

"कौनसे दो?

"क्षीणाश्रव भिक्षु तथा श्रेष्ठ अश्व। भिक्षुओ, ये दो बिजली के कड़कने पर डरते नहीं।"

८. " भिक्षुओ, ये दो बिजली के कड़कने पर डरते नहीं।

"कौनसे दो?

"क्षीणाश्रव भिक्षु तथा मृगराज सिंह। भिक्षुओ, ये दो बिजली के कड़कने पर डरते नहीं।"

"भिक्षुओ, दो बातों का विचार कर किन्नर मानुषी-भाषा नहीं बोलते।

"कौनसी दो बातें?

"हम झूठ न बोलें तथा किसी पर मिथ्यारोप न लगायें। भिक्षुओ, इन दो बातों का विचार कर किन्नर मानुषी-भाषा नहीं बोलते।"

"भिक्षुओ, स्त्रियाँ दो बातों से असन्तुष्ट रह कर ही शरीर-त्याग करती हैं।

"कौनसी दो बातों से?

"मैथुन तथा सन्तानोत्पत्ति की इच्छा से। भिक्षुओ, स्त्रियाँ इन दो बातों से अन्सतुष्ट ही शरीर-त्याग करती हैं।"

"भिक्षुओ, अशान्त-सहवास तथा शान्त-सहवास के बारे में उपदेश देता हूँ। इसे सुनो। अच्छी तरह मन में धारण करो। कहता हूँ।" "बहुत अच्छा" कह कर भिक्षुओं ने भगवान् को प्रतिवचन दिया। भगवान् ने यह कहा—

"भिक्षुओ, अशान्त-सहवास कैसा होता है? अशान्त कैसे रहते हैं?

"भिक्षुओ, स्थविर भिक्षु सोचता है—

"स्थविर भिक्षु भी मुझे कुछ न कहें, मध्यम-स्थविर भी मुझे कुछ न कहें, नये भी मुझे कुछ न कहें; मैं भी न स्थविर भिक्षुओं को कुछ कहूँ, न मभ्ध्यम-स्थविरों को कुछ कहूँ और न नये भिक्षुओं को कुछ कहूँ।

"स्थविर मुझे कुछ कहेगा तो अहित की ही बात कहेगा, हित की बात नहीं कहेगा। मैं भी उसे "नहीं" कहकर कष्ट दूँगा और अपना दोष जानता हुआ भी उसका कहना नहीं करूंगा। मध्य-स्थविर भी मुझे कुछ कहेगा, नया भी मुझे कुछ कहेगा तो अहित की ही बात कहेगा, हित की बात नहीं कहेगा। मैं भी उसे "नहीं" कहकर कष्ट दूँगा और अपना दोष जानता हुआ भी उसका कहना नहीं करूंगा।

"मध्य-स्थविर भी सोचता है................ नया भिक्षु भी सोचता है—

"स्थविर भी मुझे कुछ न कहें, मध्यम-स्थविर भी मुझे कुछ न कहें, नये भी मुझे कुछ न कहें, मैं भी न स्थविर भिक्षुओं को कुछ कहूँ, न मध्यम-स्थविरों को कुछ कहूँ और न नये भिक्षुओं को कुछ कहूँ।

"स्थविर मुझे कुछ कहेगा तो अहित की ही बात कहेगा, हित की बात नहीं कहेगा। मैं भी उसे "नहीं" कह कर कष्ट दूँगा और अपना दोष जानता हुआ भी उसका कहना नहीं करूंगा। मध्यम-स्थविर भी मुझे कुछ कहेगा, नया भी मुझे कुछ कहेगा तो अहित की ही बात कहेगा, हित की बात नहीं कहेगा। मैं उसे "नहीं" कह कर कष्ट दूँगा और अपना दोष जानता हुआ भी उसका कहना नहीं करूंगा। भिक्षुओ, इस प्रकार अशान्त सहवास होता है। अशान्त इसी प्रकार रहते हैं।

"भिक्षुओ, शान्त-सहवास कैसा होता है? शान्त कैसे रहते हैं?

"भिक्षुओ, स्थविर भिक्षु सोचता है—

"स्थविर भिक्षु भी मुझे कहें, मध्यम-स्थविर भी मुझे कहें, नये भी मुझे कहें ; मैं भी स्थविर भिक्षुओं को कहुँ, मध्यम-स्थविरों को कहूँ, नये भिक्षुओं को कहूँ।

"स्थविर मुझे कुछ कहेगा तो हित की ही बात कहेगा, अहित की बात नहीं कहेगा। मैं भी उसे "अच्छा" कहूँगा और कष्ट नहीं दूंगा। अपना दोष देखता हुआ मैं उसका कहना करूंगा। मध्यम-स्थविर भी मुझे कुछ कहेगा, नया भी मुछे कुछ कहेगा तो हित की ही बात कहेगा, अहित की बात नहीं कहेगा। मैं भी उसे "अच्छा" कहूँगा और कष्ट नहीं दूंगा। अपना दोष देखता हुआ मैं उसका कहना करूंगा। भिक्षुओ, इस प्रकार शान्त-सहवास होता है। शान्त इसी प्रकार रहते हैं।

"भिक्षुओ, जिस अधिकरण में दोनों ओर से कहा-सुनी रहेगी, मत-विशेष का दुराग्रह रहेगा, चित्त कुपित रहेगा, दौर्मनस्य रहेगा, क्रोध रहेगा, अशान्ति रहेगी, उस अधिकरण के बारे में भिक्षुओ, यही आशा करनी चाहिये कि उनका कलह दीर्घ-काल तक जारी रहेगा, वे परस्पर कठोर बोलते रहेंगे और मारपीट भी करते रहेंगे तथा भिक्षु सुख-पूर्वक न रह सकेंगे।

"भिक्षुओ, जिस अधिकरण में दोनों ओर से कहा-सुनी न होगी, मत-विशेष का दुराग्रह न होगा, चित्त कुपित न रहेगा, दौर्मनस्य न रहेगा, क्रोध न रहेगा, अशान्ति न रहेगी, उस अधिकरण के बारे में भिक्षुओ, यही आशा करनी चाहिये कि न उन का कलह दीर्घकाल तक जारी रहेगा, न वे परस्पर कठोर बोलते रहेंगे और न मारपीट ही करते रहेंगे तथा भिक्षु सुखपूर्वक रह सकेंगे।

(७)

१. "भिक्षुओ, दो सुख हैं।

"कौनसे दो ?

"गृहस्थ-सुख तथा प्रव्रज्या-सुख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। इन दोनों सुखों में यह जो प्रव्रज्या-सुख है श्रेष्ठ है।"

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं।

"कौनसे दो ?

"काम-भोगों का सुख तथा अभिनिष्क्रमण का सुख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। इन दोनों सुखों में यह जो अभिनिष्क्रमण का सुख है, श्रेष्ठ है।"

३. "भिक्षुओ, ये दो सुख हैं।

"कौनसे दो?

"लौकिक-सुख तथा लोकुत्तर-सुख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। भिक्षुओ, इन दोनों सुखों में यह लोकुत्तर-सुख श्रेष्ठ है।"

४. "भिक्षुओ, ये दो सुख है।

"कौनसे दो?

"सास्रव-सुख तथा अनास्रव-सुख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। भिक्षुओ, इन दो सुखों में यह अनास्रव-सुख ही श्रेष्ठ है।"

५. "भिक्षुओ, ये दो सुख हैं।

"कौनसे दो?

"भौतिक-सुख तथा अभौतिक-सु ख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। भिक्षुओ, इन दो सुखों में अभौतिक-सुख श्रेष्ठ है।"

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं।

"कौनसे दो?

"आर्य-सुख तथा अनार्य-सुख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। भिक्षुओ, इन दो सुखों में यह आर्य-सुख श्रेष्ठ है।"

७. "भिक्षुओ, ये दो सुख हैं।

"कौनसे दो?

"शारीरिक-सुख तथा चैतसिक-सुख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। भिक्षुओ, इन दो सुखों में यह चैतसिक-सुख श्रेष्ठ है।"

८. "भिक्षुओ दो सुख हैं।

"प्रीति-सहित सुख, प्रीति-विरहित सुख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। भिक्षुओ, इन दो सुखों में यह प्रीति-विरहित सुख श्रेष्ठ है।"

९. "भिक्षुओ, ये दो सुख हैं।

"कौनसे दो ?

"आस्वाद-सुख तथा उपेक्षा-सुख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। भिक्षुओ, इन दो सुखों में यह उपेक्षा-सुख श्रेष्ठ है।"

१०. "भिक्षुओ, ये दो सुख हैं।

"कौनसे दो ?

"असमाधि-सुख तथा समाधि-सुख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। भिक्षुओ, इन दोनों सुखों में समाधि-सुख श्रेष्ठ है।"

११. "भिक्षुओ, ये दो सुख हैं।

"कौनसे दो ?

"प्रीति-आलम्बन-सुख तथा अ-प्रीति-आलम्बन-सुख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। भिक्षुओ, इन दोनों सुखों में अ-प्रीति-आलम्बन सुख ही श्रेष्ठ है।"

१२. "भिक्षुओ, ये दो सुख हैं।

"कौनसे दो ?

"आस्वाद-आलम्बन-सुख तथा उपेक्षा-आलम्बन-सुख। भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। भिक्षुओ, इन दोनों सुखों में उपेक्षा-आलम्बन-सुख ही श्रेष्ठ है।"

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं।

"कौनसे दो ?

"रूप-आलम्बन-सुख तथा अरूप-आलम्बन-सुख।

"भिक्षुओ, ये दो सुख हैं। भिक्षुओ, इन दोनों सुखों में यह अरूप-आलम्बन-सुख ही श्रेष्ठ है।"

(८)

"भिक्षुओ, पापी-अकुशल धर्म निमित्त (=आधार) होने से उत्पन्न होते हैं, बिना निमित्त के नहीं उत्पन्न होते। उस निमित्त को ही नष्ट कर देने से वे पापी अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते।

"भिक्षुओ, पापी अकुशल धर्म-निदान (=कारण) होने से उत्तन्न होते हैं, बिना निदान के नहीं। उस निदान को ही नष्ट कर देने से वे पापी अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते।

"भिक्षुओ, पापी अकुशल-धर्म हेतु होने से उत्पन्न होते हैं, बिना हेतु के नहीं। उस हेतु को ही नष्ट कर देने से वे पापी अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते।

४. "भिक्षुओ, पापी अकुशल-धर्म संस्कार होने से उत्पन्न होते हैं, बिना संस्कार के नहीं। उस संस्कार को ही नष्ट कर देने से वे पापी अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते।

५. "भिक्षुओ, पापी अकुशल-धर्म प्रत्यय होने से उत्पन्न होते हैं, बिना प्रत्यय के नहीं। उस प्रत्यय को ही नष्ट कर देने से वे पापी अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते।

६. "भिक्षुओ, पापी अकुशल-धर्म रूप होने से ही उत्पन्न होते हैं, बिना रूप के नहीं। उस रूप का ही नाश कर देने से वे पापी अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते।

७. "भिक्षुओ, पापी अकुशल-धर्म वेदना के होने से ही उत्पन्न होते हैं बिना वेदना के नहीं। उस वेदना का ही नाश कर देने से वे पापी अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते।

८. "भिक्षुओ, पापी अकुशल-धर्म संज्ञा होने से ही उत्पन्न होते हैं, बिना संज्ञा के नहीं। उस संज्ञा का ही नाश कर देने से वे पापी अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते।

"भिक्षुओ, पापी अकुशल-धर्म विज्ञान होने से ही उत्पन्न होते हैं, बिना विज्ञान के नहीं। उस विज्ञान का ही नाश कर देने से पापी अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते।

१०. "भिक्षुओ, पापी अकुशल-धर्म संस्कृत-आलम्बन होने से ही उत्पन्न होते हैं, बिना संस्कृत-आलम्बन के नहीं। उस संस्कृत-आलम्बन का ही नाश कर देने से पापी अकुशल-धर्म उत्पन्न नहीं होते।

(९)

१. "भिक्षुओ, दो धर्म हैं।

"कौनसे दो ?

"चित्त की विमुक्ति तथा प्रज्ञा की विमुक्ति।

"भिक्षुओ, ये दो धर्म हैं।

"(आगे के सूत्र इसी क्रम से हैं।)

२. "वीर्य्य (=प्रग्रह) तथा चित्तेकाग्रता (=अविक्षेप)

३. "नाम और रूप।

४. "विद्या तथा विमुक्ति।

५. "भव-दृष्टि तथा विभव-दृष्टि।

६. "निर्लज्जपन तथा निडर-पन।

७. "लज्जा तथा (पाप-) भीरुता।

८. "दुर्वचन होना तथा कुसंगति।

९. "सुवच होना तथा सत्संगति।

१०. "(अट्ठारह) धातुओं के ज्ञान में कुशल होना तथा चित्त की एकाग्रता में कुशल होना।

११. "भिक्षुओ, दो धर्म हैं।

"कौन से दो ?

"आपत्ति (=दोषों) के ज्ञान में कुशल होना तथा विशिष्ट-दोषों के ज्ञान में कुशल होना।"

(१०)

"भिक्षुओ, ये दो मूर्ख (=बाल) होते हैं।

"कौनसे दो ?

"जो अनागत-भार वहन करता है तथा जो आगत-भार (=जिम्मेदारी) वहन नहीं करता।

"भिक्षुओ, ये दो मूर्ख होते हैं।"

"भिक्षुओ, ये दो पण्डित होते हैं।

"कौनसे दो ?

"जो आगत-भार वहन करता है तथा जो अनागत-भार वहन नहीं करता।

"भिक्षुओ, ये दो पण्डित हैं।"

३. "भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।

"कौनसे दो?

"जो कप्पिय (=उचित) को अकप्पिय समझे तथा अकप्पिय को कप्पिय समझे।

"भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।"

४. "भिक्षुओ, ये दो पण्डित हैं।

"कौनसे दो?

"जो अकप्पिय (=अनुचित) को अनुचित समझे तथा जो कप्पिय (=उचित) को उचित समझे।"

५. "भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।

"कौन से दो?

"जो अदोष को दोष समझता है तथा जो दोष को अदोष समझता है।

"भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।"

६. "भिक्षुओ, ये दो पण्डित हैं।

"कौनसे दो?

"जो अदोष को अदोष समझता है तथा जो दोष को दोष समझता है। भिक्षुओ, ये दो पण्डित हैं।"

७. "भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।

"कौनसे दो?

"जो अधर्म को धर्म समझता है तथा जो धर्म को अधर्म समझता है। भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।"

"भिक्षुओ, ये दो पण्डित है।

"कौनसे दो?

"जो अधर्म को अधर्म समझता है तथा जो धर्म को धर्म समझता है। भिक्षुओ, ये दो पण्डित हैं।"

९. "भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।

"कौनसे दो ?

"जो अविनय (=अनियम) को विनय समझता है, तथा जो विनय को अविनय समझता है। भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।"

१०. "भिक्षुओ, ये दो पण्डित हैं।

"कौनसे दो ?

"जो अविनय को अविनय समझता है तथा जो विनय को विनय समझता है। भिक्षुओ, ये दो पण्डित हैं।"

११. "भिक्षुओ, इन दो के आस्रव बढते हैं।

"किन दो के ?

"जो अकौकृत्य के विषय में कौकृत्य करता है तथा कौकृत्य के विषय में अकौकृत्य करता है।"

१२. "भिक्षुओ, इन दो के आस्रव नहीं बढते।

"किन दो के ?

"जो अकौकृत्य के विषय में अकौकृत्य करता है, कौकृत्य के विषय में कौकृत्य करता है। भिक्षुओ, इन दो के आस्रव नहीं बढते।"

१३. "भिक्षुओ, इन दो के आस्रव बढते हैं।

"किन दो के ?

"जो अकप्पिय (=अनुचित) को कप्पिय समझता है तथा जो कप्पिय को अकप्पिय समझता है।

"भिक्षुओ, इन दो के आस्रव बढते हैं।"

१४. "भिक्षुओ, इन दो के आस्रव नहीं बढते।

"किन दो के ?

"जो अकप्पिय (=अनुचित) को अकप्पिय समझता है तथा जो कप्पिय को कप्पिय समझता है। भिक्षुओ, इन दो के आस्रव नहीं बढते हैं।"

१५. "भिक्षुओ, इन दो के आस्रव बढते हैं।

"किन दो के ?

"जो अनापत्ति (=अदोष) को आपत्ति (=दोष) समझता है तथा जो आपत्ति को अनापत्ति समझता है। भिक्षुओ, इन दो के आस्रव बढते हैं।"

१६. "भिक्षुओ, इन दो के आस्रव नहीं बढते ।

"किन दो के ?

"जो अनापत्ति (=अदोष) को अनापत्ति समझता है तथा जो आपत्ति (=दोष) को आपत्ति समझता है।"

१७. "भिक्षुओ, इन दो के आस्रव बढते हैं।

"किन दो के ?

"जो अधर्म को धर्म समझता है तथा जो धर्म को अधर्म समझता है। भिक्षुओ, इन दो के आस्रव बढते हैं।"

१८. "भिक्षुओ, इन दो के आस्रव नहीं बढते ।

"किन दो के ?

"जो अधर्म को अधर्म समझता है तथा जो धर्म को धर्म समझता है। भिक्षुओ, इन दो के आस्रव नहीं बढते।"

१९. "भिक्षुओ, इन दो के आस्रव बढते हैं।

"किन दो के ?

"जो अविनय को विनय समझता है तथा जो विनय को अविनय समझता है। भिक्षुओ, इन दो के आस्रव बढते हैं।"

२० "भिक्षुओ, इन दो के आस्रव नहीं बढते।

"किन दो के ?

"जो अविनय को विनय समझता है तथा जो विनय को विनय समझता है। भिक्षुओ, इन दो के आस्रव नहीं बढते हैं।"

(११)

१. "भिक्षुओ, ये दो आशायें (=इच्छायें) आसानी से नहीं छोड़ी जा सकतीं।"

"कौनसी दो ?"

"लाभकी आशा (=इच्छा) तथा जीवनकी आशा (=इच्छा)। भिक्षुओ, ये दो आशायें आसानीसे नहीं छोड़ी जा सकतीं।"

२. "भिक्षुओ, लोक में ये दो तरहके व्यक्ति दुर्लभ हैं।"

"कौनसे दो तरहके ?"

"परोपकार करनेवाला तथा परोपकारको स्मरण रखनेवाला। भिक्षुओ, लोकमें ये दो तरहके व्यक्ति दुर्लभ हैं।"

३. "भिक्षुओ, लोकमें ये दो तरहके व्यक्ति दुर्लभ हैं।"

"कौनसे दो तरहके ?"

"तृप्त (=अरहत) तथा तृप्त करनेवाला (=सम्यक्-सम्बुद्ध)। भिक्षुओ, लोकमें ये दो तरहके व्यक्ति दुर्लभ हैं।"

४. "भिक्षुओ, अिन दो तरहके व्यक्तियों को तृप्त करना सहज नहीं।

"किन दो तरहके ?

"एक तो ऐसे व्यक्तिको जिसे जो-जो मिलता है अुसे रखता जाता है, दूसरे ऐसे व्यक्तिको जिसे जो-जो मिलता है अुसे दूसरोंको देता जाता है।

"भिक्षुओ, इन दो तरह के व्यक्तियों को तृप्त करना सहज नहीं।"

५. "भिक्षुओ, इन दो तरह के व्यक्तियों को तृप्त करना सहज है।"

"किन दो व्यक्तियों को ?"

"एक तो उस व्यक्ति को जिसे जो-जो मिलता है उसे रखता नहीं जाता है, दूसरे उस व्यक्ति को जिसे जो-जो मिलता है, उसे दूसरों को नहीं देता।

"भिक्षुओ, इन दो व्यक्तियों को तृप्त करना सहज है।"

६. "भिक्षुओ, राग (=अनुराग) की उत्पत्ति के दो हेतु हैं ?"

"शुभ-निमित्त (=सुन्दर करके देखना) तथा अयोनिसो-मनसिकार (=अनुचित ढंग से विचार करना)।

"भिक्षुओ, राग की उत्पत्ति के दो हेतु हैं।"

७. "भिक्षुओ, द्वेष की उत्पत्ति के दो हेतु हैं ?"

"कौनसे दो ?"

"प्रतिध-निमित्त (=प्रतिकूल करके देखना) तथा अयोनिसो-मनसिकार (=अनुचित ढंग से विचार करना)।

"भिक्षुओ, द्वेष की उत्पत्ति के दो हेतु है ?"

८. "भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टि की उत्पत्ति के दो हेतु हैं।"

"कौनसे दो ?"

"परायी-घोषणा (=सद्धर्म-विरोधी-मत) और अयोनिसो-मनसिकार (=अनुचित विचार)।

"भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टि की उत्पत्ति के यो दो हेतु हैं?"

९. "भिक्षुओ, सम्यक्-दृष्टि की उत्पत्ति के दो हेतु हैं।"

"कौनसे दो?"

"परायी-घोषणा (=धर्मानुकूल मत) और योनिसो-मनसिकार (=उचित ढंग से विचार)।

"भिक्षुओ, सम्यक्-दृष्टि की उत्पत्ति के दो हेतु हैं।"

१०. "भिक्षुओ, ये दो आपत्तियाँ (=दोष) हैं।"

"कौनसी दो।"

"हलकी आपत्ति तथा भारी आपत्ति।

"भिक्षुओ, ये दो आपत्तियाँ हैं।"

११. "भिक्षुओ, ये दो आपत्तियाँ (=दोष) हैं।"

"कौनसी दो?"

"दु-स्थूल आपत्ति तथा अ-दु-स्थूल आपत्ति।

"भिक्षुओ, ये दो आपत्तियाँ हैं।"

"भिक्षुओ, ये दो आपत्तियाँ हैं।"

"कौनसी दो?"

"सशेष-आपत्ति तथा अशेष-आपत्ति।

"भिक्षुओ, ये दो आपत्तियां हैं।"

(१२)

"भिक्षुओ, श्रद्धावान भिक्षु यदि सम्यक् प्रकार कामना करता है तो उसकी यही कामना होनी चाहिये कि मैं ऐसा होऊँ जैसे सारिपुत्र-मौद्गल्यायन थे।"

"भिक्षुओ, यही तुला है, यही माप-जोख है मेरे भिक्षु श्रावकों के लिये जो यह सारिपुत्र-मौद्गल्यायन हैं।"

२. "भिक्षुओ, श्रद्धावान् भिक्षुनी यदि सम्यक् प्रकार कामना करे तो उसकी यही कामना होनी चाहिये कि मैं ऐसी होऊँ जैसी कि क्षेमा तथा उत्पल-वर्णा भिक्षुणियां थीं।"

"भिक्षुओ, यही तुला है, यही माप-जोख है मेरी भिक्षुणी श्राविकाओं के लिये जो ये क्षेमा तथा उत्पल-वर्णा भिक्षुणियाँ हैं।"

"भिक्षुओ, श्रद्धावान् उपासक यदि सम्यक् प्रकार कामना करे तो उसकी यही कामना होनी चाहिये कि मैं ऐसा होऊँ जैसे कि चित्र-गृहपति तथा आळवक हस्तक थे।"

"भिक्षुओ, यही तुला है, यही माप-जोख है मेरे श्रद्धावान् उपासकों के लिये जो कि यह चित्र-गृहपति तथा आळवक हस्तक थे।"

"भिक्षुओ, श्रद्धावान् उपासिका यदि सम्यक् प्रकार कामना करे तो उसकी यही कामना होनी चाहिये कि मैं ऐसी होऊँ जैसी कि खुज्जुत्तरा उपासिका तथा वेळु-कण्टकी नन्द-माता।"

"भिक्षुओ, यही तुला है, यही माप-जोख है मेरी श्रद्धावान् उपासिकाओं के लिये जो कि ये खुज्जुत्तरा उपासिका तथा वेळुकण्टकी नन्द-माता।"

५. "भिक्षुओ, दो बातों से युक्त मूर्ख, अव्यक्त, असत्पुरुष अवगुणी होता है, सदोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दनीय होता है और बहुत अपुण्य का हेतु होता है।"

"कौनसी दो बातों से?"

"बिना जाने, बिना विचार किये अवगुणी के अवगुण कहता है, बिना जाने, बिना विचार किये गुणी के अवगुण कहता है।

"भिक्षुओ, इन दो बातों से युक्त मूर्ख, अव्यक्त असत्पुरुष अवगुणी होता है, सदोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दनीय होता है और बहुत अपुण्य का हेतु होता है।"

"भिक्षुओ, इन दो बातों से युक्त, पण्डित, व्यक्त, सत्पुरुष गुणी होता है, निर्दोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा प्रशंसनीय होता है और बहुत पुण्य का हेतु होता है।"

"कौनसी दो बातों से?"

"जानकर, विचारकर अवगुणी के अवगुण कहता है, जानकर, विचारकर गुणी के गुण कहता है।"

"भिक्षुओ, इन दो बातों से युक्त, पण्डित, व्यक्त, सत्पुरुष गुणी होता है, निर्दोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा प्रशंसनीय होता है और बहुत पुण्य का हेतु होता है।"

६. " भिक्षुओ, दो बातों से युक्त, मूर्ख, अव्यक्त, असत्पुरुष अवगुणी होता है, सदोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दनीय होता है और बहुत अपुण्य का हेतु होता है। "

" कौनसी दो बातों से ? "

" बिना जाने, बिना विचार किये, अश्रद्धेय-स्थान पर श्रद्धा व्यक्त करता है ; बिना जाने, बिना विचार किये श्रद्धेय-स्थान पर अश्रद्धा व्यक्त करता है।"

" भिक्षुओ, इन दो बातों से युक्त, मूर्ख, अव्यक्त, असत्पुरुष अवगुणी होता है, सदोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दनीय होता है और बहुत अपुण्य का हेतु होता है।"

" भिक्षुओ, इन दो बातों से युक्त, पण्डित, व्यक्त, सत्पुरुष गुणी होता है, निर्दोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा प्रशंसनीय होता है और बहुत पुण्य का हेतु होता है।"

" कौनसी दो बातों से ?"

" जानकर, विचार कर अश्रद्धेय-स्थान पर अश्रद्धा व्यक्त करता है; जान, कर, विचार कर, श्रद्धेय-स्थान पर श्रद्धा व्यक्त करता है। "

" भिक्षुओ, इन दो बातों से युक्त, पण्डित, व्यक्त, सत्पुरुष गुणी होता है, निर्दोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा प्रशंसनीय होता है और बहुत पुण्य का हेतु होता है।"

७. " भिक्षुओ, इन दोनों के प्रति अनुचित व्यवहार करनेवाला मूर्ख, अव्यक्त, असत्पुरुष अवगुणी होता है, सदोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दनीय होता है और बहुत अपुण्य का हेतु होता है।"

" किन दो के प्रति ?"

" माता तथा पिता के प्रति।"

" भिक्षुओ, इन दोनों के प्रति अनुचित व्यवहार करनेवाला मूर्ख, अव्यक्त, असत्पुरुष अवगुणी होता है, सदोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दनीय होता है और बहुत अपुण्य का हेतु होता है।"

" भिक्षुओ, इन दोनों के प्रति उचित व्यवहार करनेवाला, पण्डित, व्यक्त, सत्पुरुष गुणी होता है, निर्दोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा प्रशंसनीय होता है और बहुत पुण्य का हेतु होता है। "

"किन दो के प्रति ?

"माता तथा पिता के प्रति।"

"भिक्षुओ, इन दोनों के प्रति उचित व्यवहार करनेवाला, पण्डित, व्यक्त, सत्पुरुष गुणी होता है, निर्दोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा प्रशंसनीय होता है और बहुत पुण्य का हेतु होता है।

८. "भिक्षुओ, इन दोनों के प्रति अनुचित व्यवहार करनेवाला मूर्ख, अव्यक्त, असत्पुरुष अवगुणी होता है, सदोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दनीय होता है और बहुत अपुण्य का हेतु होता है।

"किन दो के प्रति ?

"तथागत तथा तथागत-श्रावक के प्रति।"

"भिक्षुओ, इन दोनों के प्रति अनुचित व्यवहार करनेवाला मूर्ख, अव्यक्त, असत्पुरुष अवगुणी होता है, सदोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दनीय होता है और बहुत अपुण्य का हेतु होता है।"

"भिक्षुओ, इन दोनों के प्रति उचित व्यवहार करनेवाला पण्डित, व्यक्त, सत्पुरुष गुणी होता है, निर्दोष होता है, विज्ञ-पुरुषों द्वारा प्रशंसनीय होता है और बहुत पुण्य का हेतु होता है।"

"किन दो के प्रति।"

"तथागत तथा तथागत-श्रावक के प्रति।"

"भिक्षुओ, इन दोनों के प्रति उचित व्यवहार करने वाला पण्डित, व्यक्त, सत्पुरुष गुणी होता है, निर्दोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा प्रशंसनीय होता है और बहुत पुण्य का हेतु होता है।"

"भिक्षुओ, दो धर्म हैं।

"कौनसे दो ?

"चित्त की परिशुद्धि तथा किसी भी वस्तु के प्रति आसक्त न होना।

"भिक्षुओ, ये दो धर्म हैं।"

१०. "भिक्षुओ, ये दो धर्म हैं।

"कौनसे दो ?

"क्रोध तथा बँधा-वैर।

"भिक्षुओ, ये दो धर्म हैं।"

११. "भिक्षुओ, ये दो धर्म हैं।

"कौनसे दो?

"क्रोध को वशीभूत करना तथा बँधे-वैर का त्याग करना।

"भिक्षुओ, ये दो धर्म हैं।"

(१३)

"भिक्षुओ, ये दो दान हैं।

"कौनसे दो?

"भौतिक-दान तथा धर्म-दान। भिक्षुओ, ये दो दान हैं। भिक्षुओ, इन दोनों दानों में धर्म-दान श्रेष्ठ है।"

२. "भिक्षुओ, ये दो यज्ञ हैं।"

"कौनसे दो?

"भौतिक-यज्ञ तथा धर्म-यज्ञ। भिक्षुओ, ये दो.....धर्म-यज्ञ श्रेष्ठ है।"

३. "भिक्षुओ, ये दो त्याग हैं।

"कौनसे दो?

"भौतिक-त्याग तथा धार्मिक-त्याग। भिक्षुओ, ये दो.......धार्मिक-त्याग श्रेष्ठ है।"

४. "भिक्षुओ, ये दो परित्याग हैं।

"कौनसे दो?

"भौतिक-परित्याग तथा धार्मिक-परित्याग। भिक्षुओ, ये दो...........धार्मिक-परित्याग श्रेष्ठ है।"

५. "भिक्षुओ, ये दो भोग हैं।

"कौनसे दो?

"भौतिक-भोग तथा धार्मिक-भोग। भिक्षुओ, ये दो.......धार्मिक-भोग श्रेष्ठ हैं।"

६. "भिक्षुओ, ये दो सं-भोग हैं।"

"कौनसे दो?

"भौतिक-संभोग तथा धार्मिक-संभोग। भिक्षुओ, ये दो......धार्मिक-संभोग श्रेष्ठ है।"

Buddhist Research Library,
Buddha Vihar, Risaldar Park,
LUCKNOW-226001.

७. "भिक्षुओ, ये दो संविभाग (=वितरण) हैं।"

"कौनसे दो ?"

"भौतिक-संविभाग तथा धार्मिक-संविभाग। भिक्षुओ, ये दो..........धार्मिक-संविभाग श्रेष्ठ है।"

"८. भिक्षुओ, ये दो संग्रह हैं।"

"कौनसे दो ?

"भौतिक-संग्रह तथा धार्मिक-संग्रह। भिक्षुओ, ये दो.......धार्मिक-संग्रह श्रेष्ठ है।"

९. "भिक्षुओ, ये दो अनुग्रह हैं।"

"कौनसे दो ?

"भौतिक-अनुग्रह तथा धार्मिक-अनुग्रह। भिक्षुओ, ये दो......धार्मिक अनुग्रह श्रेष्ठ है।"

१०. "भिक्षुओ, ये दो अनुकम्पायें हैं।"

"कौनसी दो ?

"भौतिक-अनुकम्पा तथा धार्मिक-अनुकम्पा। भिक्षुओ, ये दो............धार्मिक-अनुकम्पा श्रेष्ठ है।"

(१६)

"भिक्षुओ, ये दो प्रतिछादन (=सन्थार) हैं।"

"कौनसे दो ?

"भौतिक-प्रतिछादन तथा धार्मिक-प्रतिछादन। भिक्षुओ, ये दो...........धार्मिक-प्रतिछादन श्रेष्ठ है।"

"भिक्षुओ, ये दो प्रति-सन्थार हैं।"

"कौनसे दो ?

"भौतिक-प्रतिसन्थार तथा धार्मिक-प्रतिसन्थार। भिक्षुओ, ये दो.........धार्मिक-प्रतिसन्थार श्रेष्ठ है।"

३. "भिक्षुओ, ये दो एषणायें हैं।"

"कौन सी दो ?

"भौतिक-एषणा तथा धार्मिक-एषणा। भिक्षुओ, ये दो.......धार्मिक एषणा श्रेष्ठ है।"

४. "भिक्षुओ, ये दो पर्येषणायें हैं।"

"कौनसी दो ?

"भौतिक-पर्येषणा तथा धार्मिक-पर्येषणा। भिक्षुओ, ये दो........ ....धार्मिक-पर्येषणा श्रेष्ठ है।"

"भिक्षुओ, ये दो प्राप्तियाँ हैं।"

"कौनसी दो ?

"भौतिक-प्राप्ति तथा धार्मिक-प्राप्ति। भिक्षुओ, ये दो......धार्मिक प्राप्ति श्रेष्ठ है।"

६. "भिक्षुओ, दो प्रकार की पूजा है।"

"कौनसे दो प्रकार की ?

"भौतिक-पूजा तथा धार्मिक-पूजा।"

"भिक्षुओ, ये दो प्रकार की पूजा है। भिक्षुओ, ये दो प्रकार की पूजा............धार्मिक-पूजा श्रेष्ठ है।"

७. "भिक्षुओ, ये दो प्रकार के आतिथ्य हैं।

"कौनसे दो प्रकार के ?

"भौतिक-आतिथ्य तथा धार्मिक-आतिथ्य। भिक्षुओ, इन दो....... ......धार्मिक-आतिथ्य श्रेष्ठ है।"

८. "भिक्षुओ, ये दो ऋद्धियां हैं।"

"कौनसी दो ?"

"भौतिक-ऋद्धि तथा धार्मिक-ऋद्धि। भिक्षुओ, इन दो प्रकार की ऋद्धियों में........धार्मिक-ऋद्धि श्रेष्ठ है।"

९. "भिक्षुओ, ये दो वृद्धियाँ हैं।"

"कौनसी दो ?

"भौतिक-वृद्धि तथा धार्मिक-वृद्धि। भिक्षुओ, इन दो प्रकार की..... ....धार्मिक-वृद्धि श्रेष्ठ है।"

१०. "भिक्षुओ, ये दो प्रकार के रत्न हैं।"

"कौनसे दो प्रकार के ?"

" भौतिक रत्न तथा धार्मिक-रत्न। भिक्षुओ, इन दो प्रकार के रत्नों में ....
.... धार्मिक-रत्न ही श्रेष्ठ है।"

११. " भिक्षुओ, ये दो संग्रह (=संनिचय) हैं।

" कौनसे दो ?

" भौतिक-संग्रह तथा धार्मिक-संग्रह। भिक्षुओ, इन दोनों संग्रहों में ...
.... धार्मिक संग्रह श्रेष्ठ है।"

१२. " भिक्षुओ, ये दो विपुलतायें हैं।

" कौनसी दो ?

" भौतिक विपुलता तथा धार्मिक विपुलता। भिक्षुओ, इन दो विपुलताओं में
.... धार्मिक विपुलता श्रेष्ठ है।"

(१५)

" भिक्षुओ, ये दो धर्म हैं।

" कौनसे दो ?

" ध्यान (समापत्ति) में बैठने की कुशलता तथा ध्यान से उठने की कुशलता। भिक्षुओ, ये दो धर्म हैं।

(आगे २—१७ यही क्रम है।)

२. " ऋजुता तथा मृदुता।"

३. " क्षमा तथा सदाचार।"

४. " प्रियवाणी तथा अतिथि-सत्कार।"

५. " अविहिंसा तथा शुचता।"

६. " इन्द्रियों का अरक्षण तथा भोजन में मात्रज्ञ होना।"

७. " इन्द्रियों का संरक्षण तथा भोजन में मात्रज्ञ होना।"

८. " प्रति-संख्यान (=ज्ञान)-बल तथा भावना-बल।"

९. " स्मृति-बल तथा समाधि-बल।"

१०. " शमथ तथा विपश्यना।"

११. " शील-दोष (विपत्ति) तथा दृष्टि-दोष।"

१२. " शील-सम्पत्ति तथा दृष्टि-सम्पत्ति।"

१३. " शील-विशुद्धि तथा दृष्टि-विशुद्धि।"

१४. "दृष्टि-विशुद्धि तथा यथा-दर्शन प्रयत्न।"

१५. "कुशल-धर्मों में असन्तोष तथा प्रयत्न में सतत-भाव।"

१६. "मूढ-स्मृति होना तथा अजानकार होना।"

१७. "स्मृति तथा ज्ञान।"

(१६)

"भिक्षुओ, ये दो धर्म हैं।

"कौनसे दो?

"क्रोध तथा उपनाह (=बद्ध-वैर)। भिक्षुओ, ये दो धर्म हैं।"

(इसी प्रकार २—१० तक।)

२. "म्रक्ष (दूसरे के गुण को ढँकना तथा प्रदास (चण्ड-पारुष्य)।"

३. "ईर्षा तथा मात्सर्य।"

४. "माया तथा शठता।"

५. "निर्लज्जता तथा (पाप-कर्म में) निर्भयता।"

६. "अक्रोध तथा अनुपनाह।"

७. "अम्रक्ष तथा अप्रदास।"

८. "अनीर्षा तथा अमात्सर्य।"

९. "अमाया तथा अशठता।"

१०. "लज्जा तथा (पाप-कर्म में) भय।"

"११. भिक्षुओ, दो धर्मों से युक्त होने पर दुःख भोगना होता है।

"किन दो धर्मों से?

"क्रोध से तथा उपनाह से।"

१२. "म्रक्ष से तथा प्रदास से?"

१३. "ईर्षा से तथा मात्सर्य से।"

१४. "माया से तथा शठता से।"

१५. "निर्लज्जता तथा (पाप-कर्म में) निर्भय होने से।"

"भिक्षुओ, इन दो धर्मों से युक्त होने पर दुःख भोगना होता है।"

१६. "भिक्षुओ, इन दो धर्मों से युक्त होने पर सुख भोगता है।

"कौनसे दो धर्मों से?

"अक्रोध तथा अनुपनाह से।"

"अम्रक्ष तथा अप्रदास से।"

"अनीर्षा तथा अमात्सर्य्य से।"

"अमाया तथा अशठता से।"

"लज्जा तथा पाप-कर्म में भय होने से।"

"भिक्षुओ, इन दो धर्मों से युक्त होने पर सुख भोगता है।"

२१. "भिक्षुओ, ये दो धर्म शैक्ष-भिक्षु की हानि का कारण होते हैं।"

"कौनसे दो?"

"क्रोध तथा उपनाह।"

२२. "म्रक्ष तथा प्रदास।"

२३. "ईर्षा तथा मात्सर्य्य।"

२४. "माया तथा शठता।"

२५. "निर्लज्जता तथा (पाप-कर्म में) भय-रहित होना।"

"भिक्षुओ, ये दो धर्म शैक्ष-भिक्षु की हानि के कारण होते हैं।"

२६. "भिक्षुओ, ये दो धर्म शैक्ष-भिक्षु की हानि का कारण नहीं होते।

"कौनसे दो?

"अक्रोध तथा अनुपनाह।"

"अम्रक्ष तथा अप्रदास।"

"अनीर्षा तथा अमात्सर्य्य।"

"अमाया तथा अशठता।"

"लज्जा तथा पाप-कर्म में भय होना।"

"भिक्षुओ, ये दो धर्म शैक्ष की हानि का कारण नहीं होते।"

३१–३५. "भिक्षुओ, इन दो धर्मों से युक्त आदमी मानों नरक में डाल दिया गया हो।

"किन दो धर्मों से?

"क्रोध से तथा उपनाह से"...... (११ से १५)

"भिक्षुओ, इन दो धर्मों से युक्त (आदमी) मानों नरक में डाल दिया गया हो।"

३६-४०. "भिक्षुओ, इन दो धर्मों से युक्त (आदमी) मानों स्वर्ग में डाल दिया गया हो।

"कौनसे दो धर्मों से ?

"अक्रोध तथा अनुपनाह से.......(१६—२०)

"भिक्षुओ, इन दो धर्मों से युक्त (आदमी) मानो स्वर्ग में डाल दिया गया हो।"

४१-४५. "भिक्षुओ, इन दो धर्मों से युक्त (प्राणी) शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर अपाय, दुर्गति, नरक, जहन्नम में जन्म ग्रहण करता है।

"कौनसे दो धर्मों से ?

"क्रोध से तथा उपनाह से........,.........(११-१५)

"भिक्षुओ, इन दो धर्मों से युक्त.........जन्म ग्रहण करता है।"

४६-५०. "भिक्षुओ, इन दो धर्मों से युक्त (प्राणी) शरीर के छूटने पर, मरने के अनन्तर, सुगति, स्वर्ग-लोक में जन्म ग्रहण करता है।

"कौनसे दो धर्मों से ?

"अक्रोध तथा अनुपनाह से....................(१६-२०)

"भिक्षुओ, इन दो धर्मों से............जन्म ग्रहण करता है।"

"भिक्षुओ, ये दो धर्म अकुशल हैं..............." (देखो १-५)

५६-६०. "भिक्षुओ, ये दो धर्म कुशल हैं.... ......"(देखो ६-१०)

६१-६४. "भिक्षुओ, ये दो धर्म सदोष हैं ...." (देखो १-५)

६५-७०. "भिक्षुओ, ये दो धर्म निर्दोष हैं ...."(देखो ६-१०)

७०-७५. "भिक्षुओ, ये दो धर्म दुःख-कारक हैं ......" (देखो १-५)

७६-८०. "भिक्षुओ, ये दो धर्म सुखकारक हैं ...."(देखो ६-१०)

८१-८५. "भिक्षुओ, ये दो धर्म सुखकारक हैं ......"(देखो ६-१०)

८६-९०. "भिक्षुओ, ये दो धर्म सुख-दायी हैं ...."(देखो ६-१०)

९१-९५. "भिक्षुओ, ये दो धर्म दुखद हैं ...."(देखो १-५)

९६-१००. "भिक्षुओ, ये दो धर्म सुखद हैं ...."(देखो ६-१०)

"भिक्षुओ, ये दो धर्म सुखद हैं ।"

"भिक्षुओ, दो बातोंका लाभ देख कर तथागतने श्रावकों के लिये शिक्षापदों (=नियमों) की प्रज्ञप्ति की है।

"कौनसी दो बातों का ?

"संघकी भलाई के लिये तथा संघ की आसानी के लिये......... ।"

"दुराचारी भिक्षुओं का निग्रह करनेके लिये तथा सदाचारी भिक्षुओं के सुख-पूर्वक रहनेके लिये..... ।"

"अिसी शरीर में अनुभव होनेवाले आस्रवों, वैरों, दोषों, भयों तथा अकुशल-धर्मोंके संवरके लिये; पारलौकिक आस्रवोंके, वैरों के, दोषोंके, भयों के, अकुशल-धर्मों के नाश के लिये..... ।"

"गृहस्थोंपर अनुकम्पा करनेके लिये तथा पापियोंके पक्ष का नाश करने के लिये ।"

"अप्रसन्नों को प्रसन्न करनेके लिये, प्रसन्नों को और भी अधिक प्रसन्न करनेके लिये......... ।"

"सद्धर्म की स्थिति के लिये, विनयपर अनुग्रह करनेके लिये ।"

"भिक्षुओ, इन दोनों बातों का ख्याल कर तथागत ने श्रावकोंके लिये शिक्षापदों (=नियमों) की प्रज्ञप्ति की है।

"प्रातिमोक्ष उद्देशों की प्रज्ञप्ति की है....................." (देखो—१)

"प्रातिमोक्ष-स्थापना की प्रज्ञप्ति की है................." देखो—१

"प्रवारणा की प्रज्ञप्ति की है"................. "

"प्रवारणा-स्थापना की प्रज्ञप्ति की है"............... "

"तर्जनीय-कर्म की प्रज्ञप्ति की है"................. "

"नियस्य-कर्म की प्रज्ञप्ति की है"................ "

"प्रव्राजनीय-कर्म की प्रज्ञप्ति की है"............... "

"प्रतिसारणीय-कर्म की प्रज्ञप्ति की है"............... "

"उत्क्षेपणीय-कर्म की प्रज्ञप्ति की है"................ "

"परिवास-दान की प्रज्ञप्ति की है"................ "

"मूल-प्रतिकर्षण की प्रज्ञप्ति की है"............... "

"मानव-दान की प्रज्ञप्ति की है"................ "

२. भिक्षुओ, अिन दो बातों का विचार कर तथागतने श्रावकों के लिये प्रातिमोक्ष की प्रज्ञप्ति की है..................................." (देखो–१)

"अब्भान की प्रज्ञप्ति की है" .... "

"वोसारणीय की प्रज्ञप्ति की है" .... "

"निस्सारणीय की प्रज्ञप्ति की है"....................... "

"अुपसम्पदा की प्रज्ञप्ति की है"....................... "

"ज्ञप्ति-कर्म की प्रज्ञप्ति की है"....................... "

"ज्ञप्ति-द्वितीय-कर्म की प्रज्ञप्ति की है"....................... "

"ज्ञप्ति-चतुर्थ-कर्म की प्रज्ञप्ति की है" .... "

"अप्रज्ञापित की प्रज्ञप्ति की है"....................... (देखो–१)

"प्रज्ञापित की अनुप्रज्ञप्ति की है"....................... (देखो–१)

"सन्मुख-विनय की प्रज्ञप्ति की है"....................... (देखो–१)

"स्मृति-विनय की प्रज्ञप्ति की है"....................... (देखो–१)

"अमूढ-विनय की प्रज्ञप्ति की है"....................... (देखो–१)

"प्रतिज्ञात-करण की प्रज्ञप्ति की है"....................... (देखो–१)

"येभूयिसका (=बहुमत) की प्रज्ञप्ति की है"....................... (देखो–१)

"तस्सपापयिसिका की प्रज्ञप्ति की है"....................... (देखो–१)

"तृणविस्तारक की प्रज्ञप्ति की है"....................... (देखो–१)

"कौनसी दो ?"

"संघ की भलाई के लिये तथा संघ की आसानी के लिये.....दुराचारी भिक्षुओं का निग्रह करने के लिये तथा सदाचारी भिक्षुओं के सुख-पूर्वक रहने के लिये ....इसी शरीर में अनुभव होनेवाले आस्रवों, वैरों, दोषों, भयों तथा अकुशल धर्मों में संवर के लिये, पारलौकिक आस्रवों के, वैरों के, दोषोंके, भयों के, अकुशल धर्मों के नाश के लिये..........। गृहस्थों पर अनुकम्मा करने के लिये तथा पापियों के पक्ष का नाश करने के लिये।"

"अप्रसन्नों को प्रसन्न करने के लिये, प्रसन्नों को और भी अधिक प्रसन्न करने के लिये......."

"सद्धर्म की स्थिति के लिये, विनय पर अनुगृह करने के लिये।"

"भिक्षुओ, इन दो बातों का ख्याल कर तथागत ने श्रावकों के लिये शिक्षा-पदों (=नियमों) की प्रज्ञप्ति की है।"

"३. भिक्षुओ, राग (के यथार्थ स्वरूप) का ज्ञान प्राप्त करने के लिये दो धर्मों की भावना (=अभ्यास) करनी चाहिये।

"कौनसे दो धर्मों की ?

"शमथ तथा विपश्यना की। भिक्षुओ, राग का ज्ञान प्राप्त करने के लिये दो धर्मों की भावना करनी चाहिये।"

४. "भिक्षुओ, राग के परिज्ञान के लिये, परिक्षय के लिये, प्रहाण के लिये, क्षय के लिये, व्यय के लिये, विराग के लिये, निरोध के लिये, त्याग के लिये, प्रतिनिसर्ग के लिये, इन दो धर्मों की भावना करनी चाहिये......(देखो--१७-५)

"भिक्षुओ, द्वेष के, मोह के, क्रोध के, उपनाह के, म्रक्ष के, प्रदास के, ईर्षा के, मात्सर्य्य के, माया के, शठता के, स्तब्द्ध-भाव के, सारंभ के, मान के, अतिमान के, मद के, प्रमाद के (यथार्थ स्वरूप के) ज्ञान के लिये, परिज्ञान के लिये, परिक्षय के लिये, प्रहाण के लिये, क्षय के लिये, व्यय के लिये, विराग के लिये, निरोध के लिये, त्याग के लिये, प्रतिनिसर्ग के लिये, दो धर्मों की भावना करनी चाहिये।

"कौनसे दो धर्मों की ?

"शमथ की तथा विपश्यना की।.........इन दो धर्मों की भावना करनी चाहिये।"

तीसरा-निपात

"ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्ती में अनाथपिण्डिक के जेतवनाराम में विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को आमंत्रित किया—"भिक्षुओ!" उन भिक्षुओं ने भगवान् को प्रतिवचन दिया—"भदन्त!" भगवान् ने यह कहा—"भिक्षुओ, जितने भी भय उत्पन्न होते हैं, वे मूर्ख से ही उत्पन्न होते हैं, पण्डित से नहीं। जितने भी उपसर्ग उत्पन्न होते हैं, वे मूर्ख से ही उत्पन्न होते हैं, पण्डित से नहीं। जितने भी उपद्रव उत्पन्न होते हैं, वे मूर्ख से ही उत्पन्न होते हैं, पण्डित से नहीं।"

"भिक्षुओ, जैसे सरकण्डों की छत में वा फूस की छत में लगी हुई आग लिपे-पुते, निर्वात, अरगलोंवाले, बन्द खिडकियोंवाले कूटागारों को भी जला डालती है, उसी प्रकार भिक्षुओ, जितने भी भय उत्पन्न होते हैं, वे मूर्ख से ही उत्पन्न होते हैं, पण्डित से नहीं। जितने भी उपसर्ग उत्पन्न होते हैं, वे मूर्ख से ही उत्पन्न होते हैं, पण्डित से नहीं। जितने भी उपद्रव उत्पन्न होते हैं, वे मूर्ख से ही उत्पन्न होते हैं, पण्डित से नहीं।"

"भिक्षुओ, इस प्रकार मूर्ख सभय होता है, पण्डित निर्भय होता है, मूर्ख स-उपसर्ग होता है, पण्डित उपसर्ग-रहित होता है, मूर्ख स-उपद्रव होता है, पण्डित उपद्रव-रहित होता है। भिक्षुओ, पण्डित से भय नहीं है, पण्डित से उपसर्ग नहीं है, पण्डित से उपद्रव नहीं है।"

"इसलिये भिक्षुओ, यह सीखना चाहिये, जिन तीन-धर्मों से युक्त आदमी मूर्ख समझा जाता है उन तीन धर्मों को त्याग कर तथा जिन तीन धर्मों से युक्त आदमी पण्डित समझा जाता है उन तीन धर्मों से समन्वित होकर रहेंगे। भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये।"

(२)

"भिक्षुओ, मूर्ख का क्या लक्षण है, पण्डित का क्या लक्षण है? चरित्र से ही प्रज्ञा की शोभा है।"

"भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त आदमी को मूर्ख समझना चाहिये। किन तीन बातों से? शरीर के दुश्चरित्र से, वाणी के दुश्चरित्र से तथा मन के दुश्चरित्र से। भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त आदमी को मूर्ख जानना चाहिये।"

"भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त आदमी को पण्डित समझना चाहिये। किन तीन बातों से? शरीर के सुचरित्र से, वाणी के सुचरित्र से तथा मन के सुचरित्र से। भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त आदमी को पण्डित जानना चाहिये।"

"इसलिये भिक्षुओ यह सीखना चाहिये, जिन तीन धर्मों से युक्त आदमी मूर्ख समझा जाता है उन तीन धर्मों को त्याग कर तथा जिन तीन धर्मों से युक्त आदमी पण्डित समझा जाता है उन तीन धर्मों से समन्वित होकर रहेंगे।"

"भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये।"

(३)

"भिक्षुओ, मूर्ख के तीन लक्षण हैं। कौन से तीन? भिक्षुओ, मूर्ख बुरे विचार रखता है, बुरी वाणी बोलता है, बुरे कर्म करता है। भिक्षुओ, यदि मूर्ख बुरे विचार न रखे, बुरी वाणी न बोले, बुरे कर्म न करे, तो पण्डित-लोग यह कैसे जानेंगे कि यह जनाब असत्पुरुष मूर्ख हैं। क्योंकि भिक्षुओ, मूर्ख बुरे विचार रखता है, बुरी वाणी बोलता है, बुरे कर्म करता है, इसी लिये पण्डित-लोग जान लेते हैं कि यह जनाब असत्पुरुष मूर्ख हैं। भिक्षुओ, ये तीन मूर्ख के लक्षण हैं।"

"भिक्षुओ, पण्डित के तीन लक्षण हैं। कौन से तीन?

"भिक्षुओ, पण्डित अच्छे विचार रखता है, अच्छी वाणी बोलता है, अच्छे कर्म करता है। भिक्षुओ, यदि पण्डित अच्छे विचार न रखे, अच्छी वाणी न बोले, अच्छे कर्म न करे तो पण्डित लोग कैसे जानेंगे कि यह जनाब सत्पुरुष पण्डित हैं। क्योंकि भिक्षुओ, पण्डित अच्छे विचार रखता है, अच्छी वाणी बोलता है, अच्छे कर्म करता है, इसी लिये पण्डित-लोग जान लेते हैं कि यह जनाब सत्पुरुष पण्डित हैं। भिक्षुओ ये तीन पण्डित के लक्षण हैं।"

(४)

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त को मूर्ख जानना चाहिये। कौनसी तीन बातों से?

"वह अपने 'दोष' को 'दोष' करके नहीं देखता, 'दोष' को 'दोष' करके देखकर वह उसका 'प्रतिकर्म' नहीं करता, यदि कोई दूसरा अपना 'दोष'

स्वीकार करे तो वह उसे धर्मानुसार क्षमा नहीं करता। भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त को मूर्ख जानना चाहिये।"

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त को पण्डित समझना चाहिये। कौन सी तीन बातों से?

"वह अपने 'दोष' को 'दोष' करके देखता है, 'दोष' को 'दोष' करके देखकर वह उसका 'प्रति-कर्म' करता है, यदि कोई दूसरा अपना 'दोष' स्वीकार करे तो वह उसे धर्मानुसार क्षमा करता है। भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त को पण्डित जानना चाहिये।"

(५)

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त को 'मूर्ख' जानना चाहिये। कौनसी तीन बातों से?

"अनुचित ढंग से प्रश्न पूछनेवाला होता है, अनुचित ढंग से प्रश्न का उत्तर देनेवाला होता है, दूसरे के दिये गये यथार्थ उत्तर का परिमण्डल पद-व्यन्जनों से, श्लेष-युक्त शब्दार्थ से अनुमोदन करने वाला नहीं होता। भिक्षुओ, इन तीन धर्मों से युक्त को 'मूर्ख' जानना चाहिये।"

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त को 'पण्डित' जानना चाहिये। कौनसी तीन बातों से?

"उचित ढंग से प्रश्न पूछने वाला होता है, उचित ढंग से प्रश्न का उत्तर देनेवाला होता है, दूसरे के दिये गये यथार्थ उत्तर का परिमण्डल पद-व्यंजनों से, श्लेष-युक्त शब्दार्थ से अनुमोदन करने वाला होता है। भिक्षुओ, इन तीन धर्मों से युक्त को 'पण्डित' जानना चाहिये।"

(६)

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त को 'मूर्ख' जानना चाहिये। कौनसी तीन बातों से?

"अकुशल शारीरिक-कर्म से, अकुशल वाणी के कर्म से, तथा अकुशल मनके कर्म से। भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त 'मूर्ख' होता है।"

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त को 'पण्डित' जानना चाहिये। कौनसी तीन बातों से?

"कुशल शारीरिक-कर्म से, कुशल वाणी के कर्म से, कुशल मन के कर्म से। भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त को 'पण्डित' जनना चाहिये।"

(७)

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त को 'मूर्ख' जानना चाहिये। कौनसी तीन बातों से?

"सदोष शारीरिक-कर्म से, सदोष वाणी-कर्म से, सदोष मनोकर्म से युक्त को.........।"

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त को 'पण्डित' जानना चाहिये। कौनसी तीन बातों से?

"निर्दोष शारीरिक-कर्म से, निर्दोष वाणी-कर्म से, निर्दोष मनो-कर्म से................।"

(८)

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त को 'मूर्ख' जानना चाहिये। कौनसी तीन बातों से?

"बुरे शारीरिक कर्म से........बुरे मनो-कर्म से............।"

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त को 'पण्डित' जानना चाहिये। कौनसी तीन बातों से?

"अच्छे शारीरिक-कर्म से..........अच्छे मनो-कर्म से.........।"

"भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त को 'पण्डित' जानना चाहिये।

"इसलिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये, जिन तीन-धर्मों से युक्त आदमी मूर्ख समझा जाता है उन तीन धर्मों को त्याग कर तथा जिन तीन-धर्मों से युक्त आदमी पण्डित समझा जाता है उन तीन धर्मों से समन्वित होकर रहेंगे।

"भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये।"

(९)

"भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त मूर्ख, अव्यक्त, असत्पुरुष अवगुणी होता है, सदोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दनीय होता है और बहुत अपुण्य का हेतु होता है।"

"कौनसी तीन बातों से?"

"शारीरिक दुष्कर्म से, वाणी के दुष्कर्म से तथा मनके दुष्कर्म से।"

"भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त मूर्ख, अव्यक्त, असत्पुरुष अवगुणी होता है, सदोष होता है, विज्ञपुरुषों द्वारा निन्दनीय होता है और बहुत अपुण्य का हेतु होता है।"

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त पण्डित, व्यक्त, सत्पुरुष गुणी होता है, निर्दोष होता है, विज्ञपुरुषों द्वारा प्रशंसनीय होता है और बहुत पुण्य का हेतु होता है।"

"कौनसी तीन बातों से?

"शारीरिक शुभ-कर्म से, वाणी के शुभ-कर्म से, तथा मन के शुभ कर्म से।

"भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त पण्डित, व्यक्त, सत्पुरुष गुणी होता है, निर्दोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा प्रशंसनीय होता है और बहुत पुण्य का हेतु होता है।"

(१०)

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त (आदमी) बिना तीन मलों का त्याग किये नरक में डाल दिये गये के समान होता है। कौनसी तीन बातों से?

"दुश्शील होता है, तथा उसका दुश्शीलता रूपी मल अप्रहीण होता है; ईर्षालु होता है तथा उसका ईर्षारूपी मल अप्रहीण होता है, मात्सर्य-युक्त होता है तथा उसका मात्सर्य्य-युक्त मल अप्रहीण होता है। भिक्षुओ, इन तीन धर्मों से युक्त (आदमी) बिना तीन मलों का त्याग किये नरक में डाल दिये गये के समान होता है।"

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त (आदमी) तीन मलों का त्याग कर स्वर्ग में डाल दिये गये के समान होता है। कौनसी तीन बातों से?

"सदाचारी होता है, दुराचार रूपी मल परित्यक्त होता है, ईर्षा-रहित होता है, ईर्षा रूपी मल परित्यक्त रहता है, मात्सर्य्य-रहित होता है, मात्सर्य्य रूपी मल परित्यक्त होता है।

"भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त (आदमी) तीन मलों का त्याग कर स्वर्ग में डाल दिये गये के समान होता है।"

(११)

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त प्रसिद्ध भिक्षु बहुत जनों का अहित करता है, बहुत जनों के असुख का कारण होता है, बहुत जनों के अनर्थ तथा अहित का कारण होता है, और देव-मनुष्यों को दुःख देता है,। कौन सी तीन बातों से?

"प्रतिकूल शारीरिक-कर्म करता है, प्रतिकूल वाणी का कर्म करता है, प्रतिकूल मनो-कर्म करता है। भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त प्रसिद्ध भिक्षु बहुत जनों का अहित करता है, बहुत जनों के असुख का कारण होता है, बहुत जनों के अनर्थ तथा अहित का कारण होता है और देव-मनुष्यों को दुःख देता है।"

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त प्रसिद्ध भिक्षु बहुत जनों का हित करता है, बहुत जनों के सुख का कारण होता है, बहुत जनों के अर्थ तथा हित का कारण होता है और देव-मनुष्यों को सुख देता है। कौनसी तीन बातों से ?

"अनुकूल शारीरिक-कर्म करता है, अनुकूल वाणीका कर्म करता है, अनुकूल मनो-कर्म करता है। भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त प्रसिद्ध भिक्षु बहुत जनों का हित करता है, बहुत जनों के सुख का कारण होता है, बहुत जनों के अर्थ तथा हित का कारण होता है और देव-मनुष्यों को सुख देता है।"

(१२)

"भिक्षुओ, ये तीन बातें राज्यभिषिक्त क्षत्रिय राजा को जन्म भर याद रहती हैं। कौनसी तीन बातें ?

"भिक्षुओ, जिस जगह राज्यभिषिक्त क्षत्रिय राजा जन्म ग्रहण करता है, भिक्षुओ, यह पहली बात है जो राज्याभिषिक्त क्षत्रिय राजा को जन्म भर याद रहती है।

"फिर भिक्षुओ, जिस जगह राज्याभिषिक्त क्षत्रिय राजा का राज्याभिषेक होता है, भिक्षुओ यह दूसरी बात है जो राज्याभिषिक्त क्षत्रिय राजा को जन्म भर याद रहती है ?

"फिर भिक्षुओ, जिस जगह राज्याभिषिक्त क्षत्रिय राजा संग्राम जीत कर, विजयी होकर, विजय के उसी स्थान पर रहता है, भिक्षुओ, यह तीसरी बात है जो राज्याभिषिक्त क्षत्रिय राजा को जन्म भर याद रहती है।

"भिक्षुओ, ये तीन बातें राज्याभिषिक्त क्षत्रिय राजा को जन्म भर याद रहती हैं।"

"इसी प्रकार भिक्षुओ, ये तीन बातें भिक्षु को जन्म भर याद रहती हैं। कौनसी तीन बातें ?

"भिक्षुओ, जिस जगह भिक्षु बाल-दाढी मुंडवा, काषाय वस्त्र पहन, घर से बे-घर हो प्रव्रजित होता है, भिक्षुओ, यह पहली बात है जो भिक्षु को जन्म भर याद रहती है।

"फिर भिक्षुओ, जिस जगह भिक्षु को यह दुःख है, इसका यथार्थ ज्ञान हो जाता है, यह दुख-समुदय है, इसका यथार्थ ज्ञान हो जाता है, यह दुःख-निरोध है, इसका यथार्थ-ज्ञान हो जाता है, यह निरोध-गामिनी-प्रतिपदा है, इसका यथार्थ-ज्ञान हो जाता है, भिक्षुओ, यह दूसरी बात है जो भिक्षु को जन्म भर याद रहती है।

"फिर भिक्षुओ, जिस जगह भिक्षु आस्रवों का क्षय करके, अनास्रव चित्त-विमुक्ति तथा प्रज्ञा-विमुक्ति को इसी शरीर में स्वयं जान कर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार करता है, भिक्षुओ, यह तीसरी बात है जो भिक्षु को जन्म भर याद रहती है।"

(१३)

"भिक्षुओ, लोक में तीन तरह के आदमी हैं। कौनसे तीन तरह के ?

"निराश, आशावान् तथा विगताशा।"

"भिक्षुओ, निराश आदमी किसे कहते हैं ?"

"भिक्षुओ, एक आदमी नीच-कुल में जन्म ग्रहण करता है, दरिद्र-कुल में जन्म ग्रहण करता है, अल्प खाद्य-पेय कुल में, दुर्जीविका-कुल में, जहाँ कठिनाई से खाना-पीना मिलता है जैसे चण्डाल कुल में, शिकारियों के कुल में, बंस-फोडों के कुल में, चमारों के कुल में, मालियों के कुल में। वह दुर्वर्ण होता है, दुर्दर्शनीय, लूला, रोग-बहुल, काना, लूला, लंगड़ा वा पक्षाघात हुआ हुआ। उसे न अन्न-पान मिलता है, न वस्त्र मिलता है, न सवारी मिलती है, न माला-गन्ध-विलेपन मिलता है, न शैय्या मिलती है, न निवास-स्थान मिलता है और न प्रदीप मिलता है। वह सुनता है कि अमुक नाम के क्षत्रिय का क्षत्रियों द्वारा राज्याभिषेक हुआ है। उसके मन में यह नहीं होता कि मुझे भी, क्षत्रिय कब क्षत्रियाभिषेक से अभिषिक्त करेंगे—भिक्षुओ, ऐसा (आदमी) निराश आदमी कहलाता है।

"भिक्षुओ, आशा-वान् आदमी किसे कहते हैं ?

"भिक्षुओ, राज्याभिषिक्त, क्षत्रिय राजा का ज्येष्ठ पुत्र होता है अभिषेकार्ह, अनभिषिक्त, आयु-प्राप्त। वह सुनता है अमुक नाम का क्षत्रिय क्षत्रियों द्वारा क्षत्रियाभिषेक से अभिषिक्त हुआ है। उसके मन में यह होता है कि क्षत्रिय मुझे भी कब क्षत्रियाभिषेक से अभिषिक्त करेंगे ? भिक्षुओ, ऐसा (आदमी) आशावान् आदमी कहलाता है।

"भिक्षुओ, विगताशा आदमी किसे कहते हैं ?"

"भिक्षुओ, राज्याभिषिक्त क्षत्रिय राजा होता है। वह सुनता है कि अमुक नाम का क्षत्रिय क्षत्रियों द्वारा क्षत्रियाभिषेक से अभिषिक्त हुआ है। उसके मन में यह नहीं होता कि मुझे भी क्षत्रिय कब क्षत्रियाभिषेक से अभिषिक्त करेंगे। यह किस लिये ? भिक्षुओ, अनिषेक से पूर्व की इसकी अभिषेकाशा पूरी हो चुकी है। भिक्षुओ, ऐसा (आदमी) विगताशा आदमी कहलाता है।

"भिक्षुओ, इस लोक में यह तीन प्रकार के आदमी हैं। इसी प्रकार भिक्षुओ, भिक्षुओं में भी तीन प्रकार के भिक्षु हैं। कौनसे तीन प्रकार के ?

"निराश, आशावान् तथा विगताशा।

"भिक्षुओ, निराश भिक्षु किसे कहते हैं ?

"भिक्षुओ, एक भिक्षु दुश्शील होता है, पापी, अपवित्र, सशंकित, अशुभ-कर्मी, अश्रमण होता हुआ श्रमण-प्रतिज्ञ, अब्रह्मचारी होता हुआ ब्रह्मचर्य्य-प्रतिज्ञ, भीतर से सड़ा हुआ, रागादि से भीगा हुआ, रागादि कूड़े से समन्वित। वह सुनता है कि अमुक भिक्षु आस्रवों का क्षय करके, अनास्रव चित्त-विमोक्ष, प्रज्ञा-विमोक्ष को इसी शरीर में स्वयं जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार करता है। उसके मन में यह नहीं होता—मैं भी कब आस्रवों का क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमोक्ष, प्रज्ञा-विमोक्ष को इसी शरीर में स्वयं जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार करूँगा। भिक्षुओ, ऐसा (भिक्षु) निराश भिक्षु कहलाता है।

"भिक्षुओ, आशावान् भिक्षु किसे कहते हैं ?

"भिक्षुओ, भिक्षु सदाचारी होता है कल्याण-धर्मी। वह सुनता है कि अमुक भिक्षु आस्रवों का क्षय करके, अनास्रव चित्त-विमोक्ष, प्रज्ञा-विमोक्ष को इसी शरीर में स्वयं जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार करता है। उसके मन में यह होता है—मैं भी कब आस्रवों का क्षय कर........विहार करूँगा।

"भिक्षुओ, ऐसा (भिक्षु) आशावान् भिक्षु कहलाता है।

"भिक्षुओ, विगताशा भिक्षु किसे कहते हैं ?"

"भिक्षुओ, एक (भिक्षु) क्षीणास्रव अर्हत होता है। वह सुनता है कि अमुक भिक्षु आस्रवों का क्षय कर........विहार करता है। उसके मन में यह नहीं होता—मैं भी कब आस्रवों का क्षय कर......विहार करूंगा। यह किस लिये? भिक्षुओ, मुक्त होने से पूर्व की इसकी मुक्त होने की आशा शान्त हो चुकी है।

"भिक्षुओ, ऐसा (भिक्षु) विगताशा भिक्षु कहलाता है। भिक्षुओ, भिक्षुओं में ये तीन प्रकार के भिक्षु हैं।"

(१४)

"भिक्षुओ, चो चक्रवर्ती, धार्मिक, धर्म-राजा होता है, वह भी राजा-विहीन होकर चक्रवर्ती राज्य नहीं करता।"

ऐसा कहने पर एक भिक्षु ने भगवान् से यह कहा—"भन्ते, धार्मिक, चक्रवर्ती, धर्म-राजा का राजा कौन ?"

"भिक्षु! धर्म ही राजा है।" आगे भगवान् ने कहा—

"हे भिक्षु! धार्मिक, चक्रवर्ती, धर्म-राजा, धर्म के ही लिये, धर्म का सत्कार करते हुए, धर्म के प्रति गौरव प्रदर्शित करते हुए, धर्म की पूजा करते हुए, धर्म-ध्वज, धर्म-केतु, धर्माधिपत्य, जनता की धार्मिक सुरक्षा की व्यवस्था करता है।

"हे भिक्षु! और फिर, धार्मिक, चक्रवर्ती, धर्म-राजा धर्म के ही लिये, धर्म का सत्कार करते हुए, धर्म के प्रति गौरव प्रदर्शित करते हुए, धर्म की पूजा करते हुए, धर्म-ध्वज, धर्म-केतु, धर्माधिपत्य, क्षत्रियों की, अनुयुक्त क्षत्रियों की, सेना की, ब्राह्मण-गृहपतियों की, निगम-जनपद के लोगों की, श्रमण ब्राह्मणों की तथा पशु-पक्षियों की सुरक्षा की व्यवस्था करता है।

"हे भिक्षु! वह धार्मिक राजा चक्रवर्ती........धार्मिक सुरक्षा की व्यवस्था करके.......क्षत्रियों की......पशुपक्षियों की, धर्मानुसार ही (राज्य-) चक्र का प्रर्वतन करता है। वह चक्र किसी अन्य मनुष्य द्वारा, किसी शत्रु द्वारा प्रर्वतित नहीं होता।

"इसी प्रकार हे भिक्षु! सम्यक् सम्बुद्ध अर्हत, तथागत धार्मिक, धर्म-राजा, धर्म के ही लिये, धर्म का सत्कार करते हुए, धर्म के प्रति गौरव प्रदर्शित करते हुए, धर्म की पूजा करते हुए, धर्म-ध्वज, धर्म-केतु, धर्माधिपत्य, शारीरिक-कर्म के प्रति धार्मिक पहरेदारी की व्यवस्था करते हैं—इस प्रकार का शारीरिक-कर्म करना चाहिये, इस प्रकार का शारीरिक-कर्म नहीं करना चाहिये।

"और फिर भिक्षु! सम्यक् सम्बुद्ध अर्हत, तथागत धार्मिक, धर्मराजा, धर्म के ही लिये, धर्म का सत्कार करते हुए, धर्म के प्रति गौरव प्रदर्शित करते हुए, धर्म की पूजा करते हुए, धर्म-ध्वज, धर्म-केतु, धर्माधिपत्य वाणी के कर्म के प्रति.....

.........वाणी का कर्म करना चाहिये, इस प्रकार का वाणी का कर्म नहीं करना चाहिये। ....मन का कर्म करना चाहिये, मन का कर्म नहीं करना चाहिये।

"हे भिक्षु ! वह सम्यक् सम्बुद्ध अर्हत, तथागत, धार्मिक, धर्मराजा.. ....धर्माधिपत्य पहरेदारी की व्यवस्थाकर धर्म से ही अनुत्तर धर्म-चक्र का प्रवर्तन करता है। उस धर्म-चक्र को लोक में न कोई दूसरा श्रमण, न कोई ब्राह्मण, न देव, न मार और न कोई और प्रवर्तित कर सकता है।"

(१५)

एक समय भगवान् बाराणसी (बनारस) में ऋषिपतन मृगदायमें विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को सम्बोधित किया—

"भिक्षुओ !"

"भदन्त" कह उन भिक्षुओं ने भगवान् को प्रतिवचन दिया। भगवान् ने यह कहा—

"भिक्षुओ ! पूर्व समय में प्रचेतन नाम का राजा हुआ था। भिक्षुओ ! तब राजा प्रचेतन ने रथकार को बुलाकर कहा—

"सौम्य रथकार ! छः महीनों के बाद संग्राम होगा। क्या तू इस बीच (रथ के) पहियों की नई जोड़ी बना सकेगा ?"

"भिक्षुओ, रथकार ने प्रचेतन राजा को प्रत्युत्तर दिया—

"बना सकूँगा।"

"तब भिक्षुओ, रथकार ने छः दिन कम छः महीने में एक पहिया बनाया। तब भिक्षुओ, राजा प्रचेतन ने रथकार को सम्बोधित किया—

"सौम्य रथकार ! आज से छः दिन के बाद संग्राम होगा, नये पहियों की जोडी बनकर तैयार हुई ?"

"देव ! इन छः दिन कम छः महीनों में एक पहिया बन कर तैयार हुआ है।"

"सौम्य ! इन छः दिनों में दूसरा एक पहिया बना सकोगे ?"

"भिक्षुओ, रथकार ने प्रचेतन राजा को उत्तर दिया—

"देव ! बना सकूँगा।"

" २. तब भिक्षुओ रथकार ने छः दिनों में दूसरा पहिया तैयार किया और इस पहियों की नई जोड़ी को लेकर जहाँ राजा प्रचेतन था, वहाँ गया। जाकर उस ने राजा प्रचेतन को यह कहा –

" देव ! यह आपकी पहियों की जोड़ी तैयार है। "

" सौम्य रथकार ! यह जो एक पहिया तूने छः दिन कम छः महीनों में तैयार किया, और यह जो दूसरा पहिया छः दिनों में तैयार किया, इन दिनों में क्या अन्तर है ? मैं इन दोनों में कोई भेद नहीं देखता ? "

" देव ! इन दोनों में अन्तर है। देव ! इन दोनों का अन्तर देखें। "

" भिक्षुओ, तब रथकार ने छः दिन में बने हुए पहिये को चालू किया। चालू किया हुआ वह पहिया जितनी जोर से धकेला गया था उस जोर के समाप्त होते ही लड़खड़ा कर जमीन पर गिर पड़ा। तब उस ने जो पहिया छः दिन कम छः महीने में बनाया था उसे चालू किया। चालू किया हुआ वह पहिया जितनी जोर से धकेला गया था उस जोर की गति के अनुसार जाकर धुरी पर स्थित की तरह खड़ा हो गया।

" सौम्य रथकार ! इस का क्या हेतु है, क्या कारण है कि जो यह छः दिन में बना हुआ पहिया है वह जितनी जोर से धकेला गया था, उस जोर के समाप्त होते ही लड़खड़ा कर जमीन पर गिर पड़ा, और जो पहिया छः दिन कम छः महीने में तैय्यार हुआ वह पहिया जितनी जोर से धकेला गया था उस जोर के अनुसार जाकर धुरी पर स्थित की तरह खडा हो गया ?

" देव ! जो यह पहयि छः दिनों में बनकर समाप्त हुआ है उसकी नेमी भी टेढ़ी हैं, सदोष हैं, कसर-सहित हैं, उसके आरे भी टेढे हैं, सदोष हैं, कसर-सहित हैं, उसकी नाभी भी टेढी है, सदोष है, कसर-सहित है। उसकी नेमी के भी टेढ़े सदोष, तथा कसर-सहित होने से, उसके आरों के भी टेढ़े, सदोष तथा कसर-सहित होने से, उसकी नाभी भी टेढ़ी, सदोष तथा कसर-सहित होने से वह पहिया जितनी जोर से धकेला गया था उस जोर के समाप्त होते ही लड़खड़ा कर जमीन पर गिर पडा। और देव ! यह जो पहिया छः दिन कम छः महिने में तैय्यार हुआ उसकी नेमी भी सीधी है, निर्दोष है, कसर-रहित है, उस के आरे भी सीधे हैं, निर्दोष हैं, कसर-रहित हैं, उसकी नाभी भी सीधी है, निर्दोष है तथा कसर-रहित है। उस

की नेमी के भी सीधे, निर्दोष तथा कसर-रहित होने से, उस के आरों के भी सीधे, निर्दोष तथा कसर-रहित होने से, उसकी नाभी के भी सीधे, निर्दोष तथा कसर-रहित होने से यह जो पहिया छः दिन कम छः महीने में तैय्यार हुआ वह पहिया जितनी जोर से धकेला गया था उस जोर के अनुसार धुरी पर स्थित की तरह खड़ा हो गया।

"भिक्षुओ, सम्भव है कि तुम यह सोचो कि वह रथकार कोओी दूसरा ही था। भिक्षुओ, यह बात इस प्रकार नहीं समझनी चाहिये। मैं ही उस समय वह रथकार था। उस समय मैं लकडीके टेढ़े-पन, लकड़ीकी कसरें दूर करनेमें कुशल था। इस समय भिक्षुओ, मैं अरहत सम्यक् सम्बद्ध, शरीर मन तथा वाणीके टेढ़े-पन, दोष और कसरोंको दूर करनेमें कुशल हूँ।

"भिक्षुओ, जिस किसी भिक्षु वा भिक्षुणी के शरीर, वाणी तथा मन का टेढ़ापन, दोष तथा कसर दूर नहीं हुओी हैं वे इस धर्म-विनय से उसी प्रकार गिरे हैं जैसे वह छः दिनों में बना हुआ पहिया।

"भिक्षुओ, जिस किसी भिक्षु या भिक्षुणी के शरीर वाणी तथा मन का टेढ़ापन, दोष तथा कसर दूर हो गई है, भिक्षुओ, वे भिक्षु तथा भिक्षुणियाँ इस धर्म-विनय में उसी प्रकार प्रतिष्ठित हैं जैसे छः दिन कम छः महीने में बना हुआ पहिया।

"इस लिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये: शरीर वाणी तथा मन के टेढ़ेपन, दोषों और कसरों का त्याग करेंगे। भिँक्षुओ, ऐसा ही सीखना चाहिये।"

(१६)

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त भिक्षु अप्रतिकूल-प्रतिपदा का अनुगामी होता है और उसका जन्म आस्रवों के क्षय में लगा होता है। कौनसी तीन बातों से?

"भिक्षुओ, भिक्षु इन्द्रियों को संयत रखता है, भोजन में मात्रज्ञ होता है, जाग्रत रहता है।

"भिक्षुओ, इन्द्रियों को किस प्रकार संयत रखता है?

"भिक्षुओ, भिक्षु चक्षु से रूप देखकर न उसके निमित्त को ग्रहण करता है औन न उसके अनुव्यंजन को, जिस चक्षु-इन्द्रिय के असंयत रहने से लोभ-दौर्मनस्य आदि पापी अकुशल धर्मों की उत्पत्ति हो सकती है, उसे संयत रखने का प्रयास करता है, चक्षु-इन्द्रिय की रक्षा करता है, चक्षु-इन्द्रिय को संयत रखता है—श्रोत से शब्द

सुनकर........घ्राणेन्द्रिय से गन्ध का ग्रहण कर......जिव्हा से रस चख कर.. ....काय से स्पर्श कर........तथा मन से मन के विषयों का ग्रहण कर न उन के निमित्त को ग्रहण करता है और न उनके अनुव्यंजन को, जिस मन इन्द्रिय के असंयत रहने से लोभ-दौर्मनस्य आदि पापी अकुशल-धर्मों की उत्पत्ति हो सकती है, उसे संयत रखने का प्रयास करता है, मन इन्द्रिय की रक्षा करता है, मन इन्द्रिय को संयत रखता है। भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु इन्द्रियों को संयत रखता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु भोजन में कैसे मात्रज्ञ होता है ?

"भिक्षुओ, भिक्षु ज्ञानपूर्वक ठीक से आहार ग्रहण करता है, न मजाक के लिये, न मद के लिये, न शरीर को मण्डित करने के लिये और न विभूषित करने के लिये ; जब तक इस शरीर की स्थिति है तब तक उसे बनाये रखने के लिये, विहिंसा से विरत रहने के लिये तथा ब्रह्मचर्य्य पर अनुग्रह करने के लिये ताकि पुरानी वेदना का संहार हो, नई वेदना की उत्पत्ति न हो, और 'मेरी' (जीवन) यात्रा निर्दोष तथा असुविधा-रहित हो। इस प्रकार भिक्षुओ, भिक्षु भोजन के विषय में मात्रज्ञ होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु जाग्रत कैसे रहता है ?

"भिक्षुओ, भिक्षु दिन में चन्क्रमण करता रह कर अथवा बैठा रह कर मन के मैलों को दूर करता है, रात के प्रथम पहर में चन्क्रमण करता हुआ अथवा बैठा रह कर मन के मैलों को दूर करता है, रात्रि के बीच के पहर में पैर पर पैर रखकर दाहिनी करवट सिंह-शैय्या लेटता है जागरूकतापूर्वक, उठने के संकल्प को मन में जगह देकर, रात्रि के पिछले पहर में उठकर चन्क्रमण करता हुआ अथवा बैठा हुआ मन के मैलों को दूर करता है। भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु जाग्रत रहता है। भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त भिक्षु अप्रतिकूल-प्रतिपदा का अनुगामी होता है और उसका जन्म आस्रवों के क्षय में लगा होता है।"

(१७)

"भिक्षुओ, इन तीन बातों से अपना भी अहित होता है, दूसरोंका भी अहित होता है, दोनों का भी अहित होता है। कौनसी तीन बातों से ?

"शारीरिक दुश्चरित्रतासे, वाणीकी दुश्चरित्रतासे तथा मन की दुश्चरित्रतासे। भिक्षुओ, इन तीन बातों से अपना भी अहित होता है, दूसरों का भी अहित होता है, दोनों का भी अहित होता है।"

"भिक्षुओ, तीन बातों से न अपना अहित होता है, न दूसरों का अहित होता है और न दोनोंका अहित होता है। कौनसी तीन बातों से ?

"शारीरिक सच्चरित्रता से, वाणीकी सच्चरित्रतासे तथा मन की सच्चरित्रता से। भिक्षुओ, इन तीन बातों से न अपना अहित होता है, न दूसरों का अहित होता है और न दोनों का अहित होता है।"

(१८)

"भिक्षुओ, यदि अन्य मतों के परिब्राजक तुम्हें यह पूछें—आयुष्मानो ! क्या श्रमण गौतम देव-लोकमें उत्पन्न होने के लिये ब्रह्मचर्य (=श्रेष्ठ जीवन) व्यतीत करता है ! तो भिक्षुओ, अैसा पूछने पर क्या तुम्हें पीड़ा नहीं होगी, लज्जा नहीं आयेगी, घृणा नहीं होगी ?

"भन्ते ! हां।"

"भिक्षुओ, इससे पहले कि तुम्हें दिव्य-आयु, दिव्य-वर्ण, दिव्य-सुख, दिव्य-यश तथा दिव्य-आधिपत्य से पीड़ा हो, लज्जा हो, घृणा हो, तुम्हें शाररीक दुश्चरिच से, वाणी के दुश्चरित्र से तथा मन के दुश्चरित्र से पीड़ा होनी चाहिये, लज्जा होनी चाहिये, घृणा होनी चाहिये।"

(१९)

"भिक्षुओ, जिस दुकानदार में ये तीन बातें होती हैं, वह न अप्राप्त धन को प्राप्त कर सकता है और न प्राप्त धन को बढ़ा सकता है। कौनसी तीन बातें ?

"भिक्षुओ, जो दुकानदार पूर्वान्ह के समय सम्यक् रीति से अपना कारोबार नहीं करता, मध्यान्ह के समय सम्यक् रीति से अपना कारोबार नहीं करता, शाम के समय सम्यक् रीति से अपना कारोबार नहीं करता। भिक्षुओ, जिस दुकानदार में ये तीन बातें होती हैं वह न अप्राप्त धन को प्राप्त कर सकता है और न प्राप्त धन को बढ़ा सकता है।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षु में ये तीन बातें होती हैं वह अप्राप्त कुशल-धर्म को प्राप्त नहीं कर सकता, तथा प्राप्त कुशल-धर्म को बढ़ा नहीं सकता।

"कौनसी तीन बातें ?

"भिक्षुओ, भिक्षु पूर्वान्ह के समय सम्यक्-प्रकार से समाधि के निमित्त (=योग-विधि) का अभ्यास नहीं करता, मध्यान्ह के समय सम्यक् प्रकार से समाधि

के निमित्त का अभ्यास नहीं करता , शाम के समय समाधि के निमित्त का अभ्यास नहीं करता।

"भिक्षुओ, जिस भिक्षु में ये तीन बातें होती हैं, वह अप्राप्त कुशल-धर्म को प्राप्त नहीं कर सकता, तथा प्राप्त कुशल-धर्म को बढ़ा नहीं सकता।

"भिक्षुओ, जिस दुकानदार में ये तीन बातें होती हैं, वह अप्राप्त धन को प्राप्त कर सकता है, प्राप्त धन को बढ़ा सकता है। कौनसी तीन बातें ?

"भिक्षुओ, जो दुकानदार पूर्वान्ह के समय सम्यक् रीतिसे अपना कारोबार करता है, मध्यान्ह के समय सम्यक् रीति से अपना कारोबार करता है, अपरान्ह के समय सम्यक् रीति से अपना कारोबार करता है। भिक्षुओ, जिस दुकानदार में ये तीन बातें होती हैं वह अप्राप्त धन को प्राप्त कर सकता है, तथा प्राप्त धन को बढ़ा सकता है।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षु में ये तीन बातें होती हैं, वह अप्राप्त कुशल धर्म को प्राप्त कर सकता है, प्राप्त कुशल-धर्म को बढ़ा सकता है। कौन-सी तीन बातें ?

"भिक्षुओ, भिक्षु पूर्वान्ह के समय सम्यक् प्रकार से समाधि के निमित्त (=योग-विधि) का अभ्यास करता है, मध्यान्ह के समय ...... शाम के समय समाधि के निमित्त का अभ्यास करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षु में ये तीन बातें होती हैं वह अप्राप्त कुशल धर्म को प्राप्त कर सकता है तथा प्राप्त कुशलधर्म को बढ़ा सकता है।"

(२०)

"भिक्षुओ, जिस दुकानदार में ये तीन बातें होती हैं, वह शीघ्र ही सम्पत्ति की अधिकता वा विपुलता को प्राप्त कर लेता है। कौनसी तीन बातें ?

"एक तो दुकानदार चक्षुमान् होता है, दूसरे विधुर होता है,तीसरे आश्रय-युक्त होता है।

"भिक्षुओ, दुकानदार चक्षुमान् कैसे होता है? भिक्षुओ, दुकानदार बेचनेके सामानको जानता है कि यह इस भाव खरीदा हुआ है, इस दामपर बेचनेसे इतना मूल आ जायगा और इतना लाभ रहेगा। भिक्षुओ, इस प्रकार दुकानदार चक्षुमान् होता है।

"भिक्षुओ, दुकानदार विधुर कैसे होता है ?

"भिक्षुओ, दुकानदार बेचनेका सामान खरीदने-बेचने में कुशल होता है। भिक्षुओ, अिस प्रकार दुकानदार विधुर होता है।

"भिक्षुओ, दुकानदार आश्रय-युक्त कैसे होता है?

"भिक्षुओ, जो श्रीमान् महाधनवान तथा महासम्पत्तिशाली गृहपति वा गृहपति-पुत्र हैं वे उसके बारे में जानते हैं कि यह दुकानदार चक्षुमान् है, विधुर है, पुत्र-स्त्री का पालन करनेमें समर्थ है तथा समय-समय पर हमें हमारे धन का सूद या लाभ देने में समर्थ है। वे उसे सम्पत्ति देते हैं कि सौम्य! यहां से यह सम्पत्ति ले जा, पुत्र-स्त्री का पोषण कर तथा समय-समय पर हमें भी सूद या लाभ दे। भिक्षुओ, इस प्रकार दुकानदार आश्रय-युक्त होता है।

"इस प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षु में ये तीन बातें होती हैं वह शीघ्र ही कुशल-धर्मों में महानता वा विपुलता प्राप्त कर लेता है। कौनसी तीन बातें?

"भिक्षुओ, भिक्षु चक्षुमान् होता है, विधुर होता है तथा आश्रय-युक्त होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु चक्षुमान् किस प्रकार होता है?

"भिक्षुओ, भिक्षु यह दुःख है इसे यथार्थ रूप से जानता है....... यह निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है इसे यथार्थ रूप से जानता है। भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु चक्षुमान् होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु विधुर किस प्रकार होता है?

"भिक्षुओ, भिक्षु अकुशल-धर्मोंका नाश करने के लिये तथा कुशल-धर्मों के उत्पादन के लिये प्रयत्नशील होता है, सामर्थ्यवान् होता है, दृढ़ पराक्रमी होता है। उसने कुशल-धर्मों का जुआ कन्धे पर धारण किया होता है। भिक्षुओ, भिक्षु अिस प्रकार विधुर होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु किस प्रकार आश्रय-युक्त होता है? भिक्षुओ, भिक्षु जो बहुश्रुत भिक्षु हैं, जो आगम या शास्त्र के जानकार हैं, जो धर्म-धर हैं, जो विनय-धर हैं, जो मातृका-धर हैं, उनके पास समय समयपर जाकर पूछता है, प्रश्न करता है—भन्ते! यह कैसे है, इसका क्या अर्थ है? उसके लिये वे आयुष्मान ढके को उघाड़ देते हैं, अस्पष्ट को स्पष्ट कर देते हैं, अनेक प्रकार के सन्दिग्ध विषयों में शंका-समाधान कर देते हैं।

"भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु आश्रय-युक्त होता है। अिस प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये तीन बातें होती हैं वह शीघ्र ही कुशल-धर्मों में महानता वा विपुलता प्राप्त कर लेता है।"

(२१)

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान श्रावस्तीमें अनाथ-पिण्डिक के जेतवनाराममें विहार करते थे। आयुष्मान् सविट्ठ तथा आयुष्मान् कोट्ठित जहां आयुष्मान् सारिपुत्र थे, वहां पहुँचे। जाकर आयुष्मान् सारिपुत्र के साथ कुशल-क्षेमकी बातचीत की ....एक ओर बैठे हुअे आयुष्मान् सविट्ठको आयुष्मान् सारिपुत्र ने यह कहा—

"आयुष्मान् सविट्ठ! इस संसार में तीन प्रकार के लोग हैं। कौनसे तीन प्रकार के? एक काय-साक्षी, दूसरे दृष्टि-प्राप्त तथा तीसरे श्रद्धा-विमुक्त। आयुष्मान् इस संसारमें ये तीन प्रकार के लोग हैं। आयुष्मान् इन तीन प्रकार के लोगोंमें तुम्हें कौनसा प्रकार अधिक अच्छा, अधिक श्रेष्ठ जँचता है?"

"आयुष्मान् सारिपुत्र! इस संसारमें तीन प्रकार के लोग हैं। कौनसे तीन प्रकार के? काय-साक्षी, दृष्टि-प्राप्त तथा श्रद्धा-विमुक्त। आयुष्मान् इस संसारमें तीन प्रकार के लोग हैं। आयुष्मान् इन तीन प्रकार के लोगोंमें जो यह श्रद्धा-विमुक्त है वह मुझे अधिक अच्छा, अधिक श्रेष्ठ जँचता है। यह किस लिये? आयुष्मान् इस आदमी की श्रद्धा-इन्द्रिय बलवती है।"

तब आयुष्मान् सारिपुत्र ने आयुष्मान् महाकोट्ठित को यह कहा—"आयुष्मान् कोट्ठित! इस संसारमें तीन प्रकारके लोग हैं। कौन से तीन प्रकार के? काय-साक्षी.....आयुष्मान् इस संसारमें ये तीन प्रकारके लोग हैं। आयुष्मान्! इन तीन प्रकारके लोगोंमें तुम्हें कौनसा प्रकार अधिक अच्छा, अधिक श्रेष्ठ जँचता है?"

"आयुष्मान् सारिपुत्र! इस संसारमें तीन प्रकार के लोग हैं। कौनसे तीन प्रकार के? काय-साक्षी.....आयुष्मान् इस संसारमें तीन प्रकारके लोग हैं। आयुष्मान्! इन तीन प्रकारके लोगोंमें जो यह काय-साक्षी है वह मुझे अधिक अच्छा, अधिक श्रेष्ठ जँचता है। यह किस लिये? आयुष्मान् इस आदमीकी समाधि-इन्द्रिय बलवती है।"

तब आयुष्मान् महाकोट्ठित ने आयुष्मान् सारिपुत्रको यह कहा—"आयुष्मान् सारिपुत्र ! इस संसारमें..... कौनसे तीन ? काय-साक्षी.... आयुष्मान् ! इस संसारमें ये तीन प्रकारके लोग हैं। आयुष्मान् ! इन तीन प्रकारके लोगोंमें जो यह दृष्टि-प्राप्त है वह मुझे अधिक अच्छा, अधिक श्रेष्ठ जंचता है। यह किस लिये ? इस आदमी की प्रज्ञा-इन्द्रिय बलवती है।"

तब आयुष्मान् सारिपुत्रने आयुष्मान् सविट्ठ तथा आयुष्मान् महाकोट्ठित को यह कहा--

"आयुष्मानो ! हम सब ने अपनी-अपनी समझ के अनुसार कहा। आओ, जहां भगवान हैं वहां चलें। पास जाकर भगवान से यह बात कहें। फिर जैसे हमारे भगवान कहें वैसा स्वीकार करें।"

आयुष्मान् सविट्ठ तथा आयुष्मान् महाकोट्ठित ने आयुष्मान् सारिपुत्र को "बहुत अच्छा" कहा ! तब आयुष्मान् सारिपुत्र, आयुष्मान् सविट्ठ तथा आयुष्मान् महाकोट्ठित जहां भगवान थे वहां गये। पास पहुँचकर, भगवान् को नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सारिपुत्र ने आयुष्मान् सविट्ठ तथा आयुष्मान महाकोट्ठितके साथ जितनी बात-चीत हुई थी वह सब भगवान् से निवेदन की।

"सारिपुत्र ! एक ओर से यह कहना कि इन तीन प्रकार के लोगों में यह अधिक अच्छा है, यह अधिक श्रेष्ठ है, आसान नहीं है। सारिपुत्र ! इसकी सम्भावना है कि जो यह आदमी श्रद्धा-विमुक्त हो वह अर्हत्व के मार्ग पर आरूढ हो और जो यह आदमी काय-साक्षी है वह सकृदागामी वा अनागामी हो और इसी प्रकार जो यह दृष्टि-प्राप्त है वह भी सकृदागामी वा अनागामी हो !

"सारिपुत्र ! एक ओर से यह कहना कि इन तीन प्रकारके लोगोंमें यह अधिक अच्छा है, यह अधिक श्रेष्ठ है, आसान नहीं है। सारिपुत्र ! इसकी सम्भावना है कि जो यह आदमी काय-साक्षी है वह अर्हत्व के मार्गपर आरूढ हो और जो यह आदमी श्रद्धाविमुक्त है वह सकृदागामी वा अनागामी हो और इसी प्रकार जो यह दृष्टि-प्राप्त है वह भी सकृदागामी वा अनागामी हो।

"सारिपुत्र ! एक ओर से यह कहना कि इन तीन प्रकार के लोगोंमें यह अधिक अच्छा है, यह अधिक श्रेष्ठ है, आसान नहीं है। सारिपुत्र ! इसकी

सम्भावना है कि जो यह आदमी दृष्टि-प्राप्त है, वह अर्हत्व के मार्ग पर आरूढ हो और जो यह आदमी श्रद्धाविमुक्त है, वह सकृदागामी वा अनागामी हो और इसी प्रकार जो यह काय-साक्षी है, वह भी सकृदागामी वा अनागामी हो।

"सारिपुत्र! एक ओर से यह कहना कि इन तीन प्रकार के लोगों में यह अधिक अच्छा है, यह अधिक श्रेष्ठ है, आसान नहीं है।"

(२२)

"भिक्षुओ, इस संसारमें तीन तरह के रोगी हैं। कौनसे तीन तरह के?

"भिक्षुओ, एक रोगी ऐसा होता है कि चाहे उसे अनुकूल भोजन मिले और चाहे न मिले; चाहे उसे अनुकूल औषध मिले और चाहे न मिले; चाहे उसे अनुकूल सेवक मिले और चाहे न मिले; वह उस रोग से मुक्त नहीं होता।

"भिक्षुओ, एक (दूसरा) रोगी ऐसा होता है कि चाहे उसे अनुकूल भोजन मिले, चाहे न मिले; चाहे उसे अनुकूल औषध मिले, चाहे न मिले; चाहे उसे अनुकूल सेवक मिले, और चाहे न मिले; वह उस रोग से मुक्त होता है।

"भिक्षुओ, एक (तीसरा) रोगी होता है कि उसे अनुकूल भोजन मिले, नहीं मिले ऐसा नहीं; अनुकूल औषध मिले, न मिले ऐसा नहीं; अनुकूल सेवक मिले, न मिले ऐसा नहीं; वह उस रोग से मुक्त होता है।

"भिक्षुओ, इन में जो यह रोगी है जिसे अनुकूल भोजन मिले, न मिले ऐसा नहीं, अनुकूल औषध मिले, न मिले ऐसा नहीं, अनुकूल सेवक मिले, न मिले ऐसा नहीं,तो वह रोग से मुक्त होता है, ऐसे ही रोगी के लिये रोगी-भोजन, रोगी-औषध और रोगी-सेवक की व्यवस्था करने के लिये कहा गया है। किन्तु इस रोगी के निमित्त से अन्य रोगियोंकी भी सेवा करनी चाहिये। भिक्षुओ, लोक में ये तीन तरह के रोगी हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, इस संसार में ये तीन रोगी-समान मनुष्य हैं। कौनसे तीन?

"भिक्षुओ, कोई-कोई चाहे उसे तथागत का दर्शन मिले, चाहे न मिले; चाहे तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनय सुनना मिले, चाहे न मिले, वह कुशल-धर्मों में मार्ग के सम्यकत्व को प्राप्त नहीं करता।

"भिक्षुओ, कोई-कोई चाहे उसे तथागत का दर्शन मिले, चाहे न मिले; चाहे तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनय सुनना मिले, चाहे न मिले, वह कुशल-धर्मों में मार्ग के सम्यकत्व को प्राप्त करता है।

" भिक्षुओ, कोई-कोई यदि उसे तथागत का दर्शन मिले, नहीं मिले ऐसा नहीं; यदि उसे तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनय सुनना मिले, न मिले ऐसा नहीं, वह कुशल-धर्मों में मार्ग के सम्यकत्व को प्राप्त करता है।

" भिक्षुओ, जो यह आदमी तथागत का दर्शन मिलने से, न मिलने से नहीं; तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनय सुनना मिलने से, न मिलने से ऐसा नहीं; कुशल-धर्मों में मार्ग के सम्यकत्व का लाभ करता है, भिक्षुओ, इस एक आदमी के लिये धर्म-देशना की अनुज्ञा की गई है। भिक्षुओ, इस एक आदमी के निमित्त से दूसरों को भी धर्मोपदेश दिया जाना चाहिये।

" भिक्षुओ, इस संसार में ये तीन रोगी-समान मनुष्य हैं।"

(२३)

" भिक्षुओ, संसार में तीन तरह के आदमी हैं। कौनसे तीन तरह के ?

" भिक्षुओ, एक आदमी व्यापाद-सहित शारीरिक कर्म करता है, व्यापाद-सहित वाणीका कर्म करता है, व्यापाद-सहित मानसिक कर्म करता है। वह सव्यापाद शारीरिक-कर्म करके, सव्यापाद वाणी का कर्म करके, सव्यापाद मानसिक-कर्म करके सव्यापाद-लोक में उत्पन्न होता है। इस प्रकार उस सव्यापाद-लोक में उत्पन्न को सव्यापाद-स्पर्श स्पर्श करते हैं। सव्यापाद-स्पर्शों से स्पृष्ट हुआ वह सव्यापाद-वेदनाओं का अनुभव करता है जो सर्वांश में दुख-स्वरूप होती हैं जैसे नरक के प्राणी।

" भिक्षुओ, एक आदमी व्यापाद-रहित शारीरिक-कर्म करता है, व्यापाद-रहित वाणी का कर्म करता है, व्यापाद-रहित मानसिक-कर्म करता है। वह अव्यापाद शारीरिक-कर्म करके .... अव्यापाद मानसिक-कर्म करके अव्यापाद-लोक में उत्पन्न होता है। इस प्रकार अव्यापाद-लोक में उत्पन्न हुए हुए को अव्यापाद-स्पर्श स्पर्श करते हैं। अव्यापाद-स्पर्शों से स्पृष्ट हुआ हुआ वह अव्यापाद-वेदनाओं का स्पर्श करता है जो सर्वांश में सुख-स्वरूप हैं जैसे शुभकीर्ण देवता।

"भिक्षुओ, एक आदमी व्यापाद-सहित भी तथा व्यापाद-रहित भी शारीरिक-कर्म करता है ....व्यापाद-सहित भी तथा व्यापाद-रहित भी मानसिक-कर्म करता है। वह व्यापाद-सहित भी तथा व्यापाद-रहित भी शारीरिक-कर्म करके ... .व्यापाद-सहित भी तथा व्यापाद-रहित भी मानसिक कर्म करके व्यापाद-सहित भी व्यापाद-रहित भी लोक में उत्पन्न होता है। इस प्रकार व्यापाद-सहित तथा

व्यापाद-रहित लोक में उत्पन्न हुए हुए को व्यापाद-सहित तथा व्यापाद- रहित स्पर्श स्पर्श करते हैं। सव्यापाद तथा अव्यापाद स्पर्शों से स्पृष्ट हुआ हुआ वह सव्यापाद तथा अव्यापाद वेदनाओं का स्पर्श करता है जो कि सुख-दुखमय मिश्रित होती हैं जैसे कुछ मनुष्य तथा कुछ विनिपातिक देवगण।

"भिक्षुओ, संसार में ये तीन तरह के आदमी हैं।"

(२४)

"भिक्षुओ, ये तीन जन आदमी का बहुत उपकार करनेवाले हैं। कौन-से तीन जन?

"भिक्षुओ, जिस आदमी के कारण आदमी बुद्ध की शरण जाता है, धर्म की शरण जाता है तथा संघ की शरण जाता है, वह आदमी उस आदमी का बहुत उपकार करनेवाला होता है।

"और भिक्षुओ, जिस आदमी के कारण आदमी यह दुक्ख है इसे यथार्थ रूप से जानता है, यह दुक्ख-समुदय है इसे .... यह दुक्ख-निरोध की ओर ले जानेवाला मार्ग है इसे यथार्थ-रूप से जानता है, भिक्षुओ, वह आदमी उस आदमी का बहुत उपकार करने वाला होता है।

"फिर भिक्षुओ, जिस आदमी के कारण कोई आदमी आस्रवों का क्षय करके इसी शरीरमें अनास्रव चित्त-विमुक्ति तथा प्रज्ञा-विमुक्ति को स्वयं जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार करता है, वह आदमी उस आदमी का बहुत उपकार करने वाला होता है।

"भिक्षुओ, ये तीन जन आदमी का बहुत उपकार करनेवाले हैं। भिक्षुओ, मैं कहता हूँ कि इन तीन जनों से बढ़कर आदमी का कोई उपकार करनेवाला नहीं है। भिक्षुओ, यदि आदमी इन तीन जनों का अभिवादन, प्रत्युपस्थान, हाथ-जोड़ना, योग्य-क्रिया, चीवर, पिण्डपात, शयनासन, गिलान-प्रत्यय, भैषज्य-परिष्कार आदि देकर प्रत्युपकार करना चाहे तो यह सु-प्रत्युपकार नहीं होता।"

(२५)

"भिक्षुओ, संसार में तीन प्रकार के लोग हैं। कौनसे तीन प्रकार के? पुराने व्रण के समान चित्त वाला आदमी, बिजली के समान चित्त वाला आदमी तथा वज्रके समान चित्त वाला आदमी।

Buddhist Research Library,
Buddha Vihara, Risaldar Park,
LUCKNOW 226001.

"भिक्षुओ, पुराने व्रण के समान चित्त वाला आदमी कैसा होता है ; भिक्षुओ एक आदमी क्रोधी-स्वभाव का होता है, अस्थिर-चित्त वाला, उसे थोड़ा सा भी कुछ कहने से वह बात उसे लग जाती है, उसे क्रोध आ जाता है, वह व्यापाद को प्राप्त होता है, वह कठोर हो जाता है, वह क्रोध, द्वेष तथा दौर्मनस्य प्रकट करता है। जैसे पुराना व्रण लकड़ी या ठीकरा लग जाने से और भी बहने लग जाता है, इस प्रकार भिक्षुओ एक आदमी क्रोधी स्वभाव का होता है......प्रकट करता है। भिक्षुओ, ऐसा आदमी पुराने व्रण के समान चित्त वाला आदमी कहलाता है।

"भिक्षुओ, बिजली के समान चित्त वाला आदमी कैसा होता है ? भिक्षुओ, एक आदमी यह दुःख है इसे यथार्थ रूप से जानता है..........यह दुःख-निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है, इसे यथार्थ-रूप से जानता है। जैसे भिक्षुओ, कोई आँख वाला आदमी बिजली-चमकती घोर अंधेरी रात में रूप देखे, इसी प्रकार भिक्षुओ, यहाँ एक आदमी यह दुःख है.........यह दुःख की ओर ले जाने वाला मार्ग है, इसे यथार्थ रूप से जानता है। भिक्षुओ, ऐसा आदमी बिजली के समान चित्त वाला आदमी कहलाता है।

"भिक्षुओ, वज्र के समान चित्त वाला आदमी कैसा होता है ? भिक्षुओ, एक आदमी आस्रवों का क्षय करके, इसी शरीर में अनास्रव चित्त-विमुक्ति तथा प्रज्ञा-विमुक्ति को स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, जैसे वज्र के लिअे कुछ भी अभेद्य नहीं है, चाहे मणि हो, चाहे पाषाण हो, इसी प्रकार भिक्षुओ, एक आदमी आस्रवों का क्षय कर.........प्राप्तकर विहार करता है भिक्षुओ, ऐसा आदमी वज्र के समान चित्त वाला आदमी कहलाता है।

"भिक्षुओ, इस संसार में ये तीन प्रकार के लोग हैं।"

(२६)

"भिक्षुओ, लोक में तीन तरह के लोग हैं। कौन से तीन तरह के ? भिक्षुओ, ऐसा आदमी होता है, जिसके साथ न रहना चाहिये, न संगत करनी चाहिये, न साथ उठना-बैठना चाहिये। भिक्षुओ ऐसा आदमी होता है जिसके साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिये, साथ उठना-बैठना चाहिये। भिक्षुओ, ऐसा आदमी होता है जिस की गौरव-पूर्वक, आदर पूर्वक (सेवा करते) हुअे साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिअे, साथ उठना-बैठना चाहिये।

"भिक्षुओ, वह आदमी कैसा होता है जिसके साथ न रहना चाहिये, न संगत करनी चाहिये, न साथ उठना-बैठना चाहिये ?

"भिक्षुओ, एक आदमी शील, समाधि तथा प्रज्ञा से हीन होता है। भिक्षुओ, उस पर दया या अनुकम्पा करने की स्थिति को छोड़कर न उस के साथ रहना चाहिये, न संगत करनी चाहिये, न साथ उठना-बैठना चाहिये।

"भिक्षुओ, वह आदमी कैसा होता है जिसके साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिये, साथ उठना-बैठना चाहिये ?

"भिक्षुओ, एक आदमी शील, समाधि तथा प्रज्ञा में अपने जैसा होता है। ऐसे आदमी के साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिये, साथ उठना-बैठना चाहिये। यह किस लिये ? सदृश-शील वालों के साथ शील-कथा आरम्भ होगी, शील-कथा जारी रहेगी और उस से हमें सुख मिलेगा ; सदृश-समाधि वालों के साथ समाधि-कथा आरम्भ होगी, समाधि-कथा जारी रहेगी और उस से हमें सुख मिलेगा, सदृश-प्रज्ञा वालों के साथ प्रज्ञा-कथा आरम्भ होगी, प्रज्ञा-कथा जारी रहेगी और उस में हमें सुख मिलेगा—यही सोचकर ऐसे आदमी के साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिये, साथ उठना-बैठना चाहिये।"

"भिक्षुओ, वह आदमी कैसा होता है जिस की गौरवपूर्वक, आदरपूर्वक (सेवा करते हुए) साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिये, साथ उठना-बैठना चाहिये ?

"भिक्षुओ, एक आदमी शील तथा समाधि में अधिक होता है। ऐसे आदमी की गौरव-पूर्वक आदर-पूर्वक (सेवा करते हुए) साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिये, साथ उठना-बैठना चाहिये। यह किस लिये ? मैं अपरिपूर्ण शील-स्कन्ध को परिपूर्ण करूंगा, परिपूर्ण शील-स्कन्ध को उस उस विषय में प्रज्ञा से दृढ़ करूंगा, अपरिपूर्ण समाधि-स्कन्ध को परिपूर्ण करूंगा, परिपूर्ण समाधि-स्कन्ध को उस उस विषय में प्रज्ञा से दृढ़ करूंगा, अपरिपूर्ण प्रज्ञा-स्कन्ध को परिपूर्ण करूंगा, परिपूर्ण प्रज्ञा स्कन्ध को उस उस विषय में प्रज्ञा से दृढ़ करूंगा—यह सोचकर ऐसे आदमी की गौरव-पूर्वक, आदर-पूर्वक (सेवा करते हुए) साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिये, साथ उठना-बैठना चाहिये।

"भिक्षुओ, लोक में ये तीन तरह के लोग हैं।"

निहीयति पुरिसो निहीनसेवी
न च हायेथ कदाचि तुल्यसेवी
सेट्ठे उपनमं उदेति खिप्पं
तस्मा अत्तनो उत्तरिं भजेथ।

[अपने से हीन आदमी की संगति करने वाला स्वयं हीन हो जाता है, समान की संगति करने वाला कभी ह्रास को प्राप्त नहीं होता। अपने से श्रेष्ठ की संगति करने वाला शीघ्र ही उन्नत होता है। इस लिये अपने से श्रेष्ठ की ही संगति करनी चाहिये।]

(२७)

"भिक्षुओ, लोक में तीन तरह के लोग हैं। कौन से तीन तरह के? भिक्षुओ, ऐसा आदमी होता है जो घृणा करने योग्य होता है, जिसके साथ न रहना चाहिये, न संगत करनी चाहिये, न साथ उठना-बैठना चाहिये। भिक्षुओ, ऐसा आदमी होता है जो उपेक्षा करने योग्य होता है, जिसके साथ न रहना चाहिये, न संगत करनी चाहिये, न साथ उठना-बैठना चाहिये। भिक्षुओ, ऐसा आदमी होता है जिसके साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिये, उठना-बैठना चाहिये।

"भिक्षुओ, वह आदमी कैसा होता है जो घृणा करने योग्य होता है, जिसके साथ न रहना चाहिये, न संगत करनी चाहिये, न साथ उठना-बैठना चाहिये।

"भिक्षुओ, एक आदमी होता है दुराचारी, पापी, अपवित्र-सशंकित आचरण वाला, छिपकर आचरण करने वाला, अश्रमण होकर 'श्रमण' कहने वाला, अब्रह्मचारी होकर 'ब्रह्मचारी' कहने वाला, भीतर से सड़ा हुआ, बेकार, कूड़ा-करकट। भिक्षुओ, इस तरह का आदमी घृणा करने योग्य होता है, जिसके साथ न रहना चाहिये, न संगत करनी चाहिये, न साथ उठना-बैठना चाहिये। यह किस लिये? भिक्षुओ, चाहे कोई ऐसे आदमी का कुछ भी अनुकरण न करता हो तो भी उसका अपयश होता है, यह पापियों का मित्र है, यह पापियों का सहायक है, यह पापियों का दोस्त है। जिस प्रकार गूँहमें लिबड़ा हुआ सर्प चाहे डंक न मारे तो भी लबेड़ देगा, इसी प्रकार भिक्षुओ, चाहे कोई ऐसे आदमी का कुछ भी .... पापियों का दोस्त है। इस लिये इस प्रकार का आदमी घृणा करने योग्य होता है, जिसके साथ न रहना चाहिये, न संगत करनी चाहिये, न साथ उठना-बैठना चाहिये।

"भिक्षुओ, वह आदमी कैसा होता है जो उपेक्षा करने योग्य होता है, जिसके साथ न रहना चाहिये, न संगत करनी चाहिये, न उठना-बैठना चाहिये।

"भिक्षुओ, कोई कोई आदमी क्रोधी-स्वभाव का होता है, अशान्त, कुछ थोड़ा भी बोलने से बिगड़ जाता है, क्रोधित हो जाता है, व्यापाद-ग्रस्त हो जाता है, विरोधी हो जाता है, क्रोध- द्वेष और असंतोष प्रकट करता है। जैसे भिक्षुओ, पुराना व्रण लकड़ी या ठीकरा लग जाने से और भी बहने लग जाता है, इसी प्रकार भिक्षुओ कोई कोई आदमी .... (३–२५.) जैसे भिक्षुओ, तिण्डुक का अलाव लकड़ी या ठीकरे से छेड़ देने से और भी अधिक चिट-चिट करता है, इसी प्रकार भिक्षुओ कोई कोई आदमी .... (३–२५) जैसे भिक्षुओ, गूँह का गढ़ा लकड़ी या ठीकरे से छेड़ देने से और भी अधिक दुर्गन्ध देता है, उसी प्रकार भिक्षुओ, कोई कोई आदमी क्रोधी स्वभाव का होता है, अशान्त, कुछ थोड़ा भी बोलने से ...... असंतोष प्रकट करता है। भिक्षुओ, इस प्रकार के आदमी के प्रति उपेक्षा करना योग्य होता है, जिसके साथ न रहना चाहिये, न संगत करनी चाहिये, न उठना-बैठना चाहिये। यह किस लिये ? इस प्रकार का आदमी मुझे गाली भी दे सकता है, अपशब्द भी कह सकता है और मुझे हानि भी पहुँचा सकता है। इस लिये इस प्रकार के आदमी के प्रति उपेक्षा करनी चाहिये, उसके साथ न रहना चाहिये, न संगत करनी चाहिये और न उठना-बैठना चाहिये।

"भिक्षुओ, वह आदमी कैसा होता है, जिसके साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिये, उठना-बैठना चाहिये।

"भिक्षुओ, एक आदमी सदाचारी होता है, कल्याण-धर्मी। भिक्षुओ, ऐसे आदमी के साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिये, उठना-बैठना चाहिये। यह किस लिये ? भिक्षुओ, ऐसे आदमी का कोई कुछ थोड़ा भी अनुकरण करे, उसका यश होता है, यह सज्जनोंका मित्र है, सज्जनों का सहायक है तथा सज्जनों का दोस्त है। इस लिये इस प्रकार के आदमी के साथ रहना चाहिये, संगत करनी चाहिये, उठना-बैठना चाहिये। भिक्षुओ, इस संसार में ये तीन तरह के लोग हैं।"

निहीयति पुरिसो निहीनसेवी
न च हायेथ कदाचि तुल्यसेवी
सेट्ठं उपनमं उदेति खिप्पं
तस्मा अत्तनो उत्तरिं भजेथ॥

[अपने से हीन आदमी की संगत करने वाला स्वयं हीन हो जाता है, समान की संगत करने वाला कभी ह्रास को प्राप्त नहीं होता। अपने से श्रेष्ठ की संगत करने वाला शीघ्र ही उन्नत होता है। इस लिये अपने से श्रेष्ठ की ही संगत करनी चाहिये।]

(२८)

"भिक्षुओ, संसार में तीन तरह के लोग हैं। कौन से तीन तरह के? मल-मुख, पुष्प-मुख तथा मधु-मुख।

"भिक्षुओ, मल-मुख आदमी कैसा होता है? भिक्षुओ, कोई कोई आदमी चाहे उसे सभा में ले जाकर, चाहे परिषद् में ले जाकर, चाहे जाति-समूह में ले जाकर, चाहे पूग[1] में ले जाकर और चाहे राज-दरबार में ले जाकर, यदि उस से यह कहकर साक्षी पूछी जाये कि हे पुरुष! जो जानता हो वह कह। वह न जानता हुआ कहेगा कि जानता हूँ, जानता हुआ कहेगा कि नहीं जानता हूँ; न देखता हुआ कहेगा कि देखता हूँ और देखता हुआ कहेगा कि नहीं देखता हूँ। ऐसा वह या अपने अर्थ के लिअे या पराये अर्थ के लिये करेगा या किसी भौतिक लाभ के लिये करेगा। वह जान बूझ कर झूठ बोलने वाला होगा।

"भिक्षुओ, ऐसा आदमी मल-मुख होता है।

"भिक्षुओ, पुष्प-मुख आदमी कैसा होता है, ? भिक्षुओ, कोई-कोई आदमी चाहे उसे सभा में ले जाकर, चाहे परिषद् में ले जाकर, चाहे जाति-समूह में ले जाकर, चाहे पूग में ले जाकर और चाहे राज-दरबार में ले जाकर, यदि उस से यह कहकर साक्षी पूछी जाय कि हे पुरुष! जो जानता हो वह कह। वह न जानता हुआ कहेगा कि नहीं जानता हूँ, जानता हुआ कहेगा कि जानता हूँ, न देखता हुआ कहेगा कि नहीं देखता हूँ, देखता हुआ कहेगा कि देखता हूँ। वह न अपने अर्थ के लिये न पराये अर्थ के लिये और न किसी भौतिक लाभ के लिये जान-बूझ कर झूठ बोलने वाला होगा। भिक्षुओ, ऐसा आदमी पुष्प-मुख होता है।

"भिक्षुओ, मधु-मुख आदमी कैसा होता है? भिक्षुओ, कोई कोई आदमी कठोर-वाणी बोलना छोड़ कठोर-वाणी से विरत होकर रहता है। जो वाणी निर्दोष होती है, कानों को अच्छी लगने वाली होती है, प्रेम पैदा करने वाली होती है, हृदय

१ पूग = श्रेणी, व्यवसाय-विशेष का संगठन।

में पैठ जाने वाली होती है, गुण-युक्त होती है, बहुत जनों को सुन्दर, बहुत जनों को प्रिय लगने वाली होती है—ऐसी वाणी बोलता है। भिक्षुओ, ऐसा आदमी मधु-मुख आदमी होता है।

" भिक्षुओ, संसार में ये तीन प्रकार के आदमी हैं। "

(२९)

" भिक्षुओ, संसार में तीन प्रकार के लोग हैं। कौन से तीन प्रकार के? अन्धे, एक आँखवाले, दोनों आँख-वाले।

" भिक्षुओ, अन्धा आदमी कैसा होता है? भिक्षुओ, किसी किसी आदमी के पास ऐसी आँख नहीं होती कि अप्राप्त सम्पत्ति को प्राप्त कर सके और प्राप्त सम्पत्ति को बढ़ा सके; उस की ऐसी आँख भी नहीं होती जिस से वह कुशल-अकुशल धर्मों की पहचान कर सके, सदोष, निर्दोष धर्मों की पहचान कर सके, हीन-प्रणीत धर्मों की पहचान कर सके तथा पाप-पुण्य परस्पर-विरोधी धर्मों की पहचान कर सके। भिक्षुओ, ऐसा आदमी अन्धा कहलाता है।

" भिक्षुओ, एक-आँख वाला आदमी कैसा होता है? भिक्षुओ, किसी किसी आदमी के पास ऐसी आँख होती है कि अप्राप्त सम्पत्ति को प्राप्त कर सके और प्राप्त सम्पत्ति को बढ़ा सके, किन्तु उस की ऐसी आँख नहीं होती जिस से वह कुशल-अकुशल धर्मों की पहचान कर सके, सदोष-निर्दोष धर्मों की पहचान कर सके, हीन-प्रणीत धर्मों की पहचान कर सके तथा पाप-पुण्य परस्पर-विरोधी धर्मों की पहचान कर सके। भिक्षुओ, ऐसा आदमी एक-आँख वाला कहलाता है।

" भिक्षुओ, दो आँख वाला आदमी कैसा होता है? भिक्षुओ, किसी किसी आदमी के पास ऐसी आँख होती है, कि अप्राप्त सम्पत्ति को प्राप्त कर सके और प्राप्त सम्पत्ति को बढ़ा सके, और उस की ऐसी आँख भी होती है जिस से वह कुशल-अकुशल धर्मों की पहचान कर सके, सदोष-निर्दोष धर्मों की पहचान कर सके, हीन-प्रणीत धर्मों की पहचान कर सके तथा पाप-पुण्य परस्पर-विरोधी धर्मों की पहचान कर सके। भिक्षुओ, ऐसा आदमी दो आँख वाला कहलाता है।

" भिक्षुओ, संसार में ये तीन तरह के लोग हैं। "

नचे'व भोगा तथारूपा न च पुञ्ञानि कुब्बति
उभयत्थ कलिग्गहो अन्धस्स हतचक्खुनो

अथापरायं अक्खातो एकचक्खु च पुग्गलो
धम्माधम्मेन संसट्ठो भोगानि परियेसति ॥
थेय्येन कूटकम्मेन मुसावादेन चुभयं
कुसलो होति संघातुं कामभोगी च मानवो
इतो सो निरयं गन्त्वा एकचक्खु विहञ्ञति
द्विचक्खु पन अक्खातो सेट्ठो पुरिसपुग्गलो
धम्मलद्धेहि भोगेहि उट्ठानधिगतं धम्मं
ददाति सेठ्टसंकप्पो अव्यग्गमनसो नरो
उपेति भद्दकं ठानं यत्थ गन्त्वा न सोचति ॥
अन्धं च एकचक्खुं च आरका परिवज्जये
द्विचक्खुं च सेवेथ सेट्ठं पुरिसपुग्गलं ॥

[जो चक्षु-विहीन अन्धा आदमी होता है उस के पास न तो वैसे भोग-पदार्थ ही होते हैं और न वह कोई पुण्य ही करता है। एक दूसरा आदमी होता है जो एक आँख वाला कहलाता है, वह धर्माधर्म मिश्रित कर्मों से सम्पत्ति प्राप्त करता है—चोरी से, ठगी से और झूठ बोल कर। वह कामभोगी मनुष्य काम-भोग के पदार्थों का संग्रह करने में कुशल होता है। किन्तु वह एक आँख वाला आदमी यहाँ से नरक में जाकर विनाश को प्राप्त होता है। जो दो आँख वाला आदमी होता है वही श्रेष्ठ कहा गया है। वह अप्रमाद तथा धर्म से भोग्य-पदार्थों को प्राप्त करता है। फिर वह व्यग्रता-रहित श्रेष्ठ संकल्प वाला नर (उन में से) दान करता है। (इस कर्म से) वह श्रेष्ठ-स्थान को प्राप्त करता है, जहाँ जाने से अनुताप नहीं होता। इस लिये अन्धे तथा एक चक्षु वाले से दूर दूर रहे। जो दोनों आँख वाला श्रेष्ठ व्यक्ति हो उसी की संगति करे।]

(३०)

"भिक्षुओ, संसार में तीन तरह के लोग हैं। कौन से तीन तरह के? औंधी-खोपड़ी वाले आदमी, पल्ले जैसी प्रज्ञा वाले आदमी, बहुल-प्रज्ञ आदमी।

"भिक्षुओ, औंधी खोपड़ी वाला आदमी कैसा होता है ?

"भिक्षुओ, कोई कोई आदमी भिक्षुओं से धर्म सीखने के लिये उन के पास विहार (=आराम) में निरन्तर जाने वाला होता है। उसे भिक्षु आरम्भ में कल्याणकारी

मध्य में कल्याणकारी, अन्त में कल्याअकारी धर्म का उपदेश करते हैं, अर्थ-सहित, व्यंजन-सहित, सम्पूर्ण रूप से परिशुद्ध धर्म को प्रकाशित करते हैं। वह आसन पर बैठा हुआ न उस उपदेश के आरम्भ को मनमें जगह देता है, न मध्य को मन में जगह देता है और न अन्तको मन में जगह देता है। उस आसन से उठने पर भी न उस उपदेश के आरम्भ को मन में जगह देता है, न मध्य को मन में जगह देता है और न अन्त को मन में जगह देता है। भिक्षुओ, जैसे उल्टे घड़े में डाला हुआ पानी गिर पड़ता है, ठहरता नहीं है, इसी प्रकार भिक्षुओ, कोई कोई आदमी धर्म सीखने के लिये भिक्षुओं के पास ....न अन्त को मन में जगह देता है। उस आसन से उठने पर भी ....न अन्त को मन में जगह देता है। भिक्षुओ, ऐसा आदमी औंधी-खोपड़ी वाला आदमी कहलाता है।

"भिक्षुओ, पल्ले जैसी प्रज्ञा वाला आदमी कैसा होता है?

"भिक्षुओ, कोई कोई आदमी भिक्षुओं से धर्म सीखने के लिये .... प्रकाशित करते हैं। वह आसन पर बैठा हुआ उस उपदेशके आरम्भको भी मन में जगह देता है, मध्य को भी मन में जगह देता है और अन्त को भी मन में जगह देता है। किन्तु उस आसन से उठने पर न उस उपदेश के आरम्भ को मन में जगह देता है, न मध्य को मन में जगह देता है और न अन्त को मन में जगह देता है। जैसे भिक्षुओ, किसी आदमी के पल्ले में नाना प्रकार की खाद्य वस्तुयें हों, तिल हों, चावल हों, लड्डु हों, बेर हों; वह आसन से उठते समय असावधानी के कारण उन्हें बखेर दे। उसी प्रकार भिक्षुओ, कोई कोई आदमी भिक्षुओं से धर्म सीखने के लिये ....प्रकाशित करते हैं। वह आसन पर बैठा हुआ ....जगह देता है। किन्तु आसन से उठने पर..........न अन्त को मन में जगह देता है। भिक्षुओ, ऐसा आदमी पल्ले जैसी प्रज्ञा वाला कहलाता है।

"भिक्षुओ, बहुल-प्रज्ञ आदमी कैसा होता है?

"भिक्षुओ, कोई-कोई आदमी भिक्षुओं से धर्म सीखने के लिये ......प्रकाशित करते हैं। वह आसन पर बैठा हुआ उस उपदेश के आरम्भ को भी मन में जगह देता है ....अन्त को भी मन में जगह देता है। वह आसन से उठने पर भी उस उपदेश के आरम्भ को भी.........अन्त को भी मन में जगह देता है। भिक्षुओ, जैसे सीधे घड़े में डाला हुआ पानी उसमें ठहरता है, गिरता नहीं है;

इसी प्रकार भिक्षुओ, कोई-कोई आदमी भिक्षुओं से धर्म सीखने के लिये....... प्रकाशित करते हैं। वह आसन पर बैठा हुआ उस उपदेशके आरम्भ को भी मन में जगह देता है.........अन्त को भी मन में जगह देता है। वह आसन से उठने पर भी उस उपदेश के आरम्भ को भी.......अन्त को भी मन में जगह देता है। भिक्षुओ, ऐसा आदमी बहुल-प्रज्ञ आदमी कहलाता है।

"भिक्षुओ, संसार में ये तीन तरह के लोग हैं।"

अवकुज्जपञ्ञो पुरिसो दुम्मेधो अविचक्खणो
अभिक्खणं पि चे होति गन्ता भिक्खूनं सन्तिके
आदिं कथाय मज्झं च परियोसानं च तादिसो
उग्गहेतुं न सक्कोति पञ्ञा हिस्स न विज्जति
उच्छंग-पञ्ञो पुरिसो सेय्यो एतेन वुच्चति॥
अभिक्खणं पि चे होति गन्ता भिक्खूनं सन्तिके
आदिं कथाय मज्झंच परियोसानं च तादिसो
निसिन्नो आसने तस्मिं उग्गहेत्वान व्यञ्जनं
वुट्ठितो नप्पजानाति गहितं पिस्स मुस्सति॥
पुथुपञ्ञो च पुरिसो सेय्यो एतेहि वुच्चति
अभिक्खणं पि चे होति गन्ता भिक्खूनं सन्तिके
आदिं कथाय मज्झं च परियोसानं च तादिसो
निसिन्नो आसने तस्मिं उग्गहेत्वान व्यञ्जनं
धारेति सेट्ठसंकप्पो अव्यग्घमनसो नरो
धम्मानुधम्मपटिपन्नो दुक्खस्सन्तकरो सिया॥

[दुर्बुद्धि, बे-अक्ल, औंधी खोपड़ीवाला आदमी यदि भिक्षुओं के पास निरन्तर भी जाता है, तो वह उस उपदेश का न आदि, न मध्य और न अन्त ही ग्रहण कर सकता है। उसकी वैसी प्रज्ञा ही नहीं होती। उस आदमी की अपेक्षा पल्ले जैसी प्रज्ञा वाला आदमी श्रेष्ठ कहलाता है। वह यदि भिक्षुओं के पास निरन्तर भी जाता है, तो वह आसन पर बैठे रहते समय उस धर्मोपदेश के आदि, मध्य और अन्त को व्यंजन-सहित ग्रहण कर लेता है। लेकिन आसन से उठने पर भूल जाता है। उसका ग्रहण करना ऐसा ही होता है। इन दोनों से बहुल-प्रज्ञ आदमी श्रेष्ठतर

माना जाता है। वह यदि भिक्षुओं के पास निरन्तर भी जाता है, तो वह उस आसन पर बैठे रहते समय उस धर्मोपदेश के आदि, मध्य और अन्त को व्यञ्जन-सहित ग्रहण कर लेता है। वह शान्त-चित्त श्रेष्ठ-संकल्प वाला आदमी उस धर्म को अच्छी तरह धारण करता है। उस धर्म के अनुसार आचारण कर वह दुक्ख का अन्त करने वाला होता है।]

(३१)

"भिक्षुओ, जिन कुलों में घरों के भीतर माता-पिता का आदर होता है वे सब्रह्म-कुल हैं, भिक्षुओ, जिन कुलों में घरोंके भीतर माता-पिता का आदर होता है वे स-पूर्वाचार्य्य-कुल हैं, भिक्षुओ, जिन कुलों में घरों के भीतर माता-पिता का आदर होता है वे स-पूज्य-कुल हैं।

"भिक्षुओ, ब्रह्मा—यह माता-पिता का ही पर्य्याय है। भिक्षुओ, पूर्व-आचार्य्य—यह माता-पिता का ही पर्य्याय है। भिक्षुओ, पूज्य—यह माता-पिता का ही पर्य्याय है।

"यह किस लिये? भिक्षुओ, माता-पिता का अपनी सन्तान पर बहुत उपकार होता है। वे पालन करने वाले हैं, वे पोषण करने वाले हैं, उन्होंने ही यह संसार दिखाया है।

ब्रह्मा ति माता-पितरो पुब्बाचर्य्या ति वुच्चरे
आहुणेय्या च पुत्तानं पजाय चानुकम्पका
तस्मा हि ते नमस्सेय्य सक्करेय्याथ पण्डितो
अन्नेन अथ पानेन वत्थेन सयनेन च
उच्छादेन न्हापनेन पादानं धोवनेन च
नाय नं परिचरियाय मातापितुसु पण्डिता
इधेव नं पसंसन्ति पेच्च सग्गे पमोदति ॥

[सन्तान के लिये माता-पिता ही 'ब्रह्मा' हैं, माता-पिता ही पूर्वाचार्य्य हैं, माता-पिता ही पूज्य हैं। वे बच्चों पर बहुत अनुकम्पा करने वाले हैं। इस लिये बुद्धिमान (सन्तान) को चाहिये कि उन्हें नमस्कार करे, उन का सत्कार करे, अन्न से, पान से, वस्त्र से, शयनासन से, मालिश से, नहलाने से, पाँव धोने से उन की सेवा करे। जो पण्डित परिचर्या से माता-पिता को सन्तुष्ट करता है (?),

यहाँ भी उसकी प्रशंसा होती है और मृत्यु होने पर वह स्वर्ग में भी आनन्दित होता है ।]

(३२)

तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् (बुद्ध) थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान् को नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्द ने भगवान् से यह कहा—

"भन्ते! क्या भिक्षु को ऐसी समाधी का लाभ हो सकता है कि इस सविज्ञान शरीर में ही उसे अहंकार, ममत्व तथा मान का बोध न हो, और इस शरीर से बाहर भी जितने विषय हैं, उन विषयों में भी उसे अहंकार, ममत्व तथा मान का बोध न हो और जिस चित्त-विमुक्ति, जिस प्रज्ञा-विमुक्ति के साथ विहार करते हुए अहंकार, ममत्व तथा मान उत्पन्न नहीं होते, उस चित्त-विमुक्ति, उस प्रज्ञा-विमुक्ति को प्राप्त कर विहार करे।"

"आनन्द! भिक्षु को ऐसी समाधि का लाभ हो सकता है कि इस सविज्ञान शरीर में ही..........प्राप्त कर विहार करे"

"भन्ते! भिक्षु का वैसा समाधि-लाभ कैसा होता है कि इस सविज्ञान शरीरमें ही...........प्राप्त कर विहार करे।"

"आनन्द! इस विषय में भिक्षु को ऐसा लगता है—यही शान्त है, यही प्रणीत है, जो यह सब संस्कारों का शमन, सभी उपधियों का त्याग, तृष्णा का क्षय, विराग, निरोध, निर्वाण है। इस प्रकार आनन्द! भिक्षु को ऐसी समाधि का लाभ हो सकता है कि इस सविज्ञान शरीर में ही.............प्राप्त कर विहार करे।

"आनन्द! पुण्य-प्रश्न पारायण में जो मैंने यह कहा है वह इसी अर्थ में कहा है—

संखाय लोकस्मिं परोवरानि
यस्स इञ्जितं नत्थि कुहिंचि लोके
सन्तो विधूमो अनिघो निरासो
अतरि सो जातिजरं ति ब्रूमी ।।

[संसारमें उस-पार तथा इस-पार का ज्ञान प्राप्त करके जिसके मन में किसी भी विषय के सम्बन्ध में चंचलता नहीं है, उस शान्त, निर्धूम,

दुःख-रहित, वासना-रहित पुरुष ने ही जाति-जरा को पार किया है—ऐसा मैं कहता हूँ।]

२. तब आयुष्मान् सारिपुत्र जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये। जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् सारिपुत्र को भगवान् ने यह कहा—

"सारिपुत्र! मैं संक्षेप में भी धर्मोपदेश देता हूँ, विस्तार से भी धर्मोपदेश देता हूँ, संक्षिप्त-विस्तृत रूप से भी धर्मोपदेश देता हूँ, किन्तु उस के समझने वाले दुर्लभ हैं।"

"भगवान्! इसी का समय है। सुगत! इसी का समय है। भगवान् संक्षेप में भी धर्मोपदेश दें, विस्तार से भी धर्मोपदेश दें, संक्षिप्त-विस्तृत रूप से भी धर्मोपदेश दें; धर्म के समझने वाले होंगे।"

"तो सारिपुत्र! इस प्रकार सीखना चाहिये—इस सविज्ञान शरीर में अहंकार, ममत्व तथा मान उत्पन्न नहीं होगा, इस से बाहर सभी विषयों में अहंकार ममत्व तथा मान उत्पन्न नही होगा, जिस चित्त-विमुक्ति, जिस प्रज्ञा-विमुक्ति को प्राप्त कर विहार करने पर अहंकार, ममत्व तथा मान उत्पन्न नहीं होते, उस चित्त-विमुक्ति, उस प्रज्ञा-विमुक्ति को प्राप्त कर विहार करेंगे। हे सारिपुत्र! इसी प्रकार सीखना चाहिये। क्योंकि सारिपुत्र! इस सविज्ञान शरीर के विषय में भिक्षु के मन में अहंकार, ममत्व तथा मान उत्पन्न नहीं होते, इस से बाहर के सभी विषयोंमें अहंकार, ममत्व तथा मान उत्पन्न नहीं होते, जिस चित्त-विमुक्ति, जिस प्रज्ञा-विमुक्ति को प्राप्त कर अहंकार, ममत्व तथा मान उत्पन्न नहीं होते उस चित्त-विमुक्ति को, उस प्रज्ञा-विमुक्ति को प्राप्त कर विहार करता है। हे सारिपुत्र! ऐसे भिक्षु के विषय में कहा जाता है कि इस ने तृष्णा को छिन्न-भिन्न कर दिया, संयोजनों को जड़मूल से उखाड़ दिया और मान को सम्पूर्ण रूप से समाप्त कर दुःख का अन्त कर दिया।

"सारिपुत्र! उदयप्रश्न पारायण में जो मैं ने यह कहा वह उक्त अर्थ में ही कहा—

पहानं कामच्छन्दानं दोमनस्सानं चूभयं
थीनस्स च पनुदनं कुक्कुच्चानं निवारणं

उपेक्खा सति संसुद्धं धम्मचक्क पुरे जवं
अञ्ञा विमोक्खं पब्रूमि अविज्जायप्पभेदनं ।।

[कामनाओं तथा दौर्मनस्यों का प्रहाण, आलस्य का मर्दन तथा कौकृत्य का निवारण, उपेक्षा तथा स्मृतिकी शुद्धि, सम्यक्-संकल्पों का अनुगमन तथा अविद्या का नाश जहाँ है वहीं प्रज्ञा-विमुक्ति है—ऐसा मैं कहता हूँ।]

(३३)

"भिक्षुओ ! कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन हेतु हैं। कौन से तीन? लोभ कर्मों की उत्पत्तिका हेतु है, द्वेष कर्मों की उत्पत्ति का हेतु है, मोह कर्मों की उत्पत्ति का हेतु है।

"भिक्षुओ, जिस कर्म के मूलमें लोभ है, जो लोभ निदान है, जिसका हेतु लोभ है, जो लोभ से उत्पन्न हुआ है, जहाँ अुस कर्म के कर्ता का जन्म होता है वहाँ वह कर्म पकता है, जहाँ वह कर्म पकता है, वहाँ उस कर्म का फल भोगना होता है, उसी जन्ममें, अगले जन्ममें अथवा अन्य किसी जन्ममें।

"भिक्षुओ, जिस कर्म के मूल में द्वेष है, जो द्वेष निदान है, जिसका हेतु द्वेष है, जो द्वेष से उत्पन्न हुआ है, जहाँ उस कर्म के कर्ता का जन्म होता है वहाँ वह कर्म पकता है, जहाँ वह कर्म पकता है, वहाँ उस कर्म का फल भोगना होता है, उसी जन्म में, अगले जन्म में अथवा अन्य किसी जन्म में।

"भिक्षुओ, जिस कर्म के मूल में मोह है, जो मोह-निदान है, जिसका हेतु मोह है, जो मोह से उत्पन्न हुआ है, जहाँ उस कर्म के कर्ता का जन्म होता है वहाँ वह कर्म पकता है, जहाँ वह कर्म पकता है, वहाँ उस कर्म का फल भोगना होता है, उसी जन्म में, अगले जन्म में अथवा अन्य किसी जन्म में।

"भिक्षुओ, जैसे बीज हों अखण्डित, सड़े न हों, हवा-धूप से खराब न हुए हों, सारवान् हों, अच्छी तरह रखे हों, अच्छी तरह तैयार की गअी भूमि वाले सुक्षेत्र में बीजे गअे हों और उन पर पानी सम्यक् रूप से बरसे, तो भिक्षुओ, वे बीज बढ़ती, वृद्धि तथा विपुलता को प्राप्त होंगे ही। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस कर्म के मूल में लोभ है........अथवा अन्य किसी जन्म में। जिस कर्म के मूल में द्वेष है.......अथवा अन्य किसी जन्म में। जिस कर्म के मूल में मोह है..........अथवा अन्य किसी जन्म में।

"भिक्षुओ, कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन हेतु हैं।"

"२. भिक्षुओ, कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन हेतु हैं। कौन से तीन? अलोभ कर्मों की उत्पत्ति का हेतु है, अद्वेष कर्मों की उत्पत्तिका हेतु है, अमोह कर्मों की उत्पत्ति का हेतु है।

"भिक्षुओ, जिस कर्म के मूल में अलोभ है, जो अलोभ-निदान है, जिसका हेतु अलोभ है, जो अलोभ से उत्पन्न हुआ है, लोभ के न रहने पर उस कर्म का प्रहाण हो जाता है, उसकी जड़ उखड़ जाती है, वह कटे ताड़ वृक्ष की तरह हो जाता है, वह अभाव-प्राप्त हो जाता है, उसकी भावी उत्पत्ति रुक जाती है।

"भिक्षुओ, जिस कर्म के मूल में अद्वेष है, जो अद्वेष-दिनान है, जिसका हेतु अद्वेष है, जो अद्वेष से उत्पन्न हुआ है, द्वेष के न रहने पर उस कर्म का प्रहाण हो जाता है, उस की जड़ उखड़ जाती है, वह कटे ताड़ वृक्ष की तरह हो जाता है, वह अभाव-प्राप्त हो जाता है, उसकी भावी उत्पत्ति रुक जाती है।

"भिक्षुओ, जिस कर्म के मूल में अमोह है, जो अमोह-निदान है, जिसका हेतु अमोह है, जो अमोह से उत्पन्न हुआ है, मोह के न रहने पर उस कर्म का प्रहाण हो जाता है, उसकी जड़ उखड़ जाती है, वह कटे ताड़ वृक्ष की तरह हो जाता है, वह अभाव-प्राप्त हो जाता है, उसकी भावी उत्पत्ति रुक जाती है।

"भिक्षुओ, जैसे बीज हों अखण्डित, सड़े न हों, हवा-धूप से खराब न हुए हों, सारवान् हों, अच्छी तरह रखे हों, अुन्हें आदमी आगमें जला डाले, आगमें जलाकर राख कर दे, राख करके तेज हवा में उड़ा दे अथवा शीघ्र-गामी नदी में बहा दे, उस से उन बीजों का मूल नष्ट हो जाये, वे कटे ताड़ वृक्ष की तरह हो जायें, वे अभाव-प्राप्त हो जायें, उन की भावी उत्पत्ति रुक जाये। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस कर्म के मूल में अलोभ है.......... उस की भावी उत्पत्ति रुक जाती है, जिस कर्म के मूल में अद्वेष है.......... उसकी भावी उत्पत्ति रुक जाती है, जिस कर्म के मूल में अद्वेष है.......... उसकी भावी उत्पत्ति रुक जाती है।

"भिक्षुओ, कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन हेतु हैं।"

लोभजं दोसजं चेव मोहजं चापि विद्दसु
यंतेन पकतं कम्मं अप्पं वा यदि वा बहुं
इधेव तं वेदनीयं वत्थुं अञ्ञं न विज्जति

तस्मा लोभं च दोसं च मोहं चापि विद्दसु
विज्जं उप्पादयं भिक्खु सब्बा दुग्गतियो जहे

[जो मूर्ख लोभ, द्वेष अथवा मोह से प्रेरित होकर चाहे छोटा, चाहे बड़ा कुछ भी कर्म करता है, उसे वह यहीं भोगना पड़ता है, दूसरे को दूसरे का किया नहीं भोगना पड़ता। इसलिये बुद्धिमान् भिक्षु को चाहिये कि लोभ, द्वेष और मोह का त्याग कर विद्या का लाभ कर सारी दुर्गतियों से मुक्त हो।]

(३४)

ऐसा मैं ने सुना। एक समय भगवान् आलवी (राष्ट्र) में गौवों के आने-जाने के मार्ग पर श्रृसंप-वन में गिरे-पत्तों के आसन पर बैठे थे।

तब हत्थक (नामक) आळवक राजपुत्र ने घूमने के समय, सैर करने के समय भगवान् को उस प्रकार गौवों के आने-जाने के मार्ग पर श्रृसंप-वन में गिरे-पत्तों के आसन पर बैठे देखा। देखकर जहाँ भगवान् थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवान् को नमस्कार कर एक ओर बैठ हत्थक आळवक ने भगवान् को यह कहा—

"क्या भन्ते भगवान्! आप सुख से सोये?"

"हाँ कुमार! मैं सुख से सोया। संसार में जो लोग सुख-पूर्वक सोते हैं, मैं उन में से एक हूँ।"

"भन्ते! यह हेमन्त ऋतु की शीत रात्रि है, माघ और फाल्गुन के बीच के आठ दिनों का समय है, हिम-पात के दिन हैं, गौवों के खुरों की मारी हुई कठोर भूमि है, पत्तों का पतला बिछौना है, पेड़ पर कहीं कहीं थोड़े पत्ते हैं, ठण्डे काषाय-वस्त्र हैं, चारों-दिशा से हवा आ रही है, और भगवानने यह कहा है—'हाँ कुमार! मैं सुख से सोया। संसार में जो लोग सुख-पूर्वक सोते हैं, मैं उन में से एक हूँ?"

"तो कुमार! मैं तुझ से ही पूछता हूँ, जैसे तुझे अच्छा लगे वैसा कहना। कुमार! तो तू क्या समझता है? यहाँ किसी गृहपति वा गृहपति-पुत्र का ऊंचा मकान हो, लिपा-पुता हो, जोर की हवा न आती हो, अर्गल लगा हो, खिड़की बन्द हो; वहाँ एक पलंग हो जिस पर चार अंगुल अधिक की झालर वाला आस्तरण बिछा हो, ऊन का आस्तरण बिछा हो, घने ऊन का आस्तरण बिछा हो, कदली मृग के श्रेष्ठ चर्म का आस्तरण बिछा हो, उस पलंग के ऊपर वितान तना हो, सिर

और पाँव की ओर दो रक्त-वर्ण तकिये हों, तेल-प्रदीप जल रहा हो, चार भार्य्यायें अच्छी तरह सेवा कर रही हों। तो कुमार! तुझे इस विषय में कैसा लगता है वह सुख-पूर्वक सोयेगा अथवा नहीं ?"

"भन्ते! वह सुख-पूर्वक सोयेगा? संसार में जो सुख-पूर्वक सोते हैं उन में वह एक है।"

"तो कुमार! तुम क्या मानते हो क्या उस गृहपति अथवा गृहपति-पुत्र को (काम-) राग से उत्पन्न होने वाली ऐसी शारीरिक वा मानसिक जलन हो सकती है जिस (काम-) राग से उत्पन्न होने वाली जलन के कारण वह दुखी रहे ?"

"भन्ते! हाँ।"

"कुमार! जिस (काम-) राग से उत्पन्न जलन के कारण वह गृहपति अथवा गृहपति-पुत्र जलता रह कर दुखी रह सकता है, तथागत का वह राग प्रहीण हो गया है, उसका जड़-मूल कट गया है, वह कटे ताड़ वृक्ष की तरह हो गया है, वह अभाव-प्राप्त हो गया है, उस की भावी-उत्पत्ति जाती रही है। इसलिये मैं सुख-पूर्वक सोया।

"तो कुमार! तुम क्या मानते हो क्या उस गृहपति अथवा गृहपति-पुत्र को द्वेष से उत्पन्न होने वाली .... मोह से उत्पन्न होनेवाली ऐसी शारीरिक वा मानसिक जलन हो सकती है जिस मोह से उत्पन्न होने वाली जलन के कारण वह दुखी रहे ?"

"भन्ते! हाँ।"

"कुमार! जिस मोह से उत्पन्न होने वाली जलन के कारण वह गृहपति अथवा गृहपति-पुत्र जलता रह कर दुखी रह सकता है, तथागत का वह मोह प्रहीण हो गया है, उस का जड़-मूल कट गया है, वह कटे ताड़-वृक्ष की तरह हो गया है, वह अभाव-प्राप्त हो गया है, उस की भावी-उत्पत्ति जाती रही है। इसलिये मैं सुख-पूर्वक सोया।"

सब्बदा वे सुखं सेति ब्राह्मणो परिनिब्बुतो
यो न लिप्पति कामेसु सीतिभूतो निरूपधि
सब्बा आसत्तियो छेत्वा विनेय्य हदये दरं
उपसन्तो सुखं सेति संति पप्पुय्य चेतसो

[परिनिर्वाण-प्राप्त ब्राह्मण सदा सुख-पूर्वक सोता है, जो काम-भोगों में लिप्त नहीं होता, जो शान्त है, जो उपाधि-रहित है, जो सभी आसक्तियों को काट-कर हृदय के दुःख को दूर करता है, जो शान्ति-पूर्वक सोता है, जो चित्त की शान्ति को प्राप्त करता है।]

(३५)

"भिक्खुओ, ये तीन देव-दूत हैं। कौनसे तीन?

"भिक्षुओ,एक आदमी शरीरसे दुष्कर्म करता है, वाणी से दुष्कर्म करता है, मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीरसे दुष्कर्म करके, वाणीसे दुष्कर्म करके, मनसे दुष्कर्म करके शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर अपाय दुर्गतिको प्राप्त होता है तथा नरक-लोकमें उत्पन्न होता है। तो भिक्षुओ, उसे नाना नरक-पाल बाहोंसे पकड़ कर यमराजके पास ले जाते हैं—"देव! यह आदमी मातृ-सेवक नहीं, पितृ-सेवक नहीं, श्रमणोंकी सेवा करनेवाला नहीं, क्षीणाश्रवोंकी सेवा करने वाला नहीं, परिवारमें बड़े-बूढ़ोंका आदर करने वाला नहीं, हे देव! इसे सजा दें।"

"भिक्षुओ, उस आदमीसे यमराज प्रथम देव-दूतके बारेमें प्रश्न करता है, पूछता है, बातचीत करता है—"हे पुरुष! क्या तू ने मनुष्य-लोकमें प्रकट हुए प्रथम देव-दूतको नहीं देखा?"

वह बोला—"स्वामी! नहीं देखा।"

तब भिक्षुओ, यमराज उस आदमीसे पूछता है—"हे पुरुष! क्या तू ने मनुष्य-लोकमें किसी ऐसी स्त्री या पुरुषको नहीं देखा जिसकी आयु जन्मसे अस्सी वर्षकी हो,नब्बे वर्षकी हो अथवा सौ वर्षकी हो; जो बूढ़ा हो,जो शहतीरकी तरह टेढ़ा हो, जो टूट गया हो, जिसके हाथमें लाठी हो, जो चलता हुआ कांपता हो, जो आतुर हो, जिसका यौवन जाता रहा हो, जिसके दांत टूट गये हों, जिसके बाल सफेद हो गये हों, जिसकी खोपड़ी गंजी हो गयी हो, जिसके झुर्रियाँ पड़ गयी हों तथा जिसके बदन पर काले-सफेद निशान पड़ गये हों।"

वह बोला—"स्वामी! देखा है।"

तो भिक्षुओ, उसे यमराजने कहा—"हे पुरुष! तुझ विज्ञ, स्मृतिमान वृद्धके मनमें यह नहीं हुआ कि मैं भी जरा को प्राप्त होनेवाला हूँ, मैं भी जराके आधीन हूँ। मैं शरीर, वाणी तथा मनसे शुभ-कर्म करूँ।"

वह बोला—"स्वामी ! मुझसे न हो सका। मैं ने प्रमाद किया।"

तब भिक्षुओ, उसे यमराजने कहा—"हे पुरुष ! प्रमादके वशीभूत हो तूने शरीर, वाणी अथवा मनसे शुभ कर्म नहीं किये। तो हे पुरुष ; अब तेरे साथ तेरे प्रमादके अनुरूप व्यवहार करेंगे। यह जो पापकर्म है, यह न तेरी मां ने किया है, न बाप ने किया है, न भाईने किया है, न बहनने किया है, न मित्र-अमात्योंने किया है, न रिश्तेदारोंने किया है, न देवताओंने किया है, न श्रमण-ब्राह्मणोंने किया है; यह पापकर्म तेरे ही द्वारा किया गया है, तू ही असका फल भोगेगा।"

२. तो भिक्षुओ, यमराज प्रथम देवदूतके बारेमें प्रश्न करके, पूछ करके, बातचीत करके, दूसरे देवदूतके बारेमें प्रश्न करता है, पूछता है, बातचीत करता है— "हे पुरुष ! क्या तू ने मनुष्य-लोकमें प्रकट हुअे दूसरे देवदूत को नहीं देखा ?"

वह बोला—"स्वामी ! नहीं देखा।"

तब भिक्षुओ, यमराज उस आदमीसे पूछता है—"हे पुरुष ! क्या तू ने मनुष्य-लोकमें किसी ऐसे स्त्री या पुरुषको नहीं देखा जो रोगी हो, जो दुखी हो, जो बहुत रोगी हो, अपने मल-मूत्रमें पड़ा हो, जिसे दूसरे ही आकर बिठाते हों, दूसरे ही लिटाते हों ?"

वह बोला—"स्वामी ! देखा है।"

तो भिक्षुओ, उस यमराजने कहा—"हे पुरुष ! तुझ विज्ञ, स्मृतिमान्, वृद्धके मनमें यह नहीं हुआ कि मैं भी व्याधिको प्राप्त होनेवाला हूँ, मैं भी व्याधिके आधीन हूँ। मैं शरीर, वाणी तथा मनसे शुभ कर्म करूँ।"

वह बोला— "स्वामी ! मुझसे न हो सका। मैंने प्रमाद किया।"

तब भिक्षुओ, अुसे यमराजने कहा—"हे पुरुष ! प्रमादके वशीभूत हो तूने शरीर, वाणी अथवा मनसे शुभ-कर्म नहीं किये। तो हे पुरुष ! अब ये तेरे साथ तेरे प्रमादके अनुरूप विहार करेंगे। यह जो पाप-कर्म है, यह न तेरी मां ने किया है, न बाप ने किया है, न भाई ने किया है, न बहन ने किया है, न मित्र-अमात्यों ने किया है, न रिशतेदारों ने किया है, न देवताओं ने किया है, न श्रमण-ब्राह्मणों ने किया है, यह पाप-कर्म तेरे ही द्वारा किया गया है, तू ही असका फल भोगेगा।"

३. तो भिक्षुओ, यमराज द्वितीय देव-दूतके बारेमें प्रश्न करके, पूछ करके, बातचीत करके, तृतीय देव-दूतके बारेमें प्रश्न करता है, पूछता है, बातचीत करता है—

"हे मनुष्य ! क्या तू ने मनुष्य-लोकमें प्रकट हुए तीसरे देव-दूतको नहीं देखा ?"

वह बोला—"स्वामी ! नहीं देखा।"

तब भिक्षुओ, यमराज उस आदमी से पूछता है—"हे पुरुष ! क्या तू ने मनुष्य-लोकमें किसी ऐसे स्त्री या पुरुष को नहीं देखा जिसे मरे एक दिन हो गया हो, जिसे मरे दो दिन हो गये हों, जिसे मरे तीन दिन हो गये हों, जो फूल गया हो, जिसका शरीर नीला पड़ गया हो, जिसके बदनमें पीप पड़ गयी हो ?"

वह बोला—"स्वामी ! देखा है।"

तो भिक्षुओ, उस यमराजने कहा—"हे पुरुष ! तुझ विज्ञ, स्मृतिमान्, वृद्धके मनमें यह नहीं हुआ कि मैं भी मरणको प्राप्त होनेवाला हूँ, मैं भी मरणके आधीन हूँ। मैं शरीर, वाणी तथा मनसे शुभ-कर्म करूँ ?"

वह बोला—"स्वामी ! मुझसे न हो सका। मैं ने प्रमाद किया।"

तब भिक्षुओ, उसे यमराजने कहा—"हे पुरुष ! प्रमादके वशीभूत हो तूने शरीर, वाणी अथवा मनसे शुभ-कर्म नहीं किये। तो हे पुरुष ! अब ये तेरे साथ तेरे प्रमादके अनुरूप विहार करेंगे। यह जो पाप-कर्म है, यह न तेरी माँ ने किया है, न बाप ने किया है, न भाईने किया है, न बहनने किया है, न मित्र-अमात्योंने किया है, न रिशतेदारोंने किया है, न देवताओंने किया है, न श्रमण-ब्राह्मणोंने किया है, यह पाप-कर्म तेरे ही द्वारा किया गया है, तू ही अिसका फल भोगेगा ?"

४. तो भिक्षुओ, यमराज तृतीय देव-दूतके बारेमें प्रश्न करके, पूछ करके, बातचीत करके चुप हो जाता है।

"भिक्षुओ, उस आदमीको यमदूत (नरक-पाल) पांच प्रकारके दंडसे दंडित करते हैं, लोहेकी तप्त कीलें हाथमें ठोकते हैं, लोहेकी तप्त कीलें दूसरे हाथमें ठोकते हैं, लोहेकी तप्त कीलें पांवमें ठोकते हैं, लोहेकी तप्त कीलें दूसरे पाँवमें ठोकते हैं, लोहेकी तप्त कीलें छातीके बीचमें ठोकते हैं। वह उससे दुःख-पूर्ण, तीव्र कष्टदायक, कटु वेदनाका अनुभव करता है और तबतक नहीं मरता है जबतक अुस पाप-कर्मका क्षय नहीं हो जाता।

"भिक्षुओ, उस आदमीको यम-दूत लिटा कर कुल्हाड़ी से छीलते हैं। वह उससे दुःख-पूर्ण, तीव्र कष्ट-दायक, कटु वेदनाका अनुभव करता है और तब तक नहीं मरता है जब तक उस पाप-कर्मका क्षय नहीं हो जाता।

"भिक्षुओ, उस आदमीको यम-दूत पैर अूपर सिर नीचे करके वसूलेसे छीलते हैं। वह उससे ....हो जाता।

"भिक्षुओ, उस आदमीको यम-दूत रथमें जोतकर जलती हुई, प्रज्वलित, प्रदीप्त भूमिपर चलाते भी हैं, हांकते भी हैं। वह उससे.......हो जाता।

"भिक्षुओ, उस आदमीको यम-दूत बड़े भारी, जलते हुअे प्रज्वलित, प्रदीप्त, अंगारोंके पर्वतपर चढ़ाते भी हैं, उतारते भी हैं। वह उस से.......हो जाता।

"भिक्षुओ, उस आदमीको यम-दूत पैर ऊपर सिर नीचे करके गर्म जलती हुई, प्रज्वलित, प्रदीप्त, तप्त लोहेकी कहाड़ीमें डाल देते हैं। वह वहाँ खौलता हुआ पकता है, वह वहाँ खौलता हुआ, पकता हुआ कभी ऊपर जाता है, कभी नीचे जाता है, कभी बीचमें रहता है। वह उससे........... हो जाता है।

भिक्षुओ, उस आदमीको यमदूत महान् नरकमें डाल देते हैं। वह महान नरक—

चतुकण्णो चतुद्वारो विभत्तो भागसो मितो
अयोपाकारपरियन्तो अयसा पटिकुज्जितो
तस्स अयोमया भूमि जलिता तेजसा युता
समन्ता योजनसतं फरित्वा तिट्ठति सब्बदा

[उसके चार कोने हैं और चार द्वार हैं तथा वह हिस्सोंमें विभक्त है। उसके चारों ओर लोहेकी दीवार है और वह लोहेसे ढका हुआ है। उसके चारों ओर सौ योजन लोह-मय भूमि हमेशा आगसे प्रज्वलित रहती है।]

५. भिक्षुओ, पूर्व समयमें यम-राजके मनमें यह हुआ— (मनुष्य-)लोकमें जो पाप-कर्म करते हैं उन्हें इस प्रकारके बहुत से दण्ड मिलते हैं। अच्छा हो यदि मुझे मनुष्य होकर पैदा होना मिले, उस समय अरहत सम्यक सम्बुद्ध तथागतका भी (मनुष्य-) लोकमें जन्म हो, मैं उन भगवान्का सत्संग करूँ, वे भगवान् मुझे धर्मोपदेश दें और मैं उन भगवान्के उपदेशको जानूँ।

"भिक्षुओ, मैं यह बात किसी दूसरे श्रमण या ब्राह्मणसे सुनकर नहीं कहता, बल्कि भिक्षुओ, जो कुछ मैंने स्वयं जाना है, स्वयं देखा है, स्वयं अनुभव किया है, वही कहता हूँ।

चोदिता देव-दूतेहि ये पमज्जन्ति माणवा
ते दीघरत्तं सोचन्ति हीनकायूपगा नरा
ये च खो देव-दूतेहि सन्तो सप्पुरिसा इध
चोदिता नप्पमज्जन्ति अरियधम्मे कुदाचनं
उपादाने भयं दिस्वा जातिमरणसम्भवे
अनुपादा विमुच्चन्ति जातिमरणसंखये
ते खेमप्पत्ता सुखिता दिट्ठधम्माभिनिब्बुता
सब्बवेरभयातीता सब्बदुक्खं उपच्चगुं ।

[देवदूतों (= जरा, व्याधि, मरण) द्वारा शिक्षित किअे जाने पर भी जो मनुष्य प्रमाद करते हैं, वे हीनावस्थाको प्राप्त हो, दीर्घ-काल तक सन्ताप करते हैं । जो सत्पुरुष देव-दूतों द्वारा शिक्षित किये जाने पर आर्य-धर्मके विषयमें कभी प्रमाद नहीं करते, वे जाति-मरणके कारण उपादान-स्कन्धोंको भयका कारण मान, उपादान-रहित हो जाति-मरण-क्षय स्वरूप निर्वाणको प्राप्त करते हैं । वे कल्याणको प्राप्त होते हैं । वे सुखी होते हैं । वे अिसी जन्ममें शान्ति-लाभ करते हैं । वे सभी वैरों तथा भयोंकी सीमा लांघ जाते हैं । वे सभी दुःखोंका नाश कर देते हैं ।]

(३६)

भिक्षुओ, पक्षकी अष्टमीके दिन चारों महाराजाओंके अमात्य-पारषद इस लोकमें यह देखनेके लिए विचरते हैं कि क्या मनुष्य-लोकके अधिकांश लोग मातृ-सेवक हैं, पितृ-सेवक हैं, श्रमण-सेवक हैं, श्रेष्ठ-पुरुषोंके सेवक हैं, अपने-अपने कुलमें बड़ोंका आदर करनेवाले हैं, उपोसथ (-व्रत) रखनेवाले हैं, जागरण करनेवाले हैं तथा पुण्य-कर्म करनेवाले हैं ।

भिक्षुओ, पक्षकी चतुर्दशीके दिन चारों महाराजाओंके पुत्र इस लोकमें यह देखनेके लिए विचरते हैं कि क्या मनुष्य-लोकके अधिकांश लोग मातृ-सेवक हैं, पितृ-सेवक हैं, श्रमण-सेवक हैं, श्रेष्ठ-पुरुषोंके सेवक हैं, अपने-अपने कुलमें बड़ोंका आदर करनेवाले हैं, उपोसथ (-व्रत) रखने वाले हैं, जागरण करनेवाले हैं, तथा पुण्य-कर्म करनेवाले हैं ?

भिक्षुओ, उसी प्रकार पूर्णिमा-उपोसथके दिन चारों महाराजा स्वयं ही इस लोकमें यह देखनेके लिए विचरते हैं कि क्या मनुष्य-लोकके अधिकांश लोग मातृ-

सेवक हैं, पितृ-सेवक हैं, श्रमण-सेवक हैं, श्रेष्ठ-पुरुषोंके सेवक हैं, अपने-अपने कुलमें बड़ोंका आदर करनेवाले हैं, उपोसथ (-व्रत) रखने वाले हैं, जागरण करनेवाले हैं तथा पुण्य-कर्म करनेवाले हैं ?

भिक्षुओ, यदि मनुष्य-लोकमें ऐसे आदमी थोड़े होते हैं जो मातृ-सेवक हों, पितृ-सेवक हों, श्रमण-सेवक हों, श्रेष्ठ-पुरुषों के सेवक हों, अपने-अपने कुलमें बड़ोंका आदर करने वाले हों, उपोसथ (-व्रत) रखने वाले हों, जागरण करनेवाले हों तथा पुण्य-कर्म करने वाले हों, तो भिक्षुओ, वे चारों महाराजा त्र्योत्रिंश लोकमें सुधर्मा सभामें एकत्रित हुए देवताओंको कहते हैं—आयुष्मानो ! ऐसे आदमी थोड़े हैं जो मातृसेवक हों, पितृ-सेवक हों, श्रमण-सेवक हों, श्रेष्ठ-पुरुषोंके सेवक हों, अपने-अपने कुलमें बड़ोंका आदर करनेवाले हों, उपोसथ (-ब्रत) रखने वाले हों, जागरण करने वाले हों तथा पुण्य-कर्म करने वाले हों। भिक्षुओ, उससे त्र्योत्रिंश देवता असन्तुष्ट होते हैं—वे दिव्य-काय से पतित होकर असुर-शरीर धारण करनेवाले होते हैं।

लेकिन भिक्षुओ, यदि मनुष्य-लोकमें ऐसे आदमी अधिक होते हैं जो मातृ-सेवक हों, पितृ-सेवक हों, श्रमण-सेवक हों, श्रेष्ठ पुरुषोंके सेवक हों, अपने-अपने कुलमें बड़ोंका आदर करने वाले हों, उपोसथ (-व्रत) रखने वाले हों, जागरण करने वाले हों तथा पुण्य-कर्म करनेवाले हों तो भिक्षुओ, वे चारों महाराजा त्र्योत्रिंश लोकमें सुधर्मा सभामें एकत्रित हुए देवताओंको कहते हैं—आयुष्मानो ! ऐसे आदमी बहुत हैं जो मातृ-सेवक हों, पितृ-सेवक हों, श्रमण-सेवक हों, श्रेष्ठ-पुरुषोंके सेवक हों, अपने-अपने कुलमें बड़ोंका आदर करनेवाले हों, जागरण करनेवाले हों तथा पुण्य-कर्म करनेवाले हों। भिक्षुओ, इससे त्र्योत्रिंश देवता संतुष्ट होते हैं—वे असुर-कायमें से पतित होकर दिव्य-शरीर धारण करनेवाले होते हैं।

(३७)

भिक्षुओ, पूर्वकालमें त्र्योत्रिंश देवताओंका नेतृत्व करनेवाला देवेन्द्र शक्र हुआ है। उस समय उसने यह गाथा कही—

चातुद्दसी पञ्चदसी याव पक्खस्स अट्ठमी
पाटिहारियपक्खञ्च अट्ठङ्गसुसमागतं
उपोसथं उपवसेय्य यो प'स्स मादिसो नरो।

[पक्षकी चतुर्दशी, पूर्णिमा, अष्टमी तथा प्रातिहारिय-पक्षको आठ-शीलों वाला उपोसथ-व्रत रखे—जो भी नर मेरे सदृश होना चाहे।]

भिक्षुओ, देवेन्द्र शक्र द्वारा कही गयी यह गाथा सुगीत नहीं है, दुर्गीत है, सुभाषित नहीं है, दुर्भाषित है। यह किस लिए? भिक्षुओ, देवेन्द्र शक्रका राग-द्वेष, मोह क्षय नहीं हुआ है। भिक्षुओ, यदि कोई ऐसा भिक्षु जो अरहत हो, क्षीणास्रव हो, श्रेष्ठ जीवन (=वास) जी चुका हो, करणीय कर चुका हो, भार अुतार चुका हो, सदर्थ प्राप्त कर चुका हो, भव-संयोजन-क्षीण हो गया हो तथा सम्यक् ज्ञान द्वारा विमुक्त हो गया हो, ऐसी गाथा कहे तो उसका यह कथन समुचित होगा—

चातुद्दसी पञ्चदसी याव पक्खस्स अट्ठमी
पाटिहारियपक्खञ्च अट्ठङ्गसुसमागतं
उपोसथं उपवसेय्य यो प'स्स मादिसो नरो।

[पक्षकी चतुर्दशी, पूर्णिमा, अष्टमी तथा प्रातिहारिय-पक्षको आठ-शीलों वाला उपोसथ-व्रत रखे—जो भी नर मेरे सदृश होना चाहे।]

यह किस लिए? भिक्षुओ, वह भिक्षु, राग, द्वेष, मोह रहित है।

भिक्षुओ, पूर्वकालमें त्र्योत्रिंश देवताओंका नेतृत्व करनेवाला देवेन्द्र शक्र हुआ है। उस समय उसने यह गाथा कही—

चातुद्दसी पञ्चदसी याव पक्खस्स अट्ठमी
पाटिहारियपक्खञ्च अट्ठङ्गसुसमागतं
उपोसथं उपवसेय्य यो प'स्स मादिसो नरो।

[पक्षकी चतुर्दशी, पूर्णिमा, अष्टमी तथा प्रतिहारिय-पक्ष को आठ शीलों वाला उपोसथ-व्रत रखे—जो भी नर मेरे सदृश होना चाहे।]

भिक्षुओ, देवेन्द्र शक्र द्वारा कही गयी यह गाथा सुगीत नहीं है, दुर्गीत है, सुभाषित नहीं है, दुर्भाषित है। यह किस लिए? भिक्षुओ, देवेन्द्र शक्र जन्म, बुढ़ापा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दुःख, दौर्मनस्य, अशान्तिसे मुक्त नहीं है। मैं कहता हूँ कि वह दुःखसे मुक्त नहीं है। भिक्षुओ, जो भिक्षु अरहत हो, क्षीणास्रव हो, श्रेष्ठ-जीवन (=वास) जी चुका हो, करणीय कर चुका हो, भार उतार चुका हो, सदर्थ प्राप्त कर चुका हो, भव-संयोजन-क्षीण हो गया हो तथा सम्यक् ज्ञान द्वारा विमुक्त हो गया हो, अैसी गाथा कहे तो अुसका यह कथन समुचित है—

चातुद्दसी पञ्चदसी याव पक्खस्स अट्ठमी
पाटिहारियपक्खञ्च अट्ठङ्गसुसमागतं
उपोसथं उपवसेय्य यो प'स्स मादिसो नरो ।

[पक्षकी चतुर्दशी, पूर्णिमा, अष्टमी तथा प्रातिहारिय-पक्षको आठ शीलों वाला उपोसथ-व्रत रखे—जो भी नर मेरे सदृश होना चाहे ।]

यह किस लिए ? भिक्षुओ, वह भिक्षु, जन्म, बुढ़ापा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दुःख, दौर्मनस्य, अशान्तिसे मुक्त है । मैं कहता हूँ कि वह दुःखसे मुक्त है ।

(३८)

भिक्षुओ, मैं सुकुमार था, परम सुकुमार, अत्यन्त सकुमार । भिक्षुओ, मेरे पिताके घर पुष्करणियाँ बनी थीं—एकमें उत्पल पुष्पित होते थे, एकमें पद्म तथा एकमें पुण्डरीक । यह सभी मेरे ही लिए थे । भिक्षुओ, उस समय मैं काशीका ही चन्दन धारण करता था, भिक्षुओ, काशीकी ही बनी मेरी पगड़ी होती थी, काशीका ही कंचुक, काशीका ही निवेसन (=पहननेका वस्त्र), काशीका ही अुत्तरासंग (=चादर) । भिक्षुओ, रात-दिन मेरे सिरपर श्वेत-छत्र धारण किया जाता था ताकि मुझे शीत न लगे, गरमी न लगे, धूल न लगे, तिनके न लगें तथा ओस न लगे । भिक्षुओ, उस समय मेरे तीन प्रासाद थे—एक हेमन्त-ऋतुके लिए, एक ग्रीष्म-ऋतुके लिए तथा एक वर्षा ऋतुके लिए । भिक्षुओ, मैं वर्षाके चारों महीने भर वर्षाके प्रासादसे नीचे नहीं उतरता था । उस समय मैं तुरिय-वादन करनेवाली स्त्रियोंसे घिरा रहता था । भिक्षुओ, जैसे दूसरे घरोंमें दासों तथा नौकर-चाकरोंको बिलङ्ग और कणजक (भात) दिया जाता था, वैसे ही भिक्षुओ, मेरे पिताके घरमें दासों तथा नौकर-चाकरोंको मांस तथा शाली (=धान) का भात दिया जाता था ।

२. भिक्षुओ, उस समय इस प्रकारका ऐश्वर्य भोगते हुए तथा इस प्रकार की सुकुमारता लिए हुए मेरे मनमें यह हुआ—अज्ञानी सामान्य जन स्वयं जराको प्राप्त होनेवाला होकर, स्वयं जराके आधीन होकर, किसी दूसरे बूढ़ेको देखकर अपनी मर्यादा भूल कष्ट पाता है, लज्जित होता है तथा घृणा करता है । मैं भी तो बुढ़ापेको प्राप्त होनेवाला हूँ, बुढ़ापेके आधीन हूँ । यदि मैं स्वयं बुढ़ापेको प्राप्त होनेवाला होकर, स्वयं बुढ़ापेके आधीन होकर दूसरे बूढ़ेको देखकर कष्ट पाऊं, लज्जित होऊं, तथा घृणा

करूं, तो यह मेरे योग्य न होगा। भिक्षुओ, इस प्रकार विचार करते करते मेरे मनमें यौवनके प्रति जो यौवन-मद था वह सब जाता रहा।

अज्ञानी सामान्य जन स्वयं व्याधिको प्राप्त होनेवाला होकर, स्वयं व्याधिके आधीन होकर, किसी दूसरे व्याधि-ग्रस्तको देखकर अपनी मर्यादा भूलकर कष्ट पाता है, लज्जित होता है तथा घृणा करता है। मैं भी तो व्याधिको प्राप्त होने वाला हूँ, व्याधिके आधीन हूँ। यदि मैं स्वयं व्याधिको प्राप्त होनेवाला होकर, स्वयं व्याधिके आधीन होकर, दूसरे व्याधि-ग्रस्तको देखकर कष्ट पाऊं, लज्जित होऊं तथा घृणा करूं, तो यह मेरे योग्य न होगा। भिक्षुओ, इस प्रकार विचार करते करते मेरे मनमें आरोग्यके प्रति जो आरोग्य-मद था वह सब जाता रहा।

अज्ञानी सामान्य जन स्वयं मरणको प्राप्त होनेवाला होकर, स्वयं मरणके आधीन होकर, किसी मृत्यु-प्राप्तको देखकर, अपनी मर्यादा भूलकर कष्ट पाता है—लज्जित होता है तथा घृणा करता है। मैं भी तो मरणको प्राप्त होनेवाला हूँ, मरण के आधीन हूँ। यदि मैं स्वयं मरणको प्राप्त होनेवाला होकर, स्वयं मरणके आधीन होकर, किसी मृत्यु-प्राप्तको देखकर कष्ट पाऊं, लज्जित होऊं तथा घृणा करूं, तो यह मेरे योग्य न होगा। भिक्षुओ, इस प्रकार विचार करते-करते मेरे मनमें जीवनके प्रति जो जीवन-मद था वह सब जाता रहा।

(३९)

"भिक्षुओ, तीन प्रकारके मद हैं। कौनसे तीन?

" यौवन-मद, आरोग्य-मद तथा जीवन-मद।

" भिक्षुओ, यौवन-मदमें मत्त अज्ञानी सामान्य जन शरीरसे दुष्कर्म करता है, वाणीसे दुष्कर्म करता है तथा मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करके शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, अपाय, दुर्गति, पतन, नरकको प्राप्त होता है। भिक्षुओ, आरोग्य-मदसे मत्त अज्ञानी सामान्य जन शरीरसे दुष्कर्म करता है, वाणीसे... मनसे... करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे..... नरकको प्राप्त होता है। भिक्षुओ, जीवन-मदसे मत्त अज्ञानी सामान्य जन शरीरसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे ..... मरनेके अनन्तर....... नरकको प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, यौवन-मदसे मत्त भिक्षु शिक्षाका त्याग कर पतनोन्मुख होता है। भिक्षुओ, आरोग्य-मदसे मत्त भिक्षु शिक्षाका त्याग कर पतनोन्मुख होता है। भिक्षुओ, जीवन मदसे मत्त भिक्षु शिक्षाका त्यागकर पतनोन्मुख होता है।

व्याधिधम्मा जराधम्मा अथो मरणधम्मिनो
यथा धम्मा तथा सन्ता जिगुच्छन्ति पुथुज्जना
अहञ्चे तं जिगुच्छेय्यं एवं धम्मेसु पानिसु
न मे तं पटिरूपस्स मम एवं विहारिनो
सोहं एवं विहरन्तो ञत्वा धम्मं निरूपधिं
अरोग्ये योब्बनस्मिंच जीवितस्मिंच यो मदो
सब्बे मदे अभिभोस्मि नेक्खम्मं दट्ठु खेमतो
तस्स मे आहु उस्साहो निब्बानं अभिपस्सतो
नाहं भब्बो एतरहि कामानि पटिसेवितुं
अनिवत्ती भविस्सामि ब्रह्मचरियपरायणो।

[सामान्य जन स्वयं जरा, व्याधि तथा मरणके आधीन होते हुए भी ऐसे ही दूसरे जनोंसे घृणा करते हैं। यदि मैं जरा, व्याधि तथा मरणके आधीन प्राणियोंसे घृणा करूं तो यह मेरे अनुरूप नहीं होगा। मैं उपाधि-रहित धर्म (निर्वाण) को जानकर आरोग्य, यौवन तथा जीवनके प्रति जो मत्त-भाव है उस सबको त्याग देता हूँ। मैं नैष्क्रम्यको ही कल्याणकर समझता हूँ। मैं निर्वाण-दर्शी हूँ। इसलिए मेरे मनमें उत्साह है। मैं अब काम-भोगोंका सेवन करनेके योग्य नहीं हूँ। मैं अब ब्रह्मचर्य-परायण होकर पीछे न लौटने वाला होऊंगा।]

(४०)

"भिक्षुओ, तीन आधिपत्य हैं। कौनसे तीन ?

"आत्माधिपत्य, लोकाधिपत्य, धर्माधिपत्य।

"भिक्षुओ, आत्माधिपत्य क्या है ?

"भिक्षुओ, एक भिक्षु अरण्यवासी होकर, अथवा वृक्षकी छायामें रहनेवाला होकर अथवा शून्यागारमें रहनेवाला होकर इस प्रकार विचार करता है— न मैं चीवरके लिए घरसे बेघर हो प्रव्रजित हुआ, न पिण्डपात (=भोजन) के लिए, न शयनासनके लिए, न यह-वह कुछ बननेके लिए। मैं जाति, जरा, मरण, शोक,

रोना-पीटना, दुःख, दौर्मनस्य, अशान्तिसे घिरा हुआ हूँ—दुःखमें डूबा हुआ। अच्छा हो कि इस दुःखका सम्पूर्ण विनाश देख सकूँ। मैं जिस प्रकारके काम-भोगोंको छोड़कर घरसे बेघर हो प्रव्रजित हुआ, वैसे ही काम-भोगोंके पीछे पड़ूं, तो यह उससे भी बुरा होगा। यह मेरे अनुरूप नहीं है।

"वह यह विचार करता है—विना प्रमादके मेरा प्रयत्न जारी रहेगा, असंमूढ़ स्मृति अुपस्थित रहेगी, शरीर शान्त तथा अुत्तेजना-रहित रहेगा और चित्त एकाग्र रहेगा। वह अपने-आपका ही आधिपत्य स्वीकार कर अकुशलका त्याग करता है, कुशलकी भावना करता है, सदोषको छोड़ता है, निर्दोषका अभ्यास करता है—अपने जीवनको शुद्ध बनाता है। भिक्षुओ, इसे आत्माधिपत्य कहते हैं।"

२. "भिक्षुओ, लोकाधिपत्य क्या है?

"भिक्षुओ, एक भिक्षु अरण्यवासी होकर, अथवा वृक्षकी छायामें रहनेवाला होकर अथवा शून्यागार में रहनेवाला होकर इस प्रकार विचार करता है—न मैं चीवरके लिए घरसे बे घर हो प्रव्रजित हुआ, न पिण्डपात (=भोजन) के लिए न शयनासन के लिए, न यह-वह-कुछ बनने के लिए। मैं जाति, जरा, मरण शोक, रोना-पीटना, दुःख, दौर्मनस्य, अशान्ति से घिरा हुआ हूँ—दुःख में ड़ूबा हुआ—अच्छा हो कि उस दुःख का सम्पूर्ण विनाश देख सकूं। इस प्रकार प्रव्रजित हुआ हुआ मैं यदि काम-भोग सम्बन्धी संकल्प-विकल्पों को मन में जगह दूं, व्यापाद (=क्रोध) संबन्धी संकल्प-विकल्पों को मन में जगह दूं; वि-हिंसा सम्बन्धी संकल्प-विकल्पों को मन में जगह दूँ; तो यह संसार बहुत बड़ा है! इस महान् संसार में कुछ श्रमण-ब्राह्मण अैसे हैं जो ऋद्धिमान् हैं, दिव्य चक्षुवाले हैं, दूसरे के मन की बात जान लेने वाले हैं। वे दूर से भी देख लेते हैं, पास होने पर भी दिखाअी नहीं देते हैं, वे चित्त से भी चित्त की बात जान लेते हैं। वे भी मेरे बारे में जान लेंगे— इस कुल-पुत्र को देखो। यह श्रद्धापूर्वक घर से वेघर हो प्रव्रजित हुआ है, किन्तु ऐसा होकर भी यह पापी अकुशल-धर्मोंसे युक्त हो विहार करता है। कुछ देवता (=देवियाँ) भी हैं जो ऋद्धिमान् हैं, दिव्य-चक्षु-धारिणी हैं तथा पर-चित्त को जान लेने वाली हैं। वे भी मुझे इस प्रकार जान लेंगी—इस कुलपुत्र को देखो! यह श्रद्धापूर्वक घर से बेघर हो प्रव्रजित हुआ है, किन्तु ऐसा होकर भी यह पापी अकुशल-धर्मों से युक्त हो विहार करता है।

"वह यह विचार करता है—बिना अप्रमादके मेरा प्रयत्न जारी रहेगा, असंमूढ़ स्मृति उपस्थित रहेगी, शरीर शान्त तथा उत्तेजना-रहित रहेगा और चित्त एकाग्र रहेगा। वह लोक का ही आधिपत्य स्वीकार कर अकुशल का त्याग करता है, कुशल की भावना करता है, सदोष को छोड़ता है, निर्दोष का अभ्यास करता है—अपने जीवन को शुद्ध बनाता है। भिक्षुओ, इसे लोकाधिपत्य कहते हैं।"

३. "भिक्षुओ, धर्माधियपत्य क्या है ?

"भिक्षुओ, एक भिक्षु अरण्यवासी होकर, अथवा वृक्षकी छाया में रहने वाला होकर अथवा शून्यागार में रहने वाला होकर इस प्रकार विचार करता है—न मैं चीवर के लिए घर से बेघर हो प्रव्रजित हुआ, न पिण्डपात (=भोजन) के लिए, न शयनासन के लिए, न यह-वह कुछ बनने के लिए। मैं जाति, जरा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दुःख, दौर्मनस्य, अशान्ति से घिरा हुआ हूँ—दुःख में डूबा हुआ। अच्छा हो कि इस दुःख का सम्पूर्ण विनाश देख सकूं। भगवान् का धर्म सु-आख्यात है, सांदृष्टिक (इहलोक-संबंधी) है, अकालिक है, इसके बारे में कहा जा सकता है कि आओ और स्वयं देख लो, निर्वाण की ओर ले जाने वाला है, इसका प्रत्येक विज्ञ जन स्वयं साक्षात कर सकता है। मेरे सब्रह्मचारी (साथी) हैं जो जानते हुए, देखते हुए विहार करते हैं। यदि मैं इस प्रकार के सु-आख्यात धर्म में प्रव्रजित होकर भी आलसी रहूँ, प्रमादी रहूँ तो यह मेरे अनुरूप नहीं होगा। वह यह सोचता है—बिना प्रमाद के मेरा प्रयत्न जारी रहेगा, असंमूढ़ स्मृति उपस्थित रहेगी, शरीर शान्त तथा उत्तेजना-रहित रहेगा और चित्त एकाग्र रहेगा। वह धर्म का ही आधिपत्य स्वीकार कर अकुशल का त्याग करता है, कुशल की भावना करता है, सदोष को छोड़ता है, निर्दोष का अभ्यास करता है—अपने जीवन को शुद्ध बनाता है। भिक्षुओ, इसे धर्माधिपत्य कहते हैं। भिक्षुओ, ये तीन आधियपत्य हैं।"

४. नत्थि लोके रहो नाम पापकम्मं पकुब्बतो
अत्ता ते पुरिस जानाति सच्चं वा यदि वा मुसा
कल्याणं वत भो सक्खि अत्तानं अतिमञ्ञसि
यो सन्तं अत्तनी पापं अत्तानं परिगूहसि
पस्सन्ति देवा च तथागता च लोकस्मिं बालं विसमं चरन्तं
तस्मा हि अत्ताधिपको सतो चरे लोकाधिपोच निपको च झायी

धम्माधिपो च अनुधम्मचारी न हीयति सच्च-परक्कमो मुनि
पसय्ह मारं अभिभूय्य अन्तकं सो च फुसी जातिक्खयं पधानवा
स तादिसो लोकविदू सुमेधो सब्बेसु धम्मेसु अतम्मयो मुनि।

[पापकर्म करने वाले के लिये लोक में छिपकर काम करने की जगह नहीं है। हे पुरुष ! जो कुछ तू अच्छा या बुरा करता है, वह सत्य है या मृषा है, यह बात तेरा अपना-आप तो जानता ही है। हे साक्षी ! तू सुन्दर है, जो तू अपने आपका ही अतिक्रमण करता है। तू अपने पाप को अपने से ही छिपाता है। लोक में मूर्ख आदमी जो अनुचित कर्म करता है उसे देवता और तथागत देखते हैं। इस लिये अपने-आप का ही आधिपत्य स्वीकार करने वाले को स्मृतिमान रहना चाहिये तथा लोकाधिपत्य स्वीकार करने वाले को बुद्धिमान तथा ध्यान करने वाला होना चाहिये। धर्म का आधिपत्य स्वीकार करने वाला, धर्मानुसार आचरण करने वाला यथार्थ-पराक्रमी मुनि कभी ह्रास को प्राप्त नहीं होता। वह प्रयत्नवान् मुनि मार तथा अन्तक (=यमराज) को पराजित कर जाति-क्षय (निर्वाण) को स्पर्श करता है। इस प्रकार का लोक का जानकार बुद्धिमान् मुनि सभी धर्मों (=विषयों) की तृष्णा के पार हो जाता है।]

(४१)

"भिक्षुओ, इन तीन के होने से श्रद्धावान् कुलपुत्र को बहुत पुण्य होता है। किन तीनके ?

"भिक्षुओ, श्रद्धा के होने से श्रद्धावान् कुलपुत्र को बहुत पुण्य होता है। भिक्षुओ, दातव्य-वस्तु के होने से श्रद्धावान् कुलपुत्र को बहुत पुण्य होता है। भिक्षुओ, दक्षिणा (=दान) देने योग्य व्यक्ति के मिलने से श्रद्धावान् कुलपुत्र को बहुत पुण्य होता है।

"भिक्षुओ, इन तीन के होने से श्रद्धावान् कुलपुत्र को बहुत पुण्य होता है।"

(४२)

"भिक्षुओ, तीन बातों से श्रद्धावान् की, प्रसन्न-चित्त की पहचान होती है। कौन सी तीन बातों से ?

"वह शीलवानों (सदाचारियों) के दर्शन की इच्छा रखने वाला होता है, वह सद्धर्म सुनने की इच्छा रखने वाला होता है, वह मात्सर्य्य रहित होकर गृहस्थ

जीवन व्यतीत करता है, मुक्त-त्यागी, खुले हाथ वाला, त्यागी, परित्यागी, तथा दानशील। भिक्षुओ, इन तीन बातों से श्रद्धावान् की, प्रसन्न-चित्त की पहचान होती है।

दस्सनकामो सीलवतं सद्धम्मं सोतुमिच्छति
विनेय्य मच्छेरमलं सचे सद्धो हि वुच्चति

[शीलवानों का दर्शन करना चाहता है, सद्धर्म सुनना चहता है, मात्सर्य्य (=कंजूसपन) को जीते रहता है—वही श्रद्धावान् कहलाता है।]

(४३)

"भिक्षुओ, तीन बातों का ख्याल कर दूसरों को धर्मोपदेश देना योग्य है। कौन सी तीन बातों का? जो धर्मोपदेश देता है, वह अर्थ तथा धर्म दोनों का जानकार होता है, जो धर्मोपदेश सुनता है वह अर्थ तथा धर्म दोनों का जानकार होता है, जो धर्मोपदेश देते तथा धर्मोपदेश सुनते हैं वे दोनों अर्थ तथा धर्म दोनों के जानकार होते हैं। भिक्षुओ, इन तीन बातों का ख्याल कर दूसरों को धर्मोपदेश देना योग्य है।"

(४४)

"भिक्षुओ, तीन कारणों से (धर्म-) कथा का प्रवर्तन होता है। कौन से तीन कारणों से? जो धर्मोपदेश देता है वह अर्थ तथा धर्म दोनों का जानकार होता है, जो धर्मोपदेश सुनता है वह अर्थ तथा धर्म दोनों का जानकार होता है, जो धर्मोपदेश देते तथा धर्मोपदेश सुनते हैं वे दोनों अर्थ तथा धर्म दोनों के जानकार होते हैं। भिक्षुओ, इन तीन कारणों से (धर्म-) कथा का प्रवर्तन होता है।"

(४५)

"भिक्षुओ, इन तीन बातों को पण्डितों ने प्रज्ञापित किया है, सत्पुरुषों ने प्रज्ञापित किया है। कौन सी तीन बातों को?

"भिक्षुओ, दान को पण्डितों ने प्रज्ञापित किया है, सत्पुरुषों ने प्रज्ञापित किया है। भिक्षुओ, प्रव्रज्या को पण्डितों ने प्रज्ञापित किया है, सत्पुरुषों ने प्रज्ञापित किया है। भिक्षुओ, माता-पिता की सेवा को पण्डितों ने प्रज्ञापित किया है, सत्पुरुषों ने प्रज्ञापित किया है। भिक्षुओ, इन तीन बातों को पण्डितों ने प्रज्ञापित किया है, सत्पुरुषों ने प्रज्ञापित किया है।"

सब्भि दानं उपञ्ञत्तं अहिंसासञ्ञमो दमो
मातापितुउपट्ठानं सन्तातं ब्रह्मचारिनं
सतं एतानि ठानानि यानि सेवेथ पण्डितो
अरियो दस्सनसम्पन्नो स लोकं भजते सिवं ।।

[सत्पुरुषों ने दान, अहिंसा, संयम तथा दम की प्रशंसा की है और शान्त, श्रेष्ठाचरण करने वाले तरुणों द्वारा की जाने वाली माता-पिता की सेवाकी प्रशंसा की है। सत्पुरुषों द्वारा प्रशंसित बातों के अनुसार जो पण्डित आचरण करता है वह श्रेष्ठ है, वह दर्शनीय है, वह कल्याण को प्राप्त होता है।]

(४६)

" भिक्षुओ, जिस गाँव अथवा निगम के आश्रय से सदाचारी, प्रव्रजित (भिक्षु) रहते हैं, उस बस्ती के रहने वाले तीन तरह से बहुत पुण्य लाभ करते हैं। कौन सी तीन तरह से ?

" शरीर से, वाणी से तथा मन से।

" भिक्षुओ, जिस गाँव अथवा निगम के आश्रय से सदाचारी प्रव्रजित (भिक्षु) रहते हैं, उस बस्ती के रहने वाले तीन तरह से बहुत पुण्य लाभ करते हैं ।"

(४७)

" भिक्षुओ, संस्कृत-धर्मों के ये तीन संस्कृत लक्षण हैं। कौन से तीन ?

"उनकी उत्पत्ति दिखाई देती है, उन का विनाश दिखाई देता है, उन में परिवर्तन दिखाअई देता है। भिक्षुओ, संस्कृत-धर्मों के ये तीन संस्कृत-लक्षण हैं।"

" भिक्षुओ, असंस्कृत-धर्मों के ये तीन असंस्कृत-लक्षण हैं। कौन से तीन ?

" न उनकी उत्पत्ति दिखाई देती है, न विनाश दिखाई देता है और न उनमें परिवर्तन दिखाई देता है। भिक्षुओ, असंस्कृत-धर्मों के ये तीन असंस्कृत-लक्षण हैं।"

(४८)

" भिक्षुओ, पर्वतराज हिमालय के आश्रित रहते हुए महाशाल वृक्ष तीन तरह से वृद्धि को प्राप्त होते हैं। कौन सी तीन तरह से ?

"शाखायें तथा पत्ते बढ़ते हैं, छाल तथा पपड़ी बढ़ती है, फल्गु-सार में वृद्धि होती है। भिक्षुओ, पर्वतराज हिमालय के आश्रित रहते हुए महाशाल वृक्ष तीन तरह से वृद्धि को प्राप्त होते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ श्रद्धावान् कुल-पति के कारण उसके आश्रय में रहने वाले जनों में तीन बातों की वृद्धि होती है। कौन सी तीन बातों की ?

"श्रद्धा की वृद्धि होती है, शील की वृद्धि होती है, तथा प्रज्ञा की वृद्धि होती है। भिक्षुओ श्रद्धावान् कुल-पति के कारण उसके आश्रय में रहने वाले जनों में तीन बातों की वृद्धि होती है।

यथापि पब्बतो सेलो अरञ्ञस्मिं ब्रहावने
तं रुक्खं उपनिस्साय वड्ढन्ते ते वनस्पति
तथेव सीलसम्पन्नं सद्धं कुलपतिं इध
उपनिस्साय वड्ढन्ति पुत्तदारा च बन्धवा
अमच्चा ञातिसंघा च ये चस्स अनुजीविनो
त्यस्स सीलवतो सीलं चागं सुचरितानि च
पस्समाना नुकुब्बन्ति ये भवन्ति विचक्खणा
इध धम्मं चरित्वान मग्गं सुगतिगामिनं
नन्दिनो देवलोकस्मिं मोदन्ति कामकामिनो।

[जिस प्रकार घनघोर जंगल में शैल-पर्वत के आश्रय रहने वाले वृक्ष उसके कारण वृद्धि को प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार यहाँ श्रद्धावान् कुल-पति के आश्रय रहने वाले उसके कारण वृद्धि को प्राप्त होते हैं—पुत्र-कलत्र, बन्धु, अमात्य, जातिसंघ तथा अन्य आश्रित-जन। बुद्धिमान् जन उस सदाचारी के शील तथा त्याग का अनुकरण करते हैं। वे सुगतगामियों के मार्ग धर्म के अनुसार आचरण करके, इच्छाओं की पूर्ति होने से देव लोक में प्रसन्न हो मोद को प्राप्त होते हैं।]

(४९)

"भिक्षुओ, तीन बातों में प्रयत्न करना चाहिये। किन तीन बातों में ?

"जो अनुत्पन्न पाप हैं, अकुशल-धर्म हैं उनके उत्पन्न न होने देने के लिये प्रयत्न करना चाहिये; जो अनुत्पन्न कुशल-धर्म हैं उन के उत्पन्न करने के लिये

प्रयत्न करना चाहिये, जो दुःख-पूर्ण, तीव्र, प्रखर, कटु, प्रतिकूल, बुरी, प्राणहर शारीरिक वेदनाऐं हों उन्हें सहन करने का प्रयत्न करना चाहिये।

"भिक्षुओ, इन तीन बातों के लिये प्रयत्न करना चाहिये।

"भिक्षुओ, जब भिक्षु जो अनुत्पन्न पाप हैं, अकुशल-धर्म हैं उनके उत्पन्न न होने देने के लिये प्रयत्न करता है, जो उत्पन्न कुशल धर्म हैं उन के उत्पन्न करने के लिये प्रयत्न करता है, जो दुःखपूर्ण, तीव्र, प्रखर, कटु, प्रतिकूल, बुरी, प्राणहार शारीरिक वेदनाऐं होती हैं, उन्हें सहन करने का प्रयत्न करता है, तो भिक्षुओ, भिक्षु सम्यक् प्रकार से दुःख का अन्त करने वाला स्मृतिमान्, बुद्धिमान् प्रयत्नवान कहलाता है।"

(५०)

"भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त महाचोर सेंध भी लगाते हैं, लूटमार भी करते हैं, डाका भी डालते हैं, रास्ता भी घेरते हैं। कौन सी तीन बातों से?

"भिक्षुओ, इस सम्बन्ध में महाचोर विषम-आश्रित होता है, गहन-आश्रित होता है तथा बलवान्-आश्रित होता है।

"भिक्षुओ, महाचोर विषम-आश्रित कैसे होता है? भिक्षुओ, महाचोर नदियों के दुर्गम-स्थान में या पर्वतों के विषम-प्रदेश में रहता है। इस प्रकार भिक्षुओ, महाचोर विषम-आश्रित होता है। भिक्षुओ, महाचोर गहन-आश्रित कैसे होता है?

"भिक्षुओ, इस सम्बन्ध में महाचोर तिनकों के गहन-जंगल में छिपा होता है, वृक्षों के गहन जंगल में छिपा होता है, वन में छिपा होता है, महान् वन में छिपा होता है। इस प्रकार भिक्षुओ महाचोर गहन-आश्रित होता है।

"भिक्षुओ, महाचोर बलवान्-आश्रित कैसे होता है?

"भिक्षुओ, इस विषय में महाचोर राजाओं या राजाओंके महामात्योंका आश्रित होता है। उसके मन में होता है कि यदि मुझे कोई कुछ कहेगा तो ये राजा या राजाओं के महामात्य मेरा बचाव करेंगे। यदि उसे कोई कुछ कहता है तो ये राजा वा राजाओं के महामात्य उसका बचाव करते हैं। इस प्रकार भिक्षुओ, महाचोर बलवान्-आश्रित होता है। भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त महाचोर सेंध भी लगाते हैं, लूट-मार भी करते हैं, डाका भी डालते हैं, रास्ता भी घेरते हैं।"

२. "इसी प्रकार भिक्षुओ, तीन बातों से युक्त पापी भिक्षु अपनेको स्वयं चोट पहुँचाता है, सदोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दित होता है तथा बहुत अपुण्य लाभ करता है। कौन सी तीन बातों से ?

"भिक्षुओ, इस सम्बन्ध में पापी भिक्षु विषम-आश्रित होता है, गहन-आश्रित होता है तथा बलवान्-आश्रित होता है।

"भिक्षुओ, पापी भिक्षु विषम-आश्रित कैसे होता है ?

"भिक्षुओ, इस सम्बन्ध में पापी-भिक्षु विषम-शारीरिक-कर्म से युक्त होता है, विषम वाणी के कर्म से युक्त होता है, विषम मनो-कर्म से युक्त होता है। इस प्रकार भिक्षुओ, पापी भिक्षु विषम-आश्रित होता है।

"भिक्षुओ, पापी-भिक्षु गहन-आश्रित कैसे होता है ?

"भिक्षुओ, इस सम्बन्ध में पापी भिक्षु मिथ्या-दृष्टि होता है, दो सिरे की बातों से युक्त[1]। इस प्रकार भिक्षुओ, पापी भिक्षु गहन-आश्रित होता है।

"भिक्षुओ, पापी-भिक्षु बलवान-आश्रित कैसे होता है ?

"भिक्षुओ, इस विषय में पापी भिक्षु राजाओं या राजाओं के महामात्यों का आश्रित होता है। उस के मन में होता है कि यदि मुझे कोई कुछ कहेगा तो ये राजा या राजाओं के महामात्य मेरा बचाव करेंगे। यदि उसे कोई कुछ कहता है तो ये राजा या राजाओं के महामात्य उसका बचाव करते हैं। इस प्रकार भिक्षुओ, पापी-भिक्षु बलवान्-आश्रित होता है। इस प्रकार भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त पापी भिक्षु अपने को स्वयं चोट पहुँचाता है, सदोष होता है, विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दित होता है तथा बहुत अपुण्य लाभ करता है।"

(५१)

उस समय दो ब्राह्मण—जो जरा-जीर्ण थे, वृद्ध थे, बूढ़े थे, जिन की आयु बड़ी थी, जो वय-प्राप्त थे, जो एक सौ बीस वर्ष के थे—जहाँ भगवान् थे वहाँ गये। जाकर भगवान् को...........एक ओर बैठे उन ब्राह्मणों ने भगवान् को यह कहा—

"हे गौतम! हम ब्राह्मण हैं, जरा-जीर्ण हैं, वृद्ध हैं, बूढ़े हैं, हमारी आयु बड़ी है, हम वय-प्राप्त हैं, हम एक सौ बीस वर्ष के हैं। तो भी हमने शुभ-कर्म

---

१. काम-भोग-मय जीवन वा आत्म-क्लेशमय जीवन।

नहीं किये हैं। कुशल-कर्म नहीं किये हैं। हमारा भय से त्राण नहीं हुआ है। आप गौतम हमें उपदेश दें। आप गौतम हमारा अनुशासन करें, जो दीर्घ काल तक हमारे हित और सुख के लिए हो।"

"हे ब्राह्मणो! तुम निश्चय से जरा-जीर्ण हो, वृद्ध हो, बूढ़े हो, तुम्हारी आयु बड़ी है, तुम वय-प्राप्त हो, तुम एक सौ बीस वर्ष के हो। तो भी तुम ने शुभ-कर्म नहीं किये हैं। कुशल-कर्म नहीं किये हैं। तुम्हारा भय से त्राण नहीं हुआ है। हे ब्राह्मणो! यह संसार जरा, व्याधि तथा मरण द्वारा (खींचकर) ले जाया जाता है। इस प्रकार जरा, व्याधि तथा मरण द्वारा खींचकर ले जाये जाने वाले का संसार में जो यह शरीर, वाणी तथा मन का संयम है वही उस परलोक-प्राप्त व्यक्ति का त्राण है, वही आश्रय-स्थान है, वही द्वीप है, वही शरण-स्थान है, वही परायण है।

"उपनीयति जीवितं अप्पं आयु
जरूपनीतस्स न सन्ति ताणा
एतं भयं मरणे पेक्खमानो
पुञ्ञानि कयिराथ सुखावहानि

[अल्प-आयु जीवन को (खींचकर) ले जाती है। बूढ़ापे द्वारा (खींचकर) ले जाये जाने वाले के लिये कोई शरण स्थान नहीं है। मृत्यु के इस भय-भीत स्वरूप को देखकर मनुष्य को चाहिये कि वह सुखदायक पुण्य-कर्म करे।]

"जो शरीर वाणी तथा मन का संयम है, वह जीते जी पुण्य-करने वाले व्यक्ति के लिये परलोक-प्राप्त होने पर सुख का कारण होता है।"

(५२)

उस समय दो ब्राह्मण—जो जरा-जीर्ण थे, वृद्ध थे, बूढ़े थे, जिन की आयु बड़ी थी, जो वय-प्राप्त थे, जो एक सौ बीस वर्ष के थे—जहाँ भगवान् थे वहाँ गये। जाकर भगवान् को..........एक ओर बैठे उन ब्राह्मणों ने भगवान् को यह कहा :—

"हे गौतम! हम ब्राह्मण हैं, जरा-जीर्ण हैं, वृद्ध हैं, बूढ़े हैं, हमारी आयु बड़ी है, हम वय-प्राप्त हैं, हम एक सौ बीस वर्ष के हैं। तो भी हम ने शुभ-कर्म नहीं किये हैं। कुशल-कर्म नहीं किये हैं। हमारा भय से त्राण नहीं हुआ है।

आप गौतम हमें उपदेश दें। आप गौतम हमारा अनुशासन करें, जो दीर्घकाल तक हमारे हित और सुख के लिए हो।"

"हे ब्राह्मणो! तुम निश्चय से जरा-जीर्ण हो, वृद्ध हो, बूढ़े हो, तुम्हारी आयु बड़ी है, तुम वय-प्राप्त हो, तुम एक सौ बीस वर्ष के हो। तो भी तुम ने शुभ-कर्म नहीं किये हैं। कुशल-कर्म नहीं किये हैं। तुम्हारा भय से त्राण नहीं हुआ है। हे ब्राह्मणो! यह संसार जरा, व्याधि, मरण से जल रहा है। इस प्रकार जरा, व्याधि तथा मरण से प्रदीप्त संसारमें जो यह शरीर, वाणी, तथा मन का संयम है वह उस परलोक-प्राप्त व्यक्ति का त्राण है, वही आश्रय-स्थान है, वही द्वीप है, वही शरण-स्थान है, वही परायण है।

आदित्तस्मि अगारस्मिं यं नीहरति भाजनं
तं तस्स होति अत्थाय नो च यं तत्थ डय्हति
एवं आदीपितो लोको जराय मरणोन च
नीहरेथेव दानेन दिन्नं होति सुनीहतं।

[घरमें आग लगी हो तो जो बरतन उस आगमें से बचा लिया जाता है, वही काम आता है। जो बरतन आगमें जल जाता है, वह काम नहीं आता। इसी प्रकार यह संसार जरा तथा मरणसे जल रहा है। इसमेंसे दान देकर जो निकाला जा सके, निकाल ले। दान दिये का महान् फल है।]

"जो शरीर, वाणी तथा मनका संयम है, वह जीते जी पुण्य करने वाले व्यक्ति के लिऐ परलोक-प्राप्त होनेपर सुखका कारण होता है।"

(५३)

अुस समय एक ब्राह्मण जहां भगवान् थे वहां गया। जाकर भगवानके साथ.......एक ओर बैठे हुअे उस ब्राह्मणने भगवान्को यह कहा––

"हे गौतम! धर्मको 'सांदृष्टिक' कहा जाता है। कौनसा गुण होनेसे धर्म सांदृष्टिक (=इस लोक सम्बन्धी) होता है, अकालिक (=समयकी सीमासे परे,) एहिपस्सिक (= जिसके बारेमें कहा जा सके कि आओ और स्वयं देख लो,) ओपनयिक निर्वाणकी (= ओर ले जानेवाला) तथा प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात किया जा सकनेवाला?"

"हे ब्राह्मण ! जिसका चित्त रागसे अनुरक्त है, रागसे अभिभूत है, रागके वशीभूत है, वह अपने अहितकी भी बात सोचता है, दूसरेके अहितकी भी बात सोचता है, दोनोंके अहितकी भी बात सोचता है तथा चैतसिक-दुःख, दौर्मनस्यका अनुभव करता है। रागका नाश हो जानेपर न वह अपने अहितकी बात सोचता है, न दूसरेके अहितकी बात सोचता है, न दोनोंके अहितकी बात सोचता है तथा न चैतसिक-दुःख दौर्मनस्य का अनुभव करता है। हे ब्राह्मण ! इस प्रकार भी धर्म सांदृष्टिक होता है.........

"हे ब्राह्मण ! जिसका चित्त द्वेषसे दूषित है, द्वेषसे अभिभूत है, द्वेषके वशीभूत है, वह अपने अहितकी भी बात सोचता है, दूसरेके अहितकी भी बात सोचता है, दोनों के अहितकी भी बात सोचता है तथा चैतसिक-दुःख दौर्मनस्यका अनुभव करता है। द्वेषका नाश हो जाने पर न वह अपने अहितकी बात सोचता है, न दूसरेके अहितकी बात सोचता है, न दोनोंके अहितकी बात सोचता है तथा न चैतसिक-दुःख दौर्मनस्यका अनुभव करता है। हे ब्राह्मण ! इस प्रकार भी धर्म सांदृष्टिक होता है........

"हे ब्राह्मण ! जिसका चित्त मोहसे मूढ़ है, मोहसे अभिभूत है, मोहके वशीभूत है, वह अपने अहितकी भी बात सोचता है, दूसरेके अहितकी भी बात सोचता है, दोनोंके अहितकी भी बात सोचता है तथा चैतसिक-दुःख दौर्मनस्यका अनुभव करता है। मोहका नाश हो जानेपर न वह अपने अहितकी बात सोचता है, न दूसरेके अहितकी बात सोचता है, न दोनोंके अहितकी बात सोचता है तथा न चैतसिक-दुःख दौर्मनस्यका अनुभव करता है। हे ब्राह्मण ! इस प्रकार भी धर्म सांदृष्टिक होता है......"

"हे गौतम ! सुन्दर है....आप गौतम आजसे जीवन पर्य्यंत मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

(५४)

उस समय एक ब्राह्मण परिव्राजक जहाँ भगवान् थे वहाँ गया......एक और बैठे हुए ब्राह्मण परिव्राजकने भगवान् को यह कहा—"हे गौतम ! धर्म को 'सांदृष्टिक' कहा जाता है। कौनसा गुण होनेसे धर्म सांदृष्टिक (= इस लोक सम्बन्धी) होता है, अकालिक (समयकी सीमासे परे) एहिपस्सिक (जिसके बारेमें कहा जा सके कि आओ

और स्वयं देख लो), ओपनयिक (निर्वाण की ओर ले जानेवाला) तथा प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात किया जा सकने वाला।"

"हे ब्राह्मण! जिसका चित्त रागसे.... वह अपने अहितकी बात.. (५३) ....अनुभव करता है। रागका नाश हो जानेपर.....अनुभव करता है।

"हे ब्राह्मण! जिसका चित्त रागसे.... शरीरसे दुष्कर्म करता है, वाणीसे ......मनसे दुष्कर्म करता है। रागका नाश होनेपर न शरीरसे दुष्कर्म करता है, न वाणीसे....न मन से दुष्कर्म करता है।

"हे ब्राह्मण! जिसका चित्त रागसे... वह यथार्थ आत्मार्थ भी नहीं जानता है, यथार्थ परार्थ भी नहीं जानता है, यथार्थ उभयार्थ भी नहीं जानता है। रागका नाश हो जानेपर यथार्थ आत्मार्थ भी जानता है, यथार्थ परार्थ भी जानता है, यथार्थ उभयार्थ भी जानता है। इसी प्रकार ब्राह्मण! धर्म सांदृष्टिक होता है......

"हे ब्राह्मण! जिसका चित्त द्वेष से.....

"हे ब्राह्मण! जिसका चित्त मोहसे मूढ़ है...वह अपने अहितकी बात.. अनुभव करता है। मोहका नाश हो जानेपर...अनुभव करता है।

"हे ब्राह्मण! जिसका चित्त मोहसे मूढ़ है...शरीरसे दुष्कर्म करता है, वाणीसे....मनसे दुष्कर्म करता है। मोहका नाश होने पर न शरीरसे दुष्कर्म करता है, न वाणीसे ....न मनसे दुष्कर्म करता है।

"हे ब्राह्मण! जिसका चित्त मोहसे मूढ़ है....वह यथार्थ आत्मार्थ भी नहीं जानता है, यथार्थ परार्थ भी नहीं जानता है, यथार्थ उभयार्थ भी नहीं जानता है। मोहका नाश हो जानेपर यथार्थ आत्मार्थ भी जानता है, यथार्थ परार्थ भी जानता है, यथार्थ उभयार्थ भी जानता है,। हे ब्राह्मण! इस प्रकार भी सांदृष्टिक....

"हे गौतम! सुन्दर है.....आप गौतम आजसे जीवन पर्य्यंत मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

(५५)

उस समय जाणुस्सोणी ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे वहाँ गया.....एक ओर बैठे जाणुस्सोणी ब्राह्मण ने भगवान् को यह कहा—

"हे गौतम! निर्वाण को 'सांदृष्टिक' कहा जाता है। कौनसा गुण होनेसे निर्वाण 'सांदृष्टिक' होता है, अकालिक, एहिपस्सिक, ओपनयिक तथा प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात किया जा सकने वाला।

"हे ब्राह्मण! जिसका चित्त रागसे....वह अपने अहितकी बात...(५४) .....दोनोंके अहितकी बात.....अनुभव करता है। रागका नाश हो जानेपर .....न वह अपने अहित.....न दोनोंके अहितकी बात....अनुभव करता है। हे ब्राह्मण! अिस प्रकार निर्वाण 'सांदृष्टिक' होता है.....

"हे ब्राह्मण! जिसका चित्त द्वेषसे दूषित है....

"हे ब्राह्मण! जिसका चित्त मोहसे मूढ़ है....वह अपने अहितकी बात ......अनुभव करता है। मोहका नाश होजाने पर.....न वह अपने अहितकी बात.....न दोनोंके अहितकी बात....अनुभव करता है। हे ब्राह्मण! अिस प्रकार निर्वाण 'सांदृष्टिक' होता है, अकालिक, एहिपस्सिक, ओपनयिक तथा प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात किया जा सकनेवाला।"

"हे गौतम! सुन्दर है....आप गौतम आजसे जीवन-पर्य्यंत मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

(५६)

उस समय एक महाशाल ब्राह्मण जहाँ भगवान् (बुद्ध) थे, वहाँ गया।.... एक ओर बैठे हुए उस महाशाल ब्राह्मणने भगवान्‌को यह कहा--

"हे गौतम! मैंने बड़े-बूढ़े आचार्य-प्राचार्य पूर्वके ब्राह्मणोंसे सुना है कि पहले यह संसार इतना अधिक बसा हुआ था, मानों अवीची नरक हो, ग्राम निगम तथा राजधानियों में मनुष्योंकी इतनी अधिक बसती थी कि मानों मुर्गे-मुर्गी भरे हों।

"हे गौतम! इसका क्या कारण है, क्या प्रत्यय है जिससे अब मनुष्योंका क्षय हो गया है, कमी दिखाअी दे रही है, ग्राम अग्राम हो गये हैं, निगम अनिगम हो गये हैं, नगर अनगर हो गये हैं तथा जनपद अजनपद।"

"ब्राह्मण! अब मनुष्य अधर्म-रागानुरक्त हैं, विषय-लोभ के वशीभूत हैं, मिथ्याधर्मके अनुयाअी हैं। वे अधर्म-रागानुरक्त होनेके कारण, विषय-लोभके वशीभूत होनेके कारण, मिथ्या-धर्मके अनुयायी होनेके कारण, तेज शस्त्र लेकर परस्पर एक

दूसरेकी जान लेते हैं। इससे बहुत मनुष्य मृत्युको प्राप्त होते हैं। हे ब्राह्मण ! यह भी एक कारण है, यह भी एक प्रत्यय है जिससे अब मनुष्योंका क्षय हो गया है, कमी दिखाओी दे रही है, ग्राम अग्राम हो गये हैं, निगम अनिगम हो गये हैं, नगर अनगर हो गये हैं तथा जनपद अजनपद।

"फिर ब्राह्मण ! अब मनुष्य अधर्म-रागानुरक्त हैं, विषय-लोभके वशीभूत हैं, मिथ्याधर्मके अनुयायी हैं। उनके अधर्मरागानुरक्त होनेके कारण, विषय-लोभके वशीभूत होनेके कारण, मिथ्या-धर्मके अनुयाओी होनेके कारण देव भी अच्छी तरह नहीं बरसते। इससे दुर्भिक्ष होता है, खेती नहीं होती, टिड्डियाँ खा जाती हैं, डण्ठलोंमें दाना नहीं पड़ता। इससे बहुत मनुष्य मृत्युको प्राप्त होते हैं। हे ब्राह्मण, यह भी एक कारण है, यह भी एक प्रत्यय है जिससे अब मनुष्योंका क्षय हो गया है कमी दिखाई दे रही है, ग्राम अग्राम हो गये हैं, निगम अनिगम हो गये हैं, नगर अनगर हो गये हैं, तथा जनपद अजनपद।

"फिर ब्राह्मण ! अब मनुष्य अधर्मरागानुरक्त हैं, विषय-लोभके वशीभूत हैं, मिथ्या धर्मके अनुयायी हैं। उनके अधर्मरागानुरक्त होनेके कारण, विषय-लोभके वशीभूत होनेके कारण, मिथ्या-धर्मके अनुयाओी होनेके कारण यक्षराज यक्षोंको मनुष्य-पथ पर छोड़ देते हैं। इससे बहुत मनुष्य मृत्युको प्राप्त होते हैं। हे ब्राह्मण ! यह भी एक कारण है, यह भी एक प्रत्यय है जिससे अब मनुष्योंका क्षय हो गया है, कमी दिखाओी देती है, ग्राम अग्राम हो गये हैं, निगम अनिगम हो गये हैं, नगर अनगर हो गये हैं तथा जनपद अजनपद।"

"हे गौतम ! सुन्दर है......आप गौतम आजसे जीवन पर्य्यंत मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

(५७)

उस समय वत्स-गोत्र परिब्राजक जहाँ भगवान् थे, वहाँ गया। ...एक ओर बैठे वत्स-गोत्र परिब्राजकने भगवान्से कहा—"हे गौतम ! मैंने यह सुना है कि श्रमण गौतम ऐसा कहता है कि मुझे ही दान देना चाहिए, अन्योंको नहीं; मेरे ही श्रावकों (शिष्यों) को दान देना चाहिये, अन्योंको नहीं ; मुझे ही देनेसे महान फल होता है, अन्योंको देनेसे महान् फल नहीं होता, मेरे ही श्रावकोंको देनेसे महान् फल होता है, अन्योंको देनेसे नहीं। हे गौतम ! जो ऐसा कहता है कि श्रमण

गौतम ऐसा कहता है कि 'मुझे ही दान......देनेसे नहीं,' क्या वे आप गौतमके कथनानुसार कहने वाले हैं, क्या वे आप गौतम पर झूठा आरोप तो नहीं लगाते? क्या वे आपके धर्मकी धार्मिक व्याख्या करते हैं? इससे आपका सहेतुक मत आलोच्य तो नहीं हो जाता? हम आप गौतम पर मिथ्या दोषारोपण नहीं करना चाहते।"

"हे वत्स! जो यह कहते हैं कि श्रमण गौतम ऐसा कहता है कि मुझे ही दान ....देनेसे नहीं, वे मेरे कथनानुसार कहनेवाले नहीं हैं, वे मुझपर झूठा आरोप लगाते हैं। हे वत्स! जो किसी दूसरेको दान देनेसे रोकता है वह तीनके रास्तेमें रुकावट बनता है, तीनकी हानि करनेवाला होता है। कौनसे तीन की?

"दाता के पुण्य-लाभ में बाधक होता है, प्रति-ग्राहक की प्राप्ति में बाधक होता है और सबसे पहले अपनी ही हानि करनेवाला होता है। वत्स! जो किसी दूसरेको दान देनेसे रोकता है वह इन तीनके रास्तेमें रुकावट बनता है, तीनकी हानि करनेवाला होता है। वत्स! मेरा तो यह कहना है कि गूथ-कूप वा गन्दे गढ़ेमें भी जो कीड़े रहते हैं उनके लिअे भी यदि कोअी थालीका धोवन या कसोरेका धोवन फेंकता है कि इससे उसमें रहनेवाले कीड़े जीते रहें, उससे भी, हे वत्स! मैं पुण्यकी प्राप्ति कहता हूँ। मनुष्योंको दान देनेकी बातका तो क्या ही कहना।

"किन्तु, वत्स! मैं शीलवान् को दान देनेका महान् फल कहता हूँ, वैसा दुःशीलको नहीं। शीलवान्‌में पांच बातें नहीं होतीं और वह पांच बातोंसे युक्त होता है।

"कौनसी पांच बातें नहीं होतीं?

"काम-छन्द नहीं होता, व्यापाद (क्रोध) नहीं होता, थीन-मिद्ध (आलस्य) नहीं होता, उद्धच्च-कौकृत्य (उद्धतपन) नहीं होता, विचिकित्सा (सन्देह) नहीं होता। ये पांच बातें नहीं होतीं।

"कौनसी पांच बातें होती हैं?

"अशैक्ष शील-स्कन्धसे युक्त होता है, अशैक्ष समाधि-स्कन्धसे युक्त होता है, अशैक्ष प्रज्ञास्कन्धसे युक्त होता है, अशैक्ष विमुक्ति-स्कन्धसे युक्त होता है, अशैक्ष विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन-स्कन्धसे युक्त होता है। इन पांच बातोंसे युक्त होता है।

"ऊपरकी पांच बातोंसे रहित तथा इन पांच बातोंसे युक्तको जो दान दिया जाता है, उसका महान् फल होता है—यह कहता हूँ।"

इति कण्हासु सेतासु रोहिणीसु हरीसु वा
कम्मासासु सरूपासु गोसु पारेवतासु वा
यासु कासु च एतासु दन्तो जायति पुंगवो
धोरय्हो बलसम्पन्नो कल्याणजवनिक्खमो
तं एव भारे युञ्जन्ति नास्स वण्णं परिक्खरे
एवमेव मनुस्सेसु यस्मिं कस्मिञ्च जातियं
खत्तिये ब्राह्मणे वेस्से सुद्दे चण्डालपुक्कुसे
यासु कासु च एतासु दन्तो जायति सुब्बतो
धम्मट्ठो सीलसम्पन्नो सच्चवादी हिरीमतो
पहीन जातिमरणो ब्रह्मचरियस्स केवली
पन्नभारो विसंयुत्तो कतकिच्चो अनासवो
पारगू सब्बधम्मानं अनुपादाय निब्बुतो
तस्मिं येव विरजे खेत्ते विपुला होति दक्खिणा
बाला च अविजानन्ता दुम्मेधा अस्सुताविनो
बहिद्धा ददन्ति दाना न हि सन्ते उपासरे
ये च सन्ते उपासेन्ति सप्पञ्ञे धीरसम्मते
सद्धा च तेसं सुगते मूलजाता पतिट्ठिता
देवलोकं च ते यन्ति कुले वा इध जायरे
अनुपुब्बेन निब्बानं अधिगच्छन्ति पण्डिता ।।

[चाहे कृष्ण-वर्णकी हों, चाहे श्वेत वर्णकी हों, चाहे लोहित-वर्ण की हों, चाहे पीले या हरे वर्णकी हों, चाहे चितकबरे रंगकी हों, चाहे अपने बछड़ों जैसी हों और चाहे कबूतरी रंगकी हों—इनमेंसे जिस किसी की कोखसे भी संयत, भार ढो सकने वाला, शक्ति-सम्पन्न, अच्छी-गतिवाला वृषभ जन्म ग्रहण करता है, उसे ही भार ढोनेके लिये जोत दिया जाता है, उसके वर्णकी परीक्षा नहीं की जाती। इसी प्रकार मनुष्योंमें भी—जिस तिस जातिमें—चाहे क्षत्रिय जातिमें, चाहे ब्राह्मण जातिमें, चाहे वैश्य जातिमें, चाहे शूद्र जातिमें, चाहे चण्डाल जातिमें और चाहे पुक्कस जातिमें, जो कोई भी संयत, सुव्रत, धर्म-स्थित, शीलसम्पन्न, सत्यवादी, लज्जा-युक्त, जाति-मरणके बन्धनोंसे मुक्त, सर्वथा ब्रह्मचारी, भार-विहीन, बंधन-मुक्त

कृतकृत्य, आश्रव-हीन, सब धर्मोंमें पारंगत, उपादान-स्कन्धोंके बन्धनसे मुक्त, तथा निर्वाण-प्राप्त जन्मग्रहण करता है उसी रज-रहित (पुण्य-) क्षेत्रमें दान देनेसे दक्षिणा विपुल होती है। जो मूर्ख हैं, जो अजानकार हैं, जो दुर्बुद्धि हैं, जो अज्ञानी हैं वे इनसे बाहर लोगोंको दान देते हैं, वे शान्त जनोंकी सेवा नहीं करते। जो धैर्यवान, प्रज्ञावान्, शान्तजनोंकी सेवा करते हैं, उनकी श्रद्धा सुगत (बुद्ध) के प्रति मूलरूप से प्रतिष्ठित है। वे देवलोकको प्राप्त होते हैं तथा यहाँ (श्रेष्ठ) कुलमें जन्म लेते हैं। ऐसे पण्डितजन क्रमशः निर्वाणको प्राप्त होते हैं।]

(५८)

उस समय त्रिककर्ण ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे वहाँ गया। पास जाकर भगवानके साथ..... । एक ओर बैठे हुए त्रिकर्ण ब्राह्मणने भगवान्के सामने त्रि-विद्य ब्राह्मणोंका गुणनुवाद करना आरम्भ किया —त्रिविद्य ब्राह्मण ऐसे होते हैं, त्रि-विद्य ब्राह्मण ऐसे होते हैं!

भगवानने पूछा—ब्राह्मण! ब्राह्मण लोग ब्राह्मणोंके त्रि-विद्या-पनकी कैसी व्याख्या करते हैं?

"हे गौतम! त्रि-विद्य ब्राह्मण माता तथा पिता दोनोंकी ओरसे सुजन्मा होता है, सात पीढ़ियों तक शुद्ध होता है, उस पर जातिवादकी दृष्टिसे कोई दोष नहीं लगा होता, वह अध्यायक होता है, वह मन्त्र-धर होता है, वह निघण्टु-केटुभ सहित तीनों वेदोंका—जिनके अक्षर आदि[1] भेद हैं—पारंगत होता है तथा अितिहास जिनमें पांचवाँ माना जाता है, ऐसे चारों वेदोंका। वह पदोंका जानकार होता है, व्याख्याकार होता है तथा लोकायत-महापुरुष-लक्षणोंका सम्पूर्ण जानकार होता है। हे गौतम! अिस प्रकार ब्राह्मण लोग ब्राह्मणोंके त्रि-विद्या पन की व्याख्या करते हैं।"

"हे ब्राह्मण! ब्राह्मण लोग ब्राह्मणोंके त्रि-विद्यापनकी व्याक्ख्या दूसरी तरहसे करते हैं,किन्तु आर्य-विनय (=सद्धर्म) में त्रि-विद्यापन दूसरी प्रकारसे होता है।"

"हे गौतम! आर्य-विनय (=सद्धर्म) में त्रि-विद्या पन कैसे होता है? अच्छा हो आप गौतम मुझे वैसा धर्मोपदेश दें जैसे आर्य-विनयमें त्रिविद्यापन होता है।"

"तो ब्राह्मण! सुन! अच्छी तरह मनमें जगह दे। कहता हूँ।"

---

१ शिक्षा, निरुक्त आदि।

२. "बहुत अच्छा" कह त्रिकर्ण ब्राह्मण भगवान् की बात सुनने लगा। भगवान्‌ने ऐसा कहा—

'हे ब्राह्मण! भिक्षु काम-वितर्क से रहित हो प्रथम-ध्यानको प्राप्तकर विचरता है, जिसमें वितर्क और विचार रहते हैं, जो एकान्त-वाससे उत्पन्न होता है तथा जिसमें प्रीति और सुख रहते हैं। फिर वह वितर्क और विचारोंके उपशमनसे अन्दरकी प्रसन्नता और एकाग्रतारूपी द्वितीय ध्यानको प्राप्तकर विचरता है, जिसमें न वितर्क होते हैं, न विचार, जो समाधिसे उत्पन्न होता है और जिसमें प्रीति तथा सुख रहते हैं। फिर वह प्रीतिसे भी विरक्त हो उपेक्षावान् बन विचरता है। वह स्मृतिमान्, ज्ञानवान् होता है और शरीरसे सुखका अनुभव करता है। वह तृतीय ध्यानको प्राप्त करता है, जिसे पंडितजन 'उपेक्षावान् स्मृतिवान् सुखपूर्वक बिहार करने वाला' कहते हैं। फिर वह सुख और दुःख दोनोंके प्रहाणसे, सौमनस्य और दौर्मनस्यके पहले ही अस्त हुए रहनेसे (उत्पन्न) चतुर्थ-ध्यानको प्राप्तकर विचरता है जिसमें न दुःख होता है है और न सुख; होती है (केवल) उपेक्षा तथा स्मृतिकी परिशुद्धि।

३. वह इस प्रकारके शुद्ध, स्वच्छ, दोष-रहित, क्लेश-मुक्त चित्तके मृदु-भाव प्राप्तकर लेने पर तथा चंचलता-रहित हो जाने पर उसे पूर्व-जन्म-स्मरणकी ओर झुकाता है। वह अनेक प्रकारके पूर्वजन्मोंका अनुस्मरण करता है——जैसे एक जन्म भी, दो जन्म भी, तीन जन्म भी, चार जन्म भी, पांच जन्म भी, दस जन्म भी, बीस जन्म भी, तीस जन्म भी, चालीस जन्म भी, पचास जन्म भी, सौ जन्म भी, हजार-जन्म भी, लाख जन्म भी, अनेक संवर्तकल्प, अनेक विवर्तकल्प, अनेक संवर्त-विवर्त-कल्प——मैं अमुक स्थानपर था, यह नाम था, यह गोत्र था, ऐसा वर्ण था, ऐसा खाना था, अिस प्रकारका सुख-दुःख भोगा था, अितनी आयु तक जीता रहा, फिर वहाँ से च्युत होकर अमुक जगह उत्पन्न हुआ, वहाँ भी यह नाम था, यह गोत्र था, ऐसा वर्ण था ऐसा आहार था, ऐसा सुख-दुःख भोगा, अितनी आयु-पर्यंत, फिर वहाँसे च्युत होकर यहाँ उत्पन्न हुआ। इस प्रकार तथा आकार उद्देश्य सहित अनेक प्रकारके पूर्व जन्मोंका स्मरण करता है। यह उसकी प्राप्तकी हुई प्रथम-विद्या होती है, अविद्याका नाश हो गया, विद्या उत्पन्न हो गयी, अन्धकार जाता रहा, प्रकाश उत्पन्न हो गया——यह उस अप्रमादीको, आलस्य-रहित होकर प्रयत्न करनेसे ही प्राप्त हुआ।

४. वह इस प्रकारके शुद्ध, स्वच्छ, दोष-रहित, क्लेश-मुक्त चित्तके मृदु भाव प्राप्त कर लेनेपर तथा चंचलता-रहित हो जाने पर उसे च्युति तथा उत्पत्तिके ज्ञानकी ओर झुकाता है। वह दिव्य, विशुद्ध, अमानुषी चक्षुसे च्युत होते तथा उत्पन्न होते प्राणियोंको देखता है। वह निकृष्ठ-श्रेष्ठ, सुवर्ण-दुर्वर्ण, सुगतिप्राप्त-दुर्गतिप्राप्त प्राणियोंको जानता है——ये प्राणी शारीरिक दुष्कर्मसे युक्त हैं, वाणीके दुष्कर्मसे युक्त हैं, मनके दुष्कर्मसे युक्त हैं, आर्यों (= श्रेष्ठ जनों) के निन्दक हैं, मिथ्या-दृष्टि हैं तथा मिथ्या-कर्मी हैं, वे शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, नरक दुर्गति, दोज़ख, जहन्नुममें उत्पन्न हुए हैं, अथवा ये प्राणी शारीरिक शुभ-कर्मसे युक्त है, वाणीके शुभ-कर्मसे युक्त हैं, मनके शुभ-कर्मसे युक्त हैं, आर्यों (श्रेष्ठजनों) के प्रशंसक हैं, सम्यक्-दृष्टि हैं तथा सम्यक् कर्मी हैं, वे शरीर छूटनेपर मरनेके अनन्तर, सुगति, स्वर्ग-लोकमें उत्पन्न हुए। इस प्रकार वह दिव्य, विशुद्ध, अमानुषी चक्षुसे च्युत होते तथा उत्पन्न होते प्राणियोंको देखता है। वह निकृष्ठ-श्रेष्ठ, सुवर्ण, दुर्वर्ण, सुगतिप्राप्त—दुर्गति-प्राप्त प्राणियोंको जानता है। यह उसकी प्राप्तकी हुआी दूसरी विद्या होती है, अविद्याका नाश हो गया, विद्या उत्पन्न हो गयी, अन्धकार जाता रहा, प्रकाश उत्पन्न हो गया——यह उस अप्रमादीको, आलस्य-रहित होकर प्रयत्न करनेसे ही प्राप्त हुआ।

५. इस प्रकार वह शुद्ध, स्वच्छ, दोष-रहित, क्लेश-मुक्त, चित्तके मृदु-भाव प्राप्त कर लेनेपर तथा चंचलता-रहित हो जाने पर चित्तको आस्रवोंके क्षयके ज्ञानकी ओर झुकाता है। यह दुःख है, इसे वह यथार्थ रूपसे जानता है, यह दुःख-समुदय है, इसे वह यथार्थ रूपसे जानता है, यह दुःख-निरोधकी ओर ले जानेवाला मार्ग है, इसे वह यथार्थ-रूपसे जानता है। ये आस्रव हैं, इसे वह यथार्थ रूपसे जानता है...... यह आस्रव-निरोध की ओर ले जानेवाला मार्ग है, इसे वह यथार्थ रूपसे जानता है। उसके इस प्रकार जानते हुए इस प्रकार देखते हुए के कामास्रव भी चितको छोड़ देते हैं, भवास्रव भी चित्तको छोड़ देते हैं, अविद्यास्रव भी चित्तको छोड़ देते हैं, विमुक्त हो जानेपर, विमुक्त हूँ, यह ज्ञान भी होता है——जन्म क्षीण होगया, ब्रह्मचर्य-वास पूरा हो गया, कृतकृत्य हो गया। वह यह जानता है कि अब यहाँ जन्म लेनेका कुछ भी कारण नहीं रहा। यह उसकी प्राप्त की हुई तीसरी विद्या होती है, अविद्याका नाश हो गया, विद्या उत्पन्न हो गयी, अन्धकार जाता रहा, प्रकाश उत्पन्न हो गया——यह उस अप्रमादीको आलस्य रहित होकर प्रयत्न करनेसे ही प्राप्त हुआ।

२. अनुच्चावचसीलस्स निपकस्सच झायिनो
चित्तं यस्स वसीभूतं एकग्गं सुसमाहितं
तं वे तमोनुदं धीरं तेविज्जं मच्चुहायिनं
हितं देवमनुस्सानं आहु सच्चपहायिनं
तीहि विज्जाहि सम्पन्नं असम्मूळ्हविहारिनं
बुद्धं अन्तिमसारीरं तं नमस्सन्ति गोतमं
पुब्बेनिवासं यो वेदी सग्गापायंच पस्सति
अथो जातिक्खयं पत्तो अभिञ्ञावोसितोमुनि
एताहि तीहि विज्जाहि तेविज्जो होति ब्राह्मणो
तं अहं वदामि तेविज्जं नञ्ञं लपितलापनं ।

[जिसका शील ऊँचा-नीचा नहीं है, जो बुद्धिमान् है, जो ध्यानी है, जिसका चित्त वशमें है, जो एकाग्र है, जो समाहित है, उस अन्धकार-नाशकको, धैर्य वानको, त्रि-विद्या वालेको, मृत्युजयीको, सर्वस्व त्यागीको देवमनुष्योंका हित करने वाला कहा गया है । जो तीन विद्याओंसे युक्त है, जो ज्ञानयुक्त विहरता है, जो अन्तिम देहधारी है, जो बुद्ध है, उस गौतम को (लोग) नमस्कार करते हैं । जो पूर्व-जन्मोंको जानता है, जो स्वर्ग-नरक को देखता है, जो जन्मके क्षयको जानता है, जो अभिज्ञा-प्राप्त है, जो मुनि है, वह ब्राह्मण (=श्रेष्ठ-पुरुष) इन तीन विद्याओंसे त्रिविद्य होता है । मैं उसे ही त्रिविद्य कहता हूँ, किसी दूसरे प्रलापीको नहीं ।]

(५९)

उस समय जानु-श्रोणी ब्राह्मण जहाँ भगवान थे वहाँ गया । . . . एक ओर बैठे हुए जानु-श्रोणी ब्राह्मणने भगवान्से कहा—

"हे गौतम ! जिसके यहाँ यज्ञ हो, श्राद्ध हो, थाली-पाक हो, दातव्य हो, उसे त्रि-विद्य ब्राह्मणोंको ही दान देना चाहिऐ ।"

"ब्राह्मण ! ब्राह्मण लोग ब्राह्मणोंके त्रि-विद्या-पनकी कैसी व्याख्या करते हैं ?"

"हे गौतम ! त्रि-विद्य ब्राह्मण माता तथा पिता दोनों की ओरसे सुजात होता है, सात पीढ़ियों तक शुद्ध होता है, उस पर जाति-वादकी दृष्टिसे कोई दोष नहीं लगा होता, वह अध्यायक होता है, वह मन्त्र-धर होता है, वह निघण्टु-केटुभ

सहित तीनों वेदोंका –जिनके अक्षर आदि भेद हैं—पारंगत होता है तथा इतिहास जिनमें पांचवां माना जाता है, ऐसे चारों वेदोंका। वह पदोंका जानकार होता है, व्याख्याकार होता है तथा लोकायत महापुरुष लक्षणोंका सम्पूर्ण जानकार होता है। हे गौतम ! इस प्रकार ब्राह्मण लोग ब्राह्मणोंके त्रिविद्यापनकी व्याख्या करते हैं।"

"हे ब्राह्मण ! ब्राह्मण लोग ब्राह्मणोंके त्रिविद्यापनकी व्याख्या दूसरी तरहसे करते हैं, किन्तु आर्य-विनय (=सद्धर्भ) में त्रि-विद्यापन दूसरी प्रकारसे होता है।"

"हे गौतम ! आर्य-विनय (=सद्धर्भ) में त्रि-विद्यापन कैसे होता है ? अच्छा हो आप गौतम मुझे वैसा धर्मोपदेश दें जैसे आर्य-विनयमें त्रिविद्यापन होता है।"

"तो ब्राह्मण ! सुन। अच्छी तरह मनमें जगह दे। कहता हूँ।"

"बहुत अच्छा" कह जानुश्रोणी ब्राह्मण भगवान्‌की बात सुनने लगा। भगवान्‌ने ऐसा कहा—

"हे ब्राह्मण ! भिक्षु काम-वितर्कसे रहित हो.....चतुर्थ ध्यानको प्राप्तकर विचरता है.....स्मृतिकी भी परिशुद्धि।

"वह इस प्रकारके शुद्ध, स्वच्छ, दोष-रहित, क्लेश-मुक्त चित्तके मृदु-भाव प्राप्त कर लेने पर तथा चंचलता-रहित हो जानेपर उसे पूर्व-जन्म-स्मरण की ओर झुकाता है। वह अनेक प्रकारके पूर्व-जन्मोंका अनुस्मरण करता है—जैसे एक-जन्म भी, दो-जन्म भी......इस प्रकार आकार तथा उद्देश्य सहित अनेक प्रकारके पूर्व जन्मोंका स्मरण करता है। यह उसकी प्राप्त की हुई प्रथम-विद्या होती है, अविद्याका नाश हो गया, विद्या उत्पन्न हो गयी, अन्धकार जाता रहा, प्रकाश उत्पन्न हो गया, यह उस अप्रमादीको आलस्य रहित होकर प्रयत्न करनेसे ही प्राप्त हुआ।

"वह इस प्रकारके शुद्ध, स्वच्छ, दोष-रहित क्लेश-मुक्त चित्तके मृदुभाव प्राप्तकर लेनेपर तथा चंचलता-रहित हो जानेपर उसे च्युति तथा उत्पत्तिके ज्ञानकी ओर झुकाता है। वह दिव्य, विशुद्ध, अमानुषी चक्षुसे......प्राणियोंको जानता है। यह उसकी प्राप्त की हुई दूसरी विद्या होती है, अविद्याका नाश हो गया, विद्या उत्पन्न हो गयी, अन्धकार जाता रहा, प्रकाश उत्पन्न हो गया—यह उस अप्रमादीको आलस्य रहित होकर प्रयत्न करनेसे ही प्राप्त हुआ।

"इस प्रकार वह शुद्ध, स्वच्छ, दोष-रहित, क्लेष-मुक्त चित्तके मृदु भाव प्राप्त कर लेने पर तथा चंचलता रहित हो जानेपर चित्तको आस्रवोंके क्षय के

ज्ञानकी ओर झुकाता है। यह दुःख है, इसे वह यथार्थ रूपसे जानता है।....यह दुःख-निरोधकी ओर ले जाने वाला मार्ग है, इसे वह यथार्थ रूपसे जानता है। उसके इस प्रकार जानते हुए के, इस प्रकार देखते हुए के, कामास्रव भी चित्तको छोड़ देते हैं, भवास्रव भी चित्तको छोड़ देते हैं, विमुक्त हो जानेपर विमुक्त हूँ, यह ज्ञान भी होता है—जन्म क्षीण हो गया, ब्रह्मचर्य-वास पूरा हो गया, कृतकृत्य हो गया। वह यह जानता है कि अब यहाँ जन्म लेनेका कुछ भी कारण नहीं रहा। यह उसकी प्राप्त की हुई तीसरी विद्या होती है, अविद्याका नाश हो गया, विद्या उत्पन्न हो गयी, अन्धकार जाता रहा, प्रकाश उत्पन्न हो गया—यह उस अप्रमादीको आलस्य-रहित होकर प्रयत्न करनेसे ही प्राप्त हुआ।

सो सीलब्बतसम्पन्नो पहितत्तो समाहितो
चित्ते यस्स वसीभूतं एकग्गं सुसमाहितं
पुब्बेनिवासं यो वेदी सग्गापायं च पस्सति
अथो जातिक्खयं पत्तो अभिञ्ञावोसितोमुनि
एताहि तीहि विज्जाहि तेविज्जो होति ब्राह्मणो
तं अहं वदामि तेविज्जं नाञ्ञं लपितलापनं

[जो वह शील-व्रतसे युक्त है, जो प्रयत्न-शील है, जो समाहित है, जिसका चित्त उसके वशमें है, जो एकाग्र-चित्त है, जो सम्यक् रूपसे समाहित है, जो पूर्व-जन्मको जानता है, जो स्वर्ग-नरकको देखता है, जो जन्मके क्षयको जानता है, जो अभिज्ञा-प्राप्त है, जो मुनि है, वह ब्राह्मण (=श्रेष्ठ-पुरुष) इन तीन विद्याओंसे त्रिविद्य होता है। मैं केवल उसे ही त्रिविद्य कहता हूँ, किसी दूसरे प्रलापीको नहीं।]

"इसी प्रकार हे ब्राह्मण! आर्य-विनय (=सद्धर्म) में त्रिविद्य होता है।"

"हे गौतम! ब्राह्मणोंका त्रै-विद्य दूसरी तरह होता है तथा आर्य-विनय (=सद्धर्म) में त्रै-विद्य दूसरी तरह। हे गौतम! ब्राह्मणोंका त्रैविद्य इस आर्य-विनयके त्रैविद्यके सोलह हिस्सेके मूल्यके भी बराबर नहीं। हे गौतम! सुन्दर है....आजसे प्राणान्त तक मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

(६०)

उस समय संगारव ब्राह्मण जहाँ भगवान् (बुद्ध) थे वहाँ गया.....एक ओर बैठे संगारव ब्राह्मणने भगवान्को यह कहा—

"हे गौतम! हम ब्राह्मण यज्ञ करते भी हैं और यज्ञ कराते भी हैं। हे गौतम! जो यज्ञ करता है तथा जो यज्ञ कराता है, वे अनेक शरीरों-वाले पुण्य-मार्गका अनुगमन करते हैं—यह जो यज्ञमार्ग है। किन्तु हे गौतम! यह जो जिस-तिस कुलसे घरसे बेघर हो प्रब्रजित हो जाते हैं, वे तो अकेले ही अपना दमन करते हैं, अकेले ही अपना शमन करते हैं, तथा अकेले ही परिनिर्वाण (शान्ति) को प्राप्त होते हैं। अिस प्रकार यह एक शरीर वाला पुण्य-मार्ग है यह जो प्रब्रजित होना है।"

"तो ब्राह्मण! तुझे ही पूछता हूँ, जैसा तुझे अच्छा लगे वैसा कह। हे ब्राह्मण! बता तू क्या मानता है? यहां इस संसार में तथागत जन्म ग्रहण करते हैं, अरहत, सम्यक-सम्बुद्ध, विद्या तथा आचरणसे युक्त, सुगत, लोकज्ञ, पुरुषोंके सर्वश्रेष्ठ सारथी, देवताओं तथा मनुष्योंके शास्ता, बुद्ध, भगवान। वे ऐसा कहते हैं—आओ, यह मार्ग है, यह पथ है जिस पर चलकर मैं स्वयं श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य-गत अभिज्ञाको साक्षात करके कहता हूँ। आओ, तुम भी वैसे ही चलो, जैसे आचरण करनेसे तुम भी श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य-गत अभिज्ञाको स्वयं साक्षातकर विहार करोगे। इस प्रकार शास्ता इस धर्मकी देशना करते हैं और दूसरे तद्नुसार आचरण करते हैं। वे अनेक सौ भी होते हैं, अनेक हजार भी होते हैं तथा अनेक लाख भी होते हैं। तो ब्राह्मण! तुम क्या मानते हो? ऐसा होने पर जो यह प्रब्रज्यापथ है, क्या यह एक शरीर से सम्बन्ध रखने वाला पुण्य-पथ है अथवा अनेक शरीरों से सम्बन्ध रखने वावा?"

"ऐसा होने पर तो हे गौतम! यह जो प्रब्रज्या-पथ है, यह अनेक शरीरों से सम्बन्ध रखने वाला पुण्य-पथ होता है।"

"ऐसा कहने पर आयुष्मान आनन्द ने संगारव ब्राह्मण को यह कहा—"ब्राह्मण! इन दो मार्गों में से कौनसा मार्ग तुझे अधिक कम खर्चीला, अधिक कम झंझटी तथा महान् फल वाला, महान् परिणाम वाला मालूम देता है?"

ऐसा कहने पर संगारव ब्राह्मण ने आयुष्मान आनन्द को यह कहा—"जैसे आप गौतम तथा आप आनन्द हैं, ऐसे ही मेरे पूज्य हैं, ऐसे ही मेरी प्रशंसा के पात्र हैं।"

दूसरी बार भी आयुष्मान् आनन्द ने संगारव ब्राह्मण को यह कहा—"ब्राह्मण! मैं तुझसे यह नहीं पूछता हूँ कि कौन तेरे पूज्य हैं अथवा कौन तेरी

प्रशंसा के पात्र हैं। ब्राह्मण! मैं तो तुझ से पूछता हूँ कि इन दो मार्गों में कौन-सा मार्ग तुझे अधिक कम खर्चीला, अधिक कम झंझटी तथा महान् फल वाला, महान् परिणाम वाला मालूम देता है?"

दूसरी बार भी संगारव ब्राह्मण ने आयुष्मान् आनन्द को यह कहा—"जैसे आप गौतम तथा आप आनन्द हैं ऐसे ही मेरे पूज्य हैं, ऐसे ही मेरी प्रशंसा के पात्र हैं।"

तीसरी बार भी आयुष्मान् आनन्द ने संगारव ब्राह्मण को यह कहा—"ब्राह्मण! मैं तुझसे यह नहीं पूछता हूँ कि कौन तेरे पूज्य हैं अथवा कौन तेरी प्रशंसा के पात्र हैं। ब्राह्मण! मैं तो तुझ से यह पूछता हुँ कि इन दो मार्गों में कौन सा मार्ग तुझे अधिक कम-खर्चीला, अधिक कम झंझटी तथा महान् फल वाला, महान् परिणाम वाला मालूम देता हैं?"

तीसरी बार भी संगारव ब्राह्मण ने आयुष्मान् आनन्द को यह कहा—"जैसे आप गौतम तथा आप आनन्द हैं, ऐसे ही मेरे पूज्य हैं, ऐसे ही मेरी प्रशंसा के पात्र हैं।"

उस समय भगवान् के मन में यह हुआ—तीसरी बार भी आनन्द द्वारा समुचित प्रश्न पूछे जाने पर संगारव ब्राह्मण उस से कतराता ही है, प्रश्न का उत्तर नहीं देता। मैं ही उस से बात करूँ।

तब भगवान् ने संगारव ब्राह्मण को यह कहा—"ब्राह्मण! आज राजा के अन्तःपुर में, राज्य-परिषदमें इकट्ठे हुए लोगों में क्या बातचीत चली थी?"

"हे गौतम! आज राजा के अन्तःपुर में, राज्य-परिषद् में इकट्ठे हुए लोगों में यह बातचीत चली थी कि पहले भिक्षुओं की संख्या थोड़ी थी किन्तु उन में से बहुत से असाधारण मनुष्य-धर्म अथवा ऋद्धि-बल का प्रदर्शन करते थे। हे गौतम! आज राजा के अन्तःपुर में, राज्य-परिषद् में इकट्ठे हुए लोगों में यह बातचीत चली थी।"

"ब्राह्मण! ये तीन प्रातिहारियाँ (=असाधारण कृतियाँ) हैं। कौन सी तीन? ऋद्धि-प्रातिहारी, देशना-प्रातिहारी तथा अनुशासनी-प्रातिहारी।

"ब्राह्मण ऋद्धि-प्रातिहारी किसे कहते हैं?

"ब्राह्मण! कोई कोई अनेक प्रकार की ऋद्धियों का अनुभव करता है—एक होकर भी अनेक हो जाता है, अनेक होकर भी एक हो जाता है, प्रकट हो जाता

Buddhist Research Library,
Buddha Vihar, Risaldar Park,
LUCKNOW-226001.

है, छिप जाता है, दीवारके पार, प्राकार के पार, पर्वत के पार उन्हें छूता हुआ चला जाता है, जैसे आकाश में, पृथ्वी पर भी उतराना-डूबना करता है जैसे पानी में, पानी के भी ऊपर ऊपर चलता है जैसे पृथ्वी पर, आकाश में भी पालथी मारकर जाता है जैसे कोई पक्षी हो, इस प्रकार का ऋद्धिमान्, इस प्रकार के महाप्रतापी चन्द्र-सूर्य्य को भी हाथ से छूता है, ब्रह्मलोक तक भी सशरीर पहुँच जाता है। हे ब्राह्मण ! यह ऋद्धि-प्रातिहारी कहलाती है।

"ब्राह्मण ! देशना-प्रातिहारी किसे कहते हैं ?

"हे ब्राह्मण ! कोई कोई निमित्त (=लक्षण) देखकर बताता है कि तुम्हारा मन ऐसा है, तुम्हारा चित्त ऐसा है। वह बहुत भी कहता है, तो भी जैसा वह कहता है, वैसा ही होता है, अन्यथा नहीं होता।

"हे ब्राह्मण ! कोई कोई निमित्त देखकर नहीं कहता, बल्कि मनुष्यों, अमनुष्यों अथवा देवताओं का शब्द सुनकर कहता है कि तुम्हारा मन ऐसा है, तुम्हारा चित्त ऐसा है। वह बहुत भी कहता है, तो भी जैसा वह कहता है, वैसा ही होता है, अन्यथा नहीं होता।

"हे ब्राह्मण ! कोई कोई न निमित्त देखकर कहता है, न मनुष्यों, अमनुष्यों अथवा देवताओं का शब्द सुन कर कहता है, बल्कि संकल्प-विकल्प करके, विचार करके संकल्प-विकल्प से उत्पन्न शब्द सुनकर कहता है कि तुम्हारा मन ऐसा है, तुम्हारा चित्त ऐसा है। वह बहुत भी कहता है, तो भी जैसा वह कहता है, वैसा ही होता है, अन्यथा नहीं होता।

"हे ब्राह्मण ! कोई कोई न निमित्त देखकर कहता है, न मनुष्यों, अमनुष्यों अथवा देवताओं का शब्द सुनकर कहता है, न संकल्प-विकल्प करके, विचार करके संकल्प-विकल्प से उत्पन्न शब्द सुनकर कहता है, बल्कि वितर्क-रहित, विचाररहित समाधि-प्राप्त के चित्त से चित्त का स्पर्श करके जानता है कि जिस प्रकार इस समय इनके मन का संस्कार चल रहा है, इस के बाद यह महाशय इस प्रकार का संकल्पविकल्प करेंगे। वह बहुत भी कहता है, तो भी जैसा वह कहता है, वैसा ही होता है, अन्यथा नहीं होता। ब्राह्मण ! यह देशना-प्रातिहारी कहलाती है।

"ब्राह्मण ! अनुशासना-प्रातिहारी किसे कहते हैं ?

"ब्राह्मण ! कोई कोई ऐसा अनुशासन करता है—ऐसा संकल्प-विकल्प करो, ऐसा संकल्प-विकल्प मत करो, मनमें ऐसा विचार करो, मन में ऐसा विचार मत करो, इस संकल्प को छोड़ो, इस को मन में जगह देकर विचरो।

"ब्राह्मण ! इसे अनुशासना-प्रातिहारी कहते हैं।

"ब्राह्मण ! इन तीन प्रातिहारियों में तुझे कौन सी प्रातिहारी सुन्दर-तर तथा श्रेष्ठतर लगती है ?"

"हे गौतम ! इन में से जो यह एक प्रातिहारी है कि कोई कोई अनेक प्रकार की ऋद्धियों का अनुभव करता है.........ब्रह्मलोक तक भी सशरीर पहुँच जाता है—हे गौतम ! इस प्रातिहारी को जो करता है वही अनुभव करता है, जो करता है उसी को वह होती है। हे गौतम ! यह प्रातिहारी तो मुझे माया-सदृश लगती है। हे गौतम ! यह भी जो एक प्रातिहारी है कि कोई कोई निमित्त देखकर बताता है............देवताओं का शब्द सुनकर...........संकल्प विकल्प से उत्पन्न शब्द सुनकर..........चित्त से चित्त का स्पर्श करके जानता है........हे गौतम ! इस प्रातिहारी को भी जो करता है वही अनुभव करता है, जो करता है उसी को वह होती है। हे गौतम ! यह प्रतिहारी भी मुझे माया-सदृश ही लगती है। लेकिन हे गौतम ! यह जो एक प्रातिहारी है कि कोई कोई ऐसा अनुशासन करता है..........मन में जगह देकर विचरो ; हे गौतम ! इन तीन प्रातिहारियों में मुझे यही एक प्रातिहारी सुन्दरतर तथा श्रेष्ठतर लगती है।

"हे गौतम ! आश्चर्य्य है ! हे गौतम ! अद्भुत है कि आप गौतम ने कैसी सुभाषित वाणी कही है। हम आप गौतम को इन तीनों प्रातिहारियों से युक्त समझते हैं। आप गौतम ही अनेक प्रकार की ऋद्धियों का अनुभव करते हैं............ब्रह्मलोक तक भी सशरीर पहुँच जाते हैं। आप गौतम ही वितर्क-रहित, विचार-रहित समाधी-प्राप्त के चित्त से चित्त का स्पर्श करके जानते हैं कि जिस प्रकार इस समय इन का मन-संस्कार चल रहा है, इसके बाद यह महाशय इस प्रकार का संकल्प-विकल्प करेंगे। आप गौतम ही ऐसा अनुशासन करते हैं कि ऐसा संकल्प-विकल्प करो, ऐसा संकल्प-विकल्प मत करो, मन में ऐसा विचार करो, मन में ऐसा विचार मत करो, इस संकल्प को छोड़ो, इसे मन में जगह दो।

"निश्चय से ब्राह्मण ! मैं ने तुझे (अपने गुणों के) समीप लाकर ही बात कही है। लेकिन अब मैं (स्पष्ट रूपसे) व्याख्या करता हूँ। ब्राह्मण ! मैं ही अनेक प्रकार की ऋद्धियों का अनुभव करता हूँ ....ब्रह्मलोक तक भी सशरीर पहुँच जाता हूँ। मैं ही ब्राह्मण ! वितर्क-रहित, विचार-रहित समाधि-प्राप्त के चित्त से चित्त का स्पर्श करके जानता हूँ कि जिस प्रकार इस समय इन का मन-संस्कार चल रहा है इस के बाद यह महाशय इस प्रकार का संकल्प-विकल्प करेंगे। हे ब्राह्मण ! मैं ही ऐसा अनुशासन करता हूँ कि ऐसा संकल्प-विकल्प करो, ऐसा संकल्प-विकल्प मत करो, मन में ऐसा विचार करो, मन में ऐसा विचार मत करो, इस संकल्प को छोड़ो, इसे मन में जगह दो।

"हे गौतम ! क्या आप गौतम के अतिरिक्त कोई दूसरा एक भिक्षु भी ऐसा है जो इन तीनों प्रातिहारियों से युक्त हो ?"

"हे ब्राह्मण ! न केवल एक सौ, न दो सौ, न तीन सौ, न चार सौ, न पाँच सौ बल्कि इस से भी अधिक ऐसे भिक्षु होंगे जो इन प्रातिहारियों से युक्त हों ?"

"हे गौतम ! इस समय वे भिक्षु कहाँ विहार करते हैं ?"

"ब्राह्मण ! इसी भिक्षु-संघ में।"

"सुन्दर गौतम ! बहुत सुन्दर गौतम ! जैसे कोई उल्टे को सीधा कर दे, ढके को उघाड़ दे अथवा मार्ग-भ्रष्ट को रास्ता बता दे अथवा अँधेरे में मशाल जला दे जिससे आँख वाले चीजों को देख सकें। इसी प्रकार आप गौतम ने नाना प्रकार से धर्म को प्रकाशित किया है। मैं भगवान् गौतम, (उनके) धर्म तथा संघ की शरण जाता हूँ। भगवान् (मेरे) शरीर में प्राण रहने तक मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

(६१)

"भिक्षुओ, ये तीन, तैर्थिकों के ऐसे मत हैं जो पण्डितों द्वारा ऊहा-पोह किये जाने पर , पूछे जाने पर, चर्चा किये जाने पर, आचार्य्य-परम्परा के अनुसार जहाँ कहीं भी जाकर रुकते हैं वहाँ अकर्मण्यता पर ही जाकर रुकते हैं। कौन से तीन ?

"भिक्षुओ, कुछ श्रमण-ब्राह्मणों का यह मत है, यह दृष्टि है कि जो कुछ भी कोई आदमी सुख, दुःख वा अदुख-असुख अनुभव करता है वह सब पूर्व-कर्मों के फल-स्वरूप अनुभव करता है।

"भिक्षुओ, कुछ श्रमण-ब्राह्मणों का यह मत है, यह दृष्टि है कि जो कुछ भी कोई आदमी सुख, दुःख वा अदुख-असुख अनुभव करता है वह सब ईश्वर-निर्माण के कारण अनुभव करता है।

"भिक्षुओ, कुछ श्रमण-ब्राह्मणों का यह मत है, यह दृष्टि है कि जो कुछ भी कोई आदमी सुख, दुःख वा अदुख-असुख अनुभव करता है वह सब बिना किसी हेतु के, बिना किसी कारण के।

" भिक्षुओ, जिन श्रमण-ब्राह्मणों का यह मत है, यह दृष्टि है कि जो कुछ भी कोई आदमी सुख, दुःख वा अदुख-असुख अनुभव करता है, वह सब पूर्व-कर्मों के फल स्वरूप अनुभव करता है, उनके पास जाकर मैं उन से प्रश्न करता हूँ— आयुष्मानो! क्या सचमुच तुम्हारा यह मत है कि जो कुछ भी कोई आदमी सुख, दुःख वा अदुख-असुख अनुभव करता है, वह सब पूर्व-कर्मों के फल-स्वरूप अनुभव करता है ?

"मेरे ऐसा पूछने पर वे "हाँ" उत्तर देते हैं।

"तब उनसे मैं कहता हूँ—तो आयुष्मानो! तुम्हारे मत के अनुसार पूर्व-जन्म के कर्म के ही फल-स्वरूप आदमी प्राणी-हिंसा करने वाले होते हैं, पूर्व-जन्मके कर्म के ही फल-स्वरूप आदमी चोरी करने वाले होते हैं, पूर्व जन्म के कर्म के ही फल-स्वरूप आदमी अब्रह्मचारी होते हैं, पूर्वजन्म के कर्म के ही फल-स्वरूप आदमी झूठ बोलने वाले होते हैं, पूर्वजन्नम के कर्म के ही फल-स्वरूप आदमी चुगल-खोर होते हैं, पूर्व-जन्म के कर्म के ही फल-स्वरूप आदमी कठोर बोलने वाले होते हैं, पूर्व-जन्म के कर्म के ही फल-स्वरूप आदमी व्यर्थ बकवास करने वाले होते हैं, पूर्व-जन्म के कर्म के ही फल-स्वरूप आदमी लोभी होते हैं, पूर्व-जन्म के कर्म के ही फलस्वरूप आदमी क्रोधी होते हैं, तथा पूर्व-जन्म के कर्म के ही फल-स्वरूप आदमी मिथ्या-दृष्टि वाले होते हैं। भिक्षुओ, पूर्वकृत कर्म को ही सार रूप ग्रहण कर लेने से यह करना योग्य है, और यह करना अयोग्य है, इस विषय में संकल्प नहीं होता, प्रयत्न नहीं होता। जब यह करना योग्य है और यह करना अयोग्य है, इस विषय में ही यथार्थ-ज्ञान नहीं होता तो इस प्रकार के मूढ़-स्मृति असंयत लोगों का अपने आप को धार्मिक श्रमण कहना भी सहेतुक नहीं होता।

"भिक्षुओ, इस प्रकार का मत, इस प्रकार की दृष्टि रखने वाले श्रमण-ब्राह्मणों का यह प्रथम निग्रह-स्थान होता है।

" भिक्षुओ, जिन श्रमण-ब्राह्मणों का यह मत है, यह दृष्टि है कि जो कुछ भी कोई आदमी सुख, दुःख या अदुःख-असुख अनुभव करता है वह सब ईश्वर-निर्माण के कारण अनुभव करता है, उन के पास जाकर मैं उन से प्रश्न करता हूँ—आयुष्मानो ! क्या सचमुच तुम्हारा यह मत है कि जो कुछ भी कोई आदमी सुख, दुःख वा अदुःख-असुख अनुभव करता है, वह सब ईश्वर-निर्माण के फल-स्वरूप अनुभव करता है ?

" मेरे ऐसा पूछने पर वे " हाँ " उत्तर देते हैं।

" तब उन से मैं कहता हूँ—तो आयुष्मानो ! तुम्हारे मत के अनुसार ईश्वर-निर्माण के ही फल-स्वरूप आदमी प्राणी-हिंसा करने वाले होते हैं .... ईश्वर-निर्माण के ही फल-स्वरूप आदमी मिथ्या-दृष्टि वाले होते हैं। भिक्षुओ, ईश्वर-निर्माण को ही साररूप ग्रहण कर लेने से यह करना योग्य है और यह करना अयोग्य है, इस विषय में संकल्प नहीं होता, प्रयत्न नहीं होता। जब यह करना योग्य है और यह करना अयोग्य है, इस विषय में ही यथार्थ-ज्ञान नहीं होता तो इस प्रकार के मूढ़-स्मृति, असंयत लोगों का अपने आपको धार्मिक श्रमण कहना सहेतुक नहीं होता।

" भिक्षुओ, इस प्रकार का मत, इस प्रकार की दृष्टि रखने वाले श्रमण-ब्राह्मणों का यह दूसरा निग्रह-स्थान होता है।

" भिक्षुओ, जिन श्रमण-ब्राह्मणों का यह मत है, यह दृष्टि है कि जो कुछ भी कोई आदमी सुख, दुःख वा अदुख-असुख अनुभव करता है, वह सब बिना किसी हेतु के, बिना किसी कारण के, उनके पास जाकर मैं उन से प्रश्न करता हूँ—आयुष्मानो ! क्या सचमुच तुम्हारा यह मत है कि जो कुछ भी कोई आदमी सुख, दुःख वा अदुख-असुख अनुभव करता है, वह सब बिना किसी हेतु के, बिना किसी कारण के ?

" मेरे ऐसा पूछने पर वे " हाँ " उत्तर देते हैं।

" तब मैं उन से कहता हूँ—तो आयुष्मानो ! तुम्हारे मत के अनुसार बिना किसी हेतु के, बिना किसी कारण के आदमी प्राणी-हिंसा करने वाले होते हैं .... बिना किसी हेतु, के, बिना किसी कारण के आदमी मिथ्या-दृष्टि वाले होते हैं। भिक्षुओ, इस अहेतुवाद, इस अकारण-वाद को ही साररूप ग्रहण

लेने से यह करना योग्य है, और यह करना अयोग्य है, इस विषय में संकल्प नहीं होता, प्रयत्न नहीं होता। जब यह करना योग्य है और यह करना अयोग्य है, इस विषय में ही यथार्थ-ज्ञान नहीं होता तो इस प्रकार के मूढ़-स्मृति असंयत लोगों का अपने आप को धार्मिक-श्रमण कहना सहेतुक नहीं होता।

"भिक्षुओ, इस प्रकार का मत, इस प्रकार की दृष्टि रखने वाले श्रमण-ब्राह्मणों का यह तीसरा निग्रह-स्थान होता है।

"भिक्षुओ, ये तीन, तैर्थिकों के ऐसे मत हैं, जो पण्डितों द्वारा ऊहा-पोह किये जाने पर, पूछे जाने पर, चर्चा किये जाने पर, आचार्य्य-परम्परा के अनुसार जहाँ कहीं भी जाकर ठहरते हैं, वहाँ अकर्मण्यता पर ही जाकर ठहरते हैं।

"भिक्षुओ, मैंने इस धर्म का उपदेश दिया है जो निग्रहीत नहीं है, जो संक्लिष्ट नहीं है, जो परिशुद्ध है तथा जिसमें कोई विज्ञ श्रमण-ब्राह्मण दोष नहीं दिखा सकते हैं। भिक्षुओ, मैंने किस धर्म का उपदेश दिया है जो निग्रहीत नहीं है, जो संक्लिष्ट नहीं है, जो परिशुद्ध है तथा जिस में कोई विज्ञ श्रमण-ब्राह्मण दोष नहीं दिखा सकते हैं ?"

"भिक्षुओ, मैंने जो यह उपदेश दिया कि छः धातु हैं और जो उपदेश ... . तथा जिस में विज्ञ श्रमण-ब्राह्मण दोष नहीं दिखा सकते हैं, वह किन छ धातुओं के बारे में कहा ? भिक्षुओ, ये छः धातु हैं—पृथ्वी-धातु, अप्-धातु, तेज-धातु, आकाश-धातु तथा विज्ञान-धातु। भिक्षुओ, ये छः धातु हैं—यह धर्म है जिसका मैंने उपदेश दिया है, जो निग्रहीत नहीं है, जो संक्लिष्ट नहीं है, जो परिशुद्ध है तथा जिसमें कोई विज्ञ श्रमण-ब्राह्मण दोष नहीं दिखा सकते हैं।

"भिक्षुओ, मैंने जो यह उपदेश दिया कि ये छः स्पर्श-आयतन हैं और जो उपदेश .... तथा जिस में विज्ञ श्रमण-ब्राह्मण दोष नहीं दिखा सकते हैं वह किन छ : स्पर्श-आयतनों के बारेमें कहा ? भिक्षुओ, ये छ : स्पर्श-आयतन हैं—चक्षु-स्पर्शायतन, श्रोत्र-स्पर्शायतन, घ्राण-स्पर्शायतन, जिव्हा-स्पर्शायतन, काय-स्पर्शायतन, मन-स्पर्शायतन। भिक्षुओ, मैंने जो यह उपदेश दिया कि ये छः स्पर्श-आयतन हैं और जो उपदेश......... तथा जिस में विज्ञ-श्रमण-ब्राह्मण दोष नहीं दिखा सकते हैं, वह इन्हीं छः स्पर्शायतनों के बारे में कहा।

८. भिक्षुओ, मैं ने जो यह उपदेश दिया कि ये अठारह मन के विहरण हैं और जो उपदेश .... तथा जिस में विज्ञ श्रमण-ब्राह्मण दोष नहीं दिखा सकते

हैं, वह किन अठारह मन के विहरणों के बारे में कहा ? आँख से रूप देखकर प्रसन्न होने के विषय में विहरण करता है, दौर्मनस्य होने के विषय में विहरण करता है, उपेक्षा होने के विषय में विहरण करता है, श्रोत्र से शब्द सुनकर........घ्राण से गंध सूँघकर........जिव्हा से रस चखकर........काय से स्पर्श करके.....मन से मन के विषयों का अनुभव कर प्रसन्न होने के विषय में विहरण करता है, दौर्मनस्य होने के विषय में विहरण करता है, उपेक्षा होने के विषय में विहरण करता है। भिक्षुओ, मैंने जो यह उपदेश दिया कि ये अठारह मन के विहरण हैं और जो उपदेश... ....तथा जिस में विज्ञ श्रमण-ब्राह्मण दोष नहीं दिखा सकते हैं, वह इन अठारह मन के विहरणों के ही बारे में कहा।

"भिक्षुओ, मैं ने जो यह उपदेश दिया कि चार आर्य-सत्य हैं और जो उपदेश...........तथा जिस में विज्ञ-श्रमण-ब्राह्मण दोष नहीं दिखा सकते, वह किन आर्य-सत्यों के बारे में कहा ? भिक्षुओ, छः धातुओं के होने से गर्भ होता है, गर्भ होने से नाम-रूप, नाम-रूप होने से छः आयतन, छः आयतन होने से, स्पर्श, तथा स्पर्श होने से वेदना की जिसे अनुभूति होती है उसी के सम्बन्ध में भिक्षुओ मैं दुःख की घोषणा करता हूँ, दुःख-समुदय की घोषणा करता हूँ, दुःख-निरोध की घोषणा करता हूँ, दुःख-निरोध की ओर ले जाने वाली प्रतिपदा (=मार्ग) की घोषणा करता हूँ।

"भिक्षुओ, दुःख आर्य-सत्य क्या है ?

"पैदा होना दुःख है, बूढ़ा होना दुःख है, बीमार पड़ना दुःख है, मरना दुःख है, शोक करना दुःख है, रोना-पीटना दुःख है, पीड़ित होना दुःख है, चिन्तित होना दुःख है, परेशान होना दुःख है, इच्छा की पूर्ति न होना दुःख है, थोड़े में कहना हो तो पाँच उपादान-स्कन्ध ही दुःख हैं। भिक्षुओ, यह दुःख आर्य-सत्य कहलाता है।

"भिक्षुओ, दुःख-समुदय आर्य-सत्य क्या है ?

"अविद्या के होने से संस्कार, संस्कार के होने से विज्ञान, विज्ञान के होने से नाम-रूप, नाम-रूप के होने से छः आयतन, छः आयतन के होने से स्पर्श, स्पर्श के होने से वेदना, वेदना के होने से तृष्णा, तृष्णा के होने से उपादान, उपादान के होने से भव, भव के होने से जन्म, जन्म के होने से बुढ़ापा, बुढ़ापे के होने से मरना, शोक, रोना-पीटना, दुःख, मानसिक-चिन्ता तथा परेशानी होती है। अिस प्रकार अिस

सारे दुःख-स्कन्धकी उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, यह दुःख-समुदय आर्य-सत्य कहलाता है।

"भिक्षुओ, दुःख निरोध आर्य-सत्य क्या है ?

"अविद्याके ही सम्पूर्ण विरागसे, निरोधसे, संस्कारोंका निरोध होता है। संस्कारोंके निरोधसे विज्ञान-निरोध, विज्ञानके निरोधसे नामरूप-निरोध, नामरूप के निरोधसे छः आयतनोंका निरोध, छः आयतनोंके निरोधसे स्पर्शका निरोध, स्पर्शके निरोधसे वेदनाका निरोध, वेदनाके निरोधसे तृष्णाका निरोध, तृष्णाके निरोधसे उपादानका निरोध, उपादानके निरोधसे भव-निरोध, भवके निरोधसे जन्मका निरोध, जन्मके निरोधसे बुढ़ापे, शोक, रोने-पीटने, दुःख, मानसिक-चिन्ता तथा परेशानीका निरोध होता है। इस प्रकार इस सारेके सारे दुःख-स्कन्धका निरोध होता है। भिक्षुओ, यह दुःख-निरोध आर्य-सत्य कहलाता है।

"भिक्षुओ, दुःख-निरोधकी ओर ले जानेवाला मार्ग आर्य-सत्य कौनसा है ?

"यही आर्य अष्टांगिक मार्ग जो कि यों है—सम्यक्-दृष्टि, सम्यक्-संकल्प, सम्यक्-वाणी, सम्यक्-कर्मान्त, सम्यक्-आजीविका सम्यक्-व्यायाम, सम्यक्-स्मृति, सम्यक्-समाधि। भिक्षुओ, यह दुःख-निरोधकी ओर ले जानेवाला मार्ग आर्य-सत्य कहलाता है।

"भिक्षुओ, मैंने जो यह उपदेश दिया कि चार आर्य सत्य हैं और जो उपदेश... तथा जिसमें विज्ञ श्रमण-ब्राह्मण दोष नहीं दिखा सकते, वह इन आर्य सत्योंके ही बारेमें कहा।"

(६२)

"भिक्षुओ, ये तीन भय माता-पुत्र-विहीन भय हैं, जिन की अज्ञानी सामान्य जन चर्चा करते है। कौनसे तीन ?

"भिक्षुओ, ऐसा समय आता है जब महान् अग्नि-दाह होता है। भिक्षुओ, महान् अग्नि-दाहके होने पर गाँव भी जल जाते हैं, निगम भी जल जाते हैं और नगर भी जल जाते हैं। गाँवके जलनेपर, निगमोंके जलनेपर तथा नगरोंके जलनेपर न माता की पुत्रसे भेंट होती है और न पुत्र की माँसे भेंट होती है। भिक्षुओ, यह पहला माता-पुत्र-विहीन भय है, जिस की अज्ञानी सामान्य जन चर्चा करते हैं।

"भिक्षुओ, फिर ऐसा समय भी आता है जब महान् वर्षा होती है। महान् वर्षाके होनेपर भारी बाढ़ आती है। भारी बाढ़के आनेपर गाँव भी बह जाते हैं, निगम भी बह जाते हैं तथा नगर भी बह जाते हैं। गाँवके बह जाने पर, निगमोंके बह जानेपर तथा नगरोंके बह जानेपर न माता की पुत्रसे भेंट होती हैं और न पुत्र की-मांसे भेंट होती है। भिक्षुओ, यह दूसरा माता-पुत्र-विहीन भय है जिसकी अज्ञानी सामान्य जन चर्चा करते हैं।

"भिक्षुओ, फिर ऐसा समय भी आता है जब जंगलमें रहने वाले चोर-डाकू प्रकुप्त हो जाते हैं। उस समय लोग रथों पर चढ़कर जनपदसे भाग जाते हैं। भिक्षुओ, जब जंगल प्रकुप्त हो जाते हैं और जब लोग रथोंपर चढ़चढ़कर जनपदोंसे भाग जाते हैं, उस समय न माता की पुत्र से भेंट होती है और न पुत्रकी मां से भेंट होती है। भिक्षुओ, यह तीसरा माता-पुत्र-विहीन भय है, जिसकी अज्ञानी सामान्य जन चर्चा करते हैं।

"भिक्षुओ, ये तीन भय माता-पुत्र-विहीन भय हैं जिनकी अज्ञानी सामान्य जन चर्चा करते हैं।

"भिक्षुओ, उक्त तीनों भय माता-पुत्र-युक्त भय ही हैं जिनकी अज्ञानी सामान्य जन माता-पुत्र-विहीन भय कहकर चर्चा करते हैं। कौनसे तीन?

"भिक्षुओ, ऐसा समय आता है जब महान् अग्नि-दाह होता है। भिक्षुओ महान् अग्नि-दाहके होने पर गांव भी जल जाते हैं, निगम भी जल जाते हैं और नगर भी जल जाते हैं। गांवके जलनेपर, निगमोंके जलनेपर तथा नगरोंके जलनेपर भी कभी कभी ऐसा होता है कि माता की पुत्रसे भेंट हो जाती है, पुत्रकी मांसे भेंट हो जाती है। भिक्षुओ, यह पहला माता-पुत्र-युक्त भय है जिसकी अज्ञानी सामान्य जन चर्चा करते हैं।

"भिक्षुओ, फिर ऐसा समय भी आता है जब महान् वर्षा होती है। महान वर्षाके होनेपर.......तथा नगरोंके बह जानेपर भी कभी कभी ऐसा होता है कि माताकी पुत्रसे भेंट हो जाती है, पुत्रकी मांसे भेंट हो जाती है। भिक्षुओ, यह दूसरा माता-पुत्र-युक्त भय है जिसकी अज्ञानी सामान्य जन चर्चा करते हैं।

"भिक्षुओ, फिर ऐसा समय भी आता है जब जंगल (में रहने वाले चोर-डाकू) प्रकट हो जाते हैं। उस समय लोग रथोंपर चढ़चढ़कर जनपदसे भाग जाते हैं।

भिक्षुओ, जब जंगल प्रकुप्त हो जाते हैं और जब लोग रथोंपर चढ़-चढ़कर जनपदसे भाग जाते हैं, तब भी कभी-कभी ऐसा होता है कि माताकी पुत्रसे भेंट हो जाती है, पुत्रकी मां से भेंट हो जाती है। भिक्षुओ, यह तीसरा माता-पुत्र-युक्त भय है जिसकी अज्ञानी सामान्य जन चर्चा करते हैं।

"भिक्षुओ, उक्त तीन भय माता-पुत्र-यूक्त भय ही हैं जिनकी अज्ञानी सामान्य जन माता-पुत्र-विहीन भय कह कर चर्चा करते हैं।

"भिक्षुओ, ये तीन माता-पुत्र-विहीन भय हैं। कौनसे तीन ?

"बुढ़ापेका भय, रोग का भय तथा मृत्युका भय।

"भिक्षुओ, पुत्रके बूढ़े होने पर माता यह नहीं कह सकती कि मैं बूढ़ी होती हूँ, तुम बुढ़े मत होओ और माताके बूढ़ी होनेपर पुत्र यह नहीं कह सकता कि मैं बूढ़ा होता हूँ तुम बूढ़ी मत होओ।

"भिक्षुओ, पुत्रके रोगी होने पर माता यह नहीं कह सकती कि मैं रोगी होती हूँ तुम रोगी मत होओ और माताके रोगी होनेपर पुत्र भी यह नहीं कह सकता कि मैं रोगी होता हूँ, तुम रोगिणी मत होओ।

"भिक्षुओ, मरते हुए पुत्रको माता यह नहीं कह सकती कि मैं मरती हूँ, तुम मत मरो और मरती हुअी माताकेको पुत्र भी यह नहीं कह सकता कि मैं मरता हूँ तुम मत मरो।

"भिक्षुओ, ये तीन माता-पुत्र-विहीन भय हैं।

"भिक्षुओ, इन तीनों माता-पुत्र-युक्त भयोंका तथा अिन तीनों माता-पुत्र-विहीन भयोंका प्रहाण करनेवाला, अतिक्रमण करनेवाला मार्ग है, पथ है। भिक्षुओ, अिन तीनों माता-पुत्र-युक्त भयोंका तथा इन तीनों माता-पुत्र-विहीन भयोंका प्रहाण करनेवाला, अतिक्रमण करनेवाला मार्ग, पथ कौनसा है ?

"यही आर्य अष्टांगिक-मार्ग जोकि है सम्यक्-दृष्टि, सम्यक्-संकल्प, सम्यक्-वाणी, सम्यक्-कर्मान्त, सम्यक्-आजीविका, सम्यक्-व्यायाम, सम्यक्-स्मृति तथा सम्यक्-समाधि। भिक्षुओ, अिन तीनों माता-पुत्र-युक्त भयोंका तथा अिन तीनों माता-पुत्र-विहीन भयोंका प्रहाण करनेवाला, अतिक्रमण करनेवाला मार्ग, पथ यही है।"

एक समय महान् भिक्षु संघके साथ भगवान् कोशल (-जनपद) में चारिका करते हुअे जहाँ कोशलोंका वेनागपुर नामका ब्राह्मण-ग्राम था वहाँ पहुंचे।

वेनागपुरके ब्राह्मण गृहपतियोंने सुना कि शाक्य-कुल-प्रव्रजित शाक्य-पुत्र श्रमण गौतम वेनागपुर आये हैं। अुन भगवान् गौतमका इस प्रकारका यश फैला है। यह भगवान अरहत हैं, सम्यक्-सम्बद्ध हैं, विद्या तथा आचरणसे युक्त हैं, सुगत हैं लोकोंके ज्ञाता हैं, सर्व श्रेष्ठ हैं, (कुमार्ग-गामी) मनुष्योंका दमन करने वाले हैं और देवताओं तथा मनुष्योंके शास्ता हैं। वे इस सदेव, समार, स-ब्रह्म लोकको तथा श्रमण-ब्राह्मण-युक्त सदेव-मनुष्य जनताको स्वयं जानकर, साक्षात कर (धर्मको) प्रकाशित करते हैं। वे आदिमें कल्याणकारक, मध्यमें कल्याणकारक, अन्तमें कल्याणकारक, अर्थों तथा व्यंजनोंसे युक्त, सम्पूर्ण, परिशुद्ध ब्रह्मचर्यको प्रकाशित करते हैं। ऐसे अरहतोंका दर्शन कल्याणकारी होता है।

उस समय वेनागपुरके ब्राह्मण, गृहस्थ (=वैश्य) जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचे। पहुँचकर उनमेंसे कुछ अभिवादन करके एक ओर बैठ गये, कुछ भगवान् के साथ कुशल-क्षेमकी बातचीत करके एक ओर बैठ गये, कुछ भगवानको हाथ जोड़कर एक ओर बैठ गये, कुछ अपना नाम-गोत्र सुनाकर एक ओर बैठ गये, कुछ चुप-चाप रहकर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए वेनागपुरिक वत्स-गोत्र ब्राह्मणने भगवान् से कहा—

"हे गौतम! आश्चर्य है। हे गौतम! अद्भुत है। आप गौतम की अिंद्रियाँ प्रसन्न हैं। आपकी त्वचा शुद्ध तथा साफ है। हे गौतम! जैसे शरद् ऋतुका बेर शुद्ध तथा साफ होता है, उसी प्रकार आप गौतमकी अिंद्रियाँ प्रसन्न हैं और त्वचा शुद्ध तथा साफ है। हे गौतम! जैसे ताड़का अभी अभी शाखासे टूटा, पका फल शुद्ध तथा साफ होता है, उसी प्रकार आप गौतमकी अिंद्रियाँ प्रसन्न हैं और त्वचा शुद्ध तथा साफ है। हे गौतम! जैसे चतुर सुनार द्वारा ठोकपीटकर तैयार किया हुआ जाम्बुनद-स्वर्ण पाण्डु-वर्ण कम्बल पर रखा हुआ चमकता है, उसी प्रकार आप गौतमकी अिंद्रियाँ प्रसन्न हैं और त्वचा शुद्ध तथा साफ है। हे गौतम! जितने भी अूँचे शयनासन, महान् शयनासन हैं—जैसे आराम-कुर्सी, पलंग, अूनके बालों वाला पलंग, चित्रित-ऊनी बिछौना, सफैद ऊनी बिछौना, मुलायम ऊनी बिछौना, रूई-दार गद्दा, सिंह आदिके चित्रवाला ऊनी बिछौना, दोंनों ओर डोरिये-दार बिछौना, एक ओर डोरीदार ऊनी बिछौना, रतन-जड़ित रेशमी बिछौना, रेशमी बिछौना, नर्तकियोंके नाचने योग्य ऊनी बिछौना, हाथी आदिके चित्रोंसे चित्रित बिछौना, अजिन

(मृग) के चर्मकी चटाई, ऊपर चन्दोवे और दोनों ओर लाल तकियोंवाला, कदली-मृग की छालका बिछौना——आपको यह सहज ही प्राप्य हैं, आपको यह अनायास मिल जाते हैं।"

"ब्राह्मण ! जो ये ऊंचे शयनासन हैं, महान् शयनासन हैं—जैसे आराम-कुर्सी.......कदली मृगकी छाल का बिछौना——ये प्रव्रजितोंको दुर्लभ हैं, और मिलें तो इनको व्यवहारमें लाना अनुचित है।

"हे ब्राह्मण ! तीन ऊँचे शयनासन हैं, महान शयनासन हैं जो मुझे इस समय सहज ही प्राप्य हैं, अनायास सुलभ हैं। वे तीन कौनसे हैं?

"दिव्य ऊंचा शयनासन-महान्-शयनासन; ब्रह्म ऊंचा शयनासन-महान्-शयनासन, आर्य ऊंचा शयनासन-महान्-शयनासन। हे ब्राह्मण ! ये तीन ऊंचे शयनासन महान् शयनासन हैं जो मुझे इस समय सहज ही प्राप्य हैं, अनायास सुलभ हैं।

"हे ब्राह्मण ! मैं जिस गाँव या निगमके समीप रहता हूँ, पूर्वाह्न होनेपर चीवर पहन, पात्र-चीवर ले, उसी गाँव या निगममें भिक्षार्थ जाता हूँ। भिक्षाटनसे लौटकर, भोजन कर चुकने पर उसी गाँवके पास के जंगलमें विहार करता हूँ। वहाँ जो घास या पत्ते होते हैं, उन्हें इकट्ठाकर, उनपर पालथी मार कर, शरीरको सीधा-कर तथा स्मृति को सामने कर बैठता हूँ। उस समय मैं काम-भोगोंसे रहित, अकुशल-विचारोंसे रहित, वितर्क-युक्त, विचार-युक्त, विवेकज, प्रीति तथा सुख वाले प्रथम-ध्यानको प्राप्तकर विहार करता हूँ। फिर वितर्क और विचारोंके उपशमन से अन्दरकी प्रसन्नता और एकाग्रता रूपी द्वितीय-ध्यानको प्राप्तकर विहार करता हूँ। फिर प्रीतिसे भी विरक्त हो उपेक्षावान् बन विहार करता हूँ। उस समय स्मृतिमान, ज्ञानवान् होता हूँ, और शरीर से सुखका अनुभव करता हूँ, जिसे पण्डित-जन उपेक्षावान् हो, स्मृतिमान हो, सुखपूर्वक रहना कहते हैं, उस तृतीय-ध्यानको प्राप्त कर विहार करता हूँ। फिर सुख और दुःख दोनोंके प्रहाणसे, सौमनस्य और दौर्मनस्यके पहले ही अस्त हुए रहनेसे उत्पन्न चतुर्थ-ध्यानको प्राप्तकर विहार करता हूँ, जिसमें न दुःख होता है और न सुख; होती है (केवल) उपेक्षा तथा स्मृतिकी परिशुद्धि।

"हे ब्राह्मण ! इस अवस्थामें जब मैं चंक्रमण करता हूँ तो वह मेरा दिव्य-चंक्रमण होता है। हे ब्राह्मण ! इस अवस्थामें जब मैं खड़ा होता हूँ तो वह मेरा दिव्य खड़ा होना होता है। हे ब्राह्मण ! इस अवस्थामें जब मैं बैठता

हूँ तो वह मेरा दिव्य बैठना होता है। हे ब्राह्मण! इस अवस्थामें जब मैं लेटता हूँ तो वह मेरा दिव्य लेटना होता है। हे ब्राह्मण! यह है वह ऊंचा शयनासन, महान् शयनासन जो मुझे इस समय सहज ही प्राप्य है, अनायास सुलभ है।"

"हे गौतम! आश्चर्य है। हे गौतम! अद्भुत है। आप गौतमके अतिरिक्त अन्य किसे इस प्रकारका दिव्य ऊंचा शयनासन, महान् शयनासन सहज ही प्राप्य होगा, अनायास ही सुलभ होगा!"

"हे गौतम! वह ब्रह्म ऊंचा शयनासन, महान् शयनासन कौनसा है, जो आप गौतमको इस समय सहज ही प्राप्य है, अनायास ही सुलभ है?"

"हे ब्राह्मण! मैं जिस गाँव या निगमके समीप रहता हूँ, पूर्वाह्न होनेपर (चीवर) पहन, पात्र-चीवरले, उसी गाँव या निगममें भिक्षार्थ जाता हूँ। भिक्षाटन से लौटकर, भोजन कर चुकनेपर उसी गाँवके पासके जंगलमें बिहार करता हूँ। वहाँ जो घास या पत्ते होते हैं, उन्हें अिकट्ठाकर, उनपर पालथी मारकर, शरीरको सीधाकर तथा स्मृतिको सामनेकर बैठता हूँ। उस समय मैं एक दिशा, दूसरी दिशा, तीसरी दिशा तथा चौथी दिशाको मैत्री-चित्तसे स्पर्श करके विहार करता हूँ। ऊपर, नीचे, बीचमें, सर्वत्र, सब तरहसे, सब प्रकारसे, सारे लोकको विपुल, उदार, अप्रमाण, अवैरी, अक्रोधी, मैत्री-युक्त चित्तसे स्पर्श करके विहार करता हूँ। उस समय मैं एक दिशा....... करूणा युक्त चित्तसे स्पर्श करके विहार करता हूँ। उस समय मैं एक दिशा......मुदिता-युक्त चित्तसे स्पर्श करके विहार करता हूँ। उस समय मैं एक दिशा...... उपेक्षा-युक्त चित्तसे स्पर्श करके विहार करता हूँ।

"हे ब्राह्मण! इस अवस्थामें जब मैं चंक्रमण करता हूँ तो वह मेरा ब्रह्म-चंक्रमण होता है। हे ब्राह्मण! इस अवस्थामें जब मैं खड़ा होता हूँ..... बैठता हूँ..... लेटता हूँ तो वह मेरा ब्रह्म लेटना होता है। हे ब्राह्मण। यह है वह ऊंचा शयनासन, महान् शयनासन जो मुझे इस समय सहज ही प्राप्य है, अनायास सुलभ है।"

"हे गौतम! आश्चर्य है। हे गौतम। अद्भुत है। आप गौतमके अतिरिक्त अन्य किसे इस प्रकार का ब्रह्म ऊंचा शयनासन, महान् शयनासन सहज ही प्राप्य होगा, अनायास ही सुलभ होगा!"

"हे गौतम! वह आर्य ऊंचा शयनासन, महान् शयनासन कौनसा है, जो आप गौतम को इस समय सहज ही प्राप्य है, अनायास ही सुलभ है?"

"हे ब्राह्मण ! मैं जिस गाँव या निगमके समीप रहता हूँ, पूर्वाह्न होने पर (चीवर) पहन, पात्र-चीवर ले, उसी गाँव या निगममें भिक्षार्थ जाता हूँ। भिक्षाटनसे लौटकर, भोजनकर चुकनेपर उसी गाँवके पासके जंगलमें विहार करता हूँ। वहाँ जो घास या पत्ते होते हैं उन्हें इकट्ठाकर, उनपर पालथी मारकर, शरीरको सीधा कर तथा स्मृतिको सामने कर बैठता हूँ। उस समय मैं यह जानता हूँ कि मेरा राग प्रहीण हो गया है, जड़-मूलसे चला गया है, कटे ताड़ जैसा हो गया है, अभावको प्राप्त हो गया है, भविष्यमें उत्पत्तिकी संभावना नहीं रही है, मेरा द्वेष प्रहीण हो गया है. . . संभावना नहीं रही है, मेरा मोह प्रहीण हो गया है. . . . संभावना नहीं रही है।

"हे ब्राह्मण ! इस अवस्थामें जब मैं चंक्रमण करता हूँ तो वह मेरा आर्य चंक्रमण होता है। हे ब्राह्मण ! इस अवस्थामें जब मैं खड़ा होता हूँ. . . . बैठता हूँ. . . . लेटता हूँ तो वह मेरा आर्य लेटना होता है। हे ब्राह्मण ! यह है वह ऊंचा शयनासन, महान् शयनासन जो मुझे इस समय सहज ही प्राप्य है, अनायास सुलभ है।"

"हे गौतम ! आश्चर्य है। हे गौतम ! अद्भुत है। आप गौतम के अतिरिक्त अन्य किसे अिस प्रकारका ब्रह्म ऊंचा शयनासन, महान् शयनासन सहज ही प्राप्य होगा, अनायास ही सुलभ होगा ! सुन्दर गौतम ! बहुत सुन्दर गौतम जैसे कोई उल्टेको को सीधा कर दे, ढके को उघाड़ दे अथवा मार्ग-भ्रष्टको रास्ता बता दे अथवा अन्धेरेमें मशाल जला दे जिससे आँख वाले चीजोंको देख सकें। इसी प्रकार गौतम ने नाना प्रकारसे धर्मको प्रकाशित किया है। मैं भगवान् गौतम (उनके) धर्म तथा संघको शरण जाता हूँ। भगवान शरीरमें प्राण रहते तक मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

(६४)

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् (बुद्ध) राजगृहमें गृध्र-कूट पर्वतपर विहार करते थे।

उस समय सरभ नामके परिब्राजकको इस बुद्ध-शासन (=धर्म-विनय) को छोड़कर गये थोड़ा ही समय हुआ था। वह राजगृह की परिषदमें ऐसी वाणी बोलता था---मैंने शाक्य पुत्रीय श्रमणोंका धर्म जान लिया। मैंने शाक्य पुत्रीय श्रमणोंके धर्मको जानकर ही उसे छोड़ा है।

उस समय बहुतसे भिक्षु पूर्वाह्न होनेपर (चीवर) पहन, पात्र-चीवर, ले, राजगृहमें भिक्षाटनके लिये प्रविष्ट हुए।

उन भिक्षुओंने राजगृह की परिषद में सरभ परिव्राजक द्वारा बोली जाने-वाली वाणी सुनी--मैंने शाक्य-पुत्रीय श्रमणोंका धर्म जान लिया। मैंने शाक्य-पुत्रीय श्रमणोंके धर्मको जानकर ही उसे छोड़ा है।

तब वे भिक्षु राजगृहमें भिक्षाटन करके, लौट चुकने पर, भोजनके अनन्तर जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान् को नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए उन भिक्षुओंने भगवानको यह कहा--

"भन्ते! सरभ नामका परिव्राजक कुछ ही समय हुआ इस धर्म-विनयको छोड़कर गया है। वह राजगृहमें प्रविष्ट होकर ऐसी वाणी बोलता है--मैंने शाक्य-पुत्रीय श्रमणों का धर्म जान लिया। मैंने शाक्य-पुत्रीय श्रमणों के धर्म को जानकर ही उसे छोड़ा है। भन्ते भगवान्! यह अच्छा हो यदि आप कृपा करके जहाँ सप्पिनी (नदी) का तट है जहाँ परिव्राजकाराम है, वहाँ पधारें।" भगवान्ने चुप रहकर स्वीकार कर लिया।

तब भगवान शामके समय, ध्यानसे उठकर, जहाँ सप्पिनिका (नदी) का किनारा था, जहाँ परिव्राजकाराम था, जहाँ सरभ परिव्राजक था वहाँ गये। जाकर बिछे आसन पर बैठे। बैठकर भगवान्ने सरभ परिव्राजक को यह कहा—

"हे सरभ! क्या तू सचमुच ऐसा कहता है—मैंने शाक्य-पुत्रीय श्रमणोंका धर्म जान लिया। मैंने शाक्य-पूत्रीय श्रमणोंके धर्मको जानकर ही अुसे छोड़ा है? ऐसा पूछने पर सरभ परिव्राजक चुप हो गया।

दूसरी बार भी भगवान्ने सरभ परिव्राजक को यह कहा--"सरभ! कह! क्या तूने शाक्य पुत्रीय श्रमणों के धर्म को जान लिया? यदि उसमें कुछ कमी होगी तो मैं कमी पूरी कर दूंगा।" यदि तेरी जानकारी पूरी होगी तो मैं समर्थन कर दूँगा। दूसरी बार भी सरभ परिव्राजक चुप हो गया।

तीसरी बार भी भगवान् ने सरभ परिव्राजक को यह कहा--"सरभ! मुझे शाक्य-पुत्रीय श्रमणों का धर्म ज्ञात है। हे सरभ! तू बता, क्या तूने शाक्य-पुत्रीय श्रमणों के धर्म को जान लिया? यदि उस में कुछ कमी होगी, तो मैं पूरी कर दूंगा। यदि तेरी जानकारी पूरी होगी तो मैं समर्थन कर दूंगा।"

तीसरी बार भी सरभ परिव्राजक चुप ही रहा ।

उस समय राजगृह के उन परिव्राजकों ने सरभ परिव्राजक को यह कहा—"आयुष्मान ! जो कुछ तुम श्रमण गौतम के बारे में कहते हो, उसी विषय में श्रमण गौतम तुम्हें निमंत्रण देते हैं। आयुष्मान सरभ ! कह, क्या तूने शाक्य-पुत्रीय श्रमणों के धर्म को जान लिया ? यदि उस में कुछ कमी होगी तो श्रमण गौतम पूरी कर देंगे। यदि तेरी जानकारी पूरी होगी, तो उसका समर्थन कर देंगे ।

ऐसा कहने पर सरभ परिव्राजक चुप-चाप, गड़बड़ाया हुआ, गरदन गिरी हुई, मुँह नीचे, सोचता हुआ, निस्तेज होकर बैठ गया ।

तब भगवान ने सरभ परिव्राजक को चुप-चाप, गड़बड़ाया हुआ, गरदन गिरी हुई, मुँह नीचे, सोचता हुआ, निस्तेज बैठा देख, उन परिव्राजकों को कहा—"यदि कोई परिव्राजक मुझे यह कहे कि सम्यक् सम्बुद्ध होने की घोषणा करने पर भी अमुक विषय का ज्ञान नहीं है, तो मैं उस से अच्छी तरह जिरह करूँ, तर्क करूं, बातचीत करूँ। मेरे द्वारा अच्छी तरह जिरह किये जाने पर, तर्क किये जाने पर, बातचीत किये जाने पर, इस बात की गुन्जाइश नहीं है कि वह इन तीन अवस्थाओं में से किसी एक अवस्था को प्राप्त न हो—दूसरी-दूसरी बात करेगा, बाहर की बात लायेगा; क्रोध, द्वेष वा असंतोष प्रकट करेगा ; अथवा सरभ परिव्राजक की तरह चुपचाप, गड़बड़ाया हुआ, गरदन गिरी हुई, मुँह नीचे, सोचता हुआ निस्तेज होकर बैठ जायेगा। यदि कोई परिव्राजक मुझे यह कहे कि क्षीणास्रव होने की घोषणा करने पर भी, अमुक अमुक आस्रव क्षीण नहीं हुए हैं, तो मैं उस से अच्छी तरह जिरह करूँ, तर्क करूँ, बात-चीत करूँ। मेरे द्वारा अच्छी तरह जिरह किये जाने पर, तर्क किये जाने पर, बातचीत किये जाने पर, इस बात की गुन्जाइश नहीं है कि वह इन तीन अवस्थाओं में से किसी एक अवस्था को प्राप्त न हो—दूसरी दूसरी बात करेगा, बाहर की बात लायेगा ; क्रोध, द्वेष वा असन्तोष प्रकट करेगा ; अथवा सरभ परिव्राजक की तरह चुप-चाप, गड़बड़ाया हुआ, गरदन गिरी हुई, मुँह नीचे, सोचता हुआ, निस्तेज होकर बैठ जायेगा ।

"यदि कोई परिव्राजक मुझे यह कहे कि जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिये धर्मोपदेश किया गया है, तदनुसार आचरण करने वाले को यह दुक्ख के सम्यक् नाश की ओर नहीं ले जाता—तो मैं उस से अच्छी तरह जिरह करूँ, तर्क करूँ, बात-चीत

करूँ। मेरे द्वारा अच्छी तरह जिरह किये जाने पर, तर्क किये जाने पर, बातचीत किये जाने पर, इस बात की गुन्जाइश नहीं है कि वह इन तीन अवस्थाओं में से किसी एक अवस्था को प्राप्त न हो—दूसरी दूसरी बात करेगा, बाहर की बात लागेया ; क्रोध, द्वेष वा असंतोष प्रकट करेगा ; अथवा सरभ परिव्राजक की तरह चुप-चाप, गड़बड़ाया हुआ, गरदन गिरी हुई, मुँह नीचे, सोचता हुआ, निस्तेज होकर बैठ जायेगा।

इस प्रकार सप्पिनिका (नदी) के तट पर स्थित परिव्राजकाराम में भगवान् तीन बार सिंहनाद करके आकाश से चले गये।

भगवान् के चले जाने के थोड़े ही समय बाद वे परिव्राजक सरभ परिव्राजक को वाणी के कोड़े मारने लगे। आयुष्मान् सरभ ! जैसे कोई बूढ़ा गीदड़ बड़े जंगल में सिंह-नाद करने की बात कहकर गीदड़ की बोली ही बोले, सियार की बोली ही बोले, इसी प्रकार हे आयुष्मान् सरभ, तूने श्रमण गौतभ की अनुपस्थिति में मैं सिंह-नाद करूँगा, कहकर उपस्थिति में केवल गीदड़ की बोली, सियार की बोली ही बोली है। जैसे कोई मुर्गी का चोजा मुर्गे की तरह बांग दूँगा कहकर मुर्गी के चोजे की ही आवाज निकाले, उसी प्रकार हे आयुष्मान् सरभ ! तू ने श्रमण गौतम की अनुपरिस्थति में मैं सिंह-नाद करूँगा कहकर उपास्थितिमें केवल गीदड़ की बोली, सियार की बोली ही बोली है। आयुष्मान् सरभ ! जैसे वृषभ समझता है कि शून्य गो-शाला में उसे जोर से रांभना चाहिये, इसी प्रकार आयुष्मान् सरभ ! तू भी यह समझता है कि श्रमण गौतम की अनुपस्थिति में ही जोर से बोलना चाहिये।

तब उन परिव्राजकों ने चारों ओर से सरभ परिव्राजक को वाणी के कोड़े लगाये।

(६५)

ऐसा मैं ने सुना। एक समय भगवान् (बुद्ध) कोशल जनपद में महान् भिक्षु-संघ के साथ चारिका करते हुए जहाँ केश-पुत्र नाम कालामों का निगम था, वहाँ पहुँचे। केश-पुत्रीय कालामों ने सुना कि शाक्य-कुल से प्रव्रजित शाक्यपुत्र श्रमण गौतम केश-पुत्र पधारे हैं। उन भगवान् गौतम (बुद्ध) का इस प्रकार से सु-यश फैला हुआ है—वह भगवान् पूज्य हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं, विद्या तथा आचरण से युक्त हैं..........प्रकाशित करते हैं। ऐसे अरहतों का दर्शन करना अच्छा होता है।

उस समय केशपुत्रीय कालाम जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये। पास जाकर कुछ भगवान् को नमस्कार कर एक ओर बैठ गये, कुछ भगवान् के साथ कुशल-क्षेम का वार्तालाप करके एक ओर बैठ गये, कुछ भगवान् को हाथ जोड़कर नमस्कार करके एक ओर बैठ गये, कुछ (अपना) नाम-गोत्र सुनाकर एक ओर बैठ गये, कुछ चुप-चाप एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे केशपुत्रीय कालामों ने भगवान् को यह कहा :—

"भन्ते! कुछ श्रमण-ब्राह्मण केश-पुत्र आते हैं। वे अपने ही मत को प्रकाशित करते हैं, चमकाते हैं। दूसरे के मत की निन्दा करते हैं, अनादर करते हैं, तिरस्कार करते हैं, उसे पक्ष-रहित करते हैं। भन्ते! दूसरे भी कुछ श्रमण-ब्राह्मण केश-पुत्र आते हैं। वे भी अपने ही मत को प्रकाशित करते हैं, चमकाते हैं। दूसरे के मत की निन्दा करते हैं, अनादर करते हैं, तिरस्कार करते हैं, उसे पक्ष-रहित करते हैं। भन्ते! इस से हमारे मन में शक पैदा होता है, सन्देह पैदा होता है कि इन श्रमणों में से किसने सत्य कहा, किसने झूठ?"

"हे कालामो! शक करना ठीक है। सन्देह करना ठीक है। शक करने ही की जगह पर सन्देह उत्पन्न हुआ है।

"हे कालामों आओ। तुम किसी बात को केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात अनुश्रुत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात परम्परागत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात इसी प्रकार कही गई है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे धर्म-ग्रन्थ (पिटक) के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह तर्क-सम्मत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह न्याय (-शास्त्र) सम्मत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि आकार-प्रकार सुन्दर है, केवल इसलिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे मत के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाले का व्यक्तित्व आकर्षक है, केवल इसलिये मत स्वीकार करो कि कहने वाला श्रमण हमारा पूज्य है। हे कालामो! जब तुम आत्मानुभव से अपने आप ही यह जानो कि ये बातें अकुशल हैं, ये बातें सदोष हैं, ये बातें विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दित हैं, इन बातों के अनुसार चलने से अहित होता है, दुःख होता है—तो हे कालामो! तुम उन बातों को छोड़ दो।

"तो हे कालामो! क्या मानते हो, पुरुष के अन्दर जो लोभ उत्पन्न होता है, वह उसके हित के लिये होता है, वा अहित के लिये?

"भन्ते! अहित के लिये।"

"हे कालामो! जो लोभी है, जो लोभ से अभिभूत है, जो असंयत है, वह प्राणी-हत्या भी करता है, चोरी भी करता है, परस्त्री-गमन भी करता है, झूठ भी बोलता है, दूसरों को भी वैसी प्रेरणा देता है, जो कि दीर्घकाल तक उसके अहित तथा दुःख का कारण होता है।"

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"तो हे कालामो! क्या मानते हो, पुरुष के अन्दर जो द्वेष उत्पन्न होता है, वह उसके हित के लिये होता है, वा अहित के लिये?"

"भन्ते! अहित के लिये।"

"हे कालामो! जो द्वेषी है, जो द्वेष से अभिभूत है, जो असंयत है, वह प्राणी-हत्या भी करता है, चोरी भी करता है, परस्त्री-गमन भी करता है, झूठ भी बोलता है, दूसरों को भी वैसी प्रेरणा देता है, जो कि दीर्घ-काल तक उस के अहित तथा दुःख का कारण होता है।"

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"तो हे कालामो! क्या मानते हो, पुरुष के अन्दर जो मोह उत्पन्न होता है, वह उसके हित के लिये होता है वा अहित के लिये?"

"भन्ते! अहित के लिये।"

"हे कालामो! जो मूढ़ है, जो मोह से अभिभूत है, जो असंयत है, वह प्राणी-हत्या भी करता है, चोरी भी करता है, परस्त्री-गमन भी करता है, झूठ भी बोलता है, दूसरों को भी वैसी प्रेरणा देता है, जो कि दीर्घकाल तक उस के अहित तथा दुःख का कारण होता है?

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"तो कालामो! क्या मानते हो, ये धर्म कुशल हैं वा अकुशल?"

"भन्ते! अकुशल हैं?"

"सदोष हैं वा निर्दोष?"

"भन्ते! सदोष हैं।"

"विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दित हैं, वा प्रशंसित हैं?"

"भन्ते! विज्ञ पुरूषों द्वारा निन्दित हैं।"

"परिपूर्ण करने पर, आचरण करने पर अहित के लिये, दुःख के लिये होते हैं, अथवा नहीं होते ? इस विषयमें तुम्हें कैसा लगता है ?"

"भन्ते ! परिपूर्ण करने पर, आचरण करने पर, अहित के लिये, दुःख के लिये होते हैं। इस विषय में हमें ऐसा ही लगता है।"

"तो हे कालामो ! यह जो कहा—हे कालामो ! आओ। तुम किसी बात को केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात अनुश्रुत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात परम्परागत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात इसी प्रकार कही गई है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे धर्म-ग्रन्थ (=पिटक) के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह तर्क-सम्मत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह न्याय (-शास्त्र) सम्मत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि आकार-प्रकार सुन्दर है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे मत के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाले का व्यक्तित्व आकर्षक है, केवल इसलिये मत स्वीकार करो कि कहने वाला श्रमण हमारा पूज्य है। हे कालामो ! जब तुम आत्मानुभवसे अपने आप ही यह जानो कि ये बातें अकुशल हैं, ये बातें सदोष हैं, ये बातें विज्ञ-पुरुषों द्वारा निन्दित हैं, इन बातों के अनुसार चलने से अहित होता है, दुःख होता है—तो हे कालामो ! तुम उन बातों को छोड़ दो—यह जो कुछ कहा गया, यह इसी सम्बन्ध में कहा गया।

"हे कालामो ! आओ। तुम किसी बात को......... केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाला श्रमण हमारा पूज्य है। हे कालामो ! जब तुम आत्मानुभव से अपने आप ही यह जानो कि ये बातें कुशल हैं, ये बातें निर्दोष हैं, ये बातें विज्ञ-पुरुषों द्वारा प्रशंसित हैं, इन बातों के अनुसार चलने से हित होता है, सुख होता है—तो हे कालामो ! तुम इन बातों के अनुसार आचरण करो।

"तो हे कालामो ! क्या मानते हो, पुरुष के अन्दर जो अलोभ उत्पन्न होता है, वह उस के हित के लिये होता है वा अहित के लिये ?"

"भन्ते ! हित के लिये।"

"हे कालामो ! जो अलोभी है, जो लोभ से अभिभूत नहीं है, जो असंयत नहीं है, वह प्राणी-हत्या भी नहीं करता, चोरी भी नहीं करता, परस्त्री-गमन

भी नहीं करता, झूठ भी नहीं बोलता, दूसरों को भी वैसी प्रेरणा नहीं देता, जो कि दीर्घ काल तक उस के हित तथा सुख का कारण होता है।"

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"तो हे कालामो! क्या मानते हो, पुरुष के अन्दर जो अद्वेष उत्पन्न होता है, वह उस के हित के लिये होता है वा अहित के लिये?"

"भन्ते! हित के लिये।"

"हे कालामो! जो अद्वेषी है, जो द्वेष से अभिभूत नहीं है, जो असंयत नहीं है, वह प्राणी-हत्या भी नहीं करता, चोरी भी नहीं करता, परस्त्री-गमन भी नहीं करता, झुठ भी नहीं बोलता, दूसरों को भी वैसी प्रेरणा नहीं देता, जो कि दीर्घ-काल तक उस के हित तथा सुख का कारण होता है।"

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"तो हे कालामो! क्या मानते हो, पुरुष के अन्दर जो अमोह उत्पन्न होता है, वह उस के हित के लिये उत्पन्न होता है, वा अहित के लिये?"

"भन्ते! हित के लिये।"

"हे कालामो! जो मूढ़ नहीं है, जो मूढ़ता से अभिभूत नहीं है, जो असंयत नहीं है, वह प्राणी-हत्या भी नहीं करता, चोरी भी नहीं करता, परस्त्री-गमन भी वहीं करता, झूठ भी नहीं बोलता, दूसरों को भी वैसी प्रेरणा नहीं देता, जो कि दीर्घ-काल तक उस के हित तथा सुख का कारण होता है।"

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"तो कालामो! क्या मानते हो, ये धर्म कुशल हैं वा अकुशल?"

"भन्ते! कुशल हैं।"

"सदोष हैं वा निर्दोष?"

"भन्ते! सदोष हैं।"

"विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दित हैं, वा प्रशंसित?"

"भन्ते! विज्ञ पुरुषों द्वारा प्रशंसित हैं।"

"परिपूर्ण करने पर, आचरण करने पर सुख के लिये होते हैं, अथवा नहीं होते? इस विषय में तुम्हें कैसा लगता है?"

"भन्ते! परिपूर्ण करने पर, आचरण करने पर, हित के लिये, सुख के लिये होते हैं। इस विषय में हमें ऐसा ही लगता है।"

"तो हे कलामो! यह जो कहा—हे कालामो! आओ। तुम किसी बात को केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात अनुश्रुत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात परम्परागत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात इसी प्रकार कही गई है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे धर्म-ग्रन्थ (=पिटक) के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह तर्क-सम्मत है, केवल इसलिये मत स्वीकार करो कि यह न्याय (-शास्त्र) सम्मत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि आकार प्रकार सुन्दर है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे मत के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाले का व्यक्तित्व आकर्षक है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाला श्रमण हमारा पूज्य है। हे कालामो! जब तुम आत्मानुभव से अपने आप ही यह जान लो कि ये बातें कुशल हैं, ये बातें निर्दोष हैं, ये बातें विज्ञ-पुरुषों द्वारा प्रशंसित हैं, इन बातों के अनुसार चलने से हित होता है, सुख होता है—तो हे कालामो! तुम इन बातों के अनुसार चलो—यह जो कुछ कहा गया, यह इसी सम्बन्ध में कहा गया।

"हे कालामो! जो आर्य-श्रावक! इस प्रकार लोभ-रहित होता है, क्रोध-रहित होता है, मूढ़ता-रहित होता है, जानकार होता है, स्मृति-मान होता है, वह एक दिशा, दूसरी दिशा, तीसरी दिशा तथा चौथी दिशा को मैत्री-चित्त से स्पर्श करके विहार करता है। ऊपर, नीचे, बीच में, सर्वत्र, सब तरह से, सब प्रकार से, सारे लोक को विपुल, उदार, अप्रमाण, अवैरी, अक्रोधी, मैत्री-युक्त चित्त से स्पर्श करके विहार करता है। हे कालामो! उस इस प्रकार के अवैरी-चित्त, अक्रोधी चित्त, असंक्लिष्ट-चित्त, शुद्ध-चित्त आर्य-श्रावक को इसी शरीर में चार प्रकार के आश्वासन प्राप्त हो जाते हैं।

"यदि परलोक है, यदि सुकृत-दुष्कृत का फल मिलता है, तो यह होगा कि शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर, मैं सुगति को प्राप्त होऊंगा, मैं स्वर्ग-लोक में पैदा होऊंगा—यह उसे पहला आश्वासन प्राप्त हो जाता है। यदि परलोक नहीं है, यदि सुकृत-दुष्कृत का फल नहीं मिलता है, तो मैं यहाँ इस शरीर में अवैरी

होकर, अक्रोधी होकर, दुःख-रहित होकर, सुखी होकर विचरण करता हूँ— यह उसे दूसरा आश्वासन प्राप्त हो जाता है। यदि करने से किसी का बुरा होता है, तो मैं किसी का बुरा नहीं सोचता हूँ, जब मैं कोई पाप-कर्म नहीं करता हूँ तो मुझे दुःख कैसे स्पर्श करेगा?—यह उसे तीसरा आश्वासन प्राप्त हो जाता है। यदि करने से किसी का बुरा नहीं होता, तो मैं अपने आप को दोनों दृष्टियों से विशुद्ध पाता हूँ—यह उसे चौथा आश्वासन प्राप्त हो जाता है।

"हे कालामो! उस इस प्रकार के अवैरी-चित्त, अक्रोधी-चित्त, असंक्लिष्ट-चित्त, शुद्ध-चित्त, आर्य-श्रावक को इसी शरीर में चार प्रकार के आश्वासन प्राप्त हो जाते हैं।

"भगवान्! ऐसा ही है। सुगत! ऐसा ही है। भन्ते! इस प्रकारके अवैरी-चित्त, अक्रोधी-चित्त, असंक्लिष्ट-चित्त, शुद्ध-चित्त आर्य-श्रावक को इसी शरीर में चार प्रकार के आश्वासन प्राप्त हो जाते हैं। यदि परलोक है, यदि सुकृत-दुष्कृत का फल मिलता है तो यह होगा कि शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर मैं सुगति को प्राप्त होऊंगा, मैं स्वर्ग-लोक में पैदा होऊंगा—यह उसे पहला आश्वासन प्राप्त हो जाता है। यदि परलोक नहीं है, यदि सुकृत-दुष्कृत का फल नहीं मिलता है, तो मैं यहाँ इस शरीर में अवैरी होकर, अक्रोधी होकर, दुःख-रहित होकर, सुखी होकर विचरण करता हूँ—यह उसे दूसरा आश्वासन प्राप्त हो जाता ह। यदि करने से किसी का बुरा होता है, तो मैं किसी का बुरा नहीं सोचता हूँ, जब मैं कोई पाप-कर्म नहीं करता हूँ तो मुझे दुःख कैसे स्पर्श करेगा?—यह उसे तीसरा आश्वासन प्राप्त हो जाता है। यदि करने से किसी का बुरा नहीं होता, तो मैं अपने आप को दोनों दृष्टियों से विशुद्ध पाता हूँ—यह उसे चौथा आश्वासन प्राप्त हो जाता है। भन्ते! इस प्रकार के अवैरी-चित्त, अक्रोधी-चित्त, असंक्लिष्ट-चित्त, शुद्ध-चित्त आर्य-श्रावक को इसी शरीर में चार प्रकारके आश्वासन प्राप्त हो जाते हैं।

"भन्ते! सुन्दर है............यह हम भगवान् की, धर्म की तथा भिक्षु-संघ की शरण ग्रहण करते हैं। भन्ते भगवान्! आज से प्राण रहने तक आप हमें शरणागत उपासक जानें।"

(६६)

ऐसा मैं ने सुना। एक समय आयुष्मान् नन्दक श्रावस्ती में मिगार-माता के पूर्वाराम-प्रासाद में विहार कर रहे थे।

उस समय मिगार-नाती साळह तथा पेखुणीय-नाती रोहण जहाँ आयुष्यमान् नन्दक थे, वहाँ पहुँचे। पहुँचकर आयुष्मान् नन्दक को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए मिगार-नाती साळह को आयुष्मान् नन्दक ने यह कहा—'हे साळह! आओ। तुम किसी बात को केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात अनुश्रुत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात परम्परागत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात इसी प्रकार कही गई है, केवल इसलिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे धर्म-ग्रन्थ (=पिटक) के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह तर्क-सम्मत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह न्याय (-शास्त्र) सम्मत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि आकार-प्रकार सुन्दर है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे मत के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाले का व्यक्तित्व आकर्षक है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाला श्रमण हमारा 'पूज्य' है। हे साळह! जब तुम आत्मानुभव से अपने आप यह जान लो कि ये बातें अकुशल हैं, ये बातें सदोष हैं, ये बातें विज्ञ पुरुषों द्वारा निन्दित हैं, इन बातों के अनुसार चलने से अहित होता है, दुःख होता है—तो हे साळह! तुम इन बातों को छोड़ दो।"

"तो साळह! क्या मानते हो, लोभ है?

"भन्ते! है।"

"साळह! मैं लोभ को ही अभिध्या कहता हूँ। हे साळह! जो लोभी है, जो लोभ-ग्रस्त है, वह प्राणी-हत्या भी करता है, चोरी भी करता है, परस्त्री-गमन भी करता है, झूठ भी बोलता है, दूसरे को भी वैसी प्रेरणा देता है, जो कि दीर्घकाल तक उस के अहित तथा दुःख का कारण होता है।"

"भन्ते! हाँ।"

"तो साळह! क्या मानते हो, द्वेष है?

"भन्ते! है।"

"साळह! मैं क्रोध को ही द्वेष कहता हूँ। हे साळह! जो द्वेष-युक्त है, जो क्रोधी है वह प्राणी-हत्या भी करता है, चोरी भी करता है, परस्त्री-गमन भी करता है, झूठ भी बोलता है, दूसरे को भी वैसी प्रेरणा देता है, जो कि दीर्घ-काल तक उस के अहित तथा दुःख का कारण होता है।"

"भन्ते! हाँ।"

"तो साळह! क्या मानते हो, मोह है?

"भन्ते! है।"

"साळह! मैं अविद्या को ही मोह कहता हूँ। हे साळह! जो मूढ़ है, जो अविद्या-ग्रस्त है, वह प्राणी-हत्या भी करता है, चोरी भी करता है, परस्त्री-गमन भी करता है, झूठ भी बोलता है, दूसरे को भी वैसी प्रेरणा देता है, जो कि दीर्घ काल तक असके अहित तथा दुःख का कारण होता है।"

"भन्ते! हाँ।"

"तो साळह! क्या मानते हो, ये धर्म कुशल हैं वा अकुशल?"

"भन्ते! अकुशल।"

"सदोष वा निर्दोष?"

"भन्ते! सदोष।"

"विज्ञों द्वारा निन्दित वा विज्ञों द्वारा प्रशंसित?"

"भन्ते! विज्ञों द्वारा निन्दित।"

"परिपूर्ण करने पर, आचरण करने पर, अहित के लिअे, दुःख के लिये होते हैं अथवा नहीं होते? इस विषयमें तुम्हें कैसा लगता है?"

"भन्ते! परिपूर्ण करने पर, आचरण करने पर, अहित के लिये, दुःख के लिये होते हैं। इस विषय में हमें ऐसा ही लगता है।"

"तो हे साळह! यह जो कहा—हे साळह! आओ। तुम किसी बात को केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात अनुश्रुत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात परम्परागत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात इसी प्रकार कही गई है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे धर्म-ग्रन्थ (=पिटक) के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह तर्क-सम्मत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह न्याय (-शास्त्र) सम्मत है,

केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि आकार-प्रकार सुन्दर है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे मत के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाले का व्यक्तित्व आकर्षक है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाला श्रमण हमारा पूज्य है। हे साळह! जब तुम आत्मानुभव से अपने आप ही यह जान लो कि ये बातें अकुशल हैं, ये बातें सदोष हैं, ये बातें विज्ञ-पुरुषों द्वारा निन्दित हैं, इन बातों के अनुसार चलने से अहित होता है, दुःख होता है—तो हे साळह! तुम इन बातों को छोड़ दो।—यह जो कुछ कहा गया, यह इसी सम्बन्ध में कहा गया।

"इस प्रकार साळह! तुम किसी बात को............केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाला श्रमण हमारा पूज्य है। हे साळह! जब तुम आत्मानुभव से अपने आप ही यह जान लो कि ये बातें कुशल हैं, ये बातें निर्दोष हैं, ये बातें विज्ञ-पुरुषों द्वारा प्रशंसित हैं, इन बातों के अनुसार चलने से हित होता है, सुख होता है—तो हे साळह! तुम इन बातों के अनुसार आचरण करो।

"तो साळह! क्या मानते हो, अलोभ है?"

"भन्ते! है।"

"साळह! मैं अलोभ को ही अनभिध्या कहता हूँ। हे साळह! जो निर्लोभी है, जो लोभ के वशीभूत नहीं है, वह न प्राणी-हत्या करता है, न चोरी करता है, न परस्त्री-गमन करता है, न झूठ बोलता है, न दूसरे को वैसी प्रेरणा देता है, जो कि दीर्घ-काल तक उसके हित तथा सुख का कारण होता है।"

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"तो साळह! क्या मानते हो, अद्वेष है?"

"भन्ते! है।"

"साळह! मैं अक्रोध को ही अद्वेष कहता हूँ। साळह! जो द्वेष-रहित है, जो अक्रोधी है वह न प्राणी-हत्या करता है.........न झूठ बोलता है, न दूसरे को वैसी प्रेरणा देता है, जो कि दीर्घ-काल तक उस के हित तथा सुख का कारण होता है।"

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"तो साळह! क्या मानते हो, अमोह है?"

"भन्ते ! है।"

"साळह ! मैं विद्या को ही अमोह कहता हूँ। साळह ! जो मूढ़ता-रहित है, जो विद्या-प्राप्त है, वह न प्राणी-हत्या करता है..........न झूठ बोलता है, न दूसरे को वैसी प्रेरणा देता है, जो कि दीर्घ-काल तक उस के हित तथा सुख का कारण होता है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"तो साळह ! क्या मानते हो, ये धर्म कुशल हैं वा अकुशल हैं ?"

"भन्ते ! कुशल।"

"सदोष वा निर्दोष ?"

"भन्ते ! निर्दोष।"

"विज्ञ-पुरुषों द्वारा निन्दित वा विज्ञ-पुरुषों द्वारा प्रशंसित ?"

"विज्ञ-पुरुषों द्वारा प्रशंसित।"

"परिपूर्ण करने पर, आचरण करने पर, हित के लिये, सुख के लिये होते हैं अथवा नहीं होते ? इस विषय में तुम्हें कैसा लगता है ?"

"भन्ते ! परिपूर्ण करने पर, आचरण करने पर, हित के लिये, सुख के लिये होते हैं। इस विषय में हमें ऐसा ही लगता है।"

"तो हे साळह ! यह जो कहा—हे साळह ! आओ। तुम किसी बात को केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात अनुश्रुत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात परम्परागत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात इसी प्रकार कही गई है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह बात हमारे धर्म-ग्रन्थ (= पिटक) के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह तर्क-सम्मत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह न्याय (-शास्त्र) सम्मत है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि आकार-प्रकार सुन्दर है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि यह हमारे मत के अनुकूल है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाले का व्यक्तित्व आकर्षक है, केवल इस लिये मत स्वीकार करो कि कहने वाला श्रमण हमारा पूज्य है। हे साळह ! जब तुम आत्मानुभव से अपने आप ही यह जान लो कि ये बातें कुशल हैं, ये बातें निर्दोष हैं, ये बातें विज्ञ-पुरुषों द्वारा प्रशंसित हैं, इन बातों के अनुसार चलने से हित होता है, सुख

होता है—तो हे साळह! तुम इन बातों के अनुसार आचरण करो—यह जो कुछ कहा गया, वह इसी सम्बन्ध में कहा गया।

"हे साळह! जो आर्य-श्रावक! इस प्रकार लोभ-रहित होता है, क्रोध-रहित होता है, मूढ़ता-रहित होता है, जानकार होता है, स्मृतिमान होता है, वह एक दिशा, दूसरी दिशा, तीसरी दिशा तथा चौथी दिशा को मैत्री-चित्त से स्पर्श करके विहार करता है,......करुणा-चित्त से.......मुदिता-चित्त से........उपेक्षा-चित्त से स्पर्श करके विहार करता है। ऊपर, नीचे, बीच में सर्वत्र, सब तरह से, सब प्रकार से, सारे लोक को, विपुल, उदार, अप्रमाण, अवैरी, अक्रोधी, उपेक्षा-युक्त चित्त से स्पर्श करके विहार करता है। वह जानता है, यह है, यह हीन (-अवस्था) है, यह प्रणीत (=श्रेष्ठ) अवस्था है, इस संज्ञा से श्रेष्ठतर अवस्थामें जाया जा सकता है। जब वह इस प्रकार जानता है, इस प्रकार देखता है तो उस का चित्त कामास्रवों से भी विमुक्त हो जाता है, भवास्रवों से भी विमुक्त हो जाता है, अविद्यास्रवों से भी विमुक्त हो जाता है, विमुक्त होने पर, 'विमुक्त हूँ' यह ज्ञान हो जाता है। वह जान जाता है जन्म (का कारण) क्षीण हो गया, ब्रह्मचर्य-वास (का उद्देश्य) पूरा हो गया, जो करना था वह किया गया। वह जान जाता है कि अब यहाँ जन्म के लिये और कुछ कारण नहीं रह गया।

"वह यह जान जाता है कि पहले 'लोभ' था, वह अकुशल था। अब वह नहीं रहा है, यह कुशल है। पहले द्वेष था, वह अकुशल था। अब वह नहीं रहा है, यह कुशल है। पहले मोह (मूढ़ता) था, वह अकुशल था। अब वह नहीं रहा है, यह कुशल है। इस प्रकार वह इसी शरीर में तृष्णा-विहीन, निर्वाण-प्राप्त, शान्त, सुखी, ब्रह्म-भूत होकर विहार करता है।

(६७)

"भिक्षुओ, तीन कथा-वस्तुयें हैं। कौन सी तीन?"

"भिक्षुओ, या तो भूत काल सम्बन्धी बातचीत हो—भूत काल में ऐसा हुआ—या भविष्य काल सम्बन्धी बात चीत हो—भविष्य में ऐसा होगा—या वर्तमान काल सम्बन्धी बातचीत हो—इस समय वर्तमान में ऐसा है।

"भिक्षुओ, बातचीत से पता लग जाता है कि यह आदमी वार्तालाप करने योग्य है वा नहीं?

"भिक्षुओ, यदि कोअी आदमी 'हाँ या नहीं' में उत्तर दिये जाने वाले प्रश्न का 'हाँ या नहीं' में उत्तर नहीं देता, विभक्त करके उत्तर देने योग्य प्रश्न का विभक्त करके उत्तर नहीं देता, प्रति-प्रश्न पूछ कर उत्तर देने योग्य प्रश्न का प्रति-प्रश्न पूछकर उत्तर नहीं देता, उत्तर न देने योग्य प्रश्न को बिना उत्तर दिये ही उठा कर नहीं रख देता, तो भिक्षुओ, ऐसा आदमी वार्तालाप करने योग्य नहीं होता।

"भिक्षुओ, यदि कोई आदमी 'हाँ या नहीं' में उत्तर दिये जाने वाले प्रश्न का 'हाँ या नहीं' में उत्तर देता है, विभक्त करके उत्तर देने योग्य प्रश्न का विभक्त करके उत्तर देता है, प्रति-प्रश्न पूछ कर उत्तर देने योग्य प्रश्न का प्रति-प्रश्न पूछ कर उत्तर देता है, उत्तर न देने योग्य प्रश्न को बिना उत्तर दिये ही उठा कर रख देता है, तो भिक्षुओ, ऐसा आदमी वार्तालाप करने योग्य होता है।

"भिक्षुओ, बातचीत से पता लग जाता है कि यह आदमी वार्तालाप करने योग्य है वा नहीं है ?

"भिक्षुओ, यदि कोई आदमी प्रश्न-पूछने पर किसी एक बात पर स्थिर नहीं रहता, किसी एक प्रश्न या उत्तर पर स्थिर नहीं रहता, किसी एक मत पर स्थिर नहीं रहता, प्रश्न पूछने का उचित स्थान-समय नहीं जानता, तो भिक्षुओ, ऐसा आदमी वार्तालाप करने योग्य नहीं होता।

"भिक्षुओ, यदि कोई आदमी प्रश्न पूछने पर किसी एक बात पर स्थिर रहता है, किसी एक प्रश्न या उत्तर पर स्थिर रहता है, किसी एक मत पर स्थिर रहता है, प्रश्न पूछने का उचित स्थान-समय जानता है, तो भिक्षुओ, ऐसा आदमी वार्तालाप करने योग्य होता है।

"भिक्षुओ, बातचीत से पता लग जाता है कि यह आदमी वार्तालाप करने योग्य है वा नहीं ?

"भिक्षुओ, यदि कोई आदमी प्रश्न पूछने पर दूसरी-दूसरी बात करता है, बाहरी बात लाता है, कोप, द्वेष वा असंतोष प्रकट करता है, तो भिक्षुओ ऐसा आदमी वार्तालाप करने योग्य नहीं होता।

"भिक्षुओ, यदि कोई आदमी प्रश्न पूछने पर दूसरी-दूसरी बात नहीं करता, बाहरी बात नहीं लाता, कोप, द्वेष वा असंतोष प्रकट नहीं करता, तो भिक्षुओ, ऐसा आदमी वार्तालाप करने योग्य होता है।

"भिक्षुओ, बात-चीत से पता लग जाता है कि यह आदमी वार्तालाप करने योग्य है वा नहीं ?

"भिक्षुओ, यदि कोई आदमी प्रश्न पूछने पर, जहाँ-तहाँ से सूत्र उद्धृत करता है, जहाँ-तहाँ से सूत्र उद्धृत करके प्रश्न को दबा देता है, ताली आदि बजा देता है, (वार्तालाप में हो गये) स्खलन को ले उड़ता है, तो भिक्षुओ, ऐसा आदमी वार्तालाप करने योग्य नहीं होता।

"भिक्षुओ, यदि कोई आदमी प्रश्न पूछने पर न जहाँ-तहाँ से सूत्र उद्धृत करता है, न जहाँ-तहाँ से सूत्र उद्धृत करके प्रश्न को दबा देता है, न ताली आदि बजा देता है, न (वार्तालाप में हो गये) स्खलन को ले उड़ता है, तो भिक्षुओ, ऐसा आदमी वार्तालाप करने योग्य होता है।

"भिक्षुओ, बात-चीत से पता लग जाता है कि यह आदमी विश्वास करने योग्य है वा नहीं ?

"भिक्षुओ, जो ध्यान देकर नहीं सुनता वह विश्वसनीय नहीं होता, जो ध्यान देकर सुनता है वह विश्वसनीय होता है। जो विश्वसनीय होता है वह एक धर्म को जानता है, एक धर्म को अच्छी तरह जानता है, एक धर्म (=बात) का त्याग करता है, एक धर्म का साक्षातकार करता है। वह एक धर्म को जानकर, एक धर्म को अच्छी तरह जानकर, एक धर्म (=बात) का त्याग कर, एक धर्म का साक्षातकार करता है, इस प्रकार वह एक धर्म अर्थात् सम्यक्-विमुक्ति को स्पर्श करता है। भिक्षुओ, यह कथा इसी अर्थ के लिये है, यह मन्त्रणा इसी उद्देश्य के लिये है, यह शिक्षा इसी प्रयोजन के लिये है, यह ध्यान देकर सुनना इसी मतलब के लिये है जो कि यह उपादान-रहित चित्त की विमुक्ति अर्थात् अर्हत्व-प्राप्ति।

यो विरुद्धा सल्लपन्ति विनिविट्ठा समुस्सिता
अनरियगुणं आसज्ज अञ्ञमञ्ञं विवरेसिनो
दुब्भासितं विक्खलितं सम्पमोहं पराजयं
अञ्ञमञ्ञस्साभिनन्दन्ति तदरियो कथनाचरे
सचे चस्स कथाकामो कालं अञ्ञाय पण्डितो
धम्मट्ठपटिसंयुत्ता या अरियचरिता कथा
तं कथं कथये धीरो अविरुद्धो अनुस्सितो

अनुपादिन्नेन मनसा अपलासो असाहसो
अनुसुय्यमानो सम्मदञ्ञाय भासति सुभासितं
अनुमोदेय्य (सुभट्ठे) दुब्भट्ठे नावसादये
उपरम्भं न सिक्खेय्य खलितञ्च न गाहये
नाभिहरे नाभिमद्दे न वाचं पयुतं भणे
अञ्ञाणत्थं पसादत्थं सतं वे होति मंतना
एतदञ्ञाय मेधावी न समुस्सेय्य मंतये।

[जो अभिनिवेश के वशीभूत होकर, अभिमान के कारण विरोधी-वार्तालाप करते हैं, जो अनार्य-गुण को प्राप्त कर परस्पर छिद्रान्वेषण करते रहते हैं, जो परस्पर एक दूसरेके अयथार्थ-भाषण, स्खलन, प्रमाद-वश बोले गये शब्दों तथा एक दूसरे की पराजय को लेकर प्रसन्न होते हैं, ऐसे लोगों के साथ आर्य-जन बात-चीत न करे। यदि कोई पण्डित बात करने का उचित समय जानकर धर्म तथा अर्थ से युक्त, आर्य-चरित-युक्त बातचीत करना चाहे तो धैर्यवान्, अविरोधी तथा अभिमान शून्य आदमी को चाहिये कि वह दुराग्रह-रहित हो, दुस्साहस-रहित हो, ईर्षा-रहित हो, शान्तचित्त से अच्छी तरह सोच-समझकर बातचीत करे। उसे चाहिये कि वह दूसरों के शुभ-कथन का अनुमोदन करे और अनुचित बोलने का बुरा न माने। उलाहना देना न सीखे, स्खलन को लेकर न बैठे, यूँ ही सूत्रादि को उद्घृत न करे, न वैसा करके प्रश्न को दबावे, न झूठी बात बोले। सत्पुरुषों की बात-चीत ज्ञान के लिये होती है तथा मन में प्रसन्नता पैदा करने के लिये होती है। आर्य-जन इसी प्रकार वार्तालाप करते हैं, यही आर्य-जनों की मन्त्रणा है। इस बात को जानकर मेधावी पुरुष को चाहिये कि अभिमान-युक्त होकर बातचीत न करे।]

(६८)

"भिक्षुओ, यदि अन्य तैर्थिक (दूसरे मतों के) परिब्राजक ऐसा पूछें कि आयुष्मानो ये तीन धर्म हैं। कौन से तीन? राग, द्वेष और मोह। आयुष्मानो! ये तीन धर्म हैं। आयुष्मानो! इन तीनों धर्मों में किस की क्या विशेषता है? किस में क्या खास बात है? किस का क्या विभेद है? भिक्षुओ, दूसरे परिब्राजकों द्वारा इस प्रकार पूछे जाने पर, तुम इस का क्या निराकरण करोगे?"

"भन्ते! भगवान् ही धर्म के मूल हैं, भगवान ही धर्म के नेता हैं, भगवान् ही धर्म के शरण-स्थान हैं। भन्ते! अच्छा हो यदि इस कथन के अर्थ को भगवान ही प्रकाशित करें। भगवान् से सुनकर भिक्षु धारण करेंगे।

"तो भिक्षुओ, सुनो। अच्छी तरह मन में धारण करो। कहता हूँ। 'भन्ते! अच्छा' कह कर उन भिक्षुओं ने भगवान को प्रति-वचन दिया। भगवान् ने यह कहा—

"भिक्षुओ, यदि-अन्य तैर्थिक (=दूसरे मतों के) परिव्राजक ऐसा पूछें कि आयुष्मानो ये तीन धर्म हैं। कौन से तीन? राग, द्वेष और मोह। आयुष्मानो! ये तीन धर्म हैं। आयुष्मानो! इन तीनों धर्मों में किस की क्या विशेषता है? किस में क्या खास बात है? किस का क्या विभेद है? भिक्षुओ, दूसरे परि-व्राजकों द्वारा इस प्रकार पूछे जाने पर तुम इस का इस प्रकार निराकरण करना—आयुष्मानो! राग में अल्पदोष है किन्तु उस से मुक्ति सहज नहीं, द्वेष में महान दोष है, किन्तु उस से मुक्ति सहज है; मूढ़ता में महान दोष है, और उस से मुक्ति भी सहज नहीं।

"आयुष्मानो! इस का क्या हेतु है, क्या कारण है जिस से अनुत्पन्न राग उत्पन्न होता है, उत्पन्न राग बहुलता को, विपुलता को प्राप्त होता है?

"कहना चाहिये कि शुभ-निमित्त इसका हेतु है, कारण है। शुभ-निमित्त का अनुचित ढंग से विचार करने से अनुत्पन्न राग उत्पन्न होता है, उत्पन्न राग बहुलता को, विपुलता को प्राप्त होता है। आयुष्मानो! यह हेतु है, यह कारण है, जिस से अनुत्तन्न राग उत्पन्न होता है, उत्पन्न राग बहुलता को, विपुलता को प्राप्त होता है।

"आयुष्मानो! इस का क्या हेतु है, क्या कारण है जिस से अनुत्पन्न द्वेष उत्पन्न होता है, तथा उत्पन्न द्वेष बहुलता को, विपुलता को प्राप्त होता है।

"कहना चाहिये कि प्रतिकूल-भाव इसका हेतु है, कारण है। प्रतिकूल भाव का अनुचित ढंग से विचार करने से अनुत्पन्न द्वेष उत्पन्न होता है तथा उत्पन्न द्वेष बहुलता को, विपुलता को प्राप्त होता है। आयुष्मानो! यह हेतु है, यह कारण है, जिस से अनुत्पन्न द्वेष उत्पन्न होता है तथा उत्पन्न द्वेष बहुलता को, विपुलता को प्राप्त होता है।

Buddhist Research Library,
Buddha Vihar, Risaldar Park,
LUCKNOW-226001.

"आयुष्मानो ! इस का क्या हेतु है, क्या कारण है, जिस से अनुत्पन्न मोह उत्पन्न होता है, तथा उत्पन्न मोह बहुलता को, विपुलता को प्राप्त होता है ।

"कहना चाहिये कि अनुचित ढंग से विचार करना इस का हेतु है, कारण है। अनुचित ढंग से विचार करने से अनुत्पन्न मोह उत्पन्न होता है, उत्पन्न मोह बहुलता तथा विपुलता को प्राप्त होता है। आयुष्मानो! यह हेतु है, यह कारण है, जिस से अनुत्पन्न मोह उत्पन्न होता है तथा उत्पन्न मोह बहुलता को, विपुलता को प्राप्त होता है।

"आयुष्मानो! इस का क्या हेतु है, क्या कारण है जिस से अनुत्पन्न राग उत्पन्न नहीं होती, तथा उत्पन्न राग का प्रहाण होता है?

"कहना चाहिये कि अशुभ-निमित्त (=असुन्दर-रूप) ही इस का हेतु है, कारण है। अशुभ-निमित्त का उचित ढंग से विचार करने से अनुत्पन्न राग उत्पन्न नहीं होता, तथा उत्पन्न राग का प्रहाण होता है। आयुष्मानो! यह हेतु है, यह कारण है जिस से अनुत्पन्न राग उत्पन्न नहीं होता तथा उत्पन्न राग का प्रहाण होता है।

"आयुष्मानो! इस का क्या हेतु है, क्या कारण है जिस से अनुत्पन्न द्वेष उत्पन्न नहीं होता तथा उत्पन्न द्वेष का प्रहाण होता है।

"कहना चाहिये कि चित्त को विमुक्त करने वाली मैत्री-भावना ही इसका हेतु है, कारण है। चित्त को विमुक्त करने वाली मैत्री भावना का उचित ढंग से विचार करने से अनुत्पन्न द्वेष उत्पन्न नहीं होता, उत्पन्न द्वेष का प्रहाण होता है। आयुष्मानो! यह हेतु है, यह कारण है जिस से अनुत्पन्न द्वेष उत्पन्न नहीं होता, उत्पन्न द्वेष का प्रहाण होता है।

"आयुष्मानो! इस का क्या हेतु है, क्या कारण है, जिस से अनुत्पन्न मोह उत्पन्न नहीं होता, उत्पन्न मोह का प्रहाण होता है।

"कहना चाहिये कि उचित ढंग से विचार करना ही इस का हेतु है, कारण है। उचित ढंग से विचार करने से अनुत्पन्न मोह उत्पन्न नहीं होता, उत्पन्न मोह का प्रहाण होता है। आयुष्मानो! यह हेतु है, यह कारण है, जिस से अनुत्पन्न मोह उत्पन्न नहीं होता, उत्पन्न मोह का प्रहाण होता है।

(६९)

"भिक्षुओ, ये तीन अकुशल-मूल हैं? कौन से तीन? लोभ अकुशल-मूल है, द्वेष अकुशल-मूल है, मोह अकुशल-मूल है।

"भिक्षुओ, जो लोभ है वह भी अकुशल है और लोभी आदमी शरीर से, वाणी से, मन से जो कुछ भी करता है वह भी अकुशल-मूल है। लोभी आदमी लोभ के कारण, लोभ के वशीभूत होकर, दूसरे को बुरा लगने वाला दुःख देता है, मारकर, बाँध कर (धन की) हानि करके, निन्दा करके, (देश से) निकालकर, मैं बलवान् हूँ, मुझे बल (का प्रयोग) चाहिये—इस लिये भी—यह भी अकुशल है। इस लिये लोभ से, लोभ के कारण से, लोभ से उत्पन्न होकर, लोभ के हेतु से अनेक पाप, अकुशल-धर्म पैदा हो जाते हैं।

"भिक्षुओ, जो द्वेष है वह भी अकुशल है और द्वेषी आदमी शरीर से, वाणी से, मन से जो कुछ भी करता है वह भी अकुशल-मूल है। द्वेषी आदमी द्वेष के कारण, द्वेष के वशीभूत होकर, दूसरे को बुरा लगने वाला दुःख देता है, मार कर, बाँधकर, (धन की) हानि करके, निन्दा करके, (देश से) निकालकर, मैं बलवान हूँ, मुझे बल (का प्रयोग) चाहिये—इस लिये भी—यह भी अकुशल है। इस लिये द्वेष से, द्वेष के कारण से, द्वेष से उत्पन्न होकर, द्वेष के हेतु से अनेक पाप, अकुशल-धर्म पैदा हो जाते हैं।

"३. भिक्षुओ, जो मोह है वह भी अकुशल है और मूढ़ आदमी शरीर से, वाणी से, मन से जो कुछ भी करता है वह भी अकुशल-मूल है। मूढ़ आदमी मूढ़ता के कारण, मूढ़ता के वशीभूत होकर, दूसरे को बुरा लगने वाला दुःख देता है, मारकर, बाँधकर, (धन की) हानि करके, निन्दा करके, (देश से) निकाल कर, मैं बलवान हूँ, मुझे बल (का प्रयोग) चाहिये—इस लिये भी—यह भी अकुशल है। इस लिये मूढ़ता से, मूढ़ता के कारण से, मूढ़ता से उत्पन्न होकर, मूढ़ता के हेतु से अनेक पाप, अकुशल-धर्म पैदा हो जाते हैं।

"४. भिक्षुओ, इस प्रकार का आदमी 'अकाल-वादी' कहलाता है, 'असत्य वादी' कहलाता है, 'अनर्थ-वादी' कहलाता है, 'अधर्म-वादी' कहलाता है, 'अविनय-वादी' कहलाता है। भिक्षुओ, इस प्रकार का आदमी, 'अकाल-वादी' भी, 'असत्य-वादी' भी, 'अनर्थ-वादी' भी, 'अधर्म-वादी' भी, 'अविनय-वादी'

भी क्यों कहलाता है ? क्योंकि यह आदमी दूसरे को बुरा लगने वाला दुःख देता है, मार कर, बाँध कर, (धन की) हानि करके, निन्दा करके, (देश से) निकालकर, "मैं बलवान् हूँ, मुझे बलका प्रयोग चाहिये"—इस लिये भी। सच्ची बात कही जाने पर उसे अस्वीकार करता है, स्वीकार नहीं करता ; झूठी बात कही जाने पर उस के आरोप से मुक्त होने का प्रयास नहीं करता कि यह असत्य है, यह अभूत है। इस लिये इस प्रकारका आदमी 'अकाल-वादी' भी, 'असत्य-वादी' भी, 'अनर्थ-वादी' भी, 'अधर्म-वादी' भी, 'अविनय-वादी' भी कहलाता है। भिक्षुओ, इस प्रकार का आदमी लोभ से उत्पन्न, पापी अकुशल-धर्मों के वशीभूत होने के कारण इसी शरीर में चिन्ता-युक्त, अशान्ति-युक्त, जलन-युक्त दुःख अनुभव करता है। ऐसे आदमी के लिये शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर दुर्गति की ही आशा करनी चाहिये। इसी प्रकार द्वेष से उत्पन्न...... मोह से उत्पन्न, पापी अकुशल-धर्मों के वशीभूत होने के कारण इसी शरीर में चिन्ता-युक्त, अशान्ति-युक्त, जलन-युक्त दुःख अनुभव करता है। ऐसे आदमी के लिये शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर दुर्गति की ही आशा करनी चाहिये।

"भिक्षुओ, जैसे चाहे शाल-वृक्ष हो, चाहे धव-वृक्ष हो, चाहे स्पन्दन-वृक्ष हो, यदि वह मालुवा-लता (=अमर-बेल) से लदा हो, घिरा हो तो उस की हानि ही होती है, विनाश ही होता है, हानि-विनाश ही होता है। भिक्षुओ, इसी प्रकार, ऐसा आदमी लोभ से उत्पन्न, पापी अकुशल धर्मों के वशीभत होने के कारण इसी शरीर में चिन्ता-युक्त, अशान्ति-युक्त, जलन-युक्त दुःख अनुभव करता है। ऐसे आदमी के लिये शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर, दुर्गति की ही आशा करनी चाहिये। इसी प्रकार द्वेष से उत्पन्न...... मोह से उत्पन्न, पापी अकुशल धर्मों के वशीभूत होने के कारण इसी शरीर में चिन्ता-युक्त, अशान्ति-युक्त, जलन-युक्त दुःख अनुभव करता है। ऐसे आदमी के लिये शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर दुर्गति की ही आशा करनी चाहिये।

"भिक्षुओ, ये तीन कुशल-मूल हैं। कौनसे तीन ? अलोभ कुशल-मूल, है, अद्वेष कुशल-मूल है, अमोह कुशल-मूल है।

"भिक्षुओ, जो अलोभ है वह भी कुशल है, और अलोभी आदमी शरीरसे, वाणीसे, मनसे जो कुछ भी करता है वह भी कुशल-मूल है। अलोभी आदमी, अलोभके

कारण लोभके वशीभूत न होनेके कारण, दूसरेको बुरा लगनेवाला दुःख नहीं देता है, मार कर, बाँध कर, (धनकी) हानि करके, निन्दा करके, (देशसे) निकालकर, मैं बलवान् हूँ, मुझे बल (का प्रयोग) चाहिये—इसलिये भी––यह भी कुशल है। इसलिये अलोभसे, अलोभके कारण, अलोभसे अुत्पन्न होकर, अलोभके हेतुसे अनेक कुशल-धर्म पदा हो जाते हैं।

"भिक्षुओ, जो अद्वेष है, वह भी कुशल है, और अद्वेषी आदमी शरीरसे, वाणीसे, मनसे जो कुछ भी करता है, वह भी कुशल है। अद्वेषी आदमी, अद्वेषके कारण, द्वेषके वशीभूत न होनेके कारण, दूसरेको जो बुरा लगनेवाला दुःख नहीं देता है, मारकर, बाँधकर, (धनकी) हानिकरके, निन्दा करके, (देशसे) निकालकर, 'मैं बलवान् हूँ, मुझे बलका प्रयोग चाहिये'—इसलिये भी––यह भी कुशल है। अिसलिये अद्वेषसे, अद्वेषके कारण, अद्वेषसे उत्पन्न होकर, अद्वेषके हेतुसे अनेक कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं।

"भिक्षुओ, जो अमोह है, वह भी कुशल है, और मोह-रहित आदमी शरीर से, वाणीसे, मनसे जो कुछ भी करता है, वह भी कुशल है। मोह-रहित आदमी अमोहके कारण, मोहके वशीभूत न होनेके कारण, दूसरेको बुरा लगनेवाला दुःख नहीं देता है, मारकर, बाँधकर, (धनकी) हानिकरके, निन्दा करके, (देशसे) निकाल-कर, 'मैं बलवान् हूँ, मुझे बलका प्रयोग चाहिये'––इसलिये भी—यह भी कुशल है। इसलिये अमोहसे, अमोहके कारण, अमोहसे उत्पन्न होकर, अमोहके हेतुसे अनेक कुशल-धर्म उत्पन्न हो जाते हैं।

"भिक्षुओ, इस प्रकारका आदमी 'काल-वादी' कहलाता है, 'सत्य-वादी' कहलाता है, 'अर्थ-वादी' कहलाता है, 'धर्म-वादी' कहलाता है, 'विनय-वादी' कहलाता है। भिक्षुओ, इस प्रकारका आदमी 'काल-वादी' भी, 'सत्यवादी' भी, 'अर्थवादी' भी, 'धर्म-वादी' भी, 'विनय-वादी' भी क्यों कहलाता है? क्योंकि यह आदमी दूसरेको बुरा लगनेवाला दुःख नहीं देता, मारकर, बाँधकर (धनकी) हानिकरके, निन्दा करके, (देशसे) निकालकर, 'मैं बलवान् हूँ, मुझे बल (का प्रयोग) चाहिये,—इसलिये भी––सच्ची बात कही जानेपर उसे स्वीकार करता है, अस्वीकार नहीं करता, झूठी बात कही जानेपर उस आरोपसे मुक्त होनेका प्रयास करता है कि यह असत्य है, यह अभूत है। इसलिये इस प्रकार

का आदमी 'काल-वादी' भी, 'सत्य-वादी' भी, 'अर्थ-वादी' भी, 'धर्म-वादी' भी, 'विनय-वादी' भी कहलाता है।

"भिक्षुओ, इस प्रकारके आदमीके लोभज पापी अकुशल धर्म प्रहीण हो गये रहते हैं, जड़ जाती रही होती है, कटे ताड़-वृक्षके समान हो गये रहते हैं, अभावको प्राप्त हो गये रहते हैं, भविष्यमें पुनः न उत्पन्न होने वाले। ऐसा आदमी इसी शरीरमें चिन्ता-मुक्त, अशान्ति-मुक्त, जलन-मुक्त सुख अनुभव करता है। वह इसी शरीरमें निर्वाणको प्राप्त होता है। इस प्रकारके आदमीके द्वेषज......मोहज पापी अकुशल-धर्म प्रहीण हो गये रहते हैं.....भविष्यमें पुनः न उत्पन्न होने वाले। ऐसा आदमी इसी शरीरमें चिन्ता-मुक्त, अशान्ति-मुक्त, जलन-मुक्त सुख अनुभव करता है। वह इसी शरीरमें निर्वाणको प्राप्त होता है।

"भिक्षुओ, जैसे चाहे शाल-वृक्ष हो, चाहे धव-वृक्ष हो और चाहे स्पन्दन-वृक्ष हो और उसपर तीन मालुवा लतायें चढ़ी हों, वह मालुवा-लतासे घिरा हो। तब एक आदमी कुदाल और टोकरी लिये आये। वह उस मालुवा-लताकी जड़ काट दे, जड़ काटकर खने, खनकर जड़ोंको निकाल डाले, यहाँ तक कि बीरण-घास भी। वह उस मालुवा लताके टुकड़े, टुकड़े, करे, टुकड़े-टुकड़े करके उसे चीर डाले, चीरकर खपचियाँ-खपचियाँ कर दे, खपचियाँ-खपचियाँ करके हवा-धूपमें सुखाये., हवा-धूपमें सुखाकर आगसे जलाये, आगसे जलाकर राख कर दे, राख करके या तो तेज-हवामें उड़ा दे या शीघ्रगामी नदीमें बहा दे। ऐसा होने पर भिक्षुओ वह मालुवा-लता जड़मूलसे नहीं रहेगी, कटे ताड़-वृक्षकी तरह हो जायेगी, अभाव-प्राप्त हो जायेगी, उसकी भावी-उत्पत्तिकी संभावना नहींरहेगी। इस तरह भिक्षुओ! इस प्रकारके आदमीके लोभज पापी अकुशल-धर्म प्रहीण हो गये रहते हैं, जड़ जाती रही होती है, कटे ताड़ वृक्षके समान हो गये रहते हैं, अभावको प्राप्त हो गये रहते हैं, भविष्यमें पुनः न उत्पन्न होने वाले। ऐसा आदमी इसी शरीरमें चिन्ता-मुक्त, अशान्ति-मुक्त, जलन-मुक्त सुख अनुभव करता है। वह इसी शरीरमें निर्वाण को प्राप्त होता है। इस प्रकारके आदमीके द्वेषज.....मोहज पापी अकुशल-धर्म प्रहीण हो गये रहते हैं......भविष्यमें पुनः न उत्पन्न होने वाले। ऐसा आदमी इसी शरीरमें चिन्ता-मुक्त, अशान्ति-मुक्त, जलन-मुक्त सुख अनुभव करता है। वह इसी शरीरमें निर्वाणको प्राप्त होता है।

"भिक्षुओ, ये तीन कुशल-मूल हैं।

(७०)

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीमें मिगारमाताके पूर्वाराम प्रासादमें विहार कर रहे थे। उस समय मिगारमाता उपोसथके दिन जहाँ भगवान् थे, वहाँ गयी। जाकर भगवान्को अभिवादन कर एक एक और बैठी। एक ओर बैठी भिगारमाता विशाखाको भगवान्ने यह कहा—विशाखे! आज तू दिन चढ़ते ही कैसे आयी ?"

"भन्ते! आज मैंने उपोसथ (-ब्रत) रखा है।"

"विशाखे! उपोसथ (-ब्रत) तीन प्रकारका होता है! कौनसे तीन प्रकार-का? गोपाल-उपोसथ, निर्ग्रन्थ-उपोसथ तथा आर्य-उपोसथ।

"विशाखे! गोपाल-उपोसथ कैसे होता है? विशाखे! जैसे कोई ग्वाला शामको मालिकोंको उनकी गौयें सौंप कर यह सोचे कि आज इन गौवोंने अमुक अमुक जगह चराई की, आज इन गौवोंने अमुक अमुक जगह पानी पिया। कल ये गौवें अमुक अमुक जगह चरेंगी तथा अमुक अमुक जगह पानी पियेंगी। इसी प्रकार विशाखे! यहाँ कोई कोई उपोसथ-ब्रती ऐसा सोचता है—आज मैंने यह और यह खाया तथा यह और यह भोजन किया। कल मैं यह और यह खाऊंगा तथा यह और यह भोजन करूँगा। वह उस लोभ-युक्त चित्तसे दिन गुजार देता है। विशाखे! इस प्रकार गोपाल-उपोसथ होता है। विशाखे! इस प्रकारके गोपाल उपोसथ (-ब्रत) का न महान् फल होता है, न महान् परिणाम होता है, न महान् प्रकाश होता है तथा न महान् विस्तार होता है।

"हे विशाखे! निर्ग्रन्थ-उपोसथ कैसे होता है?

"हे विशाखे! निर्ग्रन्थ नामक श्रमणोंकी जाति है, वे अपने मतानुयाइयों को इस प्रकार ब्रत लिवाते हैं—हे पुरुष! तू यहाँ है। पूर्व-दिशामें सौ योजन तक जितने प्राणी हैं तू उन्हें दण्डसे मुक्तकर, पश्चिम-दिशामें सौ योजन तक जितने प्राणी हैं, तू उन्हें दण्डसे मुक्तकर, उत्तर-दिशामें सौ योजनतक जितने प्राणी हैं तू उन्हें दण्डसे मुक्तकर तथा दक्षिण-दिशामें जितने प्राणी हैं तू उन्हें दण्डसे मुक्तकर। इस प्रकार कुछ प्राणियोंके प्रति दया व्यक्त करते हैं, कुछके प्रति दया व्यक्त नहीं करते। वे उपोसथ-दिनपर श्रावकोंको इस प्रकार ब्रत लिवाते हैं—हे पुरुष! तू आ। सभी वस्त्रोंको त्याग कर इस प्रकार ब्रत ले—न मैं कहीं, किसीका, कुछ हूँ, और न मेरा कहीं,

कोई कुछ है। किन्तु उसके माता-पिता जानते हैं कि यह मेरा पुत्र है और पुत्र भी जानता है कि ये मेरे माता-पिता हैं। उसके पुत्र-स्त्री (परिवार) भी जानते हैं कि यह हमारा स्वामी है और वह भी जानता है कि ये मेरे पुत्र-स्त्री हैं। उसके दास-नौकर-चाकर भी जानते हैं कि यह हमारा मालिक है और वह भी जानता है कि ये मेरे दास-नौकर-चाकर हैं। जिस समय सभी व्रत लेते हैं, उस समय वे झूठा व्रत लेते हैं। मैं कहता हूँ कि इस प्रकार वे मृषा-वादी होते हैं। उस रात्रिके बीतने पर वह उन (त्यक्त) वस्तुओंको बिना किसीके दिये ही उपयोगमें लाते हैं। इस प्रकार वे चोरी करने वाले होते हैं। इस प्रकार हे विशाखे ! यह निर्ग्रन्थ-उपोसथ (व्रत) होता है। विशाखे ! इस प्रकारके उपोसथ-व्रतका न महान् फल होता है, न महान् परिणाम होता है, न महान प्रकाश होता है तथा न महान् विस्तार होता है।

"हे विशाखे ! आर्य-उपोसथ कैसे होता है ?

"विशाखे ! मैले-चित्तको क्रमशः निर्मल किया जाता है ? विशाखे ! मैले-चित्तको किस प्रकार क्रमशः निर्मल किया जाता है ?

"विशाखे ! आर्य-श्रावक तथागतका अनुस्मरण करता है—वह भगवान् अर्हत हैं, सम्यक सम्बुद्ध हैं, विद्या तथा आचरणसे युक्त हैं, सुगति-प्राप्त हैं, लोकके जानकार हैं, सर्व-श्रेष्ठ हैं (कुमार्ग-गामी) पुरुषोंका दमन करनेवाले सारथी हैं तथा देवताओं और मनुष्योंके शास्ता हैं। वे भगवान् बुद्ध हैं। इस प्रकार तथागतका अनुस्मरण करनेवालेका चित्त प्रसन्न होता है, मोद बढ़ता है, जो चित्तके मैल हैं उनका प्रहाण होता है जैसे विशाखे ! मैला सिर क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे ! मैले सिरवालेका सिर क्रमशः कैसे निर्मल होता है ? खली होनेसे, मट्टी होनेसे, पानी होनेसे तथा आदमीका अपना प्रयत्न होनेसे। हे विशाखे ! इस प्रकार मैले सिरवालेका सिर क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे ! मैला चित्त किस प्रकार क्रमशः निर्मल होता है ?

"विशाखे ! आर्य-श्रावक तथागतका अनुस्मरण करता है—वह भगवान् अर्हत हैं......वे भगवान् बुद्ध हैं। इस प्रकार तथागतका अनुस्मरण करने वालेका चित्त प्रसन्न होता है, मोद बढ़ता है, जो चित्तके मैल हैं उनका प्रहाण होता है। विशाखे ! इसे कहते हैं कि आर्य-श्रावक ब्रह्म-उपोसथ-व्रत रखता हैं, ब्रह्माके साथ रहता है, 'ब्रह्म' को लेकर उसका चित्त प्रसन्न होता है, मोद बढ़ता है, और जो चित्तके

मैल हैं उनका प्रहाण होता है। इस प्रकार विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता है। विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः कैसे निर्मल होता है?

"विशाखे! आर्य-श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है—यह धर्म भगवान् द्वारा भली प्रकार कहा गया है, यह धर्म इह-लोक सम्बन्धी है, इस धर्मका पालन सभी (देशों तथा) कालोंमें किया जा सकता है, यह धर्म निर्वाण तक ले जानेमें समर्थ है तथा प्रत्येक बुद्धिमान् आदमी इस धर्मका साक्षात कर सकता है। इस प्रकार धर्मका अनुस्मरण करनेवालेका चित्त प्रसन्न होता है, मोद बढ़ता है, जो चित्तके मैल हैं उनका प्रहाण होता है, जैसे विशाखे! मैला-बदन क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे! मैला-बदन क्रमशः कैसे निर्मल होता है? शंखसे, चूनेसे, पानीसे तथा आदमीके प्रयत्नसे। विशाखे! इस प्रकार मैला-बदन क्रमशः निर्मल होता है। इसी प्रकार विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे! मैला-चित्त किस प्रकार क्रमशः निर्मल होता है?

"विशाखे! आर्य-श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है—यह धर्म भगवान् द्वारा भली प्रकार कहा गया है.....इस धर्मका साक्षात् कर सकता है। इस प्रकार धर्मका अनुस्मरण करनेवालेका चित्त प्रसन्न होता है, मोद बढ़ता है, जो चित्तके मैल हैं उनका प्रहाण होता है। विशाखे! इसे कहते हैं कि आर्य-श्रावक धर्म-उपोसथ-व्रत रखता है, धर्मके साथ रहता है, धर्मको लेकर उसका चित्त प्रसन्न होता है, मोद बढ़ता है और जो चित्तके मैल हैं उनका प्रहाण होता है। इस प्रकार विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता है। विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः कैसे निर्मल होता है?

"विशाखे! आर्य-श्रावक संघका अनुस्मरण करता है—भगवान्‌का श्रावक-संघ सुन्दर मार्गपर चलने वाला है, सीधे-मार्ग पर चलने वाला है, न्याय-मार्ग पर चलनेवाला है तथा समीचीन मार्गपर चलने वाला है, यही जो आर्य-व्यक्तियोंकी चार जोड़ियाँहैं, ये जो आठ प्रकारके व्यक्ति होते हैं, यही भगवान्‌का श्रावक-संघ है। यह संघ आदर करने योग्य है। आतिथ्य करने योग्य है। पहुनाई

करने योग्य है। दान-दक्षिणा देने योग्य है तथा हाथ जोड़कर नमस्कार करने योग्य है। यह लोगोंके लिये सर्व-श्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र है। इस प्रकार संघका अनुस्मरण करनेवालेका चित्त प्रसन्न होता है, मोद बढ़ता है, जो चित्तके मैल हैं उनका प्रहाण होता है जैसे विशाखे! मैला-वस्त्र क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे! मैला-वस्त्र क्रमशः कैसे निर्मल होता है? खारी मट्टी तथा गोबर बराबर बराबर होनेसे, पानी होनेसे तथा आदमीका प्रयत्न होनेसे। विशाखे! इस प्रकार मैला-वस्त्र क्रमशः निर्मल हाता है। विशाखे! इसी प्रकार मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः कैसे निर्मल होता है?

"विशाखे! आर्य-श्रावक संघका अनुस्मरण करता है—भगवान् का श्रावक संघ सुन्दर मार्ग पर चलने वाला है.... सर्व श्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र है। इस प्रकार संघ का अनुस्मरण करनेवालेका चित्त प्रसन्न होता है, मोद बढ़ता है, जो चित्तके मैल हैं उनका प्रहाण होता है। इसी प्रकार विशाखे! मैला चित्त क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता है। विशाखे! मला चित्त क्रमशः कैसे निर्मल होता है? विशाखे! आर्य-श्रावक अपने शीलोंको स्मरण करता है—अखण्डित, छिद्र-रहित, बिना धब्बेके, पवित्र, शुद्ध, विज्ञ पुरुषों द्वारा प्रशंसित, अकलंकित तथा समाधि की ओर ले जाने वाले! इस प्रकार शीलका अनुस्मरण करने वालेका चित्त प्रसन्न होता है, मोद बढ़ता है, जो चित्त के मेल हैं उनका प्रहान होता है जैसे विशाखे! मैला-शीशा क्रमशः साफ होता है।

"विशाखे! मैला-शीशा क्रमशः कैसे निर्मल होता है? तेलसे, राखसे, बालोंके गुच्छे और आदमीके प्रयत्नसे। विशाखे! इस प्रकार मैला-शीशा क्रमशः साफ होता है। इसी प्रकार विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः कैसे निर्मल होता है? विशाखे! आर्य-श्रावक अपने शीलोंका स्मरण करता है—अखण्डित,.......समाधिकी ओर ले जाने वाले। इस प्रकार शीलका अनुस्मरण करनेवालेका चित्त प्रसन्न होता है... प्रहाण होता है। विशाखे! इस प्रकार मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता है। विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः कैसे निर्मल होता है? विशाखे! आर्य-श्रावक देवताओंका स्मरण करता

है—चातुम्महाराजिका देवता हैं, तावतिंस देवता हैं, याम देवता हैं, तुषित देवता हैं निम्मान-रति देवता हैं, परनिम्मितवसवत्ती देवता हैं, ब्रह्मकायिक देवता हैं, और इससे आगे भी देवता हैं। जिस प्रकारकी श्रद्धासे युक्त वे देवता इस लोकसे मरकर वहाँ उत्पन्न हुए हैं, मुझमें भी उसी प्रकारकी श्रद्धा है; जिस प्रकारके शीलसे युक्त वे देवता इस लोक से मरकर वहाँ उत्पन्न हुए हैं, मुझमें भी उसी प्रकारका शील है; जिस प्रकारके श्रुत (=ज्ञान) से युक्त वे देवता इस लोकसे मरकर वहाँ उत्पन्न हुए हैं, मुझमें भी उसी प्रकारका ज्ञान है, जिस प्रकारके त्यागसे युक्त वे देवता इस लोकसे मरकर वहाँ उत्पन्न हुए हैं; मुझमें भी उसी प्रकारका त्याग है; जिस प्रकारकी प्रज्ञासे युक्त वे देवता इस लोकसे मरकर वहाँ उत्पन्न हुए हैं, मुझमें भी उसी प्रकारकी प्रज्ञा है। इस प्रकार अपनी और उन देवताओंकी श्रद्धा, शील, श्रुत, त्याग तथा प्रज्ञाका अनुस्मरण करने वालेका चित्त प्रसन्न होता है, मोद बढ़ता है, चित्तके जो मैल हैं, उनका प्रहाण होता है। जैसे विशाखे! मलिन-सोना क्रमशः साफ होता है।

"विशाखे! मलिन-सोना कैसे क्रमशः साफ होता है? अंगीठी होनेसे, निमक होनेसे, गेरू होनेसे, धौंकनी होनेसे, संडासी होनेसे तथा उसके लिये आदमीका प्रयास होनेसे। विशाखे! इस प्रकार मलिन सोना क्रमशः साफ होता है। इसी प्रकार विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता जाता है।

"विशाखे! मैला चित्त किस प्रकार निर्मल होता है? विशाखे! आर्य-श्रावक देवताओंका अनुस्मरण करता है— चातुम्महाराजिका देवता हैं, तावतिंस देवता हैं..... इससे आगे भी देवता हैं। जिस प्रकारकी श्रद्धासे युक्त वे देवता इस लोकसे मरकर वहाँ उत्पन्न हुए हैं, मुझमें भी उसी प्रकारकी श्रद्धा है; जिस प्रकारके शील..... श्रुत... त्याग.... प्रज्ञासे युक्त वे देवता इस लोकसे मरकर वहाँ उत्पन्न हुए हैं, मुझमें भी उसी प्रकारकी प्रज्ञा है। इस प्रकार अपनी और उन देवताओंकी श्रद्धा, शील, श्रुत, त्याग तथा प्रज्ञाका अनुस्मरण करनेवालेका चित्त प्रसन्न होता है, मोद बढ़ता है, चित्तके जो मैल हैं उनका प्रहाण होता है। इस प्रकार विशाखे! मैला-चित्त क्रमशः निर्मल होता है।

"विशाखे! वह आर्य-श्रावक यह विचार करता है—अर्हत जीवनभर प्राणी-हिंसा छोड़, प्राणी-हिंसा से विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, पाप-भीरू, दयावान, सभी प्राणियोंका हित और उनपर अनुकम्पा करते विचरते हैं। मैं भी

आजकी रात और यह दिन प्राणी-हिंसा छोड़, प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, पाप-भीरू, दयावान् होकर सभी प्राणियोंका हित और उनपर अनुकम्पा करते हुए विहार करूं। इस अंशमें भी मैं अर्हतोंका अनुकरण करनेवाला होऊंगा तथा मेरा उपोसथ (-व्रत) पूरा होगा।

"अर्हत जीवन भर चोरी करना छोड़, चोरी करनेसे विरत रह, केवल दिया ही लेने वाले, दियेकी ही आकांक्षा करनेवाले, चोरी न कर, पवित्र जीवन बिताते हैं। मैं भी आजकी रात और यह दिन चोरी करना छोड़, चोरी करनेसे विरत रह, केवल दिया ही लेनेवाला, दियेकी ही आकांक्षा करनेवाला, चोरी न कर, पवित्र जीवन बिताऊं। इस अंशमें भी मैं अर्हतोंका अनुकरण करनेवाला होऊंगा तथा मेरा उपोसथ (-व्रत) पूरा होगा।

"अर्हत जीवन भर अब्रह्मचर्य छोड़, ब्रह्मचारी, अनाचार-रहित, मैथुन ग्राम्य-धर्मसे विरत रहते हैं। मैं भी आजकी रात और यह दिन अब्रह्मचर्य छोड़, ब्रह्मचारी, अनाचार-रहित, मैथुन ग्राम्य-धर्मसे विरत रहकर बिताऊं। इस अंशमें भी मैं अर्हतोंका अनुकरण करनेवाला होऊंगा तथा मेरा उपोसथ (-व्रत) पूरा होगा।

"अर्हत जीवनभर मृषा-वाद छोड़, मृषावादसे विरत हो, सत्यवादी, विश्वसनीय स्थिर, निर्भर करने योग्य तथा लोकमें झूठ न बोलने वाले होकर रहते हैं। मैं भी आजकी रात और यह दिन मृषा-वाद छोड़, मृषावादसे विरत हो, सत्यवादी, विश्वसनीय, स्थिर, निर्भर करने योग्य तथा लोकमें झूठ न बोलने वाला होकर रहूँ। इस अंशमें भी मैं अर्हतोंका अनुकरण करने वाला होऊंगा तथा मेरा उपोसथ (-व्रत) पूरा होगा।

"अर्हत जीवन भर सुरा-मेरय-मद्य आदि प्रमादकारक वस्तुओंको छोड़, सुरा-मेरय मद्य आदि प्रमादकारक वस्तुओंसे विरत हो रहते हैं। मैं भी आजकी रात और यह दिन सुरा-मेरय-मद्य आदि प्रमादकारक वस्तुओंसे विरत हो रहूँ। इस अंश में मैं भी अर्हतोंका अनुकरण करनेवाला होऊंगा तथा मेरा उपोसथ (-व्रत) पूरा होगा।

"अर्हत जीवन भर एकाहारी, रात्रि-भोजन-त्यक्त, विकाल-भोजनसे विरत हो रहते हैं। मैं भी आज की रात और यह दिन एकाहारी, रात्रि-भोजन-त्यक्त, विकाल-भोजनसे विरत हो बिताऊँ। इस अंशमें भी मैं अर्हतोंका अनुसरण करनेवाला होऊंगा तथा मेरा उपोसथ (-व्रत) पूरा होगा।

"अर्हत जीवन भर नाचने, गाने, बजाने, तमाशे देखने, माला-गन्ध-विलेपन धारण-मण्डन आदि जो विभूषित करनेके सामान हैं उनसे विरत रहते हैं। मैं भी आजकी रात और यह दिन नाचने, गाने, बजाने, तमाशा देखने, माला-गन्ध-विलेपन धारण-मण्डन आदि जो विभूषित करनेके सामान हैं उनसे विरत रहकर बिताऊं। इस अंशमें भी मैं अर्हतोंका अनुसरण करनेवाला होऊंगा तथा मेरा उपोसथ (-व्रत) पूरा होगा।

"अर्हत जीवन भर ऊंची शैय्या, महान् शैय्याको छोड़, ऊंची शैय्या, महान् शैय्यासे विरत हो, नीचे शयनासनको ही काममें लाते हैं—चारपाईको या चटाईको। मैं भी आजकी रात और यह दिन ऊंची शैय्या, महान् शैय्याको छोड़, ऊंची शैय्या, महान् शैय्यासे विरत हो, नीचे शयनासन को ही काममें लाऊं—चारपाईको या चटाईको। इस अंशमें भी मैं अर्हतोंका अनुसरण करनेवाला होऊंगा तथा मेरा उपोसथ (-व्रत) पूरा होगा।

"विशाखे! इस प्रकार आर्य-उपोसथ होता है। विशाखे! इस प्रकार रखा गया आर्य-उपोसथ व्रत महान् फल होता है, महान् परिणाम वाला होता है, महान् प्रकाश वाला होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है।

"कितने महान् फल वाला होता है, कितने महान् परिणाम वाला होता है, कितने महान् प्रकाशवाला होता है तथा कितने महान् विस्तार वाला होता है?

"विशाखे! जैसे कोई महान् सप्त-रत्न-बहुल महाजनपदोंका ऐश्वर्याधिपत्य राज्य करे, जैसे अंगोंका, मगधोंका, काशीका, कोशलका, वज्जियोंका, मल्लोंका, चेदियोंका, वंगोंका, कुरुओंका, पंचालोंका, मत्स्योंका, शौरसेनोंका, अश्मकोंका, अवन्तीका, गन्धारोंका तथा कम्बोजका वह अष्टांग उपोसथ व्रत के सोलहवें हिस्सेके भी बराबर नहीं होता। यह किस लिअे विशाखे! दिव्य-सुखके मुकाबलेमें मानुषी-राज्य विचारे का कुछ मूल्य नहीं।

"विशाखे! जितना समय मनुष्योंका पचास वर्ष होते हैं, वह चातुम्महाराजिक देवताओंका एक रात-दिन होता है। उस रातसे तीस रातोंका महीना। उस महीनेसे बारह महीनोंका वर्ष। उस वर्षसे पाँच-सौ-वर्ष चातुम्महाराजिक देवताओंकी आयुकी सीमा। विशाखे! इसके लिअे स्थान है कि अष्टांगिक उपोसथ (-व्रत) पालन करनेवाला स्त्री या पुरुष शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर चातुम्महा-

राजिक देवताओंका सहवासी हो जाये। विशाखे! इसी लिये यह कहा गया कि दिव्य-सुखके मुकाबलेमें मानुषी राज्य बिचारेका कुछ मूल्य नहीं।

" विशाखे! जितना समय मनुष्योंके पचास वर्ष होते हैं, वह तावतिंस देवताओंका एक रात-दिन होता है। उस रातसे तीस रातोंका महीना। उस महीनेसे बारह महीनोंका वर्ष! उस वर्षसे हजार दिव्य वर्ष, तावतिंस देवताओंकी आयुकी सीमा। विशाखे! इसके लिये स्थान है कि अष्टांगिक उपोसथ-व्रत पालन करने वाला स्त्री या पुरुष शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर तावतिंस देवताओंका सहवासी हो जाय। विशाखे! इसीलिये यह कहा गया कि दिव्य-सुखके मुकाबलेमें मानुषी राज्य बिचारेका कुछ मूल्य नहीं।

" विशाखे! जितना समय मनुष्योंके दो सौ वर्ष होते हैं, वह याम-देवताओंका एक रात-दिन होता है। उस रातसे तीस रातोंका महीना। उस महीनेसे बारह महीनोंका वर्ष। उस वर्षसे दो हजार दिव्य-वर्ष, तावतिंस देवताओंकी आयुकी सीमा। विशाखे! इसके लिये स्थान है कि अष्टांगिक उपोसथ-व्रत पालन करने वाली स्त्री या पुरुष शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर याम-देवताओंका सहवासी हो जाय। विशाखे! इसीलिये यह कहा गया है कि दिव्य-सुखके मुकाबलेमें मानुषी-राज्य बिचारेका कुछ मूल्य नहीं।

" विशाखे! जितना समय मनुष्योंके चार सौ वर्ष होते हैं, वह तुषित देवताओंका एक रात-दिन होता है। उस रातसे तीस रातोंका महीना। उस महीनेसे बारह महीनोंका वर्ष। उस वर्षसे चार हजार दिव्य-वर्ष, तुषित-देवताओंकी आयुकी सीमा। विशाखे! इसके लिये स्थान है कि अष्टांगिक उपोसथ-व्रत-पालन करनेवाली स्त्री या पुरुष शरीर छुटनेपर, मरनेके अनन्तर तुषित-देवताओंका सहवासी हो जाय। विशाखे! इसी लिये यह कहा गया कि दिव्य-सुखके मुकाबलेमें मानुषी राज्य बिचारेका कुछ मूल्य नहीं।

" विशाखे! जितना समय मनुष्योंके आठ सौ वर्ष होते हैं वह निम्मान-रति देवताओंका एक रात-दिन होता है। उस रातसे तीस रातोंका महीना। उस महीनेसे बारह महीनोंका वर्ष। उस वर्षसे आठ हजार दिव्य-वर्ष, निम्मान-रति देवताओंकी आयुकी सीमा। विशाखे! इसके लिये स्थान है कि अष्टांगिक उपोसथ-व्रत-पालन करनेवाली स्त्री या पुरुष शरीर छूटनेपर, मरने के अनन्तर

निम्मान-रति देवताओंका सहवासी हो जाय। विशाखे! इसी लिये यह कहा गया कि दिव्य-सुखके मुकाबलेमें मानुषी-राज्य बिचारेका कुछ मूल्य नहीं।

"विशाखे! जितना समय मनुष्यों के सोलह सौ वर्ष होते हैं वह परनिम्मितवसवत्ती देवताओं का एक रात-दिन होता है। उस रात से तीस रातों का महीना। उस महीने से बारह महीनोंका वर्ष। उस वर्ष से सोलह हजार वर्ष परनिम्मितवसवत्ती देवताओं की आयु की सीमा। विशाखे! इस के लिये स्थान है कि अष्टांगिक उपोसथ-व्रत-पालन करने वाली स्त्री या पुरुष शरीर छुटने पर मरने के अनन्तर, परनिम्मितवसवत्ती देवताओं का सहवासी हो जाय। विशाखे! इसी लिये यह कहा गया कि दिव्य-सुख के मुकाबले में मानुषी-राज्य बिचारे का कुछ मूल्य नहीं।"

पाणं न हाने न चादिन्नं आदिये
मुसा न भासे न च मज्जपो सिया
अब्रह्मचर्य्या विरमेय्य मेथुना
रत्तिं न भुञ्जेय्य विकालभोजनं॥
मालं न धारेय्य न च गन्धं आचरे
मञ्चे छमायं वसयेथ सन्थते
एतं हि अट्ठंगिकमाहुपोसथं
बुद्धेन दुक्खंतगुणं पकासितं॥
चन्दो च सुरियो च उभो सुदस्सना
ओभासयं अनुपरियन्ति यावता
तमोनुदा ते पन अन्तलिक्खगा
नभे पभासन्ति दिसा विरोचना
एतस्मिं यं विज्जति अन्तरे धनं
मुत्तं मणि वेळुरियं च भद्दकं
सिंगीसुवण्णं अथवापि कञ्चनं
यं जातरूपं हाटकं ति वुच्चति
अट्ठंगुपेतस्स उपोसथस्स
कलं पि ते नानुभवन्ति सोळसिं

चन्दप्पभा तारगणा च सब्बे
तस्मा ही नारी च नरो च सीलवा
अट्ठंगुपेतं उपवस्सुपोसथं
पुञ्ञानि कत्वान सुखुद्रयानि
अनिन्दिता सग्गमुपेन्ति ठानं

[प्राणी-हिंसा न करे, चोरी न करे, झूठ न बोले, मद्यप न होवे। अब्रह्मचर्य्य मैथुन से विरत रहे। रात्रि को विकाल-भोजन न करे। माला न पहने। सुगन्धि न धारण करे। मञ्च पर या बिछी-भूमि पर रहे। बुद्ध ने दुक्ख का अन्त करने वाले इस अष्टांग-उपोसथ-व्रत को प्रकाशित किया है। चन्द्रमा तथा सूर्य्य दोनों सुदर्शन हैं। वे जहाँ तक (सम्भव है, वहाँ तक) प्रकाश फैलाते हैं। वे अन्तरिक्षगामी हैं। अन्धकार के विध्वंसक हैं। वे आकाश की सभी दिशाओं को आलोकित करते हैं। और यहाँ इस बीच में जो कुछ भी मुक्ता, मणी तथा श्रेष्ठ बिल्लौर धन है, स्वर्ण अथवा काञ्चन, जो जातरूप वा हाटक भी कहलाता है, वह तथा चन्द्रमा का प्रकाश और सभी तारागण अष्टांग-उपोसथ-व्रत पालन करने वाले के सोलहवें हिस्से के भी बराबर नहीं होते। इस लिये जो सदा-चारी नारी और नर हैं वे अष्टांग उपोसथ (-व्रत) का पालन कर, तथा सुख-दायक पुण्य-कर्म कर, आनिन्दित रह, स्वर्ग-स्थान को प्राप्त होते हैं।]

(७१)

श्रावस्ती-कथा।

उस समय छन्न परिब्राजक जहाँ आयुष्मान आनन्द था, वहाँ पहुँचा। पहुँच कर, आयुष्मान आनन्द के साथ कुशल-क्षेम की बात-चीत करके एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए छन्न परिब्राजक ने आयुष्मान आनन्द को यह कहा—

"आनन्द! आप लोग भी राग के प्रहाण की बात करते हैं, द्वेष..... मोह के प्रहाण की बात करते हैं।"

"हाँ आयुष्मान! हम राग के प्रहाण की बात करते हैं, द्वेष.......मोह के प्रहाण की बात करते हैं।"

"आयुष्मान! आप राग में क्या दोष देखकर राग के प्रहाण की बात करते हैं, द्वेष में क्या दोष......मोह में क्या दोष देखकर मोह के प्रहाण कीबात करते हैं?"

"आयुष्मान ! जो राग से अनुरक्त है, जो राग के वशीभूत है वह अपने दुःख की भी बात सोचता है, पराये दुःख की भी बात सोचता है, दोनों के दुःख की भी बात सोचता है, वह चैतसिक-दुःख दौर्मनस्य का अनुभव करता है। राग का नाश होने पर न वह अपने दुःख की बात सोचता है, न पराये दुःख की बात सोचता है, न दोनों के दुःख की बात सोचता है; वह चैतसिक-दुःख दौर्मनस्य का अनुभव नहीं करता है।

"आयुष्मान ! जो राग से अनुरक्त है, जो राग के वशीभूत है वह शरीर से दुष्कर्म करता है, वाणी से दुष्कर्म करता है, मन से दुष्कर्म करता है। राग का नाश होने पर न वह शरीर से दुष्कर्म करता है, न वाणी से दुष्कर्म करता है और न मन से दुष्कर्म करता है।

"आयुष्मान ! जो राग से अनुरक्त है, जो राग के वशीभूत है वह यथार्थ आत्मार्थ भी नहीं पहचानता है, यथार्थ परार्थ भी नहीं पहचानता है, यथार्थ उभयार्थ भी नहीं पहचानता है। राग का नाश होने पर वह यथार्थ आत्मार्थ भी पहचानता है, यथार्थ परार्थ भी पहचानता है, यथार्थ उभयार्थ भी पहचानता है।

"आयुष्मान ! जो राग है वह अन्धा बना देने वाला है, चक्षु-रहित कर देने वाला है, अज्ञानी बना देने वाला है, प्रज्ञा का नाश कर देने वाला है, हानि पहुँचाने वाला है, निर्वाण-मार्ग का बाधक है।

"आयुष्मान ! जो द्वेष से दुष्ट है वह......

"आयुष्मान ! जो मोह से मूढ़ है, मोह के वशीभूत है वह अपने दुःख की भी बात......पराये दुःख......दोनों के दुःख की भी बात सोचता है, वह चैतसिक दुःख दौर्मनस्य का अनुभव करता है। मोह का नाश हो जाने पर न वह अपने दुःख की बात सोचता है......न पराये दुःख......न दोनों के दुःख की बात सोचता है, वह चैतसिक-दुःख दौर्मनस्य का अनुभव नहीं करता।

......"आयुष्मान ! जो मोह से मूढ़ है, मोह के वशीभूत है वह शरीर से दुष्कर्म करता है, वाणी से दुष्कर्म करता है, मन से दुष्कर्म करता है। मोह का नाश होने पर, न वह शरीर से दुष्कर्म करता है, न वाणी से दुष्कर्म करता है और न मन से दुष्कर्म करता है।

"आयुष्मान। जो मोह सेमूढ़ है, जो मोह के वशीभूत है वह यथार्थ आत्मार्थ भी नहीं पहचानता है, यथार्थ परार्थ भी नहीं पहचानता है, यथार्थ उभयार्थ भी नहीं

पहचानता है। मोह का नाश होने पर वह यथार्थ आत्मार्थ भी पहचानता है, यथार्थ परार्थ भी पहचानता है, यथार्थ उभयार्थ भी पहचानता है।

"आयुष्मान! जो मोह है वह अन्धा बना देने वाला है, चक्षु-रहित कर देने वाला है, अज्ञानी बना देने वाला है, प्रज्ञा का नाश कर देने वाला है, हानि पहुँचाने वाला है, निर्वाण-मार्ग का बाधक है।

"आयुष्मान्! हम राग का यह बुरा-परिणाम देखकर राग के प्रहाण की बात करते हैं, द्वेष का यह बुरा परिणाम देखकर द्वेष के प्रहाण की बात करते हैं, तथा मोह का यह बुरा परिणाम देखकर मोह के प्रहाण की बात करते हैं।"

"आयुष्मान! क्या इस राग, द्वेष तथा मोह के प्रहाण का पथ है, मार्ग है?"

"आयुष्मान! इस राग, द्वेष तथा मोह के प्रहाण का पथ है, मार्ग है।"

"आयुष्मान! इस राग, द्वेष तथा मोह के प्रहाण के लिये कौन सा पथ है, कौन सा मार्ग है?"

"यही आर्य-अष्टांगिक मार्ग है, जो कि है सम्यक् दृष्टि......सम्यक् समाधि। आयुष्मान्। इस राग, द्वेष तथा मोह के प्रहाण के लिये यह पथ है, यह मार्ग है।"

"आयुष्मान! इस राग, द्वेष तथा मोह के प्रहाण का यह श्रेष्ठ-पथ है, श्रेष्ठ-मार्ग है। आनन्द! यह अप्रमादी बने रहने के लिये पर्य्याप्त है।"

(७२)

एक समय आयुष्मान आनन्द कोशाम्बी के घोषिताराम में विहार कर रहे थे।..........................

उस समय आजीवक सम्प्रदाय का एक गृहस्थ-शिष्य जहाँ आयुष्मान आनन्द थे, वहाँ आया। पास जाकर आयुष्मान आनन्द को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठ उस आजीवक गृहस्थ-शिष्य ने आयुष्मान आनन्द को यह कहा—

"भन्ते आनन्द! संसार में किन का धर्म सु-आख्यात (भली प्रकार कहा गया) है! संसार में कौन ठीक मार्ग पर चलते हैं? संसार में कौन सुगति-प्राप्त हैं?"

"तो गृहपति! मैं तुझ से ही पूछता हूँ, जैसा तुझे लगे वैसा कहना। तो हे गृहपति! तू क्या मानता है? जो राग के प्रहाण का उपदेश देते हैं,

द्वेष के प्रहाण का उपदेश देते हैं तथा मोह के प्रहाण का उपदेश देते हैं उनका धर्म भली प्रकार कहा गया है वा नहीं? तुझे कैसा लगता है?"

"भन्ते! जो राग के प्रहाण के लिये धर्मोपदेश देते हैं, द्वेष के प्रहाण के लिये धर्मोपदेश देते हैं, मोह के प्रहाण के लिये धर्मोपदेश देते हैं, उनका धर्म भली प्रकार कहा गया है--इस विषय में मुझे ऐसा होता है।"

"हे गृहपति! क्या मानते हो जो राग के प्रहाण में लगे हैं, जो द्वेष के प्रहाण में लगे हैं, जो मोह के प्रहाण में लगे हैं, संसार में वे ठीक मार्ग पर चल रहे हैं वा नहीं? इस विषय में तुम्हें कैसा लगता है?"

"भन्ते! जो राग के प्रहाण में लगे हैं, जो द्वेष के प्रहाण में लगे ह, जो मोह के प्रहाण में लगे हैं, संसार में वे ठीक मार्ग पर चल रहे हैं। .इस विषय में मुझे ऐसा होता है।"

"हे गृहपति! क्या मानते हो जिनका राग प्रहीण हो गया है, जड़ से जाता रहा है, कटे ताड़ के समान हो गया है, अभाव-प्राप्त हो गया है, भविष्य में पुनरुत्पत्ति की कोई संभावना नहीं रही है, जिनका द्वेष प्रहीण हो गया है...... ....संभावना नहीं रही है, जिनका मोह प्रहीण हो गया है, जड़ से जाता रहा है, कटे ताड़ के समान हो गया है, अभाव-प्राप्त हो गया है, भविष्य में पुनरुत्पत्ति की कोई संभावना नहीं रहीं है, वे संसार में सुगति-प्राप्त हैं वा नहीं? इस विषयमें तुम्हें कैसा लगता है?"

"भन्ते! जिनका राग प्रहीण हो गया है, जड़ से जाता रहा है, कटे ताड़ के समान हो गया है, अभाव-प्राप्त हो गया है, भविष्य में पुनरुत्पत्ति की कोई संभावना नहीं रही है, जिनका द्वेष प्रहीण हो गया है,............संभावना नहीं रही है, जिनका मोह प्रहीण हो गया है, जड़ से जाता रहा है, कटे ताड़ के समान हो गया है, अभाव-प्राप्त हो गया है, भविष्य में पुनरुत्पत्ति की कोई संभावना नहीं रही है, वे संसार में सुगति-प्राप्त है। इस विषय में मुझे ऐसा होता है।"

"अब तू ही यह कह रहा है--भन्ते! जो राग के प्रहाण के लिये धर्मोपदेश देते हैं, द्वेष के......मोह के प्रहाण के लिये धर्मोपदेश देते हैं, उन का धर्म भली प्रकार कहा गया है। अब तू ही यह कह रहा है--भन्ते! जो राग के प्रहाण में लगे हैं, जो द्वेष के.....जो मोह के प्रहाण में लगे हैं, संसार में वे

ठीक मार्ग पर चल रहे हैं। अब तू ही यह कह रहा है, भन्ते! जिनका राग प्रहीण हो गया है, जड़ से जाता रहा है, कटे ताड़ के समान हो गया है, अभाव-प्राप्त हो गया है, भविष्य में पुनरुत्पत्ति की कोई संभावना नहीं रही है, जिन का द्वेष प्रहीण ....जिनका मोह प्रहीण हो गया है, जड़ से जाता रहा है, कटे ताड़ के समान हो गया है, अभाव-प्राप्त हो गया है, भविष्य में पुनरुत्पत्ति की कोई संभावना नहीं रही है, वे लोक में सुगति-प्राप्त हैं।"

"भन्ते! आश्चर्य्य है। भन्ते! अद्‌भुत है। अपने मत को ऊपर भी नहीं उठाया है और दूसरे के मत को नीचे भी नहीं गिराया है। उचित धर्म-देशना मात्र हुई है। बात कह दी गई। अपने-आप को बीच में नहीं लाया गया।"

"भन्ते आनन्द! आप लोग राग के प्रहाण के लिये धर्मोपदेश देते हैं, द्वेष के........मोह के प्रहाण के लिये धर्मोपदेश देते हैं, (इस लिये) भन्ते! आप लोगों का धर्म 'भली प्रकार कहा गया' है। भन्ते! आनन्द! आप लोग रागके प्रहाण में प्रयत्न-शील हैं; द्वेष के.........मोह के प्रहाण में प्रयत्न-शील हैं, आप लोग संसार में ठीक मार्ग पर चल रहे हैं। भन्ते! आनन्द! आप लोगों का राग प्रहीण है, जड़ से जाता रहा है, कटे ताड़ के समान हो गया है, अभाव-प्राप्त हो गया है, भविष्य में पुनरुत्पात्ति की कोई संभावना नहीं रही है, आप लोगों का द्वेष...........आप लोगों का मोह प्रहीण है, जड़ से जाता रहा है, कटे ताड़ के समान हो गया है, अभाव-प्राप्त हो गया है, भविष्य में पुरुनत्पत्ति की कोई संभावना नहीं रही है, (इस लिये) आप लोग सुगतिप्राप्त हैं।

"सुन्दर भन्ते! बहुत सुन्दर भन्ते! जैसे भन्ते! कोई उलटे को सीधा कर दे, ढके को उघाड़ दे, मार्ग-भ्रष्ट को रास्ता बता दे अथवा अँधेरे में मशाल जला दे जिस से आँख वाले चीजों को देख सकें। इसी प्रकार आर्य आनन्द ने नाना प्रकार से धर्म को प्रकाशित किया है। भन्ते आनन्द! यह मैं भगवान् (उनके) धर्म तथा भिक्षु–संघ की शरण जाता हूँ। आर्य आनन्द! आज से शरीर में प्राण रहने तक मुझे शरणागत उपासक समझें।"

(७३)

एक समय भगवान् शाक्य जनपद् में, कपिलवस्तु के निग्रोधाराम में विहार करते थे। उस समय भगवान रोग से मुक्त हुए थे, रोग से मुक्त हुए थोड़ा

ही समय हुआ था। तब महानाम शाक्य जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए महानाम शाक्य ने भगवान् को यह कहा—

"भन्ते! मैं जानता हूँ कि भगवान् ने दीर्घकाल से यह उपदेश दिया है कि एकाग्र-चित्त को ही ज्ञान होता है, अस्थिर-चित्त को नहीं। भन्ते क्या समाधि पहले होती है और तब ज्ञान होता है, अथवा ज्ञान पहले होता है और तब समाधि होती है?"

उस समय आयुष्मान आनन्द के मन में यह हुआ—भगवान् रोग से मुक्त हुए हैं, भगवान् को रोग से मुक्त हुए थोड़ा ही समय हुआ है। यह महानाम शाक्य भगवान् से अति-गम्भीर प्रश्न पूछ रहा है। क्यों न मैं महानाम शाक्य को एक ओर ले जाकर धर्मोपदेश दूँ? तब आयुष्मान आनन्द महानाम शाक्य को बाँह से पकड़कर एक ओर ले गये और महानाम शाक्य से यह बोले—

"महानाम! भगवान् ने शैक्ष-शील का भी उपदेश किया है, अशैक्ष-शील का भी उपदेश किया है, शैक्ष-समाधि का भी उपदेश किया है, अशैक्ष-समाधि का भी उपदेश किया है, शैक्ष-प्रज्ञा का भी उपदेश किया है, अशैक्ष-प्रज्ञा का भी उपदेश किया है।

"महानाम! शैक्ष शील-क्या है?

"हे महानाम! भिक्षु शीलवान होता है, प्रातिमोक्ष........शिक्षा पदों के नियमों का सम्यक् पालन करने वाला (पृ० १३१)। महानाम! यह शैक्ष-शील कहलाता है।

"महानाम! शैक्ष-समाधि क्या है?

"महानाम! भिक्षु काम-भोगों से पृथक हो.......... चतुर्थ-ध्यान प्राप्त करता है। महानाम! यह शैक्ष-समाधी कहलाती है।"

"महानाम! शैक्ष-प्रज्ञा क्या है?

"महानाम! भिक्षु यह दुःख है, इसे यथार्थ रूप से जानता है......यह दुःख निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है, इसे यथार्थ रूप से जानता है। महानाम! यह शैक्ष-प्रज्ञा है। उस प्रकार महानाम! वह आर्य-श्रावक शील-सम्पन्न, समाधि-सम्पन्न तथा प्रज्ञा-सम्पन्न होकर आस्रवों का क्षय कर चुकने के अनन्तर अनास्रव

चित्त-विमुक्ति को, प्रज्ञाविमुक्ति को इसी शरीर में, स्वयं जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार करता है। इस प्रकार महानाम ! भगवान् ने शैक्ष-शील का भी उपदेश दिया है, अशैक्ष-शील का भी उपदेश दिया है ; शैक्ष-समाधि का भी उपदेश दिया है, अशैक्ष-समाधि का भी उपदेश दिया है, शैक्ष-प्रज्ञा का भी उपदेश दिया है, अशैक्ष-प्रज्ञा का भी उपदेश दिया है।"

(७४)

एक समय आयुष्मान आनन्द वैशाली में, महावान में, कूटागार शाला में विहार करते थे। उस समय अभय लिच्छवी तथा पण्डित कुमारक लिच्छवी जहाँ आयुष्मान आनन्द थे वहाँ पहुँचे। पहुँच कर आयुष्मान आनन्द को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे लिच्छवी ने आयुष्मान आनन्द को यह कहा—

"भन्ते ! ज्ञाति-पुत्र निर्ग्रन्थ का कहना है कि वे सर्वज्ञ हैं, सर्वदर्शी हैं, उन्हें असीम ज्ञान-दर्शन प्राप्त है। उन का कहना है—मुझे चलते समय, खड़े रहने पर, सोते समय, जागते रहने पर, सतत, लगातार ज्ञान-दर्शन उपस्थित रहता है। उन का कहना है कि तपस्या से पुराने-कर्मों का नाश हो जाता है और कर्मों के न करने से नये कर्मो का घात हो जाता है। इस प्रकार कर्म का क्षय होने से दुःख का क्षय, दुःख का क्षय होने से वेदना का क्षय, वेदना का क्षय होने से सारे दुःख की निर्जरा होगी। इस प्रकार इस सांदृष्टिक निर्जरा-विशुद्धि से (दुःख का) अतिक्रमण होता है। भन्ते ! भगवान् इस विषयमें क्या कहते हैं ?

"अभय ! उन भगवान्, ज्ञानी, दर्शी, अर्हत, सम्यक्-सम्बुद्ध के द्वारा तीन निर्जरा-विशुद्धियाँ सम्यक् प्रकार कही गई हैं, शोक तथा रोने पीटने के अतिक्रमण के लिये, दुःख-दौर्मनस्य के नाश के लिये, ज्ञान की प्राप्ति के लिये और निर्वाण को साक्षात करने के लिये। कौन सी तीन ?

"हे अभय ! भिक्षु सदाचारी होता है, प्रातिमोक्ष........शिक्षा-पदों के नियमों का सम्यक् पालन करने वाला। वह नया कर्म नहीं करता है और पुराने-कर्म (के फल) को भोग करके समाप्त कर देता है। यह सांदृष्टिक निर्जरा है, अकालिका (देश और काल की सीमाओं से परे) है, इसके बारे में कह सकते हैं कि आओ और स्वयं परीक्षा कर लो, यह निर्वाण की ओर ले जाने वाली है, इसे प्रत्येक विज्ञ आदमी साक्षात कर सकता है।

"हे अभय! इस प्रकार वह शील-सम्पन्न भिक्षु काम-भोगोंसे दूर हो.... ....चतुर्थ-ध्यान को प्राप्त कर विहार करता है! वह नया कर्म नहीं करता है और पुराने कर्म (के फल) को भोग करके समाप्त कर देता है। यह सांदृष्टिक निर्जरा है, अकालिका (देश और काल की सीमाओं से परे), इस के बारे में कह सकते हैं कि आओ और स्वयं परीक्षा कर लो, यह निर्वाण की ओर ले जाने वाली है, इसे प्रत्येक विज्ञ आदमी साक्षात कर सकता है।

"हे अभय! इस प्रकार वह शील-सम्पन्न भिक्षु......आस्रवों का क्षय कर अनास्रव चित्त-विमुक्ति प्रज्ञा-विमुक्ति को इसी शरीर में स्वयं जानकर, साक्षातकर, प्राप्तकर विहार करता है। वह नया-कर्म नहीं करता है और पुराने कर्म (के फल) को भोग करके समाप्त कर देता है। यह सांदृष्टिक निर्जरा है, अकालिका (देश और काल की सीमाओं से परे), इसके बारे में कह सकते हैं कि आओ और स्वयं परीक्षा कर लो, यह निर्वाण की ओर ले जाने वाली है, इसे प्रत्येक विज्ञ आदमी साक्षात कर सकता है।

"अभय! उन भगवान्, ज्ञानी, दर्शी, अर्हत, सम्यक्-सम्बुद्ध के द्वारा ये तीन निर्जरा-विशुद्धियाँ सम्यक प्रकार कही गई हैं, शोक तथा रोने-पीटने के अति-क्रमण के लिये, दुःख दौर्मनस्य के नाश के लिये, ज्ञान की प्राप्ति के लिये और निर्वाण का साक्षात करने के लिये।

"ऐसा कहने पर पण्डित कुमारक लिच्छवी ने अभय लिच्छवी को यह कहा—

"सौम्य अभय! क्या तू आयुष्मान आनन्द के सुभाषित को सुभाषित कह कर अनुमोदन नहीं करता?"

"सौम्य! क्या मैं आयुष्मान आनन्द के सुभाषित को सुभाषित कह कर अनुमोदन नहीं करूँगा। जो आयुष्मान आनन्द के सुभाषित को सुभाषित कह अनुमोदन न करे, उस का सिर भी गिर जा सकता है।"

(७५)

उस समय आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान् को नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्द को भगवान् ने यह कहा—

"आनन्द ! जिसे अनुकम्पा करने योग्य समझो और जो सुनने योग्य मानें—चाहे वे मित्र हों, चाहे सुहृद हों, चाहे रिश्तेदार हों, चाहे रक्त-सम्बन्धी हों—उन्हें आनन्द ! तीन स्थानों पर लाना चाहिये, रखना चाहिये, प्रतिष्ठित करना चाहिये। किन तीन स्थानों पर ?

"बुद्ध के प्रति अचल श्रद्धा पर लाना चाहिये, रखना चाहिये, प्रतिष्ठित करना चाहिये—वे भगवान् अर्हत हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं, विद्या तथा आचरण से युक्त हैं, सुगति-प्राप्त हैं, लोक के जानकर हैं, सर्वश्रेष्ठ हैं, (कुमार्ग-गामी) पुरुषों का दमन करने वाले सारथी हैं तथा देवताओं और मनुष्यों के शास्ता हैं। वे भगवान बुद्ध हैं। धर्म के प्रति अचल श्रद्धा पर लाना चाहिये, रखना चाहिये, प्रतिष्ठित करना चाहिये—यह धर्म भगवान् द्वारा भली प्रकार कहा गया है, यह धर्म इह-लोक-सम्बन्धी है, इस धर्म का पालन सभी देशों तथा कालों में किया जा सकता ह, यह धर्म निर्वाण तक ले जाने में समर्थ है तथा प्रत्येक बुद्धिमान आदमी इस धर्म का साक्षात कर सकता है। संघ के प्रति अचल श्रद्धा पर लाना चाहिये—भगवान् का श्रावक-संघ सुन्दर मार्ग पर चलने वाला है, सीधे मार्ग पर चलने वाला है, न्यायमार्ग पर चलने वाला है तथा समीचीन मार्ग पर चलने वाला है। यही जो आर्यव्यक्तियों की चार जोड़ियाँ हैं, ये जो आठ प्रकार के व्यक्ति हैं, यही भगवान् का श्रावकसंघ है। यह संघ आदर करने योग्य है, आतिथ्य करने योग्य है, पहुनाई करने योग्य है, दान-दक्षिणा देने योग्य है तथा हाथ जोड़कर नमस्कार करने योग्य है। यह लोगों के लिये सर्व-श्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र है।

"आनन्द ! पृथ्वी-धातु, जल-धातु, तेज-धातु तथा वायु-धातुका 'अन्यथात्व' हो सकता है, किन्तु बुद्धमें अचल श्रद्धा रखने वाले आर्य-श्रावकका नहीं। इस विषयमें 'अन्यथात्व' का अभिप्राय यह है। आनन्द ! बुद्धमें अचल श्रद्धा रखने वाला आर्य-श्रावक नरकमें पैदा होगा, पशु-योनिमे पैदा होगा वा प्रेत-योनिमें पैदा होगा—इसकी सम्भावना नहीं है।

"आनन्द ! पृथ्वी-धातु, जल-धातु, तेज-धातु तथा वायु-धातुका 'अन्यथात्व' हो सकता है, किन्तु धर्ममें .....संघमें अचल श्रद्धा रखने वाले आर्य-श्रावक का नहीं। इस विषयमें 'अन्यथात्व' का अभिप्राय यह है। आनन्द ! संघमें

अचल श्रद्धा रखने वाला आर्य-श्रावक नरकमें पैदा होगा, पशु-योनिमें पैदा होगा वा प्रेत-योनिमें पैदा होगा—इसकी सम्भावना नहीं है।

"आनन्द! जिसे अनुकम्पा करने योग्य समझो और जो सुनने योग्य मानें—चाहे वे मित्र हों, चाहे सुहृद हों, चाहे रिश्तेदार हों, चाहे रक्त-सम्बन्धी हों—उन्हें आनन्द! तीन स्थानोंपर लाना चाहिअे, रखना चाहिये, प्रतिष्ठित करना चाहिये।"

(७६)

उस समय आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान्‌को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्दने भगवान्‌को यह कहा—

"भन्ते! 'भव', 'भव' कहा जाता है। क्या होनेसे भव होता है?"

"आनन्द! यदि काम-धातुके (कर्मका)–विपाक न हो तो क्या काम-भव दिखाई देगा?"

"भन्ते! नहीं।"

"इसलिये आनन्द! कर्म क्षेत्र है, विज्ञान बीज है, तृष्णा जल है, अविद्या-नीवरण वाले प्राणियोंका, तृष्णा-संयोजन वाले प्राणियोंका काम (=हीन) धातुमें विज्ञान-स्थापन का। इस प्रकार भविष्यमें पुनर्जन्म होता है। इस प्रकार आनन्द! भव होता है।

"आनन्द! यदि रूप-धातु (के कर्मका) विपाक न हो तो क्या रूप-भव दिखाई देगा?"

"भन्ते! नहीं।"

"इसलिये आनन्द! कर्म क्षेत्र है, विज्ञान बीज है, तृष्णा जल है, अविद्या-नीवरण वाले प्राणियोंका, तृष्णा- संयोजन वाले प्राणियोंका रूप (=मध्यम) धातुमें विज्ञान-स्थापनका। इस प्रकार भविष्यमें पुनर्जन्म होता है। इस प्रकार आनन्द! भव होता है।

"आनन्द! यदि अरूप धातु (के कर्म का) विपाक न हो तो क्या अरूप-भव दिखाई देगा?"

"भन्ते। नहीं।"

"इसलिये आनन्द ! कर्म क्षेत्र है, विज्ञान बीज है, तृष्णा जल है, अविद्या-नीवरण वाले प्राणियोंका, तृष्णा संयोजन वाले प्राणियोंका अरूप (=श्रेष्ठ) धातुमें विज्ञापन-स्थापनका। इस प्रकार भविष्यमें पुनर्जन्म होता है। इस प्रकार आनन्द ! भव होता है।"

(७७)

उस समय आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान थे वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्दने भगवान्‌को यह कहा—

"भन्ते ! 'भव', 'भव' कहा जाता है। क्या होनेसे भव होता है ?"

"आनन्द ! यदि काम-धातु (के कर्मका) विपाक न हो तो क्या काम-भव दिखाई देगा ?"

"भन्ते ! नहीं।"

"इसलिये आनन्द ! कर्म क्षेत्र है, विज्ञान बीज है, तृष्णा जल है, अविद्या-नीवरण वाले प्राणियोंकी, तृष्णा-संयोजनवाले प्राणियोंकी काम (=हीन) धातुमें चेतनाकी स्थापनाका, कामना (=पत्थना) की स्थापनाका। इस प्रकार भविष्यमें पुनर्जन्म होता है। इस प्रकार आनन्द ! भव होता है।

"आनन्द ! यदि रूप-धातु (के कर्म का) विपाक न हो तो क्या रूप-भव दिखाई देगा ?"

"भन्ते। नहीं।"

"इसलिये आनन्द ! कर्म क्षेत्र है, विज्ञान बीज है, तृष्णा जल है, अविद्या-नीवरण वाले प्राणियोंकी, तृष्णा-संयोजनवाले प्राणियोंकी रूप (=मध्यम) धातुमें चेतनाकी स्थापनाका, कामना (=पत्थना) की स्थापनाका। इस प्रकार भविष्यमें पुनर्जन्म होता है। इस प्रकार आनन्द ! भव होता है।

"आनन्द ! यदि अरूप-धातु (के कर्मका) विपाक न हो तो क्या अरूप-धातु दिखाई देगा ?

"भन्ते। नहीं।"

"इसलिये आनन्द ! कर्म क्षेत्र है, विज्ञान बीज है, तृष्णा जल है, अविद्या-नीवरण वाले प्राणियोंकी, तृष्णा-संयोजन वाले प्राणियोंकी अरूप (=श्रेष्ठ) धातुमें

चेतनाकी स्थापना, कामना (=पत्थना) की स्थापना। इस प्रकार भविष्यमें पुनर्जन्म होता है। इस प्रकार आनन्द! भव होता है।

(७८)

निदान-कथा पूर्वोक्त प्रकार ही......एक ओर बैठे हुए आयुष्मान आनन्दको भगवान्ने इस प्रकार कहा—

"आनन्द! क्या सभी शील-व्रत वाला जीवन, सभी ब्रह्मचर्य-जीवन सभी उपस्थान-सार सफल होता है?"

"भन्ते! सर्वांशमें यह ऐसा नहीं है।"

"तो आनन्द! विभक्त करके कहो।"

"भन्ते! जिस शील-व्रत वाले जीवन, जिस ब्रह्मचर्य-जीवन, जिस उपस्थान-सारके अनुसार रहनेसे अकुशल-धर्म बढ़ते हैं तथा कुशल-धर्म प्रहीण होते हैं, वह शील-व्रतवाला जीवन, वह ब्रह्मचर्य-जीवन, वह उपस्थान-सार निष्फल है। जिस शील-व्रत वाले जीवन, जिस ब्रह्मचर्य-जीवन, जिस उपस्थान-सारके अनुसार रहनेसे अकुशल-धर्म प्रहीण होते हैं तथा कुशल-धर्म बढ़ते हैं, वह शील-व्रत वाला जीवन, वह ब्रह्मचर्य जीवन, वह उपस्थान-सार सफल होता है।"

आयुष्मान आनन्दने यह कहा। शास्ता सन्तुष्ट हुए।

उस समय आयुष्मान आनन्द यह जान कि शास्ता मेरे उत्तरसे सन्तुष्ट हैं, भगवानको नमस्कार कर उठकर चले गअे।

तब भगवानने आयुष्मान आनन्दके चले जानेके थोड़ी देर बाद भिक्षुओंको बुलाया—"भिक्षुओ! आनन्द शैक्ष है, तो भी प्रज्ञा में इसकी बराबरी करने वाला सुलभ नहीं।"

(७९)

उस समय आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान थे वहाँ गये। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्दने भगवान को यह कहा—

"भन्ते! ये तीन प्रकारकी सुगन्धियाँ हैं जिनकी सुगन्ध वायुके अनुकूल ही जाती है, वायुके प्रतिकूल नहीं। कौन सी तीन प्रकारकी? माला-सुगन्ध, सार (की) सुगन्ध तथा पुष्प-सुगन्ध। भन्ते! ये तीन प्रकारकी सुगन्धियाँ हैं जिनकी सुगन्ध वायुके

अनुकूल ही जाती है, वायुके प्रतिकूल नहीं। भन्ते ! क्या कोई ऐसी सुगन्धि है जिस की सुगन्ध वायुके अनुकूल भी जाती हो, प्रतिकूल भी जाती हो, अनुकूल-प्रतिकूल भी जाती हो ?"

"आनन्द ! ऐसी सुगन्धि है, जिस की सुगन्ध वायुके अनुकूल भी जाती है, प्रतिकूल भी जाती है, अनुकूल-प्रतिकूल भी जाती है।"

"भन्ते ! वह कौनसी सुगन्धि है जिसकी सुगन्ध वायुके अनुकूल भी जाती है, प्रतिकूल भी जाती है, अनुकूल-प्रतिकूल भी जाती है ?"

"आनन्द ! जिस गाँव या निगममें स्त्री या पुरुष बुद्धकी शरण गये होते हैं, धर्मकी शरण गये होते हैं, संघकी शरण गये होते हैं, प्राणी-हिंसासे विरत होते हैं, चोरीसे विरत होते हैं, काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत होते हैं, झूठ बोलनेसे विरत होते हैं, सुरा-मेरय-मद्य आदि प्रमादके कारणोंसे विरत होते हैं, कल्याण-धर्मी सदाचारी होते हैं, मात्सर्य रूपी मल-रहित चित्त से घरमें रहते हैं—मुक्त-त्यागी, खुला-हाथ, परित्यागी, याचकोंके दाता तथा दानशील। उस गाँवका श्रमण-ब्राह्मण चारों दिशाओंमें गुणानुवाद करते हैं—अमुक गाँवमें या अमुक निगममें स्त्री या पुरूष बुद्धकी शरण गये होते हैं, धर्मकी शरण गये होते हैं, संघकी शरण गये होतेहैं, प्राणी-हिंसासे विरत होते हैं, चोरीसे विरत होते हैं, काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत होते हैं, झूठ बोलनेसे विरत होते हैं, सुरा-मेरय-मद्य आदि प्रमाद के कारणोंसे विरत होते हैं, कल्याण-धर्मी, सदाचारी होते हैं, मात्सर्य रूपी मल रहित चित्तसे घरमें रहते हैं—मुक्त-त्यागी, खुला-हाथ, परित्यागी, याचकोंके दाता तथा दान-शील; देवता तथा यक्ष आदि भी उस गाँव या निगमका गुणानुवाद करते हैं—अमुक गाँव या निगममें स्त्री या पुरुष बुद्ध की शरण गये है.....तथा दान-शील। आनन्द! यह ऐसी सुगन्धि है, जिसकी सुगन्ध वायुके अनुकूल भी जाती है, प्रतिकूल भी जाती है, अनुकूल-प्रतिकूल भी जाती है।

न पुप्फगन्धो पटिवातमेति
न चन्दनं तगरमल्लिका वा
सतंच गन्धो पटिवातमेति
सब्बा दिसा सप्पुरिसो पवाति

[फूलकी सुगन्ध वायुके विरुद्ध नहीं जाती, न चन्दनकी, न तगरकी और न मल्लिकाकी। सत्पुरुषोंकी सुगन्ध वायुके विरुद्ध भी जाती है। सत्पुरुष (की सुगन्ध) सभी दिशाओंमें जाती है।]

(८०)

उस समय आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान थे वहाँ पहुँचे। पहुँचकर भगवानको अभिवादन कर,एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्दने भगवानको यह कहा––

"भन्ते! भगवानके मुँहसे सुना है, भगवान के मुँहसे ग्रहण किया है कि 'हे आनन्द! शिखी (बुद्ध) का अभिभू नामका श्रावक ब्रह्म-लोकमें स्थित होकर साहस्री-लोक-धातुको स्वरसे सूचित करता है। भन्ते! भगवान अर्हत हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं। भगवान् कहाँ तक सूचित कर सकते हैं?"

"आनन्द! वह श्रावक है, और तथागतोंका बल तो अप्रमाण है।"

दूसरी बार भी आयुष्मान आनन्दने भगवानको यह कहा––

"भन्ते! भगवान्के मुँहसे सुना है, भगवानके मुँहसे ग्रहण किया है कि 'हे आनन्द! शिखी (बुद्ध) का अभिभू नामका श्रावक ब्रह्म-लोकमें स्थित होकर साहस्री-लोक-धातुको स्वरसे सूचित करता है। भन्ते! भगवान् अर्हत हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं। भगवान् कहाँ तक सूचित कर सकते हैं।?"

"आनन्द! वह श्रावक है और तथागतोंका बल तो अप्रमाण है।"

तीसरी बार भी आयुष्मान आनन्दने भगवानको यह कहा—

"भन्ते! भगवान्के मुँहसे सुना है, भगवान्के मुँहसे ग्रहण किया है कि हे आनन्द! शिखी (बुद्ध) का अभिभू नामका श्रावक ब्रह्म-लोकमें स्थित होकर साहस्री-लोक-धातुको स्वरसे सूचित करता है। भन्ते! भगवान् अर्हत हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं। भगवान् कहाँ तक सूचित कर सकते हैं?"

"आनन्द! सुना है तूने कि एक सहस्री चूळनिका लोक-धातु है?"

"भगवान्! इसीका समय है, सुगत! इसी का समय है। आप कहें। आपसे सुनकर भिक्षु ग्रहण करेंगे।"

"तो आनन्द! सुन। अच्छी तरहसे मनमें रख। कहता हूँ।"

"भन्ते! अच्छा" कह आयुष्मान आनन्दने भगवान्को 'प्रतिवचन' दिया। भगवानने यह कहा––

आनन्द! जहाँ तक चन्द्रमा और सूर्यका प्रकाश फैला है, वहाँ तक सहस्रधा लोक है। उस प्रकारके सहस्र चन्द्रमा होनेसे, सहस्र सूर्य होनेसे, सहस्र सुमेरु पर्वतराज होनेसे, सहस्र जम्बुद्वीप होनेसे, सहस्र अपरगोयान होनेसे, सहस्र उत्तर-कुरु होनेसे, सहस्र पूर्व-विदेह होनेसे, चार हजार महासमुद्र होनेसे, चार हजार महाराजा-गण होनेसे, सहस्र चातुम्महाराजिका (देवता) होनेसे, सहस्र तावतिंस (देवता) होनेसे, सहस्र याम (देवता) होनेसे, सहस्र तुसित (देवता) होनेसे, सहस्र निम्मानरति (देवता) होनेसे, सहस्र परिनिम्मतवसवर्ती देवता होनेसे, सहस्र ब्रह्मलोक (देवता) होनेसे, आनन्द! यह सहस्री चूळनिका लोक-धातु कहलाती है। आनन्द! जितना बड़ा क्षेत्र सहस्री चूलनिका लोकधातुका है, वैसे हजार लोकोंका एक लोक द्वि-सहस्री मज्झिमिका लोक-धातु कहलाती है। आनन्द! जितना बड़ा क्षेत्र द्वि-सहस्री मज्झिमिका लोक-धातु का है, वैसे हजार लोकोंका एक लोक त्रि सहस्री महासहस्री लोक-धातु कहलाती है। आनन्द! यदि तथागत आकांक्षा करें तो त्रिसहस्री महासहस्री लोक-धातुको स्वरसे सूचित कर सकते हैं अथवा और भी जहाँ तक आकांक्षा करें।"

"भन्ते! भगवान् त्रिसहस्री-महासहस्री-लोक-धातुको अथवा जहाँ तक आकांक्षा करें—उस सारे प्रदेशको स्वरसे कैसे सूचित करेंगे?

"आनन्द! तथागत त्रिसहस्री-महासहस्री लोक-धातुको अपने प्रकाशसे प्रकाशित कर सकते हैं और जब वे प्राणी उस आलोकको पहचान लें तो तथागत घोषणा कर सकते हैं, शब्दों द्वारा अनुशासन कर सकते हैं। इस प्रकार आनन्द तथागत आकांक्षा करें तो त्रिसहस्री महासहस्री लोक-धातु को स्वरसे सूचित कर सकते हैं अथवा और भी जहाँ तक आकांक्षा करें।"

"ऐसा कहनेपर आयुष्मान उदायीने आयुष्मान आनन्दको यह कहा—आनन्द! तुझे इससे क्या लाभ यदि शास्ता इस प्रकार ऋद्धिमान हों अथवा ऐसे प्रतापी हों?"

ऐसा कहनेपर भगवान्ने आयुष्मान उदायीको यह कहा—"उदायी! ऐसा मत कहो! उदायी! ऐसा मत कहो। उदायी! यदि आनन्द बिना वीतरागी हुए शरीर छोड़े तो वह इसी चित्तकी प्रसन्नताके कारण देवलोकमें सात बार देव-राज्य करे अथवा इसी जम्बुद्वीप में महाराजा बने। लेकिन उदायी! आनन्द इसी शरीरमें परिनिर्वाणको प्राप्त होगा।"

(८१)

"भिक्षुओ, ये तीन श्रमणके श्रमण-कर्तव्य हैं। कौनसे तीन? श्रेष्ठतर-शीलका पालन करना, श्रेष्ठतर-चित्तकी शिक्षा ग्रहण करना तथा श्रेष्ठतर-प्रज्ञाकी शिक्षाका ग्रहण करना। भिक्षुओ, ये तीन श्रमणके श्रमण-कर्तव्य हैं। इसलिये भिक्षुओ ऐसा सीखना चाहिये——श्रेष्ठतर-शील पालनके लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा, श्रेष्ठतर-चित्त-शिक्षाके लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा, श्रेष्ठतर-प्रज्ञा-शिक्षाके लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा। भिक्षुओ, इसी प्रकार सीखना चाहिये।

"जैसे भिक्षुओ कोई गधा बैलोंके समूहके पीछे पीछे हो ले——"हम भी हैं। हम भी हैं।" उसका न वैसा रंग होता है जैसा बैलोंका, न वैसी आवाज होती है जैसी बैलोंकी, न वैसे पाँव होते हैं जैसे बैलोंके। वह बैलोंके पीछे लगा रहता है——"हम भी हैं, हम भी हैं।" इस प्रकार भिक्षुओ, यहाँ कोई कोई भिक्षु भिक्षु-संघके पीछे पीछे चलता रहता है——'मैं भी भिक्षु हूँ, मैं भी भिक्षु हूँ।' उसका न श्रेष्ठतर-शीलके पालनके लिये वैसा प्रयास होता है, जैसा अन्य भिक्षुओंका, न श्रेष्ठतर-चित्त -शिक्षाके लिये वैसा प्रयास होता है जैसा अन्य भिक्षुओंका, न श्रेष्ठतर-प्रज्ञा-शिक्षाके लिये वैसा प्रयास होता है जैसा अन्य भिक्षुओंका। वह केवल भिक्षु संघके पीछे पीछे चलता रहता है——मैं भी भिक्षु, मैं भी भिक्षु।

"इसलिये यहाँ भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये——श्रेष्ठतर-शील पालनके लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा, श्रेष्ठतर-चित्त-शिक्षाके लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा, श्रेष्ठतर-प्रज्ञा-शिक्षाके लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा। भिक्षुओ, इसी प्रकार सीखना चाहिये।"

(८२)

"भिक्षुओ, कृषक-गृहस्थके लिये ये तीन पूर्व-कृत्य हैं। कौनसे तीन?

"भिक्षुओ, कृषक-गृहपति सावधानीसे खेतको अच्छी तरह जोतकर मिट्टी ठीक करता है, सावधानीसे खेतको अच्छी तरह जोतकर मिट्टी ठीक करके समयपर बीज बोता है, समयपर बीज बोकर पानी देता भी है, छोड़ता भी है। भिक्षुओ, कृष्क-गृहस्थके लिये ये तीन पूर्व-कृत्य हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओंके तीन भिक्षु-पूर्व-कृत्य हैं। कौनसे तीन?

"श्रेष्ठतर शीलका ग्रहण, श्रेष्ठतर चित्त-शिक्षाका ग्रहण, श्रेष्ठतर प्रज्ञा-शिक्षाका ग्रहण। भिक्षुओ, ये तीन भिक्षुके पूर्व-कृत्य हैं। इसलिये भिक्षुओ, यह सीखना चाहिये —श्रेष्ठतर शील पालनके लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा, श्रेष्ठतर-चित्त-शिक्षाके लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा, श्रेष्ठतर-प्रज्ञा-शिक्षाके लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा। भिक्षुओ, इसी प्रकार सीखना चाहिये।"

(८३)

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वैशालीमें, महावनमें, कूटागार-शालामें विहार करते थे। उस समय एक वज्जि-पुत्र भिक्षु जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचा..... एक ओर बैठे उस वज्जि-पुत्र भिक्षुने भगवान् को यह कहा—

"भन्ते! यह डेढ़ सौ शिक्षा-पद प्र त्येक आधे- महीने पर पाठ किये जाते हैं। ये अधिक हैं। भन्ते! मैं इतने शिक्षा-पद नहीं पालन कर सकता।"

"भिक्षु! क्या तू तीन शिक्षा-पदोंका पालन कर सकेगा—शील-सम्बन्धी शिक्षा-पद, चित्त-सम्बन्धी शिक्षा-पद, प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा-पद?"

"भन्ते! मैं इन तीन शिक्षा-पदोंको—शील सम्बन्धी शिक्षा-पदको, चित्त सम्बन्धी शिक्षा-पदको और प्रज्ञा सम्बन्धी शिक्षा-पदको पालन कर सकूँगा।"

"इसलिये तू भिक्षु तीन शिक्षा-पदोंको ग्रहण कर—शील सम्बन्धी शिक्षा-पदको, चित्त सम्बन्धी शिक्षा-पदको तथा प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा पदको। हे भिक्षु! क्योंकि तू शील-सम्बन्धी शिक्षा-पदका भी पालन करेगा, चित्त-सम्बन्धी शिक्षा-पदका भी पालन करेगा, तथा प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा-पदका भी पालन करेगा, इस लिये तेरे रागका भी प्रहाण हो जायेगा, द्वेषका भी प्रहाण हो जायेगा, मोहका भी प्रहाण हो जायेगा। इस प्रकार राग, द्वेष तथा मोहका प्रहाण हो जानेके कारण जो अकुशल-धर्म है उससे तू बचेगा और जो पाप-कर्म है उसे न करेगा।"

तब उस भिक्षुने आगे चलकर शील सम्बन्धी शिक्षाका भी अभ्यास किया, चित्त सम्बन्धी शिक्षा का भी अभ्यास किया, प्रज्ञा सम्बन्धी शिक्षाका भी अभ्यास किया। उसके शील, चित्त तथा प्रज्ञा सम्बन्धी शिक्षाओंके अभ्यास करनेसे उसके राग, द्वेष तथा मोहका प्रहाण हो गया। राग, द्वेष तथा मोहका प्रहाण हो जानेके कारण वह अकुशल-धर्म से बचा रहा तथा उसने पाप-कर्म नहीं किया।

(८४)

उस समय एक भिक्षु जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचा।......एक ओर बैठा हुआ वह भिक्षु भगवानसे यह बोला—

"भन्ते! 'शैक्ष' 'शैक्ष' कहते हैं। क्या होने से 'शैक्ष' होता है?"

"भिक्षु, सीखता है, इसलिये 'शैक्ष' कहलाता है।

"क्या सीखता है?

"शील सम्बन्धी शिक्षा ग्रहण करता है, चित्त सम्बन्धी शिक्षा ग्रहण करता है तथा प्रज्ञा सम्बन्धी शिक्षा ग्रहण करता है। इसी लिये वह भिक्षु 'शैक्ष' कहलाता है।"

सेखस्स सिक्खमानस्स उजुमग्गानुसारिनो
खयस्मि पठमं ञानं ततो अञ्ञा अनंतरा
ततो अञ्ञाविमुत्तस्स ञानं वे होति तादिनो
अकुप्पा मे विमुत्तीति भवसंयोजनक्खये

[जो शिक्षार्थी है, जो शैक्ष है, जो ऋजमार्गपर चलने वाला है, उसे पहले (दुःख) क्षय के (मार्ग के) विषयमें ज्ञान होता है, उसके बाद प्रज्ञाकी प्राप्ति होती है, तब उस स्थिर-चित्तको प्रज्ञा द्वारा विमुक्तिका ज्ञान होता है, वह जानता है कि संयोजनोंका क्षय हो गया और अब मुझे अचल-विमुक्ति प्राप्त हो गई।]

(८५)

"भिक्षुओ, यह जो डेढ़ सौ 'अधिक' शिक्षापद हैं, यह प्रति आधे महीने पाठ किये जाते हैं, जिन्हें आतम-हित चाहने वाले कुल-पुत्र सीखते हैं। भिक्षुओ, ये सभी तीन शिक्षाओंके अन्तर्गत आ जाते हैं। कौनसी तीन?

"शील-सम्बन्धी शिक्षा, चित्त-सम्बन्धी शिक्षा, प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा। भिक्षुओ, ये तीन शिक्षायें हैं जिनके अन्तर्गत ये सभी आ जाते हैं।

"भिक्षुओ, भिक्षु शीलोंका पालन करने वाला होता है, समाधि तथा प्रज्ञाका भी यथा-बल। वह जो छोटे-बड़े दोष हैं उन्हें करता भी है, उनसे मुक्त होता भी है। यह किस लिये? मैं ने ऐसा हो सकना असम्भव नहीं कहा है। जो आदि-ब्रह्मचर्य्यक शिक्षा-पद हैं, जो श्रेष्ठ जीवनके अनुकूल शिक्षापद हैं, उनके विषयमें वह स्थिर-शील होता है, स्थित-शील; वह शिक्षा-पदोंको सम्यक् ग्रहण करता है। तीन संयोजनोंका क्षय हो जानेपर श्रोतापन्न होता है, पतन-मुक्त बोधि-प्राप्ति निश्चित।

"भिक्षुओ, भिक्षु शीलोंका पालन करनेवाला होता है, समाधि तथा प्रज्ञाका भी यथाबल। वह जो छोटे-बड़े दोष हैं उन्हें करता भी है, उनसे मुक्त होता भी है। यह किस लिये? मैंने ऐसा हो सकना असम्भव नहीं कहा है। जो आदि-ब्रह्मचर्य्यक शिक्षा-पद हैं, जो श्रेष्ठ जीवनके अनुकूल शिक्षा-पद हैं, उनके विषयमें वह स्थिरशील होता है, स्थित-शील; वह शिक्षा-पदोंको सम्यक् ग्रहण करता है। तीन संयोजनोंका क्षय हो जानेपर राग, द्वेष तथा मोहके कम हो जानेपर वह सकृदागामी होता है, एक ही बार और इस लोकमें आकर दुःखका क्षय करता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु शीलोंका पालन करनेवाला होता है, समाधि तथा प्रज्ञाका भी यथा-बल। वह जो छोटे बड़े दोष हैं उन्हें करता भी है, उनसे मुक्त होता भी है। यह किस लिये? मैंने ऐसा हो सकना असम्भव नहीं कहा है। जो आदि-ब्रह्मचर्य्यक शिक्षापद हैं, जो श्रेष्ठ जीवनके अनुकूल शिक्षा-पद हैं, उनके विषयमें वह स्थिर शील होता है, स्थित-शील; वह शिक्षा-पदोंको सम्यक् ग्रहण करता है। वह निम्न-स्तरके पाँच संयोजनोंका क्षय कर ब्रह्मलोकमें ही उत्पन्न होनेवाला होता है, वहींसे निर्वाण को प्राप्त होने वाला, वह उस लोकसे लौटने वाला नहीं होता।

"भिक्षुओ, भिक्षु शीलोंका पालन करनेवाला होता है, समाधि तथा प्रज्ञाका भी यथा-बल। वह जो छोटे-बड़े दोष हैं उन्हें करता भी है, उनसे मुक्त होता भी है। यह किस लिये? मैंने ऐसा हो सकना असम्भव नहीं कहा है। जो आदि ब्रह्मचर्य्यक शिक्षापद हैं, जो श्रेष्ठ-जीवनके अनुकूल शिक्षा-पद हैं, उनके विषयमें वह स्थिर-शील होता है, स्थित-शील; वह शिक्षा-पदोंको सम्यक् ग्रहण करता है। वह आस्रयोंका क्षय करके, अनास्रव-चित्तकी विमुक्तिको, प्रज्ञाकी विमुक्तिको इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षातकर, प्राप्त कर विहार करता है।

"भिक्षुओ, अपूर्ण रूपसे (सीमित क्षेत्रमें) पालन करनेवाला अपूर्ण रूपसे पालन करता है, सम्पूर्ण रूपसे पालन करनेवाला सम्पूर्ण रूपसे पालन करता है, लेकिन किसी भी रूपमें शीलोंका पालन व्यर्थ नहीं ही होता।"

(८६)

"यह जो डेढ़ सौ 'अधिक' शिक्षापद हैं, यह प्रति आधे-महीने पाठ किये जाते हैं, जिन्हें आत्म-हित चाहने वाले कुल-पुत्र सीखते हैं। भिक्षुओ, ये सभी तीन शिक्षाओंके अन्तर्गत आ जाते हैं। कौन सी तीन?

"शील-सम्बन्धी शिक्षा, चित्त-सम्बन्धी शिक्षा, प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा। भिक्षुओ, ये तीन शिक्षायें हैं जिनके अन्तर्गत ये सभी आ जाते हैं।

"भिक्षुओ, भिक्षु शीलोंका पालन करनेवाला होता है, समाधि तथा प्रज्ञाका भी यथा-बल। वह जो छोटे-बड़े दोष हैं, उन्हें करता भी है, उनसे मुक्त होता भी है। यह किस लिये? मैंने ऐसा हो सकना असम्भव नहीं कहा है। जो आदि-ब्रह्मचर्य्यक शिक्षा-पद हैं, जो श्रेष्ठ जीवनके अनुकूल शिक्षा-पद हैं, उनके विषयमें वह स्थिर-शील होता है, स्थित-शील, वह शिक्षा-पदोंको सम्यक् ग्रहण करता है। वह तीन संयोजनोंका क्षय करके, अधिकसे अधिक सात बार जन्म ग्रहण करनेवाला होता है, सात जन्म तक देव-योनि वा मनुष्य-योनिमें जन्म ग्रहण करके दुःखका नाश करता है। वह तीन संयोजनोंका क्षय करके 'कोलंकोल' होता है, अर्थात् दो या तीन जन्म ग्रहण करके दुःखका नाश करता है। वह तीन संयोजनोंका क्षय करके 'एकबीजी' होता है अर्थात् एक ही बार मनुष्य-देह धारण कर दुःखका नाश करता है। तीन संयोजनोंका क्षय हो जानेपर; राग, द्वेष तथा मोहके कम हो जानेपर वह सकृदागामी होता है, एक ही बार और इस लोकमें आकर दुःखका क्षय करता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु शीलोंका पालन करनेवाला होता है, समाधि तथा प्रज्ञाका भी यथा-बल। वह जो छोटे-बड़े दोष हैं उन्हें करता भी है, उनसे मुक्त होता भी है। यह किस लिये? मैंने ऐसा हो सकना असम्भव नहीं कहा है। जो आदि-ब्रह्मचर्यक शिक्षापद हैं, जो श्रेष्ठ जीवन के अनुकूल शिक्षा-पद हैं, उनके विषयमें वह स्थिर-शील होता है, स्थित-शील, वह शिक्षा-पदोंको सम्यक् ग्रहण करता है। वह निम्न-स्तरके पाँच ओरम्भागीय-संयोजनोंका क्षय करके उर्ध्व-गामी होता है, पतनकी ओर न जानेवाला। वह निम्न-स्तरके पाँच ओरम्भागीय-संयोजनोंका क्षय करके ससंस्कार-परिनिर्वाण प्राप्त होता है। वह निम्न-स्तरके पाँच ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय करके असंस्कार-परिनिर्वाण प्राप्त होता है, वह निम्न-स्तरके पाँच ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय करके उपहत्य-परिनिर्वाण-प्राप्त होता है, वह निम्न स्तरके पाँच ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय करके अनन्तरा-परिनिर्वाण-प्राप्त होता है।

४. भिक्षुओ, भिक्षु शीलोंका पालन करनेवाला होता है, समाधि तथा प्रज्ञाका भी यथा-बल। वह जो छोटे-मोटे दोष हैं उन्हें करता भी है, उनसे मुक्त होता भी है। यह किस लिये? मैं ने ऐसा हो सकना असम्भव नहीं कहा है। जो आदि-ब्रह्मचर्यके शिक्षा-पद हैं, जो श्रेष्ठ-जीवनके अनुकूल शिक्षा-पद हैं, उनके विषयमें वह स्थिर-शील

होता है, स्थित-शील, वह शिक्षापदोंको सम्यक् ग्रहण करता है। वह आस्रवोंका क्षय करके, अनास्रव चित्त-विमुक्तिको, प्रज्ञाकी विमुक्तिको इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार करता है।

"भिक्षुओ, अपूर्ण रूपसे (= सीमित क्षेत्रमें) पालन करनेवाला अपूर्ण रूपसे पालन करता है, सम्पूर्ण रूपसे पालन करनेवाला सम्पूर्ण रूपसे पालन करता है, लेकिन किसी भी रूपमें शीलों का पालन व्यर्थ नहीं होता।

(८७)

"यह जो डेढ़ सौ 'अधिक' शिक्षापद हैं, यह प्रति आधे महीने पाठ किये जाते हैं, जिन्हें आत्म-हित चाहनेवाले कुल-पुत्र सीखते हैं। भिक्षुओ, ये सभी तीन शिक्षाओंके अन्तर्गत आ जाते हैं। कौन सी तीन?

"शील-सम्बन्धी शिक्षा, चित्त-सम्ब्रन्धी शिक्षा, प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा। भिक्षुओ, ये तीन शिक्षायें हैं, जिनके अन्तर्गत ये सभी आ जाते हैं।

"भिक्षुओ, भिक्षु शीलोंका पालन करनेवाला होता है, समाधि तथा प्रज्ञाका भी यथा-बल। वह जो छोटे-बड़े दोष हैं उन्हें करता भी है उनसे मुक्त भी होता है। यह किस लिये? मैं ने ऐसा हो सकना असम्भव नहीं कहा है। जो आदि ब्रह्मचर्य्यक शिक्षा-पद हैं, जो श्रेष्ठ जीवनके अनुकूल शिक्षापद हैं उनके विषयमें वह स्थिर-शील होता है, स्थित-शील। वह शिक्षा पदोंको सम्यक् ग्रहण करता है। वह आस्रवोंका क्षय करके अनास्रव चित्त-विमुक्तिको, प्रज्ञाकी विमुक्तिको इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात कर, प्राप्तकर विहार करता है।

"अथवा यदि अर्हत्व प्राप्त न हो तो वह अनागामी निम्न-स्तरके पाँच ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय करके बीचमें ही परिनिर्वाणको प्राप्त होने वाला होता है। यदि वैसा भी न हो तो वह निम्न-स्तरके पाँच ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय करके उपहत्य-परिनिर्वाण प्राप्त होता है......असंस्कार-परिनिर्वाण प्राप्त होता है.... ......संस्कार परिनिर्वाण प्राप्त होता है। वह निम्न-स्तरके पाँच ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय करके ऊर्ध्व-गामी होता है, पतनकी ओर न जानेवाला। यदि वैसा भी न हो तो तीन संयोजनोंका क्षय हो जाने पर, राग, द्वेष तथा मोहके कम हो जाने पर वह सकृदागामी होता है, एक ही बार और अिस लोकमें आकर दुःखका क्षय करता है। यदि वैसा भी न हो तो तीन संयोजनोंका क्षय

हो जाने पर वह 'एक-बीजी' होता है अर्थात् एक ही बार मनुष्य-देह धारण कर दुःखका नाश करता है। यदि वैसा भी न हो तो तीनों संयोजनोंका क्षय हो जाने पर वह 'कोलंकोल' होता है अर्थात् दो या तीन जन्म ग्रहण करके दुःखका नाश करता है। यदि वैसा भी न हो तो तीनों संयोजनोंका क्षय हो जाने पर वह अधिक-से-अधिक सात बार जन्म ग्रहण करनेवाला होता है, सात जन्म तक देव-योनि वा मनुष्य-योनिमें जन्म ग्रहण करके दुःखका नाश करने-वाला होता है।

"भिक्षुओ, अपूर्ण रूपसे (= सीमीत क्षेत्रमें) पालन करनेवाला अपूर्ण रूपसे पालन करता है, सम्पूर्ण रूपसे पालन करनेवाला सम्पूर्ण रूपसे पालन करता है, लेकिन किसी भी रूपमें शीलोंका पालन व्यर्थ नहीं ही होता।"

(८८)

"भिक्षुओ, ये तीन शिक्षायें हैं। कौन सी तीन?

"शील सम्बन्धी शिक्षा, चित्त सम्बन्धी शिक्षा, तथा प्रज्ञा सम्बन्धी शिक्षा।

"भिक्षुओ, शील-सम्बन्धी शिक्षा क्या है?

"भिक्षुओ, भिक्षु सदाचारी होता है......सम्यक् ग्रहण करता है। भिक्षुओ, यह है शील-सम्बन्धी शिक्षा।

"भिक्षुओ, चित्त-सम्बन्धी शिक्षा क्या है?

"भिक्षुओ, भिक्षु काम-भोगों से दूर हो......चतुर्थ-ध्यान प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह है चित्त-सम्बन्धी शिक्षा।

"भिक्षुओ, प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा क्या है?

"भिक्षुओ, भिक्षु यह दुःख है, इसे यथार्थ रूप से जानता है, ...यह दुःखनिरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है, इसे यथार्थ-रूप से जानता है। भिक्षुओ यह है प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा।

"भिक्षुओ, ये तीनों शिक्षायें हैं।"

(८९)

"भिक्षुओ, ये तीन शिक्षायें हैं। कौन सी तीन?

"शील-सम्बन्धी-शिक्षा, चित्त-सम्बन्धी शिक्षा तथा प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा।

"भिक्षुओ, शील-सम्बन्धी शिक्षा क्या है?

"भिक्षुओ, भिक्षु सदाचारी होता है.......सम्यक् ग्रहण करता है। भिक्षुओ, यह है शील-सम्बन्धी शिक्षा।

"भिक्षुओ, चित्त-सम्बन्धी शिक्षा क्या है?

"भिक्षुओ, भिक्षु काम-भोगों से दूर हो........चतुर्थ-ध्यान प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह है चित्त-सम्बन्धी शिक्षा।

"भिक्षुओ, प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा क्या है?

"भिक्षुओ, भिक्षु आस्रवों का क्षय करके अनास्रव चित्त-विमुक्ति को, प्रज्ञा की विमुक्ति को, इसी शरीर में स्वयं जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह है प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा। भिक्षुओ, ये तीन शिक्षायें हैं।"

अधिसीलं अधिचित्तं च अधिपञ्ञं च विरियवा
थामवा धितिमा झायी सतो गुत्तिन्द्रियो चरे
यथा पुरे तथा पच्छा यथा पच्छा तथा पुरे
यथा अधो तथा उद्धं यथा उद्धं तथा अधो
यथा दिवा तथा रत्तिं यथा रत्तिं तथा दिवा
अभिभूय्य दिसा सब्बा अप्पमाणसमाधिना
तं आहु सेखं पटिपदं अथो संसुद्धचारणं
तं आहु लोके सम्बुद्धं धीरं पटिपदन्तगुँ
विञ्ञाणस निरोधेन तण्हक्खयविमुत्तिनो
पज्जोतस्सेव निब्बानं विमोखो होति चेतसो।

[जो प्रयत्न-शील है, जो सामर्थ्यवान है, जो धृतिमान है, जो ध्यान करने वाला है, जो स्मृतिमान है, जो संयमी है, उसे चाहिये कि वह शील-सम्बन्धी, चित्त-सम्बन्धी तथा प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षाओं के अनुसार आचरण करे। जैसे पहले (तीनों शिक्षाओं का पालन करता है) वैसे ही बाद (में करे), जैसे बाद में वैसे ही पहले; उसी प्रकार जैसे (शरीर के) निचले हिस्से के प्रति (प्रतिकूल भावना रखता है) वैसी ही ऊपर के हिस्से के प्रति प्रतिकूल भावना रखे; जैसी ऊपर के हिस्से के प्रति (प्रतिकूल भावना रखता है), वैसी ही निचले हिस्से के प्रति। जैसे दिन में तीनों प्रकार की शिक्षाओं के अनुसार चलता है, वैसे ही रात में, जैसे रात में वैसे ही दिन में चले। इस प्रकार असीम समाधि द्वारा जो सभी दिशाओं को ढक

देता है वही शैक्ष-मार्ग है। जो लोक में सम्यक् प्रकार शुद्धाचारी है, उसी को सम्बुद्ध कहते हैं, उसी को वीर कहते हैं, उसी को मार्ग के अन्त तक जाने वाला कहते हैं। विज्ञान का निरोध होने पर, तृष्णा के क्षय-स्वरूप प्राप्त मुक्ति वाले को, प्रदीप के निर्वाण की तरह चित्त का मोक्ष प्राप्त होता है।]

(९०)

एक समय महान् भिक्षु संघ के साथ भगवान् कोशल (-जनपद) में चारिका करते करते जहाँ कोशलों का पङ्कधा नाम का निगम था, वहाँ पहुँचे। वहाँ भगवान् पङ्कधा में विहार करते थे, पङ्कधा नाम के कोशलों के निगम में।

उस समय काश्यप-गोत्र नामक भिक्षु पङ्कधा में रहता था। वहाँ भगवान् शिक्षा-पद-युक्त धार्मिक कथा से भिक्षुओं का शिक्षण करते थे, उन्हें प्रेरित करते थे, उन्हें उत्साहित करते थे, उन्हें हर्षित करते थे। उस समय जब भगवान् शिक्षा-पद-युक्त धार्मिक कथा से भिक्षुओं का शिक्षण कर रहे थे, उन्हें प्रेरित कर रहे थे, उन्हें उत्साहित कर रहे थे, उन्हें हर्षित कर रहे थे, उस समय काश्यप-गोत्र भिक्षु के मन में अशान्ति हुई, असन्तोष हुआ—यह श्रमण बना-बनाकर मीठी-मीठी बातें कर रहा है।

तब भगवान् पङ्कधा में यथा-रुचि विहार कर जिधर राजगृह है उधर चारिका के लिये निकल पड़े। क्रमशः चारिका करते हुये जहाँ राजगृह है वहाँ पहुँचे। वहाँ भगवान् राजगृह में गृध्र-कूट पर्वत पर विहार करते थे।

तब भगवान् के चले जाने के थोड़ी देर बाद काश्यप-गोत्र भिक्षु के मन में कौकृत्य हुआ, पश्चाताप हुआ—यह मेरे अलाभ की ही बात है, लाभ की नहीं है, यह मेरा दुर्लभ ही है, सुलाभ नहीं है, जो भगवान् के शिक्षा-पद-युक्त धार्मिक-कथा से भिक्षुओं का शिक्षण करते समय, उन्हें प्रेरित करते समय, उन्हें उत्साहित करते समय, उन्हें हर्षित करते समय मेरे मन में अशान्ति हुई, असन्तोष हुआ—यह श्रमण बना-बनाकर मीठी-मीठी बातें कर रहा है। क्यों न मैं जहाँ भगवान् हैं वहाँ जाऊं, और जाकर भगवान् के सामने अपना अरापध अपराध के रूप में स्वीकार करूँ?

तब काश्यप-गोत्र भिक्षु शयनासन को लपेट, पात्र-चीवर ले, जहाँ राजगृह है वहाँ पहुँचा। क्रमशः जहाँ राजगृह, जहाँ गृध्र-कूट पर्वत, जहाँ भगवान् थे वहाँ

पहुँचा। पहुँच कर, अभिवादन कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे काश्यप-गोत्र भिक्षु ने भगवान् से यह कहा—

"भन्ते! भगवान् एक समय पङ्कधा में विहार कर रहे थे, पङ्कधा नाम के कोशलों के निगम में। वहाँ भगवान् ने शिक्षा-पद-युक्त धार्मिक कथा से भिक्षुओं का शिक्षण किया, उन्हें प्रेरित किया, उन्हें उत्साहित किया तथा उन्हें हर्षित किया। उस समय जब भगवान् शिक्षा-पद-युक्त धार्मिक कथा से भिक्षुओं का शिक्षण कर रहे थे, उन्हें प्रेरित कर रहे थे, उन्हें उत्साहित कर रहे थे, उन्हें हर्षित कर रहे थे, उस समय मेरे मन में अशान्ति हुई, असन्तोष हुआ— यह श्रमण बना-बना कर मीठी-मीठी बातें कर रहा है। तब भगवान् पङ्कधा में यथारुचि विहार करके जहाँ राजगृह है वहाँ चारिका के लिये निकल पड़े। भन्ते! भगवान् के चले आने के थोड़ी ही देर बाद मेरे मन में कौकृत्य हुआ, पश्चाताप हुआ—यह मेरे अलाभ की ही बात है, लाभ की नहीं है, यह मेरा दुर्लभ ही है, सुलाभ नहीं है जो भगवान् के शिक्षा-पद-युक्त धार्मिक कथा से भिक्षुओं का शिक्षण करते समय, उन्हें प्रेरित करते समय, उन्हें उत्साहित करते समय, उन्हें हर्षित करते समय मेरे मन में अशान्ति हुई, असन्तोष हुआ—यह श्रमण बना बना कर मीठी-मीठी बातें कर रहा है। क्यों न मैं जहाँ भगवान् हैं वहाँ जाऊं, और भगवान् के पास अपराध को अपराध के रूप में स्वीकार करूँ? भन्ते! गलती हो गई जैसे मूर्ख से हो, जैसे मूढ़ से हो, जैसे अकुशल-कर्ता से हो, जो भगवान् के शिक्षा-पद-युक्त धार्मिक कथा से भिक्षुओं का शिक्षण करते समय, उन्हें प्रेरित करते समय, उन्हें उत्साहित करते समय, उन्हें हर्षित करते समय मेरे मन में अशान्ति हुई, असन्तोष हुआ—यह श्रमण बना बना कर मीठी-मीठी बात कर रहा है। भन्ते! भगवान् मेरे अपराध को अपराध के रूप में स्वीकार करें ताकि मैं भविष्य में संयत रह सकूँ।"

"निश्चय से काश्यप तूने गलती की, जैसे मूर्ख से हो, जैसे मूढ़ से हो, जैसे अकुशल-कर्ता से हो, जो मेरे शिक्षा-पद-युक्त धार्मिक कथा से भिक्षुओं का शिक्षण करते समय, उन्हें प्रेरित करते समय, उन्हें उत्साहित करते समय, उन्हें हर्षित करते समय तेरे मन में अशान्ति हुई, तेरे मन में असन्तोष हुआ—यह श्रमण बना बना कर मीठी-मीठी बात कर रहा है। क्यों कि काश्यप तू गलती को गलती जानकर उसे यथोचित रूप से स्वीकार कर रहा है, हम तेरी इस भूल को स्वीकार करते हैं। काश्यप!

आर्य-विनय के अनुसार इस से उन्नति ही होती है जो अपने अपराध को अपराध के रूपमें स्वीकार करता है और भविष्य में संयत रहता है।

"हे काश्यप! चाहे कोई भिक्षु 'स्थविर' हो, लेकिन यदि वह शिक्षा-कामी न हो, शिक्षा ग्रहण करने की प्रशंसा करने वाला न हो, जो दूसरे अशिक्षा-कामी भिक्षु हों उन्हें शिक्षा की ओर नहीं आकर्षित करता है, जो दूसरे शिक्षा-कामी भिक्षु हैं उनकी उचित समय पर यथार्थ सच्ची प्रशंसा नहीं करता, काश्यप! इस प्रकार के स्थविर भिक्षु की मैं भी प्रशंसा नहीं करता। यह किस लिये? 'शास्ता इस की प्रशंसा करते हैं' सोच दूसरे भिक्षु उस की संगति कर सकते हैं। जो उस की संगत करेंगे वे उस का अनुकरण करेंगे। जो उस का अनुकरण करेंगे, वह उन के लिये चिर काल तक अहित, दुःख का कारण होगा। इस लिये काश्यप! मैं इस प्रकार के भिक्षु की प्रशंसा नहीं करता।

"हे काश्यप! चाहे कोई भिक्षु 'बीच की आयु' का हो, ...चाहे कोई भिक्षु नया हो, लेकिन यदि वह शिक्षा-कामी न हो, शिक्षा ग्रहण करने की प्रशंसा करने वाला न हो, जो दूसरे अशिक्षा-कामी भिक्षु हों उन्हें शिक्षा की ओर आकर्षित नहीं करता हो, जो दूसरे शिक्षा-कामी भिक्षु हों उनकी उचित समय पर, यथार्थ सच्ची प्रशंसा न करता हो, काश्यप! इस प्रकार के नये भिक्षु की भी मैं प्रशंसा नहीं करता। यह किस लिये? 'शास्ता इस की प्रशंसा करते हैं' सोच दूसरे भिक्षु उस की संगत कर सकते हैं। जो उस की संगत करेंगे, वे उस का अनुकरण करेंगे। जो उस का अनुकरण करेंगे, वह उन के लिये चिर काल तक अहित, दुःख का कारण होगा। इस लिये काश्यप! मैं इस प्रकार के भिक्षु की प्रशंसा नहीं करता।

"हे काश्यप! चाहे कोई भिक्षु 'स्थविर' हो, लेकिन यदि वह 'शिक्षा-कामी' हो, शिक्षा ग्रहण करने की प्रशंसा करने वाला हो, जो दूसरे अ-शिक्षा कामी भिक्षु हों उन्हें शिक्षा की ओर आकर्षित करता हो, जो दूसरे शिक्षा-कामी भिक्षु हों उनकी उचित समय पर यथार्थ सच्ची प्रशंसा करता हो, काश्यप! इस प्रकार के स्थविर भिक्षु की मैं प्रशंसा करता हूँ। यह किस लिये? 'शास्ता इस की प्रशंसा करते हैं' सोच दूसरे भिक्षु उस की संगति कर सकते हैं। जो उस की संगति करेंगे वे उस का अनुकरण करेंगे। जो उस का अनुकरण करेंगे वह उन के लिये चिर काल तक हित सुख के लिये होगा। इस लिये काश्यप! मैं इस प्रकार के भिक्षु की प्रशंसा करता हूँ।

"हे काश्यप ! चाहे कोई भिक्षु 'बीच की आयु' का हो..... चाहे कोई भिक्षु 'नया' हो, लेकिन यदि वह शिक्षा-कामी हो, शिक्षा ग्रहण करने की प्रशंसा करने वाला हो, जो दूसरे अशिक्षा-कामी भिक्षु हों उन्हें शिक्षा की ओर आकर्षित करता हो, जो दूसरे शिक्षा-कामी भिक्षु हों उन की उचित समय पर यथार्थ सच्ची प्रशंसा करता हो, काश्यप ! इस प्रकार के नये भिक्षु की मैं प्रशंसा करता हूँ। यह किस लिये ? 'शास्ता इस की प्रशंसा करते हैं' सोच दूसरे भिक्षु उस की संगति कर सकते हैं। जो उस की संगति करेंगे वे उस का अनुकरण करेंगे। जो उसका अनुकरण करेंगे वह उन के लिये चिर काल तक हित सुख के लिये होगा। इस लिये काश्यप ! मैं इस प्रकार के भिक्षु की प्रशंसा करता हूँ।"

(९१)

"भिक्षुओ, कृषक-गृहपति के लिये ये तीन अनिवार्य कर्तव्य हैं। कौन से तीन ?

"भिक्षुओ, कृषक-गृहस्थ शीघ्र-शीघ्र खेत में हल जोत कर उस की मट्टी ठीक करता है, शीघ्र-शीघ्र खेत में हल जोत कर मट्टी ठीक करके बीजों को बोता है, तथा शीघ्र-शीघ्र बीजों को बोकर शीघ्र-शीघ्र पानी देता भी है, बन्द भी करता है। भिक्षुओ, ये तीन कृषक-गृहस्थ के अनिवार्य कर्तव्य हैं।

"भिक्षुओ, उस कृषक-गृहस्थ के पास ऐसा कोई ऋद्धि-बल या प्रताप नहीं है, जिस से वह यह कर सके कि आज ही यह धान उग जायें, कल दाने पड़ जायें और परसों पक जायें। भिक्षुओ, समय आता है जब उस कृषक-गृहस्थ के वे धान उगते भी है, उन में दाने पड़ते भी हैं और वे पकते भी ह।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, ये तीन भिक्ष के अविलम्ब करने योग्य अनिवार्य कर्तव्य हैं। कौन से तीन ?

"शील-सम्बन्धी शिक्षा का ग्रहण, चित्त-सम्बन्धी शिक्षा का ग्रहण, तथा प्रज्ञा-सम्बन्धी शिक्षा का ग्रहण।

"भिक्षुओ, ये तीन भिक्षु के अविलम्ब करने योग्य अनिवार्य कर्तव्य हैं।

"भिक्षुओ, उस भिक्षु का ऐसा कोई ऋद्धि-बल या प्रताप नहीं होता जिस से वह कह सके कि आज ही उपादान-रहित हो मेरा चित्त आस्रव-विमुक्त हो जाये, कल हो जाय अथवा परसों हो जाये। लेकिन भिक्षुओ ! समय आता है जब शील,

चित्त तथा प्रज्ञा सम्बन्धी शिक्षाओं के अनुसार आचरण करते-करते उपादान-रहित हो चित्त आस्रव-विमुक्त हो जाता है।

"इस लिये भिक्षुओ, यह सीखना चाहिये—श्रेष्ठतर शील पालन के लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा, श्रेष्ठतर चित्त-शिक्षा के लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा, श्रेष्ठतर प्रज्ञा-शिक्षा के लिये हमारा तीव्र प्रयास होगा। भिक्षुओ, इसी प्रकार सीखना चाहिये।"

(९२)

"भिक्षुओ, अन्य-मतों के परिव्राजक तीन प्रकार के एकान्तों (=प्रविवेकों) की बात करते हैं। कौन से तीन प्रकार के?

"चीवर सम्बन्धी एकान्त, पिण्डपात (=भोजन) सम्बन्धी एकान्त तथा शयनासन सम्बन्धी एकान्त।

"भिक्षुओ, अन्यमतों के परिव्राजकों का चीवर सम्बन्धी एकान्त इस प्रकार है—वे सन के कपड़े भी धारण करते हैं, सन-मिश्रित कपड़े भी पहनते हैं, शव-वस्त्र (=कफन) भी पहनते हैं, फेंके हुए वस्त्र भी पहनते हैं, (वृक्ष-विशेषकी) छाल के कपड़े भी पहनते हैं, अजिन (=मृग) की खाल भी पहनते हैं, अजिन (मृग) की खाल की पट्टियों से बुना वस्त्र भी पहनते हैं, कुश का बना वस्त्र भी पहनते हैं, छाल (=वाक) के वस्त्र भी पहनते हैं, फलक (=छाल?) का वस्त्र भी पहनते हैं, केशों से बना कम्बल भी पहनते हैं, पूँछ के बालों का बना कम्बल भी पहनते हैं तथा उल्लू के परों का बना कपड़ा भी पहनते हैं। भिक्षुओ, अन्य मतों के परिव्राजकों का चीवर सम्बन्धी 'एकान्त' इस प्रकार है।

"भिक्षुओ, अन्य मतों के परिव्राजकों का पिण्डपात (=भोजन) सम्बन्धी 'एकान्त' इस प्रकार है—वे शाक खाने वाले भी होते हैं। स्यामाक खाने वाले भी होते हैं, नीवार (-धान) के खाने वाले भी होते हैं, दद्दुल (-धान) के खाने वाले भी होते हैं, हट (-शाक) के खाने वाले भी होते हैं, टूटे धान (=कणी) के खाने वाले भी होते हैं, माण्ड खाने वाले भी होते हैं, खली खाने वाले भी होते हैं, तिनके खाने वाले भी होते हैं, गोबर खाने वाले भी होते हैं, जंगल के पेड़ों से गिरे फलों को खाकर ही रहने वाले भी होते हैं।

" भिक्षुओ, अन्य मतों के परिव्राजकों का शयनासन सम्बन्धी 'एकान्त' इस प्रकार है—आरण्य-वास, वृक्ष के तले रहना, श्मशान में रहना, जंगल में रहना, खुले आकाश के नीचे रहना, पराल की ढेरी पर रहना, तथा भूस के घर में रहना।

" भिक्षुओ, अन्य मतों के परिव्राजक इन तीन प्रकार के एकान्तों (=प्रविवेकों) की बात करते हैं।

" भिक्षुओ, इस बुद्ध-शासन (=धर्म-विनय) में भिक्षु के ये तीन "एकान्त" हैं। कौन से तीन ?

" भिक्षुओ, भिक्षु शीलवान् होता है, उस की दुश्शीलता का प्रहाण हो गया रहता है, उस से वह 'पृथक' हो जाता है ; वह सम्यक् दृष्टि होता है, उस की मिथ्या-दृष्टि का प्रहाण हो गया रहता है, उस से वह 'पृथक' हो जाता है ; वह क्षीणास्रव होता है, उस के आस्रवों का प्रहाण हो गया रहता है, वह उन से 'पृथक' हो जाता है। भिक्षुओ, क्योंकि भिक्षु शीलवान् होता है, उस की दुश्शीलता का प्रहाण हो गया रहता है, उस से वह 'पृथक' हो जाता है ; वह सम्यक्-दृष्टि होता है, उस की मिथ्या-दृष्टि का प्रहाण हो गया रहता है, उस से वह 'पृथक' हो जाता है ; वह क्षीणास्रव होता है, उस के आस्रवों का प्रहाण हो गया रहता है, वह उन से 'पृथक' हो जाता है—इस लिये वह अग्र-प्राप्त कहलाता है, सार-प्राप्त कहलाता है, शुद्ध कहलाता है, सार में प्रतिष्ठित कहलाता है।

" भिक्षुओ, जैसे किसी कृषक-गृहस्थ का धान का खेत तैयार हो। कृषक-गृहस्थ उसे जल्दी-जल्दी कटवाये, जल्दी-जल्दी कटवाकर उसे जल्दी-जल्दी इकट्ठा कराये, जल्दी-जल्दी कट्ठा करा कर उसे जल्दी-जल्दी उठवाये, जल्दी-जल्दी उठवाकर उस का ढेर लगवाये, जल्दी-जल्दी उस का ढेर लगवाकर जल्दी-जल्दी मरदन कराये, जल्दी जल्दी मरदन कराकर जल्दी जल्दी पराल पृथक कराये, जल्दी जल्दी पराल पृथक कराकर जल्दी जल्दी भूसा पृथक कराये, जल्दी-जल्दी भूसा पृथक कराकर जल्दी-जल्दी उसे छाज से उड़वाये, जल्दी-जल्दी छाज से उड़वाकर जल्दी जल्दी इकट्ठा करवाये, जल्दी-जल्दी इकट्ठा करवाकर जल्दी जल्दी कुटवाये, जल्दी-जल्दी कुटवाकर जल्दी जल्दी 'भुस' पृथक कराये—ऐसा होने से भिक्षुओ उस कृषक-गृहस्थ के वे धान अग्र-प्राप्त होंगे, सारवान् होंगे, शुद्ध होंगे तथा सार में प्रतिष्ठित होंगे। इसी प्रकार भिक्षुओ ! क्योंकि भिक्षु शीलवान् होता है, उस की दुश्शीलता

का प्रहाण हो गया रहता है। उस से वह पृथक हो जाता है ; वह सम्यक्-दृष्टि होता है, उस की मिथ्या-दृष्टि का प्रहाण हो गया रहता है, उस से वह 'पृथक' हो जाता है, वह क्षीणास्रव होता है, उसके आस्रवों का प्रहाण हो गया रहता है, वह उस से पृथक हो जाता है––इसलिये वह अग्र-प्राप्त कहलाता है, सार-प्राप्त कहलाता है, शुद्ध कहलाता है तथा सार में प्रतिष्ठित कहलाता है।

"भिक्षुओ, जैसे शरत् ऋतु में जब आकाश बादलों से निर्मल हो जाता है, उस समय आकाश में ऊपर उठता हुआ सूर्य्य, सारे आकाश के अँधेरे को दूर करके चमकता है, तपता है तथा प्रकाशित होता है, उसी प्रकार भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक को रज-रहित, मल-रहित धर्म-चक्षु उत्पन्न हो जाता है, तो भिक्षुओ, उस के इस ज्ञान के उत्पादन के साथ साथ ही तीन संयोजनों का नाश हो जाता है––सत्काय-दृष्टि का, विचिकित्सा का तथा शील-ब्रत परामास का। इस के बाद अविद्या तथा व्यापाद दो धर्म शेष रहते हैं। तब वह काम-भोगों से पृथक हो, अकुशल-धर्मों से पृथक हो प्रथम-ध्यान को प्राप्त कर विहार करता है, जिस में वितर्क रहते हैं, विचार रहते हैं, जो एकान्त-वास से उत्पन्न होता है तथा जिस में प्रीति और सुख रहते हैं। भिक्षुओ, यदि आर्य-श्रावक उस समय मृत्यु को प्राप्त हो जाये तो उस समय वह किसी ऐसे संयोजन से बँधा नहीं रहता कि जिस बंधन के कारण उस का पुनः इस लोक में आगमन हो।"

(९३)

"भिक्षुओ, परिषद् के ये तीन प्रकार हैं। कौन से तीन?

"अग्र-परिषद्, व्यग्र-परिषद्, समग्र-परिषद्।

"भिक्षुओ, अग्र-परिषद् किसे कहते हैं?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में स्थविर भिक्षु न बाहुलिक (=अति-परिग्रही) होते हैं, न शिथिल होते हैं, न पतनोन्मुख होते हैं तथा शान्ति-भाव में पूर्वगामी होते हैं, अप्राप्त की प्राप्ति के लिये प्रयत्न-शील होते हैं, अनधिगत को अधिगत करने के लिये प्रयत्न-शील होते हैं, असाक्षातकृत को साक्षात करने के लिये प्रयत्न-शील होते हैं। उन के अनुयायी उन का अनुकरण करते हैं। वे भी न बाहुलिक होते हैं, न शिथिल होते हैं, न पतनोन्मुख होते हैं तथा शान्ति-भावमें पूर्व-गामी होते हैं, अप्राप्त की प्राप्ति के लिये प्रयत्न-शील होते हैं, अनधिगत को अधिगत करने के लिये

यत्न-शील होते हैं, असाक्षातकृत को साक्षात करने के लिये प्रयत्न-शील होते हैं।

"भिक्षुओ, ऐसी परिषद् अग्र-परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, व्यग्र-परिषद् किसे कहते हैं?

भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु झगड़ा करते हों, कलह करते हों, विवाद करते हों, परस्पर एक दूसरे को मुख रूपी शक्ति (=आयुध) से बींधते फिरते हों—भिक्षुओ, ऐसी परिषद् व्यग्र-परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, समग्र-परिषद् किसे कहते हैं?

"भिक्षुओ, जिस परिषद् में भिक्षु समग्र-भाव से रहते हों, प्रसन्नता-पूर्वक रहते हों, विवाद न करते हों, दूध-पानी की तरह रहते हों, परस्पर एक दूसरे को प्रेम की दृष्टि से देखते हुए रहते हों—भिक्षुओ, ऐसी परिषद् समग्र-परिषद् कहलाती है।

"भिक्षुओ, जिस समय भिक्षु समग्र-भाव से रहते हैं, प्रसन्नता-पूर्वक रहते हैं, विवाद नहीं करते हैं, दूध-पानी की तरह रहते हैं, परस्पर एक दूसरे को प्रेम की दृष्टि से देखते हुए रहते हैं, उस समय भिक्षुओ, भिक्षु बहुत पुण्यार्जन करते हैं, उस समय भिक्षुओ! भिक्षु ब्रह्म-विहार करते हैं, जो कि उनका यह मुदिता-चित्त-विमुक्ति के साथ रहना है। मुदित के मन में प्रीति पैदा होती है, प्रीति-युक्त का शरीर शान्त होता है, शान्त-शरीर से सुख होता है, सुखी का चित्त एकाग्र होता है।

"जैसे भिक्षुओ ऊपर पहाड़ पर भारी वर्षा होने से वह पानी नीचे की ओर बहता हुआ पर्वत की कन्दरायें, दरारें आदि भर देता है, पर्वत की कन्दरायें, दरारें आदि भर कर छोटे छोटे गढ़े भर देता है, छोटे-छोटे गढ़े भर कर बड़े बड़े गढ़े भर देता है, बड़े बड़े गढ़े भर कर छोटी छोटी नदियाँ भर देता है, छोटी छोटी नदियाँ भर कर बड़ी बड़ी नदियाँ भर देता है, बड़ी बड़ी नदियाँ भर कर महा-समुद्र को भर देता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस समय भिक्षु समग्र-भाव से रहते हैं, प्रसन्नता-पूर्वक रहते हैं, विवाद नहीं करते हैं, दूध-पानी की तरह रहते हैं, परस्पर एक दूसरे को प्रेम की दृष्टि से देखते हुए रहते हैं, उस समय भिक्षुओ, भिक्षु बहुत पुण्यार्जन करते ह, उस समय भिक्षुओ, भिक्षु ब्रह्म-विहार करते हैं जो कि उन का यह मुदिता-चित्त-

विमुक्ति के साथ रहना है। मुदित के मन में प्रीति पैदा होती है, प्रीति-युक्त का शरीर शान्त होता है, शान्त शरीर से सुख होता है, सुखी का चित्त एकाग्र होता है।

"भिक्षुओ, ये तीन प्रकार की परिषद् होती हैं।"

(९४)

"भिक्षुओ, तीन अंगों से युक्त श्रेष्ठ घोड़ा राजा के योग्य होता है, राजा का भोग्य होता है, राजा का अंग ही गिना जाता है। कौन से तीन अंगों से युक्त।

"भिक्षुओ, राजा का श्रेष्ठ घोड़ा वर्ण-युक्त होता है, बल-युक्त होता है, तेज गति-युक्त होता है। भिक्षुओ, इन तीन अंगों से युक्त श्रेष्ठ घोड़ा राजा के योग्य होता है, राजा का भोग्य होता है, राजा का अंग ही गिना जाता है।

"इसी प्रकार भिक्षुओ तीन अंगों से युक्त भिक्षु आदर करने योग्य होता है, आतिथ्य करने योग्य होता है, दान-दक्षिणा देने योग्य होता है, हाथ जोड़कर नमस्कार करने योग्य होता है, तथा लोक का पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन से तीन अंगों से?

"भिक्षुओ, भिक्षु वर्ण से युक्त होता है, बल से युक्त होता है तथा गति से युक्त होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु वर्ण-वान कैसे होता है?

"भिक्षुओ, भिक्षु शीलवान् होता है। प्रातिमोक्ष के नियमों के अनुसार संयत रहने वाला, सदाचरण की गोचर-भूमि में ही विचरने वाला, अत्यन्त छोटे दोष को करने में भी भय मानने वाला; वह शिक्षाओं को सम्यक् प्रकार ग्रहण करता है। भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु वर्ण-वान् होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु बल-वान कैसे होता है?

"भिक्षुओ, भिक्षु अकुशल धर्मों का प्रहाण करने के लिये कुशल धर्मों की प्राप्ति के लिये प्रयत्नवान रहता है। वह कुशल-धर्मों के प्रति सामर्थ्यवान रहता है, दृढ़-पराक्रमी रहता है, कंधे का जुआ नहीं गिराये रहता है। इस प्रकार भिक्षुओ भिक्षु बलवान होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु गति-वान कैसे होता है?

"भिक्षुओ, भिक्षु यह दुःख है, इसे यथार्थ रूप से जानता है, यह दुःख समुदय है, इसे यथार्थ रूप से जानता है........यह दुख निरोध की ओर ले

जाने वाला मार्ग है इसे यथार्थ रूप इसे जानता है—इस प्रकार भिक्षुओ, भिक्षु गति-वान होता है।

"भिक्षुओ, इन तीन बातों से युक्त भिक्षु आदर करने योग्य होता है, आतिथ्य करने योग्य होता है, (दान दक्षिणा) देने योग्य होता है,......लोक का पुण्य-क्षेत्र होता है।"

(९५)

"भिक्षुओ, तीन अंगों से युक्त श्रेष्ठ घोड़ा राजा के योग्य होता है, राजा का भोग्य होता है, राजा का अंग ही गिना जाता है। कौन से तीन अंगों से युक्त?

"भिक्षुओ, राजा का श्रेष्ठ घोड़ा वर्ण-युक्त होता है, बल-युक्त होता है, तेज गति-युक्त होता है। भिक्षुओ, इन तीन अंगों से युक्त श्रेष्ठ घोड़ा राजा के योग्य होता है, राजा का भोग्य होता है, राजा का अंग ही गिना जाता है।

"इसी प्रकार भिक्षुओ तीन अंगोंसे युक्त भिक्षु आदर करने योग्य होता है, आतिथ्य करने योग्य होता है, दान-दक्षिणा देने योग्य होता है, हाथ जोड़कर नमस्कार करने योग्य होता है तथा लोक का पुण्य-क्षेत्र होता है। कौनसे तीन अंगों से?

"भिक्षुओ, भिक्षु वर्णसे युक्त होता है, बलसे युक्त होता है तथा गतिसे युक्त होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु वर्णवान् कैसे होता है?

"भिक्षुओ, भिक्षु शीलवान् होता है। प्रति-मोक्षके नियमोंके अनुसार संयत रहनेवाला, सदाचरणकी ही गोचर-भूमिमें विचरने वाला, अत्यन्त छोटे दोषको करनेमें भी भय मानने वाला; वह शिक्षाओंको सम्यक् प्रकार ग्रहण करता है। भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु वर्णवान् होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु बलवान् कैसे होता है?

"भिक्षुओ, भिक्षु अकुशल धर्मोंका प्रहाण करनेके लिये, कुशल-धर्मोंकी प्राप्ति के लिये प्रयत्नवान् रहता है। वह कुशल-धर्मोंके प्रति सामर्थ्यवान् रहता है, दृढ़-पराक्रमी रहता है, कंधेका जुआ नहीं गिराये रहता है। इस प्रकार भिक्षुओ, भिक्षु बलवान् होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु गतिवान कैसे होता है?

"भिक्षुओ, भिक्षु इधरके पांचों ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय करके परलोकमें ही उत्पन्न होनेवाला होता है, वहींसे निवृत्त होनेवाला, उस लोकसे यहाँ नहीं लौटने वाला।

"भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु गतिवान होता है। इस प्रकार भिक्षुओ, तीन अंगोंसे युक्त भिक्षु आदर करने योग्य होता है...... पुण्य-क्षेत्र होता है।

(९६)

"भिक्षुओ, तीन अंगोंसे युक्त श्रेष्ठ घोड़ा राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, राजाका अंग ही गिना जाता है,। कौनसे तीन अंगोंसे युक्त ?

"भिक्षुओ, राजाका श्रेष्ठ घोड़ा वर्ण-युक्त होता है, बल-युक्त होता है, तेज- गति-युक्त होता है। भिक्षुओ, इन तीन अंगोंसे युक्त श्रेष्ठ घोड़ा राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, राजाका अंग ही गिना जाता है।

"इसी प्रकार भिक्षुओ तीन अंगोंसे युक्त भिक्षु आदर करने योग्य होता है............पुण्य क्षेत्र होता है।" कौनसे तीन ?

"भिक्षुओ, भिक्षु वर्णसे युक्त होता है, बलसे युक्त होता है तथा गतिसे युक्त होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु वर्णवान् कैसे होता है ?

"भिक्षुओ, भिक्षु शीलवान् होता है। प्रातिमोक्षके नियमोंके अनुसार संयत रहनेवाला....... शिक्षाओंको सम्यक् प्रकार ग्रहण करता है। भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु वर्णवान् होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु बलवान् कैसेहोता है।?

भिक्षुओ, भिक्षु अकुशल धर्मोंका प्रहाण करनेके लिये.....कंधेका जुआ नहीं गिराये रहता है। भिक्षुओ इस प्रकार भिक्षु बल-वान होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु गति-वान् कैसे होता है ?

"भिक्षुओ, भिक्षु आस्रवोंका क्षय करके अनास्रव चित्त-विमुक्तिको, प्रज्ञा-विमुक्ति को इसी शरीरमें स्वयं जानकर साक्षातकर, प्राप्त कर, विहार करता है। भिक्षुओ, भिक्षु इस प्रकार गतिवान् होता है।

"भिक्षुओ, इन तीन अंगोंसे युक्त भिक्षु आदर करने योग्य होता है.... लोकका पुण्य-क्षेत्र होता है।

(९७)

"भिक्षुओ, नया भी छालका वस्त्र दुर्वर्ण होता है, खुरदरा होता है, कम मूल्यका होता है। कुछ समय काममें लाया हुआ भी छालका वस्त्र दुर्वर्ण होता है, खुरदरा होता है, कम मूल्यका होता है। पुराना भी छालका वस्त्र दुर्वर्ण होता है, खुरदरा होता है, कम मूल्यका होता है,। भिक्षुओ, छालके पुराने वस्त्रको या तो हाण्डी पोंछने के काममें लाते हैं या कूड़ेके ढेरपर फेंक देते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, यदि नया भिक्षु भी दुश्शील होता है, पापी होता है, तो मैं यह उसका दुर्वर्ण होना ही कहता हूँ। भिक्षुओ, जैसे वह छालका वस्त्र दुर्वर्ण होता है, वैसे ही मैं इस व्यक्तिको कहता हूँ।

"जो उसके साथ रहते हैं, उसकी संगति करते हैं, उसके आश्रयमें रहते हैं तथा उसका अनुकरण करते हैं, उनके लिये दीर्घकाल तक यह अहित, दुःखका का कारण होता है, तो मैं यह उसका खुरदरा होना कहता हूँ। भिक्षुओ,! जैसे वह छालका कपड़ा खुरदरा होता है। वैसा ही मैं इस व्यक्तिको कहता हूँ।

"यह जिन दाताओंके चीवर-पिण्डपात-शयनासन-ग्लान-प्रत्यय (दवाई आदि) ग्रहण करता है, उनके लिये यह न महान् फल देने वाला होता है न महान् परिणाम-कारी। यह मैं उसका अल्प-मूल्यवान् होना कहता हूँ। भिक्षुओ, जैसे वह छालका कपड़ा कम मूल्यका होता है, वैसा ही मैं इस व्यक्तिको कहता हूँ।

"भिक्षुओ, यदि कोई मध्यम-आयुका भिक्षु भी .... यदि कोई स्थवीर भी दुःशील होता है, पापी होता है, तो मैं यह उसका दुर्वर्ण होना ही कहता हूँ। भिक्षुओ, जैसे वह छालका वस्त्र दुर्वर्ण होता है वैसा ही मैं इस व्यक्तिको कहता हूँ।

"जो उसके साथ रहते हैं, उसकी संगति करते हैं, उसके आश्रयमें रहते हैं, तथा उसका अनुकरण करते हैं, उनके लिये दीर्घकाल तक यह अहित, दुःखका कारण होता है, तो मैं यह उसका खुरदरा होना कहता हूँ। भिक्षुओ, जैसे वह छालका कपड़ा खुरदरा होता है वैसा ही मैं इस व्यक्तिको कहता हूँ।

"यह जिन (दाताओंके) चीवर–पिण्डपात (भोजन)–शयनासन तथा ग्लान-प्रत्यय (दवाई आदि) ग्रहण करता है, उनके लिये यह न महान् फल देनेवाला होता है,न महान् परिणामकारी। यह मैं उसका अल्प मूल्यवान् होना कहता हूँ। भिक्षुओ, जैसे वह छालका कपड़ा कम मूल्यका होता है, वैसा ही मैं इस व्यक्तिको कहता हूँ।

"भिक्षुओ, यदि ऐसा स्थवीर भिक्षु भी संघके बीच बैठकर मुंह खोलता है, तो भिक्षु उसे कहते हैं—तुम्हारे मूर्खके, अपण्डित के बोलनेसे क्या लाभ ! तुम भी समझते हो कि तुम्हारे पास कुछ बोलने योग्य है । वह कुपित होकर, असन्तुष्ट होकर मुँहसे ऐसी बात निकालता है जिससे संघ उसे उसी प्रकार फेंक देता है जैसे कूड़ेके ढेर पर छालका कपड़ा।

(९८)

"भिक्षुओ, काशीका नया वस्त्र भी सुन्दर होता है, चिकना होता है, बहुमूल्य होता है। कुछ समय काममें लाया हुआ भी काशीका वस्त्र सुन्दर होता है, चिकना होता है, बहुमूल्य होता है। पुराना भी काशीका वस्त्र सुन्दर होता है, चिकना होता है, बहुमूल्य होता है। भिक्षुओ,! काशीके पुराने वस्त्रमें भी या तो रतन लपेटे जाते हैं या उसे सुगन्धित पेटीमें रखते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ ! यदि नया भिक्षु शीलवान् कल्याण-धर्मी हो तो यह उसका सौन्दर्य है। भिक्षुओ जैसे वह काशीका सुन्दर वस्त्र, वैसा ही मैं इस व्यक्ति को कहता हूँ।

"जो उसके साथ रहते हैं, उसकी संगति करते हैं, उसके आश्रयमें रहते हैं तथा उसका अनुकरण करते हैं, उनके लिये दीर्घकालतक यह हित, सुखका कारण होता है, तो मैं यह उसका चिकना होना कहता हूँ। भिक्षुओ, जैसे यह काशीका वस्त्र चिकना होता है, वैसा ही मैं उस व्यक्तिको कहता हूँ।

"यह जिन (दाताओंके) चीवर-पिण्डपात-शयनासन, ग्लान-प्रत्यय (दवाई आदि) ग्रहण करता है उनके लिये यह महान् फल देनेवाला होता है, महान् परिणाम कारी। यह मैं उसका बहुमूल्यवान् होना कहता हूँ। भिक्षुओ, जैसे वह काशीका वस्त्र बहुमूल्यवान् होता है, वैसा ही मैं इस व्यक्तिको कहता हूँ।

"भिक्षुओ, यदि कोई मध्यम आयुका भिक्षु भी.......यदि कोई स्थीवर भिक्षु भी शीलवान्, कल्याण धर्मी होता है तो यह उसका सौन्दर्य है। भिक्षुओ, जैसे वह काशीका सुन्दर वस्त्र, वैसा ही मैं इस व्यक्तिको कहता हूँ।

"जो उसके साथ रहते हैं, उसकी संगति करते हैं, उसके आश्रयमें रहते हैं तथा उसका अनुकरण करते हैं, उनके लिये दीर्घकाल तक यह हित, सुखका कारण होता है,

तो मैं यह उसका चिकना होना कहता हूँ। भिक्षुओ, जैसे यह काशीका वस्त्र चिकना होता है, वैसा ही मैं उस व्यक्तिको कहता हूँ।

"यह जिन (दाताओंके) चीवर-पिण्डपात-शयनासन ग्लान-प्रत्यय (दवाई आदि) ग्रहण करता है उनके लिये यह महान् फल देने वाला होता है, महान् परिणाम-कारी। यह मैं उसका बहुमूल्यवान् होना कहता हूँ। भिक्षुओ, जैसे वह काशीका वस्त्र बहुमूल्यवान् होता है, वैसा ही मैं इस व्यक्तिको कहता हूँ।

"भिक्षुओ, यदि इस प्रकारका स्थवीर भिक्षु संघके बीचमें कुछ बोलता है तो उस समय भिक्षु कहते हैं---आयुष्मानो! चुप रहो! स्थवीर भिक्षु धर्म तथा विनय कह रहा है। उसका वह वचन उसी प्रकार ध्यानसे सुना जाता है जैसे काशीका वस्त्र सुन्दर पेटीमें रखा जाता है। इसलिये भिक्षुओ, यह सीखना चाहिये कि काशीके वस्त्रके समान होंगे, छालके वस्त्रके समान नहीं। भिक्षुओ, ऐसा ही सीखना चाहिये।"

(९९)

"भिक्षुओ, यदि कोई ऐसा कहता हो कि जैसा जैसा भी यह आदमी कर्म करता है उसे वह सब भोगना ही होता है---तो ऐसा होनेपर तो श्रेष्ठजीवन व्यतीत करना असम्भव हो जाता है, तथा दुःखका सम्यक् अन्त करनेकी गुंजायश नहीं रहती। (लेकिन) भिक्षुओ, यदि कोई ऐसा कहे कि जिस प्रकारका भोग्य (वेदनीय)-कर्म वह करता है, उसे वैसा ही फल मिलता है, तो ऐसा होनेपर तो श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करना सम्भव हो जाता है, तथा दुःखका सम्यक् अन्त करनेकी गुंजायश रहती है।

"भिक्षुओ, कोई कोई आदमी यदि कोई अल्प-मात्र भी पाप-कर्म करता है तो वह उसे नरकमें ही ले जाता है। लेकिन भिक्षुओ, कोई कोई आदमी यदि वैसा ही अल्प-मात्र पाप-कर्म करता है तो उसका फल वह इसी शरीरमें भोग लेता है, बहुत क्या (आगेके लिये) अणु-मात्र भी नहीं बच रहता।

"भिक्षुओ, किस प्रकारके आदमीका किया हुआ अल्प-मात्र भी पाप-कर्म उसे नरकमें ले जाता है?

"भिक्षुओ, कोई कोई आदमी अनभ्यस्त-शरीर, अनभ्यस्त-शील, अनभ्यस्त-चित्त तथा अनभ्यस्त-प्रज्ञा होता है। वह सीमित होता है, एक प्रकारसे बिना शरीरके

होता है, थोड़े (पाप) से भी दुःख भोगने वाला। भिक्षुओ इस प्रकारके आदमीका किया हुआ अल्प-मात्र भी पाप-कर्म उसे नरकमें ले जाता है।

" भिक्षुओ, किस प्रकारके आदमी द्वारा किया गया वैसा ही अल्प-मात्र पाप-कर्म इसी शरीरमें फल देता है, (अगले जन्मके लिये) बहुत क्या अणुमात्र भी नहीं बच रहता ?

"भिक्षुओ, कोई कोई आदमी अभ्यस्त-शरीर, अभ्यस्त-शील, अभ्यस्त-चित्त तथा अभ्यस्त-प्रज्ञ होता है। वह असीमित होता है, महान् होता है तथा अनंत सुख-विहारी होता है। भिक्षुओ, इस प्रकार का आदमी यदि वैसा ही अल्प-मात्र पाप-कर्म करता है, तो उसका फल वह इसी शरीरमें भोग लेता है, बहुत क्या (आगेके लिये) अणु-मात्र भी नहीं बच रहता।

" भिक्षुओ, जैसे कोई आदमी नमकका एक टुकड़ा छोटे पानीके कसोरेमें डाले। तो भिक्षुओ, क्या मानते हो, क्या उस छोटे पानीके कसोरेमें नमकका वह टुकड़ा डालनेसे उसका पानी अपेय नमकीन नहीं हो जायेगा ? "

" भन्ते ! हाँ। "

" यह किस लिये ? "

" भन्ते ! पानीके कसोरेमें थोड़ासा पानी है। वह निमकका टुकड़ा डालनेसे अपेय नमकीन हो ही जायेगा। "

" भिक्षुओ, जैसे कोई आदमी नमकका एक टुकड़ा गंगा नदीमें फेंके। तो भिक्षुओ, क्या मानते हो , क्या उस नमकके टुकड़ेसे उस गंगा नदीका पानी अपेय नमकीन हो जायेगा ? "

" भन्ते ! नहीं ही। "

" यह किस लिये ? "

" भन्ते ! गंगा नदीमें महान् जल-राशि है। वह नमकके टुकड़ेसे अपेय नमकीन नहीं होगी। "

"भिक्षुओ, कोई कोई आदमी यदि कोई अल्प-मात्र भी पाप-कर्म करता है तो वह उसे नरकमें ही ले जाता है। लेकिन भिक्षुओ, कोई कोई आदमी यदि वैसा ही अल्प-मात्र पापकर्म करता है तो उसका फल वह इसी शरीरमें भोग लेता है, बहुत क्या (आगेके लिये) अणु-मात्र भी नहीं बच रहता।

"भिक्षुओ, किस प्रकारके आदमीका किया हुआ अल्प-मात्र भी पाप-कर्म उसे नरकमें ले जाता है ?

"भिक्षुओ, कोई कोई आदमी अनभ्यस्त-शरीर.........थोड़े (पाप) से भी दुःख भोगने वाला। भिक्षुओ, इस प्रकारके आदमी द्वारा किया हुआ अल्प-मात्र भी पाप-कर्म उसे नरकमें ले जाता है।

"भिक्षुओ, किस प्रकारके आदमी द्वारा किया गया वैसा ही अल्प-मात्र पाप-कर्म इसी शरीरमें फल देता है ? अगले जन्मके लिये बहुत क्या अणुमात्र भी नहीं बच रहता। भिक्षुओ, कोई कोई आदमी अभ्यस्त-शरीर.......अनन्त सुख विहारी होता है। भिक्षुओ, इस प्रकारके आदमी द्वारा किया गया वैसा ही अल्प-मात्र पाप-कर्म इसी शरीरमें फल देता है। अगले जन्मके लिये, बहुत क्या अणुमात्र भी नहीं बच रहता।

"भिक्षुओ, कोई कोई आदमी आधे-कार्षापण (के ऋण लेने) से भी बँध जाता है, कार्षापणसे भी बँध जाता है तथा सौ कार्षापणोंसे भी बँध जाता है। भिक्षुओ, कोई कोई आदमी आधे कार्षापण (के ऋण लेने) से भी नहीं बँधता, कार्षापणसे भी नहीं बँधता तथा सौ कार्षापणसे भी नही बँधता।

"भिक्षुओ, कैसा आदमी आधे कार्षापणसे भी बँध जाता है, कार्षापणसे भी बँध जाता है तथा सौ कार्षापणोंसे भी बँध जाता है ? भिक्षुओ, एक आदमी दरिद्र होता है, अल्प-सामर्थ्य वाला होता है, अल्प-भोगोंवाला होता है। भिक्षुओ, इस प्रकारका आदमी आधे कार्षापणसे भी बँध जाता है, कार्षापणसे भी बँध जाता है, सौ कार्षापणसे भी बंध जाता है।

"भिक्षुओ, कैसा आदमी आधे कार्षापणसे भी नहीं बँधता, कार्षापणसे भी नहीं बंधता, सौ कार्षापणसे भी नहीं बँधता ? भिक्षुओ एक आदमी धनवान होता है, महाधनवान होता है, बहुत-भोगों वाला। भिक्षुओ, इस प्रकारका आदमी आधे कार्षापणसे भी नहीं बंधता, कार्षापणसे भी नहीं बंधता, सौ कार्षापणसे भी नहीं बंधता।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, एक आदमी यदि कोई अल्प-मात्र भी पाप-कर्म करता है तो वह उसे नरकमें ही ले जाता है। लेकिन भिक्षुओ, कोई कोई आदमी यदि वैसा ही अल्प-मात्र पापकर्म करता है तो उसका फल वह इसी शरीरमें भोग लेता है, बहुत क्या (आगेके लिये) अणु-मात्र भी नहीं बच रहता।

"भिक्षुओ, किस प्रकारके आदमीका किया हुआ अल्प-मात्र भी पाप-कर्म उसे नरकमें ले जाता है ?

"भिक्षुओ, यदि कोई आदमी अनभ्यस्त-शरीर......थोड़े (पाप) से भी दुःख भोगनेवाला। भिक्षुओ, इस प्रकारके आदमी द्वारा किया हुआ अल्प-मात्र भी पाप-कर्म उसे नरकमें ले जाता है। भिक्षुओ, किस प्रकारके आदमी द्वारा किया गया वैसा ही अल्प-मात्र पाप-कर्म इसी शरीरमें फल देता है? अगले जन्मके लिये, बहुत क्या अणु-मात्र भी नहीं बच रहता। भिक्षुओ, कोई कोई आदमी अभ्यस्त शरीर ....अनन्त सुख-विहारी होता है। भिक्षुओ, इस प्रकारके आदमी द्वारा किया गया वैसा हो अल्प-मात्र पाप-कर्म इसी शरीरमें फल देता है (अगले जन्मके लिये) बहुत क्या अणु-मात्र भी नहीं बच रहता।

"जैसे भिक्षुओ कोई भेड़ मारनेवाला वा भेड़-घातक कसाई हो। वह चोरीसे भेड़ ले जानेवाले किसी आदमीको पीट भी सकता है, बाँध भी सकता है और मार भी डाल सकता है अथवा यथापराध दण्ड दे सकता है; किन्तु चोरीसे भेड़ ले जाने वाले ही किसी दूसरे आदमीको न तो वह पीट ही सकता है, न बाँध ही सकता है, न मार डाल ही सकता है और न यथापराध दण्ड दे सकता है।

"भिक्षुओ, भेड़ चुराकर लेजानेवाले किस तरहके आदमीको भेड़ मारने वाला वा भेड़-घातक कसाई पीट भी सकता है, बाँध भी सकता है, मार भी डाल सकता है अथवा यथापराध दण्ड भी दे सकता है ?

"भिक्षुओ, एक आदमी दरिद्र होता है, अल्पसामर्थ्य होता है, अल्प-भोगोंवाला होता है। ऐसे भेड़ चुराकर ले जानेवालाले आदमीको भेड़ मारनेवाला वा भेड़-घातक कसाई पीट भी सकता है, बाँध भी सकता है, मार भी डाल सकता है अथवा यथापराध दण्ड भी दे सकता है।

"भिक्षुओ, भेड़ चुराकर ले जानेवाले किस तरहके आदमीको भेड़ मारने वाला वा भेड़-घातक कसाई न पीट ही सकता है, न बांध ही सकता है, न मार ही डाल सकता है अथवा न यथापराध दण्ड दे सकता है ?

"भिक्षुओ, कोई आदमी धनी होती है, महाधनवान होता है, महान् भोगों-वाला होता है, राजा होता है, राजाका महामात्य होता है। भिक्षुओ, इस प्रकारके भेड़ चुराकर ले जानेवाले आदमीको भेड़ चुरानेवाला वा भेड़-घातक कसाई न पीट ही सकता है, न बाँध ही सकता है और न (जान से) मार डाल सकता है अथवा न यथापराध

दण्ड दे सकता है। बल्कि, वह हाथ जोड़कर उसे कहता है—मालिक! या तो मेरी भेड़ दे दो या भेड़का मूल्य दे दो ?

"इसी प्रकार भिक्षुओ, एक आदमी यदि कोई अल्प-मात्र भी पाप-कर्म करता है तो वह उसे नरकमें ही ले जाता है। लेकिन भिक्षुओ कोई आदमी यदि वैसा ही अल्प-मात्र पाप-कर्म करता है तो उसका फल वह इसी शरीरमें भोग लेता है, बहुत क्या, आगेके लिये अणुमात्र भी नहीं बचता।

"भिक्षुओ, किस प्रकारके आदमीका किया हुआ अल्प-मात्र भी पाप-कर्म उसे नरकमें ले जाता ह ?

"भिक्षुओ, यदि कोई आदमी अनभ्यस्त शरीर.......थोड़े (पाप) से भी दुःख भोगनेवाला। भिक्षुओ, इस प्रकारके आदमी द्वारा किया हुआ अल्प-मात्र भी पाप-कर्म उसे नरकमें ले जाता है। भिक्षुओ, किस प्रकारके आदमी द्वारा किया गया वैसा ही अल्प-मात्र पाप-कर्म इसी शरीरमें फल देता है। (अगले जन्मके लिये) बहुत क्या, अणुमात्र भी नहीं बच रहता ?

"भिक्षुओ, कोई कोई आदमी अभ्यस्त-शरीर......अनन्त सुख-विहारी होता है। भिक्षुओ, इस प्रकारके आदमी द्वारा किया गया वैसा ही अल्प-मात्र पाप-कर्म भी इसी शरीरमें फल देता है। (अगले जन्मके लिये) बहुत क्या अणु-मात्र भी नहीं बच रहता।

"भिक्षुओ, यदि कोई ऐसा कहता हो कि जैसा जैसा भी यह आदमी कर्म करता है उसे वह सब भोगना ही होता है—तो ऐसा होनेपर तो श्रेष्ठ-जीवन व्यतीत करना असम्भव हो जाता है (तथा) दुःखका सम्यक् अन्त करनेकी गुंजायश नहीं रहती। (लेकिन) भिक्षुओ, यदि कोई ऐसा कहे कि जिस प्रकारका भोग्य (=वेदनीय) कर्म वह करता है, उसे वैसा ही फल मिलता है, तो ऐसा होने पर तो श्रेष्ठ-जीवन व्यतीत करना सम्भव हो जाता है तथा दुःखका सम्यक् अन्त करनेकी गुंजायश रहती है।"

(१००)

"भिक्षुओ, स्वर्ण पर बड़े बड़े धब्बे होते हैं, मिट्टीके, बालूके। उन्हें मिट्टी धोनेवाला वा मिट्टी धोने वाले का शागिर्द द्रोणीमें डालकर धोता है, अच्छी तरह धोता है, मलकर धोता है ताकि उस मैलका प्रहाण हो जाय, वह दूर हो जाय।

" स्वर्णके सामान्य धब्बे होते हैं, हलकी मिट्टीके, मोटे बालुके। उन्हें मिट्टी धोनेवाला वा मिट्टी धोने वाले का शागिर्द धोता है, अच्छी तरह धोता है, मलकर धोता है ताकि उस मैलका प्रहाण हो जाय, वह दूर हो जाय।

" स्वर्णके सूक्ष्म धब्बे होते हैं, सूक्ष्म बालूके धब्बे, काले धब्बे। उन्हें मिट्टी धोनेवाला वा मिट्टी धोने वाले का शागिर्द धोता है, अच्छी तरह धोता है, मलकर धोता है ताकि उस मैलका प्रहाण हो जाय, वह दूर हो जाय।

" तब स्वर्ण-कण ही शेष रह जाते हैं। तब सुनार या सुनारका शागिर्द उस सोनेको मूस (= कुठाली) में डालकर तपाता है, अच्छी तरह तपाता है, किन्तु साफ नहीं करता है। वह स्वर्ण तपा हुआ होता है, अच्छी तरह तपा हुआ होता है, किन्तु साफ नहीं होता, पात्रमें डाला हुआ नहीं होता, न वह कोमल होता है, न कमनीय होता है, न प्रभास्वर होता है; वह काममें लानेपर टूट जाता है।

" भिक्षुओ, समय आता है जब वह सुनार अथवा सुनारका शागिर्द उस सोनेको तपाता है, अच्छी तरह तपाता है और साफ भी करता है। वह सोना तपाया हुआ होता है, अच्छी तरह तपाया हुआ होता है, साफ होता है, पात्रमें डाला हुआ होता है। वह कोमल होता है, कमनीय होता है और प्रभास्वर होता है। वह काममें लानेपर टूटता नहीं। जो जो गहना बनाना चाहता है—चाहे कर्धनी हो, चाहे कुण्डल हो, चाहे कण्ठा हो, चाहे माला हो—वह उससे बना सकता है।

" इसी प्रकार भिक्षुओ, श्रेष्ठतर-चित्तकी प्राप्तिमें लगे हुए भिक्षुके बड़े-बड़े धब्बे रहते हैं—शारीरिक दुष्कृत्य, वाणीके दुष्कृत्य, मनके दुष्कृत्य। ज्ञानी, पण्डित भिक्षु उन्हें छोड़ता है, त्यागता है, उनका प्रहाण करता है। वह उनका लोप करनेके लिये, उनका नाश करनेके लिये प्रयत्न करता है।

" भिक्षुओ, श्रेष्ठतर-चित्तकी प्राप्तिमें लगे हुए भिक्षुके चरित्र पर सामान्य धब्बे रहते हैं—काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क, विहिंसा-वितर्क। ज्ञानी, पण्डित भिक्षु उन्हें छोड़ता है, त्यागता है, उनका प्रहाण करता है। वह उनका लोप करनेके लिये, उनका नाश करनेके लिये प्रयत्न करता है।

" भिक्षुओ, श्रेष्ठतर-चित्तकी प्राप्तिमें लगे हुए भिक्षुके चरित्र पर सूक्ष्म-धब्बे रहते हैं—जाति (= पाँति) -सम्बन्धी वितर्क, जनपद-सम्बन्धी वितर्क, अनवज्ञा सम्बन्धी वितर्क। ज्ञानी, पण्डित भिक्षु उन्हें छोड़ता है, त्यागता है, उनका प्रहाण

करता है। वह उनका लोप करनेके लिये, उनका नाश करनेके लिये प्रयत्न करता है।

"उससे आगे धर्म-वितर्क ही शेष रहते हैं। उस समय जो समाधि होती है, वह न शान्त होती है, न प्रणीत होती है, न शरीरकी शान्तिके परिणाम-स्वरूप लब्ध होती है, न एकाग्रता युक्त होती है। वह संस्कारोंको जैसे-तैसे रोककर प्राप्त की हुई होती है।

"भिक्षुओ, समय आता है जब वह चित्त अपनेमें ही स्थिर होता है, बैठ जाता है, एकाग्र हो जाता है, समाधि-प्राप्त हो जाता है। उस समय जो समाधि होती है वह शान्त होती है, प्रणीत होती है, शारीरिक-शान्तिके फलस्वरूप लब्ध होती है। वह संस्कारोंको जैसे-तैसे रोक कर प्राप्त की हुई नहीं होती। वह अभिज्ञाके द्वारा साक्षात करने योग्य जिस-जिस धर्म=क्रियाकी ओर मनको झुकाता है, उसे-उसे ही प्राप्त कर लेता है—हर आयतनको।

"यदि वह यह इच्छा करे कि मैं अनेक प्रकारकी ऋद्धियों का अनुभव करूँ—एक होकर भी अनेक हो जाऊं, अनेक होकर भी एक हो जाऊं, प्रकट हो जाऊं, छिप जाऊं दीवारके पार, प्राकारके पार, पर्वतके पार उन्हें छूता हुआ चला जाऊं, जैसे आकाशमें; पृथ्वी पर भी उतराना—डूबना करूं जैसे पानीमें; पानीके भी ऊपर-ऊपर चलूँ जैसे पृथ्वीपर; आकाशमें भी पालथी मारकर जाऊं जैसे कोई पक्षी हो; इस प्रकारके ऋद्धि-मान, इस प्रकारके महा-प्रतापी चन्द्र-सूर्यको भी हाथ से छू लूँ तथा ब्रह्मलोक तक भी सशरीर पहुँच जाऊं—तो वह उसे-उसे ही प्राप्त कर लेता है—हर आयतनको।

"यदि वह इच्छा करे कि मैं अमानुष, विशुद्ध, दिव्य-श्रोत-धातुसे दोनों प्रकारके शब्द सुनूँ—दिव्य भी तथा मानुषी भी, दूरके भी, समीपके भी—तो वह उसे-उसे ही प्राप्त कर लेता है—हर आयतन को।

"यदि वह इच्छा करे—मैं दूसरे सत्वोंके दूसरे प्राणियोंके चित्तको अपने चित्तसे जान लूँ—सराग-चित्तको सराग-चित्त जान लूँ, राग-रहित चित्तको राग-रहित चित्त जान लूँ, सद्वेष-चित्तको सद्वेष-चित्त जान लूँ, द्वेष-रहित चित्तको द्वेष-रहित चित्त जान लूँ; स-मोह चित्तको समोह चित्त जान लूँ, मूढ़ता-रहित चित्तको मूढ़ता-रहित चित्त जान लूँ; स्थिर-चित्तको स्थिर-चित्त जान लूँ, चंचल-चित्तको चंचल-चित्त जान लूँ; महापरिमाण (= महद्‌गत) चित्तको महापरिमाण-चित्त जान लूँ, अ-महापरि-

माण को अ-महापरिमाण जान लूँ। स-उत्तर चित्तको स-उत्तर चित्त जान लूँ। सर्व-श्रेष्ठ-चित्तको सर्व-श्रेष्ठ-चित्त जान लूँ ; एकाग्र-चित्तको एकाग्र-चित्त जान लूँ; एकाग्रता-रहित चित्तको एकाग्रता-रहित चित्त जान लूँ। विमुक्त-चित्तको विमुक्त-चित्त जान लूँ अविमुक्त-चित्तको अविमुक्त-चित्त जान लूँ—तो वह उसे-उसे ही प्राप्त कर लेता है—हर-हर आयतन को।

"यदि वह इच्छा करे—मैं अनेक प्रकारके पूर्व-जन्मोंको याद करूं, एक जन्म, दो जन्म, तीन जन्म, चार जन्म. . . . सौ जन्म, हजार जन्म, लाख जन्म, अनेक संवर्त-कल्प, अनेक विवर्त-कल्प, मैं अमुक जगह था, यह मेरा नाम था, यह गोत्र था, यह खाना था, इस सुख-दुःखका अनुभव किया, इतनी आयुतक जीवित रहा; वहाँसे च्युत होकर अमुक जगह उत्पन्न हुआ, वहाँ भी मेरा यह नाम था, यह गोत्र था, यह वर्ण था, यह खाना था, इस सुख-दुःखका अनुभव किया, इतनी आयुतक जीवित रहा; वहाँसे च्युत होकर यहाँ उत्पन्न हुआ, इस प्रकार आकार-सहित, उद्देश्य-सहित अनेक प्रकारके पूर्व-न्जमोंका स्मरण करूं—तो वह उसे-उसे ही प्राप्त कर लेता है—हर हर आयतनको।

"यदि वह इच्छा करे—मैं अमानुषी, दिव्य, विशुद्ध चक्षुसे मरते-उत्पन्न होते, अच्छे-बुरे, सुवर्ण-दुर्वर्ण, सुगति-प्राप्त, दुर्गति-प्राप्त सत्वोंको जानूँ—सत्वोंके कर्मानुसार सत्वोंकी उत्पत्तिको जानूँ—ये प्राणी शारीरिक दुष्कर्मसे युक्त हैं, वाणीके दुष्कर्मसे युक्त हैं, मनके दुष्कर्मसे युक्त हैं, ये आर्य (= श्रेष्ठ) जनोंके निन्दक हैं, मिथ्या-दृष्टि हैं, मिथ्या-दृष्टि-युक्त कर्म करने वाले हैं, वे शरीर न रहनेपर, मरनेके अनन्तर नरक लोकमें, दुर्गतिको प्राप्त हुए, पतित होकर दोजख में पैदा हुए; अथवा ये प्राणी शारीरिक सुचरित्रसे युक्त हैं, वाणीके सुचरित्रसे युक्त हैं, मनके सुचरित्रसे युक्त हैं, श्रेष्ठजनोंके निन्दक नहीं हैं, सम्यक-दृष्टि हैं, सम्यक्-दृष्टिके अनुसार कर्म करने वाले हैं, वे शरीर न रहनेपर, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त हुए, स्वर्ग लोकमें उत्पन्न हुए—इस प्रकार मैं अमानुषी, दिव्य, विशुद्ध, चक्षुसे मरते-उत्पन्न होते, अच्छे-बुरे, सुवर्ण-दुर्वर्ण, सुगति-प्राप्त दुर्गति-प्राप्त सत्वोंको जानूँ—सत्वोंके कर्मानुसार सत्वोंकी उत्पत्तिको जानूँ—तो वह उसे-उसे ही प्राप्त कर लेता है—हर-हर आयतनको।

"यदि वह इच्छा करे—आस्रवोंका क्षय कर अनास्रव चित्त-विमुक्ति प्रज्ञा-विमुक्तिको, इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करूं—तो वह उसे-उसे ही प्राप्त कर लेता है—हर-हर आयतनको।

" भिक्षुओ, श्रेष्ठतर चित्तकी साधनामें लगे हुए भिक्षुको समय-समय पर तीन बातोंको मनमें जगह देनी चाहिये—समय-समय पर समाधि-निमित्तको मनमें जगह दे, समय-समय पर प्रयत्न (=प्रग्रह)-निमित्तको मनमें जगह देनी चाहिये तथा समय-समय पर उपेक्षा-निमित्तको मनमें जगह देनी चाहिये।

" भिक्षुओ, यदि श्रेष्ठतर-चित्तकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु समाधि-निमित्त ही समाधि-निमित्तको मनमें जगह देता है तो इसकी सम्भावना है कि वह चित्त आलस्यकी ओर झुक जाये। भिक्षुओ, यदि श्रेष्ठतर-चित्तकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु प्रयत्न (प्रग्रह)-निमित्त ही प्रयत्न-निमित्तको मनमें जगह देता है तो इसकी सम्भावना है कि वह चित्त उद्धतपनकी ओर झुक जाय। भिक्षुओ यदि श्रेष्ठतर चित्तकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु उपेक्षा-निमित्त ही उपेक्षा-निमित्तको मनमें जगह देता है तो इसकी सम्भावना है कि वह चित्त आस्रवोंके क्षय के लिये सम्यक् प्रयास न करे। क्योंकि भिक्षुओ, श्रेष्ठतर-चित्तकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु समय-समयपर समाधि-निमित्तको मनमें जगह देता है, समय-समयपर प्रयत्न-निमित्तको मनमें जगह देता है, समय-समयपर उपेक्षा-निमित्तको मनमें जगह देता है, इसलिये वह चित्त कोमल हो जाता है, कमनीय हो जाता है, प्रभास्वर हो जाता है तथा टूटता नहीं है। वह आस्रवोंका क्षय करनेके लिये सम्यक् प्रकारसे प्रयत्नशील होता है।

" भिक्षुओ, जैसे सुनार या सुनारका शागिर्द अँगीठी तैयार करता है, अँगीठी तैयार करके अँगीठीको लीपता है, अँगीठी को लीपकर सण्डासीसे स्वर्ण लेकर उसे अँगीठीमें रखता है। तब वह बीच-बीचमें उसे तपाता है, बीच-बीचमें उसपर पानीके छीटें देता है, बीच-बीचमें वह उपेक्षा करता है। भिक्षुओ, यदि वह सुनार या सुनारका शागिर्द उस स्वर्णको एक दम तपाता ही रहे तो निश्चयसे वह स्वर्ण जल जायेगा। भिक्षुओ, यदि वह सुनार या सुनारका शागिर्द उस सोनेपर निरन्तर पानीके छींटे ही डालता रहे तो वह स्वर्ण बुझ जायेगा। भिक्षुओ, यदि वह सुनार या सुनारका शागिर्द उस स्वर्णकी एकदम उपेक्षा करे तो इसकी सम्भावना है कि वह स्वर्ण ठीकसे बने ही नहीं। क्योंकि भिक्षुओ, सुनार या सुनारका शागिर्द उस स्वर्णको समय-समय पर तपाता है, समय-समय पर उसे पानीसे ठण्डा करता है, समय-समय पर उससे उपेक्षा करता है, इस लिये वह स्वर्ण कोमल तथा कमनीय होता है, प्रभास्वर होता है। वह टूटता नहीं है। वह काममें लाये जानेके योग्य होता है। उससे जो जो गहना

बनाना हो, चाहे कर्धनी हो, चाहे कुण्डल हो, चाहे कण्ठा हो, चाहे स्वर्ण-माला हो—वह सबके लिये योग्य होता है।

"इसी प्रकार भिक्षुओ श्रेष्ठ-चित्तकी साधनामें लगे हुए भिक्षुको समय-समयपर तीन बातोंको मनमें जगह देनी चाहिये—समय-समयपर समाधि-निमित्तको मनमें जगह दे, समय-समयपर प्रग्रह-निमित्तको मनमें जगह दे, समय-समयपर उपेक्षा-निमित्तको मनमें जगह दे। भिक्षु, यदि श्रेष्ठतर-चित्तकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु समाधि-निमित्त ही समाधि-निमित्तको मनमें जगह देता है तो इसकी सम्भावना है कि यह चित्त आलस्यकी ओर झुक जाय। भिक्षुओ, यदि श्रेष्ठतर-चित्तकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु प्रग्रह-निमिख ही प्रग्रह-निमित्त को मनमें जगह देता है तो इसकी सम्भावना है कि वह चित्त उद्धत-पनकी ओर झुक जाय। भिक्षुओ, यदि श्रेष्ठतर-चित्तकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु उपेक्षा-निमित्त ही उपेक्षा-निमित्तको मनमें जगह देता है तो इसकी सम्भावना है कि वह चित्त आस्रवोंके क्षय के लिये सम्यक् प्रयास न करे। क्योंकि भिक्षुओ, श्रेष्ठतर-चित्तकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु समय-समयपर समाधि-निमित्तको मनमें जगह देता है, समय-समयपर प्रग्रह-निमित्तको मनमें जगह देता है, समय-समयपर उपेक्षा-निमित्तको मनमें जगह देता है, इसलिये वह चित्त कोमल हो जाता है, कमनीय हो जाता है, प्रभास्वर हो जाता है तथा टूटता नहीं है। वह आस्रवोंका क्षय करनेके लिये सम्यक् प्रयत्न-शील होता है। वह अभिज्ञाके द्वारा साक्षात करने योग्य जिस-जिस धर्म (=क्रिया) की ओर मनको झुकाता है, उसे-उसे ही प्राप्त कर लेता है—हर आयतन को।

"वह यदि इच्छा करे—कि मैं अनेक प्रकारकी ऋद्धियोंका अनुभव करूं। (पृ० २६३)........षड़भिज्ञ चित्तको जानना चाहिये........आस्रवोंका क्षय कर..............(पृ० २६४).....साक्षात कर, प्राप्त, कर बिहार करूं—उसे उसे ही प्राप्त कर लेता है— हर आयतन को।

(१०१)

भिक्षुओ, बोधि-प्राप्तिसे पूर्व, जब मैं सम्बुद्ध नहीं था, जब मैं बोधिसत्व था तब मेरे मनमें यह जिज्ञासा पैदा हुई—"लोकमें 'मज़ा' क्या होता है? लोकमें 'बुरा-परिणाम' क्या होता है? लोकमें मुक्ति (=निस्सरण) क्या है?" तब भिक्षुओ मेरे मनमें यह हुआ—लोकमें जो किसी भी प्रत्ययके फल-स्वरूप सुख या सौमनस्य पैदा

होता है यही लोकमें 'मज़ा' है; लोकमें जो अनित्यता है, जो दुःख है, जो विकृति है; यही लोकमें 'बुरा-परिणाम' है; लोकमें जो छन्द-रागको विनीत बना लेना है, जो छन्द-रागका प्रहाण है यही लोकमें मुक्ति (=निस्सरण) है।

"भिक्षुओ मैंने जब तक इस लोकके 'मज़े' को यथार्थ रूपसे 'मज़ा' करके यथार्थ रूपसे नहीं जाना 'बुरे परिणाम'को 'बुरा परिणाम' करके यथार्थ रूपसे नहीं जाना 'निस्सरण' को 'निस्सरण' करके यथार्थ रूपसे नहीं जाना, तब तक मैंने भिक्षुओ इस स-देव स-मार स-ब्रह्म लोकमें—जहाँ श्रमण-ब्राह्मण रहते हैं तथा जहाँ देव-मनुष्य रहते हैं—यह नहीं कहा कि मुझे सर्वश्रेष्ठ सम्बोधि प्राप्त हो गई। क्योंकि भिक्षुओ अब मैंने लोकके 'स्वाद' (मजे) को 'स्वाद' करके यथार्थ रूपसे जान लिया, बुरे-परिणामको बुरा-परिणाम करके यथार्थ रूपसे जान लिया, निस्सरणको निस्सरण करके यथार्थ रूपसे जान लिया, इसलिये भिक्षुओ मैंने इस स-देव स-मार, स-ब्रह्म लोकमें—जहाँ श्रमण-ब्राह्मण रहते हैं तथा जहाँ देव-मनुष्य रहते हैं—यह कहा कि मुझे सर्वश्रेष्ठ सम्बोधि प्राप्त हो गई, मुझे 'ज्ञान' हो गया, मुझे 'दृष्टि' उत्पन्न हो गई—मेरी चित्त-विमुक्ति अचल है, मेरा यह अन्तिम जन्म है, मेरा अब पुनर्भव नहीं है।

"भिक्षुओ, मैंने लोकमें 'स्वाद' की खोज की; लोकमें जो 'स्वाद' है उसे जाना और लोकमें जितना 'स्वाद' है उस सबको भी प्रज्ञासे भली प्रकार जाना। भिक्षुओ, मैंने लोकमें 'बुरे-परिणाम' की खोज की। लोकमें जो 'बुरा-परिणाम' है उसे जाना और लोकमें जितना 'बुरा-परिणाम' है उस सबको भी प्रज्ञासे भली प्रकार जाना। भिक्षुओ, मैंने लोकमें 'निस्सरण'की खोज की। लोकमें जो 'निस्सरण' है उस सबको भी प्रज्ञासे भली प्रकार जाना।

"भिक्षुओ, मैंने जब तक इस लोकके 'मज़े' को 'मज़ा' करके यथार्थ-रूपसे नहीं जाना; बुरे-परिणाम' को 'बुरा परिणाम' करके यथार्थ रूपसे नहीं जाना, निस्सरण (मुक्ति) को निस्सरण करके यथार्थरूपसे नहीं जाना, तबतक मैंने भिक्षुओ इस स-देव, स-मार, स-ब्रह्म लोकमें—जहाँ श्रमण-ब्राह्मण रहते हैं तथा जहाँ देव-मनुष्य रहते हैं—यह नहीं कहा कि मुझे सर्व-श्रेष्ठ बोधि प्राप्त हो गई। क्योंकि मैंने भिक्षुओ अब लोकके 'स्वाद' को 'स्वाद' करके यथार्थ रूपसे जान लिया, 'बुरे-परिणाम' को 'बुरा-परिणाम' करके यथार्थ-रूपसे जान लिया, 'निस्सरण' को 'निस्सरण' करके यथार्थ रूपसे जान लिया; इस लिये भिक्षुओ मैंने इस स-देव, स-मार, स-ब्रह्म लोकमें—

जहाँ श्रमण-ब्राह्मण रहते हैं तथा जहाँ देव-मनुष्य रहते हैं—यह कहा कि मुझे सर्वश्रेष्ठ सम्बोधि प्राप्त हो गई, मुझे 'ज्ञान' हो गया, मुझे 'दृष्टि' उत्पन्न हो गई—मेरी चित्त-विमुक्ति अचल है, मेरा यह अन्तिम जन्म है, मेरा अब पुनर्भव नहीं है।

(१०२)

"भिक्षुओ, यदि लोकमें 'मज़ा' न हो तो ये प्राणी संसारमें आसक्त न हों, क्योंकि भिक्षुओ लोकमें 'मज़ा' है, इसलिये प्राणी लोकमें आसक्त होते हैं। भिक्षुओ, यदि लोकमें 'बुरा-परिणाम' न हो तो ये प्राणी संसारसे विरक्त न हों, क्योंकि भिक्षुओ, लोकमें 'बुरा-परिणाम' है, इस लिये प्राणी लोकसे विरक्त होते हैं। भिक्षुओ यदि लोकमें 'निस्सरण' न हो तो प्राणी लोकसे विमुक्त न हों, क्योंकि भिक्षुओ लोकमें 'निस्सरण' है, इसीलिये प्राणी लोकसे 'विमुक्त' होते हैं।

"भिक्षुओ, जब तक प्राणी संसारके 'स्वाद' को 'स्वाद' करके यथार्थ-रूपसे न जान लेते, संसारके 'बुरे-परिणाम' को 'बुरा-परिणाम' करके यथार्थ-रूपसे न जान लेते, संसारके 'निस्सरण' को 'निस्सरण' करके यथार्थ रूपसे न जान लेते, तब तक भिक्षुओ, प्राणी इस स-देव, स-मार, स-ब्रह्मलोकसे —जहाँ श्रमण-ब्राह्मण रहते हैं तथा जहाँ देव-मनुष्य-रहते हैं—बाहर न निकलते, विसंयुक्त न होते, विप्रयुक्त न होते, बंधन-मुक्त चित्तसे विहार न कर सकते। क्योंकि प्राणियोंने संसारके 'स्वाद' को 'स्वाद' करके यथार्थ रूपसे जान लिया, संसारके 'बुरे-परिणाम' को 'बुरा-परिणाम' करके यथार्थ-रूपसे जान लिया, संसारके 'निस्सरण' को 'निस्सरण' करके यथार्थ रूपसे जान लिया, इसी लिये भिक्षुओ, प्राणी इस स-देव, स-मार, स-ब्रह्मलोक से. . . बाहर निकलकर, विसंयुक्त होकर, विप्रयुक्त होकर, बंधन-मुक्त चित्तसे विहार करते हैं।

"भिक्षुओ, जो श्रमण या ब्राह्मण लोकके 'स्वाद' को 'स्वाद' करके, लोकके 'बुरे-परिणाम' को 'बुरा-परिणाम' करके, लोकके 'निस्सरण' को 'निस्सरण' करके यथार्थ-रूप से नहीं जानते, भिक्षुओ न मैं उन श्रमणों की श्रमणों में गिनती करता हूँ, न उन ब्राह्मणों की ब्राह्मणों में गिनती करता हूँ, और न वे आयुष्मान इसी शरीर में 'श्रामण्य' वा ब्राह्मण्य' को साक्षात कर विहार करते हैं।

"भिक्षुओ, जो 'श्रमण' या ब्राह्मण लोक के 'स्वाद' को 'स्वाद' करके, लोक के 'बुरे-परिणाम' को बुरा-परिणाम' करके, लोक के 'निस्सरण' को 'निस्सरण' करके यथार्थ रूप से जान लेंगे, भिक्षुओ मैं उन्हीं श्रमणों की श्रमणों में गिनती

करता हूँ, उन्हीं ब्राह्मणों की 'ब्राह्मणों' में गिनती करता हूँ; वे आयुष्मान! इसी शरीर में 'श्रामण्य' वा 'ब्राह्मण्य' को साक्षात कर विहार करेंगे।

(१०३)

"भिक्षुओ, यह जो 'गाना' है, यह आर्य-विनय के अनुसार 'रोना' ही है। भिक्षुओ, यह जो नाचना है, यह आर्य-विनय के अनुसार 'पागल-पन' ही है। भिक्षुओ, यह जो देर तक दाँत निकाल कर हँसना है, यह आर्य-विनय के अनुसार बचपन ही है। इस लिये भिक्षुओ, यह जो गाना है, यह सेतु (का) घात-मात्र ही है, यह जो नाचना है, यह सेतु (का) घात-मात्र ही है। धर्मानन्दी सन्त पुरुषों का मुस्कराना ही पर्य्याप्त है।"

(१०४)

"भिक्षुओ, इन तीन बातों से तृप्ति नहीं होती। कौन सी तीन बातों से?

"भिक्षुओ, सोने से तृप्ति नहीं होती; भिक्षुओ, सुरा-मेरय के पीने से तृप्ति नहीं होती; भिक्षुओ, मैथुन से तृप्ति नहीं होती। भिक्षुओ, इन तीन बातों का सेवन करने से तृप्ति नहीं होती।"

(१०५)

उस समय अनाथ-पिण्डिक गृहपति जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचा। पहुँच कर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे अनाथ-पिण्डिक गृहपति को भगवान् ने यह कहा—

"गृहपति! चित्त अरक्षित रहने से शारीरिक-कर्म भी अरक्षित रहते हैं, वाणी के कर्म भी अरक्षित रहते हैं, मन के कर्म भी अरक्षित रहते हैं। जिसके शरीर, वाणी तथा मन के कर्म अरक्षित रहते हैं, उस के शरीर, वाणी, मन के कर्म भी 'चूते' हैं। जिस के शरीर, वाणी तथा मन के कर्म 'चूते' हैं, उस के शरीर, वाणी तथा मन के कर्म भी 'सड़े' होते हैं। जिस के शरीर, वाणी तथा मन के कर्म 'सड़े' होते हैं, उस का मरना अच्छी तरह नहीं होता, उस की काल-क्रिया अच्छी तरह नहीं होती।

"गृहपति! जैसे यदि कूटागार (शिखर वाला घर) अच्छी तरह से छाया न हो, तो शिखर भी अरक्षित रहता है, कड़ियाँ भी अरक्षित रहती हैं तथा दीवार भी अरक्षित रहती है। इसी प्रकार शिखर भी चूता है, कड़ियाँ भी चूती

हैं, दीवार भी चूती है। इसी प्रकार शिखर भी सड़ जाता है, कड़ियाँ भी सड़ जाती हैं, दीवार भी सड़ जाती है। इसी प्रकार गृहपति! चित्त के अरक्षित रहने पर शरीरिक-कर्म भी अरक्षित रहता है...... काल-क्रिया अच्छी तरह नहीं होती।

"गृहपति! चित्त रक्षित रहने से शारीरिक-कर्म भी रक्षित रहते हैं, वाणी के कर्म भी रक्षित रहते हैं, मन के कर्म भी रक्षित रहते हैं। जिस के शरीर, वाणी तथा मन के कर्म रक्षित रहते हैं, उस के शरीर, वाणी तथा मन के कर्म 'चूते' नहीं। जिस के शरीर, वाणी तथा मन के कर्म 'चूते' नहीं, उस के शरीर, वाणी तथा मन के कर्म 'सड़ते' नहीं। जिस के शरीर, वाणी तथा मन के कर्म 'सड़ते' नहीं, उस का मरना अच्छी तरह होता है उसकी काल-क्रिया भी अच्छी तरह होती है।

"गृहपति! जैसे यदि कूटागार (शिखर-गृह) अच्छी तरह से छाया हो, तो शिखर भी सुरक्षित रहता है, कड़ियाँ भी सुरक्षित रहती हैं तथा दीवार भी सुरक्षित रहती है। इसी प्रकार शिखर भी नहीं चूता, कड़ियाँ भी नहीं चूतीं, दीवार भी नहीं चूती। इसी प्रकार शिखर भी नहीं सड़ता, कड़ियाँ भी नहीं सड़तीं, दीवार भी नहीं सड़ती। इसी प्रकार गृहपति! चित्त के सुरक्षित रहने पर शारीरिक-कर्म भी सुरक्षित रहते हैं...... काल-क्रिया भी अच्छी तरह होती है।"

(१०६)

एक ओर बैठे अनाथ पिण्डिक गृहपति को भगवान् ने यह कहा—"गृहपति! चित्त के खराब हो जाने पर शरीर, वाणी तथा मन के कर्म भी खराब हो जाते हैं। जिसके शरीर, वाणी तथा मन के कर्म खराब हो जाते हैं उसका मरना भी अच्छा नहीं होता, उस की काल-क्रिया भी अच्छी नहीं होती।

"गृहपति! जैसे यदि कूटागार (शिखर-गृह) की छत ठीक न हो तो शिखर की भी खराबी है, शहतीरोंकी भी खराबी है, दीवार की भी खराबी है; इसी प्रकार गृहपति! चित्त के खराब होने पर शरीर, वाणी तथा मन के कर्म खराब होते हैं। जिसके शरीर वाणी तथा मन के कर्म खराब हो जाते हैं, उसका मरना भी अच्छा नहीं होता, उसकी काल-क्रिया भी अच्छी नहीं होती।

"गृहपति! चित्त के खराब न होने पर शरीर, वाणी तथा मन के कर्म भी खराब नहीं होते, उस का मरना भी अच्छा होता है, उसकी काल-क्रिया भी अच्छी होती है। जैसे गृहपति! कूटागार की छत ठीक हो, तो शिखर भी खराब

नहीं होता, कड़ियाँ भी खराब नहीं होतीं, दीवार भी खराब नहीं होती; इसी प्रकार गृहपति ! चित्त के खराब न होने पर, शरीर, वाणी तथा मन के कर्म भी खराब नहीं होते। जिसके शरीर, वाणी तथा मन के कर्म खराब नहीं होते उसका मरना भी अच्छा होता है, उस की काल-क्रिया भी अच्छी होती है।

(१०७)

"भिक्षुओ ! कर्मों की उत्पत्ति के तीन हेतु (=निदान) हैं। कौन से तीन ?

"लोभ कर्मों की उत्पत्ति का हेतु है, द्वेष कर्मों की उत्पत्ति का हेतु है तथा मोह कर्मों की उत्पत्ति का हेतु है।

"भिक्षुओ, जिस कर्म के मूल में लोभ है, जो लोभ से उत्पन्न हुआ है, जिसका हेतु लोभ है, जिस की उत्पत्ति लोभ से हुई है वह अकुशल कर्म है, वह सदोष कर्म है, उस कर्म का फल दुःख है, उस कर्म से कर्म का समुदय होता है, उस कर्म से कर्म का निरोध नहीं होता। भिक्षुओ, जिस कर्म के मूल में द्वेष है .... जिस के मूल में मोह है, जो मोह से उत्पन्न हुआ है, जिस का हेतु मोह है, जिस की उत्पत्ति मोह से हुई है वह अकुशल कर्म है, वह सदोष-कर्म है, उस कर्म का फल दुःख है, उस कर्म से कर्म का समुदय होता है, उस कर्म से कर्म का निरोध नहीं होता।

"भिक्षुओ, कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन हेतु हैं।"

(१०८)

"भिक्षुओ, कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन हेतु (=निदान) हैं। कौन से तीन ?

"अलोभ कर्मों की उत्पत्ति का हेतु है, अद्वेष कर्मों की उत्पत्ति का हेतु है, अमोह कर्मों की उत्पत्ति का हेतु है।

"भिक्षुओ, जिस कर्म के मूल में अलोभ है, जो अलोभ से उत्पन्न हुआ है, जिस का हेतु अलोभ है, जिस की उत्पत्ति अलोभ से हुई है वह कुशल कर्म है, वह निर्दोष कर्म है, उस कर्म का फल सुख है, उस कर्म से कर्म का निरोध होता है, उस कर्म से कर्म का समुदय नहीं होता। भिक्षुओ, जिस कर्म के मूल में अद्वेष है .... जिस कर्म के मूल में अमोह है, जो अमोह से उत्पन्न हुआ है, जिसका हेतु अमोह है, जिस की उत्पत्ति अमोह से हुई है, वह कुशल-कर्म है, वह निर्दोष-कर्म है, उस कर्म का फल

सुख है, उस कर्म से कर्म का निरोध होता है, उस कर्म से कर्म का समुदय नहीं होता। भिक्षुओ! कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन हेतु हैं।"

(१०९)

"भिक्षुओ! कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन हेतु हैं। कौन से तीन?

"भिक्षुओ, भूत काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द (= इच्छा) उत्पन्न होता है; भिक्षुओ! भविष्यत् के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द उत्पन्न होता है; भिक्षुओ, वर्तमान के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ! भूत-काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द कैसे उत्पन्न होता है? भूत काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर चित्त में वितर्क पैदा होते हैं, चित्त में विचार पैदा होते हैं। उन से छन्द की उत्पत्ति होती है। छन्द (= इच्छा) उत्पन्न होने पर व्यक्ति उन विषयों से संयुक्त हो जाता है। भिक्षुओ! इसे ही मैं संयोजन कहता हूँ। यही चित्त की आसक्ति है। इसी प्रकार भिक्षुओ! भूत-काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ! भविष्यत् काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द कैसे उत्पन्न होता है? भविष्यत् काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर चित्त में वितर्क पैदा होते हैं, विचार पैदा होते हैं। उन से छन्द की उत्पत्ति होती हैं, छन्द उत्पन्न होने पर व्यक्ति उन विषयों से संयुक्त हो जाता है। भिक्षुओ! इसे ही मैं संयोजन कहता हूँ। यही चित्त की आसक्ति है। इसी प्रकार भिक्षुओ! भविष्यत् काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ! वर्तमान के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द कैसे उत्पन्न होता है? भविष्यत् काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर चित्त में वितर्क पैदा होते हैं, विचार पैदा होते हैं। उन से छन्द की उत्पत्ति होती है। छन्द उत्पन्न होने पर व्यक्ति उन विषयों से संयुक्त हो जाता है। भिक्षुओ! इसे ही मैं संयोजन कहता हूँ। यही चित्त की आसक्ति है। इसी प्रकार भिक्षुओ वर्तमान के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द उत्पन्न होता है। भिक्षुओ! कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन हेतु हैं।

(११०)

"भिक्षुओ ! कर्मों की उत्पत्ति (?) के ये तीन हेतु हैं। कौन से तीन ?

"भिक्षुओ, भूत-काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द उत्पन्न नहीं होता, भिक्षुओ ! भविष्यत् के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द उत्पन्न नहीं होता, भिक्षुओ ! वर्तमान के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द उत्पन्न नहीं होता।

"भिक्षुओ, भूत काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द कैसे उत्पन्न नहीं होता ?

"भिक्षुओ, वह भूत काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों का भावी फल जानता है, भावी फल जानकर उन से पृथक होता है, पृथक होकर, चित्त से हटाकर, प्रज्ञा से वींध कर देखता है। इस प्रकार भिक्षुओ, भूत-काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द उत्पन्न नहीं होता।

"भिक्षुओ, भविष्यत् काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द कैसे उत्पन्न नहीं होता ?

"भिक्षुओ, वह भविष्यत् काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों का भावी फल जानता है, भावी फल जानकर उन से पृथक होता है, पृथक होकर, चित्त से हटा कर, प्रज्ञा से बींध कर देखता है। इस प्रकार भिक्षुओ, भविष्यत् काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द उत्पन्न नहीं होता।

"भिक्षुओ, वर्तमान के छन्द-राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द कैसे उत्पन्न नहीं होता ?

"भिक्षुओ, वह वर्तमान काल के छन्द-राग-स्थानीय विषयों का भावी फल जानता है, भावी फल जानकर उन से पृथक होता है, पृथक होकर, चित्त से हटाकर, प्रज्ञा से बींध कर देखता है। इस प्रकार भिक्षुओ ! वर्तमान के छन्द राग-स्थानीय विषयों को लेकर छन्द उत्पन्न नहीं होता।

"भिक्षुओ, कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन हेतु हैं।

(१११)

"भिक्षुओ, इन तीन पाप-धर्मों को न छोड़ने वाले तीन जन अपाय-गामी हैं, नरक-गामी हैं। कौन से तीन ?

" जो ब्रह्मचर्य्य-प्रतिज्ञ होकर अब्रह्मचारी होता है, जो परिशुद्ध ब्रह्मचर्य्य का आचरण करने वाले शुद्ध ब्रह्मचारी पर झूठा दोष लगाता है, तथा जिसका ऐसा मत होता है या ऐसी दृष्टि (विचार) होती है कि काम-भोगों में दोष नहीं है, वह काम-भोगों में निस्संकोच पड़ता है। भिक्षुओ, इन तीन पाप-धर्मों को न छोड़ने वाले तीन जन अपाय-गामी हैं, नरक-गामी हैं।"

(११२)

" भिक्षुओ, संसार में इन तीन का प्रादुर्भाव दुर्लभ है। किन तीन का ?

" भिक्षुओ, संसार में तथागत अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध का प्रादुर्भाव दुर्लभ है। संसार में तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म के उपदेष्टा का प्रादुर्भाव दुर्लभ है। संसार में कृतज्ञ, कृत-वेदी का प्रादुर्भाव दुर्लभ है।

" भिक्षुओ, संसार में इन तीन का प्रादुर्भाव दुर्लभ है।"

(११३)

" भिक्षुओ, संसार में तीन प्रकार के लोग हैं। कौन से तीन प्रकार के ?

" आसानी से मापे जा सकने योग्य, कठिनाई से मापे जा सकने योग्य, न मापे जा सकने योग्य।

" भिक्षुओ, आसानी से मापा जा सकने वाला आदमी कैसा होता है ?

" भिक्षुओ, एक आदमी होता है उद्धत, मानी, चपल, मुखर, असंयत-भाषी, मूढ़, अज्ञानी, असमाहित, भ्रान्त-चित्त, असंयमी। भिक्षुओ, ऐसा आदमी आसानीसे मापा जा सखनेवाला आदमी कहलाता है।

" भिक्षुओ, कठिनाई से मापा जा सकन वाला आदमी कैसा होता है ?

" भिक्षुओ, एक आदमी होता है अनुद्धत, अमानी, अचपल, अमुखर, संयत-भाषी, अमूढ़, ज्ञानी, समाहित, अभ्रन्त-चित्त, संयमी। भिक्षुओ, ऐसा आदमी कठिनाई से मापा जा सकने वाला आदमी होता है।

" भिक्षुओ, न मापे जा सकने वाला आदमी कैसा होता है ?

" भिक्षुओ, एक भिक्षु अर्हत होता है, क्षीणास्रव होता है। भिक्षुओ, ऐसा आदमी न मापा जा सकने वाला आदमी होता है। भिक्षुओ, संसार में ये तीन प्रकार के लोग हैं।"

(११४)

"भिक्षुओ, संसार में तीन तरह के लोग हैं? कौन से तीन तरह के?

"भिक्षुओ, एक आदमी सब रूप-संज्ञाओं को पार कर, प्रतिघ-संज्ञाओं को अस्त कर, नानत्व संज्ञा को मन से निकाल, 'आकाश अनंत है' करके आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त हो विहरता है। वह उस का आनन्द लेता है, उसे चाहता है और उस से तृप्त होता है। उस ध्यान में स्थित रहकर, उसी में लगा रहकर, उसी में प्रायः विहार करते रहकर, उस ध्यानावस्था को प्राप्त वह जब काल करता है, तो वह आकाशानन्त्यायतन के देवताओं के साथ उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, आकाशानन्त्यायतन के देवताओं की बीस हजार कल्प आयु होती है। सामान्य पृथक-जन आयु भर रहकर जब तक उन देवताओं की आयु है उसे बिताकर नरक को भी जा सकता है, पशुयोनि में भी उत्पन्न हो सकता है, प्रेत-योनि में भी उत्पन्न हो सकता है। लेकिन जो भगवान् का श्रावक है वह वहाँ आयु भर रहकर, जितनी उन देवताओं की आयु होती है, उतनी बिताकर उसी (अरूप) शरीर से परिनिर्वाण को प्राप्त हो जाता है। भिक्षुओ, यह विशेषता है, यह खास बात है, यह भेद है ज्ञानी आर्य श्रावक का तथा अज्ञानी पृथक जन का जो कि यह गति, उत्पत्ति के बारे में।

"फिर भिक्षुओ, एक आदमी सब तरह से आकाशानन्त्यायतन' को पार कर 'विज्ञान अनंत है' करके 'विज्ञानानन्त्यायतन' को प्राप्त हो विहरता है। वह उसका आनन्द लेता है, उसे चाहता है और उस से तृप्त होता है। उस ध्यान में स्थित रहकर, उसी में लगा रहकर, उसी में प्रायः विहार करते रहकर, उस ध्यानावस्था को प्राप्त वह जब काल करता है तो वह विज्ञानानन्त्यायतन के देवताओं के साथ उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, विज्ञानानन्त्यायतन के देवताओं की चालीस हजार कल्प की आयु होती है। सामान्य पृथक जन आयु भर रहकर, जब तक उन देवताओं की आयु है उसे बिताकर नरक को भी जा सकता है, पशु-योनि में भी उत्पन्न हो सकता है, प्रेत-योनि में भी उत्पन्न हो सकता है। लेकिन जो भगवान् का श्रावक है वह वहाँ आयु भर रहकर जितनी उन देवताओं की आयु होती है उतनी बिताकर उसी (अरूप) शरीर से परिनिर्वाण को प्राप्त हो जाता है। भिक्षुओ, यह विशेषता है, यह खास बात है, यह भेद है, ज्ञानी आर्य श्रावक का तथा अज्ञानी पृथक-जन का, जो कि यह गति उत्पत्ति के बारे में।

"फिर भिक्षुओ, एक आदमी सब तरह से 'विज्ञानानन्त्यायतन' को पार कर 'कुछ नहीं है' करके 'अकिञ्चनन्त्यायतन' को प्राप्त कर विहार करता है। वह उस का आनन्द लेता है, उसे चाहता है और उस से तृप्त होता है। उस ध्यान में स्थित रह कर, उसी में लगा रहकर, उसी में प्रायः विहार करते रहकर, उस ध्यानावस्था को प्राप्त वह जब काल करता है तो वह अकिञ्चनन्त्यायतन के देवताओं के साथ उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, अकिञ्चनन्त्यायतन के देवताओं की साठ हजार कल्प की आयु होती है। सामान्य पृथक जन आयु भर रहकर, जब तक उन देवताओं की आयु है, उसे बिताकर नरक को भी जा सकता है, पशु-योनि में भी उत्पन्न हो सकता है। लेकिन जो भगवान् का श्रावक है वह वहाँ आयु भर रहकर जितनी उन देवताओं की आयु होती है उतनी बिताकर उसी (अरूप-) शरीर से परिनिर्वाण को प्राप्त हो जाता है। भिक्षुओ, यह विशेषता है, यह खास-बात है, यह भेद है ज्ञानी आर्य-श्रावक का तथा अज्ञानी पृथक-जन का जो कि यह गति उत्पत्ति के बारे में।

"भिक्षुओ, संसार में ये तीन प्रकार के लोग हैं।

(११५)

"भिक्षुओ, ये तीन विपत्तियाँ हैं। कौन सी तीन ?

"शील-विपत्ति, चित्त-विपत्ति, दृष्टि-विपत्ति।

"भिक्षुओ, शील-विपत्ति किसे कहते हैं ?

"भिक्षुओ, एक आदमी प्राणी-हिंसा करता है, चोरी करता है, काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचार करता है, झूठ बोलता है, चुगली खाता है, कठोर बोलता है, व्यर्थ बोलता है। भिक्षुओ, इसे शील-विपत्ति कहते हैं।

"भिक्षुओ, चित्त-विपत्ति किसे कहते हैं ?

"भिक्षुओ, एक आदमी लोभी होता है, क्रोधी होता है। भिक्षुओ, इसे चित्त-विपत्ति कहते हैं।

"भिक्षुओ, दृष्टि-विपत्ति किसे कहते हैं ?

"भिक्षुओ, एक आदमी मिथ्या-दृष्टि होता है, उल्टी मतिवाला—दान (का फल) नहीं, यज्ञ (का फल) नहीं, आहुति (का फल) नहीं, सुकृत-दुष्कृत कर्मों का फल नहीं, यह लोक नहीं, परलोक नहीं, माता नहीं, पिता नहीं, च्युत

होकर उत्पन्न होने वाले प्राणी नहीं, संसार में कोई संमार्ग-गामी, सुपथ-गामी श्रमण-ब्राह्मण नहीं जो इस लोक तथा पर-लोक को स्वयं जानकर साक्षात कर उस की बात करते हों। भिक्षुओ, यह दृष्टि-विपत्ति कहलाती है।

"भिक्षुओ, शील-विपत्ति के कारण प्राणी शरीर के न रहने पर, मरने के अनन्तर, अपाय, दुर्गति, पतन, नरक को प्राप्त होते हैं, अथवा चित्त-विपत्ति के कारण प्राणी शरीर के न रहने पर, मरने के अनन्तर अपाय, दुर्गति, पतन, नरक को प्राप्त होते हैं अथवा दृष्टि-विपत्ति के कारण प्राणी, शरीर के न रहने पर, मरने के अनन्तर अपाय, दुर्गति, पतन, नरक को प्राप्त होते हैं। भिक्षुओ, ये तोन विपत्तियाँ हैं।

"भिक्षुओ, ये तीन सम्पत्तियाँ हैं? कौन सी तीन?

"शील-सम्पत्ति, चित्त-सम्पत्ति तथा दृष्टि-सम्पत्ति।

"भिक्षुओ, शील-सम्पत्ति क्या है?

"भिक्षुओ, एक आदमी प्राणातिपात से विरत होता है, चोरी से विरत होता है, काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचार से विरत होता है, झूठ बोलने से विरत होता है, चुगली खाने से विरत होता है, कठोर बोलने से विरत रहता है तथा व्यर्थ बोलने से विरत रहता है। भिक्षुओ, इसे शील-सम्पत्ति कहते हैं।

"भिक्षुओ, चित्त-सम्पत्ति क्या है?

"भिक्षु एक आदमी अलोभी होता है, अक्रोधी होता है। भिक्षुओ, इसे चित्त-सम्पत्ति कहते हैं।

"भिक्षुओ! दृष्टि-सम्पत्ति किसे कहते हैं?

"भिक्षुओ! एक आदमी सम्यक्-दृष्टि होता है, सीधी-समझ वाला—दान का (फल) है, यज्ञ का (फल) है, आहुति (का फल) है, सुकृत-दुष्कृत कर्मों का फल-विपाक है, यह लोक है, परलोक है, माता है, पिता है, च्युत होकर उत्पन्न होने वाले प्राणी हैं, लोक में संमार्ग-गामी, सुपथ-गामी, श्रमण-ब्राह्मण हैं जो इस लोक तथा पर लोक को स्वयं जानकर साक्षात कर उन की बात करते हैं। भिक्षुओ! इसे दृष्टि-सम्पत्ति कहते हैं।

"भिक्षुओ, शोल-सम्पत्ति के फलस्वरूप प्राणी शरीर के न रहने पर, मरने के अनन्तर, सुगति को प्राप्त होते हैं, स्वर्ग-लोक में जन्म ग्रहण करते हैं वा भिक्षुओ

चित्त-सम्पत्ति के हेतु प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के अनन्तर सुगति को प्राप्त होते हैं, स्वर्ग-लोक में जन्म ग्रहण करते हैं अथवा भिक्षुओ, दृष्टि-सम्पत्ति के हेतु प्राणी शरीर छूटने पर , मरने के अनन्तर सुगति को प्राप्त होते हैं, स्वर्ग-लोक में जन्म ग्रहण करते हैं ।

"भिक्षुओ, ये तीन सम्पत्तियाँ हैं।

(११६)

"भिक्षुओ, तीन विपत्तियाँ हैं। कौन सी तीन ?

"शील-विपत्ति, चित्त-विपत्ति, दृष्टि-विपत्ति...... (पूर्वानुसार)

"भिक्षुओ, जैसे ऊपर फेंकी हुई श्रेष्ठ मणि जहाँ-जहाँ भी गिरती है, ठीक ही गिरती है, इसी प्रकार भिक्षुओ, शील-विपत्ति के कारण प्राणी......जन्म ग्रहण करते हैं, अथवा चित्त-विपत्ति के कारण........जन्म ग्रहण करते हैं अथवा दृष्टि-विपत्ति के कारण.....जन्म ग्रहण करते हैं। भिक्षुओ, ये तीन विपत्तियाँ हैं।

"भिक्षुओ, ये तीन सम्पत्तियाँ हैं? कौन सी तीन ?

"शील-सम्पत्ति, चित्त-सम्पत्ति, दृष्टि-सम्पत्ति।

"भिक्षुओ, जैसे ऊपर फेंकी हुई श्रेष्ठ मणि जहाँ जहाँ भी गिरती है, ठीक ही गिरती है, इसी प्रकार भिक्षुओ, शील-सम्पत्ति के कारण प्राणी......जन्म ग्रहण करते हैं, अथवा चित्त-सम्पत्ति के कारण प्राणी......जन्म ग्रहण करते हैं, अथवा दृष्टि-सम्पत्ति के कारण प्राणी......जन्म ग्रहण करते हैं। भिक्षुओ, ये तीन सम्पत्तियाँ हैं।

(११७)

"भिक्षुओ, ये तीन विपत्तियाँ हैं। कौन सी तीन ?

"कर्मान्ल-विपत्ति, आजीव-विपत्ति, दृष्टि-विपत्ति।

"भिक्षुओ, कर्मान्त-विपत्ति किसे कहते हैं ?

"भिक्षुओ, एक आदमी प्राणी-हिंसा करता है......व्यर्थ बोलता है। भिक्षुओ, यह कर्मान्त-विपत्ति कहलाती है।

"भिक्षुओ, आजीव-विपत्ति किसे कहते हैं ?

"भिक्षुओ, एक आदमी मिथ्या-जीवी होता है, मिथ्या-आजीविका से जीविका चलता है। भिक्षुओ, इसे आजीव-विपत्ति कहते हैं।

" भिक्षुओ, दृष्टि-विपत्ति किसे कहते हैं ?

" भिक्षुओ, एक आदमी मिथ्या-दृष्टि वाला, विपरीत-मति वाला होता है—दान का (फल) नहीं है, यज्ञ का (फल) नहीं है.....जो इस लोक तथा पर-लोक को स्वयं जानकर, साक्षात कर उन की बात करते हैं। भिक्षुओ ! इसे दृष्टि-विपत्ति कहते हैं। भिक्षुओ, ये तीन विपत्तियाँ हैं ?

" भिक्षुओ, ये तीन सम्पत्तियाँ हैं। कौन सी तीन ?

" कर्मान्त-सम्पत्ति, आजीव-सम्पत्ति, दृष्टि-सम्पत्ति।

" भिक्षुओ, कर्मान्त-सम्पत्ति क्या है ?

" भिक्षुओ, एक आदमी प्राणी-हिंसा से विरत रहता है......व्यर्थ बोलने से विरत रहता है। भिक्षुओ, इसे कर्मान्त-सम्पत्ति कहते हैं।

" भिक्षुओ, आजीव-सम्पत्ति क्या है ?

" भिक्षुओ, एक आदमी सम्यक्-जीवी होता है, वह सम्यक् आजीविका से जीविका चलाता है। भिक्षुओ, इसे आजीव-सम्पत्ति कहते हैं।

" भिक्षुओ, दृष्टि-सम्पत्ति क्या है ?

" भिक्षुओ, एक आदमी सम्यक्-दृष्टि होता है......अविपरीत-दर्शी—दान का (फल) है, यज्ञ का (फल) है......जो इस लोक तथा परलोक को स्वयं जानकर साक्षात कर उन की बात करते हैं। भिक्षुओ, इसे दृष्टि-सम्पत्ति कहते हैं। भिक्षुओ, ये तीन सम्पत्तियाँ हैं।"

(११८)

" भिक्षुओ, ये तीन शुचि-भाव हैं। कौन से तीन ?

" शरीर की शुचिता, वाणी की शुचिता, मन की शुचिता।

" भिक्षुओ, शरीर की शुचिता किसे कहते हैं ?

" भिक्षुओ, आदमी प्राणी-हिंसा से विरत रहता है, चोरी से विरत रहता है। कामभोग सम्बधी मिथ्या-चारसे विरत रहता है। भिक्षुओ, यह शरीर की शुचिता है।

" भिक्षुओ, वाणी की शुचिता क्या है ?

" भिक्षुओ, आदमी झूठ बोलने से विरत रहता है.....चुगली खाने से विरता रहता है, कठोर बोलने से विरत रहता है तथा व्यर्थ बोलने से विरत रहता है। भिक्षुओ, इसे वाणी की शुचिता कहते हैं।

"भिक्षुओ, मन की शुचिता क्या है?

"भिक्षुओ, आदमी निर्लोभी होता है, अक्रोधी होता है तथा सम्यक्-दृष्टि वाला होता है। भिक्षुओ, यह मन की शुचिता है। भिक्षुओ, ये तीन शुचि-भाव हैं।"

(११९)

"भिक्षुओ, ये तीन शुचि-भाव हैं। कौन से तीन?

"शरीर की शुचिता, वाणी की शुचिता, मन की शुचिता।

"भिक्षुओ, शरीर की शुचिता क्या है?

"भिक्षुओ, भिक्षु प्राणी-हिंसा से विरत होता है, चोरी से विरत होता है, अब्रह्मचर्य्य से विरत होता है। भिक्षुओ, यह शरीर की शुचिता है।

"भिक्षुओ, वाणी की शुचिता क्या है?

"भिक्षुओ, भिक्षु झूठ से विरत होता है, चुगली खाने से विरत होता है, कठोर बोलने से विरत होता है तथा व्यर्थ बोलने से विरत होता है। भिक्षुओ यह वाणी की शुचिता है।

"भिक्षुओ, मन की शुचिता क्या है?

"भिक्षुओ, भिक्षु अपने भीतर कामुकता (=कामच्छन्द) के विद्यमान होनेपर कामुकता है, जानता है। उसमें कामुकता नहीं होने पर "कामुकता नहीं है" जानता है। कामुकताकी उत्पत्ति कैसी होती है---यह जानता है। उत्पन्न कामुकता का नाश कैसे होता है---यह जानता है। नष्ट हुई कामुकता फिर कैसे नहीं उत्पन्न होती है---यह जानता है।

"अपने भीतर क्रोध (=व्यापाद) विद्यमान होनेपर "क्रोध है" जानता है। क्रोध नहीं होने पर "क्रोध नहीं है"---जानता है। क्रोधकी उत्पत्ति कैसे होती है--यह जानता है। उत्पन्न क्रोधका कैसे नाश होता है---यह जानता है। नष्ट हुआ क्रोध फिर कैसे नहीं उत्पन्न होता है---यह जानता है।

"अपने भीतर आलस्य (=स्त्यान-मृद्ध) विद्यमान होनेपर "आलस्य है" जानता है। उसमें आलस्य नहीं होने पर "आलस्य नहीं है" जानता है। आलस्यकी उत्पत्ति कैसे होती है--यह जानता है। उत्पन्न आलस्यका कैसे नाश होता है--यहजानता है। नष्ट हुआ आलस्य कैसे फिर नहीं उत्पन्न होता है---यह जानता है।

"अपने भीतर उद्धतपन पछतावा (औद्धत्य-कौकृत्य) विद्यमान रहने पर "उद्धतपन तथा पछतावा है" जानता है। उद्धतपन तथा पछतावा नहीं होनेपर "उद्धतपन तथा पछतावा नहीं है"—जानता है। उद्धतपन तथा पछतावेकी उत्पत्ति कैसे होती है—यह जानता है। उत्पन्न उद्धतपन तथा पछतावेका कैसे नाश होता है—यह जानता है। नष्ट हुआ उद्धतपन तथा पछतावा फिर कैसे नहीं उत्पन्न होता है—यह जानता है।

"अपने भीतर संशय (विचिकित्सा) विद्यमान रहनेपर "संशय हैं" जानता है। भीतर संशय नहीं रहनेपर "संशय नहीं है" जानता है। संशयकी उत्पत्ति कैसे होती है—यह जानता है। उत्पन्न संशय कैसे नष्ट होता है—यह जानता है। नष्ट संशय फिर कैसे नहीं उत्पन्न होता है—यह जानता है। भिक्षुओ, यह मनकी शुचिता है। भिक्षुओ, ये तीन शुचि-भाव हैं।

कायसुचिं वाचासुचिं चेतोसुचिं अनासवं
सुचिं सोचेय्यसम्पन्नं आहु निन्हात-पापकं॥

[जिसका काय (-कर्म) पवित्र है, वाणी पवित्र है तथा मन पवित्र है ऐसे पवित्र शुचि-भाव-सम्पन्न अनास्रवको पापसे स्वच्छ हुआ मानते हैं।]

(१२०)

"भिक्षुओ 'मौन' तीन प्रकारका होता है। कौनसा तीन प्रकारका? शरीरका मौन, वाणीका मौन, मनका मौन। भिक्षुओ, शरीरका 'मौन' कैसा होता है?

"भिक्षुओ, भिक्षु प्राणी-हिंसासे विरत होता है, चोरीसे विरत होता है, काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचार[1] से विरत होता है। भिक्षुओ, यह शरीरका 'मौन' कहलाता है।

"भिक्षुओ, वाणीका मौन कैसा होता है?

"भिक्षुओ, भिक्षु झूठसे विरत होता है, चुगली खानेसे विरत होता है, कठोर बोलनेसे विरत होता है, व्यर्थ बोलनेसे विरत होता है। भिक्षुओ, यह वाणीका 'मौन' कहलाता है।

भिक्षुओ, मनका 'मौन' कैसा होता है?

---

१ 'अब्रह्मचर्यसे विरत होना चाहिये' पाठ अधिक उचित होता।

"भिक्षुओ, भिक्षु आस्रवोंका क्षयकर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञाकी विमुक्तिको इसी शरीरमें अपने आप जानकर, साक्षातकर, प्राप्तकर विहार करता है।

"भिक्षुओ, यह मनका "मौन" कहलाता है। भिक्षुओ, ये तीन "मौन" हैं।

कायमुनिं वाचामुनिं चेतोमुनिं अनासवं

मुनिं मोनेय्यसम्पन्नं आहु सब्बप्पहायिनं

[जिसका शरीर 'मौन' है, जिसकी वाणी 'मौन' है, जिसका चित्त 'मौन' है—ऐसे मौन-युक्त, सर्व-त्यागी आनास्रव जनको 'मुनि' कहते हैं।]

(१२१)

एक समय भगवान कुशीनारामें बलिहरण नामके वन-खण्डमें विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—

"भिक्षुओ!"

"भदन्त!" कहकर उन भिक्षुओंने भगवान्को प्रति-वचन दिया। भगवान् ने यह कहा—

"भिक्षुओ, कोई एक भिक्षु किसी एक गाँव वा निगमके आश्रय में रहकर विहार करता है। कोई गृहस्थ वा गृहस्थ-पुत्र आकर उसे अगले दिनके भोजनके लिये निमंत्रित करता है। इच्छा करनेवाला भिक्षु उसे स्वीकार कर लेता है। उस रातके बीत जानेपर, पूर्वान्ह समय होने पर, (चीवर) पहन, पात्रचीवर ले, वह जहाँ उस गृहस्थ वा गृहस्थ-पुत्रका घर था वहाँ पहुँचा। जाकर बिछे आसन पर बैठा। वह गृहपति वा गृहपति-पुत्र उस भिक्षुको बढ़िया खाना, बढ़िया भोजन अपने हाथसे परोसता है। उसके मनमें होता है—अच्छा है यह गृहपति वा गृहपति-पुत्र बढ़िया खाना, बढ़िया भोजन मुझे अपने हाथसे परोसता है। उसके मनमें यह भी होता है—क्या अच्छा हो यदि यह गृहपति वा गृहपति-पुत्र भविष्य में भी बढ़िया खाना, बढ़िया भोजन मुझे अपने हाथ से परोसे। उस भोजनमें आसक्त होकर, मूर्छित होकर, वशमें होकर आदिनव (=बुरा परिणाम) न देखता हुआ, निस्सरण-प्रज्ञा-विहीन हो वह उसे ग्रहण करता है। उसके मनमें काम-वितर्क भी उठते हैं, व्यापाद-वितर्क भी उठते हैं तथा विहिंसा वितर्क भी उठते हैं। भिक्षुओ, इस प्रकारके भिक्षुको दिये गये दानका मैं 'महान-फल' नहीं कहता। यह किस लिये? भिक्षुओ, वह भिक्षु 'प्रमादी' रहकर विहार करता है।

"भिक्षुओ, कोई एक भिक्षु किसी एक गाँव वा निगमके आश्रय रहकर विहार करता है। कोई गृहस्थ या गृहस्थ-पुत्र आकर उसे अगले दिनके भोजनके लिये

निमंत्रित करता है। इच्छा करनेवाला भिक्षु उसे स्वीकार कर लेता है। उस रातके बीत जानेपर, पूर्वान्ह समय होनेपर, (चीवर) पहन, पात्र-चीवर ले वह जहाँ उस गृहस्थ वा गृहस्थ-पुत्रका घर था वहाँ पहुँचा। जाकर बिछे आसनपर बैठा। वह गृहपति वा गृहपति-पुत्र उस भिक्षुको बढ़िया खाना, बढ़िया भोजन अपने हाथसे परोसता है। उसके मनमें यह नहीं होता—अच्छा है यह गृहपति वा गृहपति-पुत्र बढ़िया-खाना, बढ़िया-भोजन मुझे अपने हाथसे परोसता है। उसके मनमें यह भी नहीं होता है—क्या अच्छा हो यदि यह गृहपति वा गृहपति-पुत्र भविष्यमें भी बढ़िया-खाना, बढ़िया भोजन मुझे अपने हाथसे परोसे। उस भोजनमें आसक्त न हो, अमूर्छित रहकर, वशी-भूत न हो, आदिनव देखता हुआ, निस्सरण-प्रज्ञा-युक्त हो वह उसे ग्रहण करता है। उसके मनमें निष्क्रमण-वितर्क उठते हैं, अक्रोध सम्बन्धी वितर्क उठते हैं, अविहिंसा सम्बन्धी वितर्क उठते हैं। भिक्षुओ, इस प्रकारके भिक्षुको दिये गये दान का 'महान्-फल' कहता हूँ। यह किस लिये? भिक्षुओ, भिक्षु अप्रमादी रह विहार करता है।

(१२२)

"भिक्षुओ, जिस दिशामें भिक्षु आपसमें झगड़ते हैं, कलह करते हैं, विवाद करते हैं, परस्पर एक दूसरेको मुँह रूपी शक्ति (=आयुध) से बींधते हुए विचरते हैं, भिक्षुओ, उस दिशामें जानेकी तो बात क्या, उस दिशाकी ओर ध्यान देनेसे भी मुझे सुख नहीं होता। उनके बारेमें मेरे मनमें यह निश्चय हो जाता है कि उन आयुष्मानोंने तीन बातोंको छोड़ दिया होगा और दूसरी तीन बातोंको ही मनमें बहुत रखते होंगे।

"किन तीन बातों (=धर्मों) को छोड़ दिया होगा? नैष्क्रम्य-वितर्क, अव्यापाद-वितर्क, अविहिंसा-वितर्क। इन तीन बातोंको छोड़ दिया होगा?

"किन तीन बातोंको ही मनमें बहुत रखते होंगे।

"काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क, विहिंसा-वितर्क। इन तीन बातोंको ही मनमें बहुत रखते होंगे।

"भिक्षुओ, जिस दिशामें भिक्षु आपसमें झगड़ते हैं, कलह करते हैं, विवाद करते हैं, परस्पर एक दूसरे को मुँह रूपी शक्ति (=आयुध) से बींधते हुए विचरते हैं, भिक्षुओ, उस दिशामें जानेकी तो बात क्या, उस दिशाकी ओर ध्यान देनेसे भी मुझे सुख नहीं होता। उनके बारेमें मेरे मनमें यह निश्चय हो जाता है कि उन आयुष्मानोंने तीन बातोंको छोड़ दिया होगा और (दूसरी) तीन बातोंको ही मनमें बहुत रखते होंगे।

"भिक्षुओ, जिस दिशामें भिक्षु समग्र-भावसे, प्रमुदित मनसे, परस्पर विवाद न करते हुए, दूध-पानी बने हुए, एक दूसरेको प्रेमकी दृष्टिसे देखते हुए विचरते हैं, भिक्षुओ, उस दिशाकी ओर ध्यान देनेकी तो बात ही क्या, उस दिशाकी ओर जानेमें भी मुझे सुख मिलता है। उनके बारेमें मेरे मनमें ही निश्चय हो जाता है कि उन आयुष्मानों ने तीन बातोंको छोड़ दिया होगा और (दूसरी) तीन बातोंको ही मनमें बहुत रखते होंगे।

"किन तीन बातोंको छोड़ दिया होगा ?

"काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क, विहिंसा-वितर्क। इन तीन बातोंको छोड़ दिया होगा।

"किन तीन बातोंको मनमें बहुत रखते होंगे ? नैष्क्रम्य-वितर्क. . . . मनमें बहुत रखते होंगे ? भिक्षुओ जिस दिशामें भिक्षु समग्र-भावसे. . . . सुख मिलता है। उनके बारेमें. . . . . . . रखते होंगे।"

(१२३)

एक समय भगवान् वैशालीके गोतमक चैत्यमें विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ!"

"भदन्त!" कहकर भिक्षुओंने भगवान्को प्रति-वचन दिया। भगवान्ने यह कहा—

"भिक्षुओ, मैं जानकर धर्मका उपदेश करता हूँ, बिना जाने नहीं; भिक्षुओ, मैं निदान (=हेतु)-सहित धर्मोंका उपदेश देता हूँ, बिना निदानके नहीं, भिक्षुओ, मैं प्रातिहारी सहित धर्मोंका उपदेश करता हूँ, बिना प्रातिहारीके नहीं। जब मैं जानकर धर्मका उपदेश करता हूँ, बिना जाने नहीं; जब मैं निदान-सहित धर्मका उपदेश करता हूँ, बिना निदानके नहीं, जब मैं प्रातिहारीके साथ धर्मका उपदेश करता हूँ, बिना प्राति-हारीके नहीं तो मेरे उपदेशके अनुसार आचरण होना ही चाहिये, मेरा अनुशासन माना ही जाना चाहिये। भिक्षुओ तुम्हारी संतुष्टिके लिये, तुम्हारे संतोषके लिये, तुम्हारी प्रसन्नताके लिये यह पर्याप्त है—कि भगवान् सम्यक् सम्बुद्ध हैं, (उनका) धर्म सु-आख्यात (भली प्रकार कहा गया) है, (उनका) संघ सुमार्ग-गामी है।" भगवान्ने यह कहा।

संतुष्ट हुए उन भिक्षुओंने भगवान्के भाषणका अभिनंदन किया। इस 'व्याख्या' के कहे जाते समय साहस्री-लोक-धातु काँप उठी।

(१२४)

एक समय भगवान कोशल जनपदमें चारिका करते हुए जहाँ कपिलवस्तु हैं वहाँ पहुँचे। महानाम शाक्यने सुना कि भगवान् कपिलवस्तुमें विहार कर रहे हैं। तब महानाम शाक्य जहाँ भगवान् थे वहाँ गया। पास जाकर भगवान्को अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया। एक ओर खड़े महानाम शाक्यको भगवानने यह कहा—

"महानाम! कपिलवस्तु जा। ऐसा निवास-स्थान खोज; जहाँ हम आज एक रात रहें।"

"भन्ते! अच्छा।" कहकर महानाम शाक्यने भगवान्को प्रतिवचन दिया और कपिलवस्तुमें प्रवेश कर सारी कपिलवस्तु घूम डाली। उसे कपिल वस्तुमें कोई ऐसा निवास-स्थान नहीं दिखाई दिया जहाँ भगवान् एक रात रह सकें। तब महानाम शाक्य जहाँ भगवान थे वहाँ गया। पास जाकर उसने भगवानसे कहा—

"भन्ते! कपिलवस्तुमें वैसा निवास-स्थान नहीं है जहाँ भगवान् आज एक रात रहें। भन्ते! यह भरण्ड् कालाम हैं भगवान्का पुराना सह-पाठी। आज रात भगवान् उसके आश्रममें रहें।"

"महानाम! जा। शयनासन बिछा।"

"भन्ते! अच्छा" कह, महानाम शाक्य भगवान् की बात सुन, जहाँ भरण्डुकालामका आश्रम था वहाँ गया। जाकर शयनासन तैयार कर, पैर धोनेके लिये पानी रखकर, जहाँ भगवान थे वहाँ गया। जाकर भगवानसे बोला——

"भन्ते! शयनासन बिछा है। पैर धोनेके लिये पानी रखा है। अब भन्ते! भगवान जो इस समय करना हो करें।"

तब भगवान् जहाँ भरण्डुकालामका आश्रम था वहाँ गये। पहुँचकर बिछे आसनपर बैठे। बैठकर पाँव धोये। उस समय महानाम शाक्यके मनम यह विचार आया——

"आज भगवानका सत्संग करनेका समय नहीं है। भगवान् थके हैं। कल मैं भगवान्की सेवा में आऊँगा।" वह भगवान्को प्रणामकर, प्रदक्षिणा करके चला गया।

तब महानाम शाक्य उस रात्रिके बीतनेपर भगवान्के पास गया। पास जाकर भगवान्को अभिवादनकर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे महानाम शाक्यको भगवान्ने यह कहा——

"महानाम ! इस संसारमें तीन प्रकारके शास्ता हैं। कौनसे तीन प्रकारके ?

"महानाम ! एक शास्ता कामनाओंके अतिक्रमणका प्रज्ञापन करते हैं, रूपका नहीं, वेदनाओंका नहीं; महानाम ! एक दूसरे शास्ता कामनाओंके अतिक्रमणका प्रज्ञापन करते हैं, रूपके अतिक्रमणका प्रज्ञापन करते हैं, वेदनाओंका नहीं; महानाम ! एक तीसरे शास्ता कामनाओंके अतिक्रमणका प्रज्ञापन करते हैं, रूपके अतिक्रमणका प्रज्ञापन करते हैं और वेदनाओंके अतिक्रमणका भी प्रज्ञापन करते हैं। महानाम ! संसारमें ये तीन प्रकारके शास्ता हैं। महानाम ! इन तीन प्रकारके शास्ताओंकी एक ही निष्ठा है वा भिन्न भिन्न निष्ठा है ?"

ऐसा कहने पर भरण्डु कालामने महानाम शाक्यको यह कहा—

"महानाम ! कह कि एक ही निष्ठा है।"

ऐसा कहनेपर भगवान् ने महानाम शाक्यको कहा—

"महानाम ! कह अनेक।"

दूसरी बार भी भरण्डु कालामने महानाम शाक्यको यह कहा—"महानाम ! कह एक।" दूसरी बार भी भगवान्ने महानाम शाक्यको कहा—"महानाम ! कह अनेक।" तीसरी बार भी भरण्डु कालामने महानाम शाक्यको कहा—"महानाम ! कह एक।" तीसरी बार भी भगवान्ने महानाम शाक्यको कहा—"महानाम ! कह अनेक।"

तब भरण्डु कालामके मनमें यह हुआ—

"प्रतापी महानाम शाक्यके सामने श्रमण गौतमने मेरा तीन बार खण्डन कर दिया। मेरे लिये अच्छा है कि मैं कपिलवस्तुसे निकल भागूँ।"

तब भरण्डु कालाम कपिल-वस्तुसे चला गया। कपिल-वस्तु से जो गया, सो गया। फिर लौटकर नहीं आया।

(१२५)

एक समय भगवान् श्रावस्तीमें अनाथ-पिण्डिकके आराममें विहार करते थे। उस समय हत्थक-देवपुत्र उस प्रकाशमान रात्रिमें सारेके सारे जेतवनको प्रकाशसे प्रकाशित कर जहाँ भगवान् थे वहाँ गया। पास जाकर 'भगवानके सामने खड़ा होऊंगा' सोच ऊपर-नीचे होता था किन्तु खड़ा नहीं रह सकता था। जैसे घी या तेलको यदि बालूपर डाला जाये तो वह नीचे चला जाता है, ऊपर नहीं रहता, उसी प्रकार हत्थक

देव-पुत्र 'भगवानके सामने खड़ा होऊंगा' सोच ऊपर-नीचे होता था, किन्तु खड़ा नहीं रह सकता था।

उस समय भगवानने हत्थक देव-पुत्रको यह कहा—"हत्थक! तू शानदार रूप बना" "भन्ते! अच्छा" कह हत्थक देव-पुत्र भगवानकी बात सुन शानदार रूप बनाकर भगवान्‌को प्रणामकर एक ओर खड़ा हुआ। एक ओर खड़े हुए हत्थक-देवपुत्रको भगवानने यह कहा—

"हत्थक! मनुष्य रहते समय जो-जो बातें होती थीं, वे इस समय भी प्रवर्तित होती हैं?"

"भन्ते भगवान्! जो बातें पहले मनुष्य रहते समय होती थीं, वे धर्म अब भी प्रवर्तित होते हैं और जो बातें पहले मनुष्य रहते नहीं होती थीं, वे भी अब प्रवर्तित होती हैं। जैसे भन्ते भगवान् इस समय भिक्षुओंसे, भिक्षुणियोंसे, उपासकोंसे, उपासिकाओंसे, राजाओंसे, राजमहामात्योंसे, तैर्थिकोंसे, तैर्थिक-श्रावकोंसे; उसी प्रकार भन्ते मैं भी देव-पुत्रोंसे घिरा रहा हूँ। भन्ते! 'हत्थक देव पुत्रसे धर्म सुनेंगे' सोच दूर दूरसे आते हैं।

"भन्ते! मैं तीन बातोंसे अतृप्त रहकर, असंतुष्ट रहकर ही मर गया। किन तीन बातोंसे? भन्ते! मैं भगवानके दर्शनसे अतृप्त रहकर ही काल कर गया। सद्धर्म सुननेके सम्बन्धमें भी मैं अतृप्त रहकर ही काल कर गया। भन्ते! मैं संघकी सेवा करनेके विषयमें भी अतृप्त रहकर ही काल कर गया।

"भन्ते! मैं इन तीन बातोंके विषयमें अतृप्त रहकर, असंतुष्ट रहकर ही काल कर गया।

नाहं भगवतो दस्सनस्स तित्ति अज्झ कुदाचनं
संघस्स उपट्ठानस्स सद्धम्मसवनस्स च
अधिसीले सिक्खमानो सद्धम्मसवने रतो
तिण्णं धम्मानं अतित्तो हत्थको अविहं गतो।

[मैं कभी भगवान्‌के दर्शनसे तृप्त नहीं हुआ, संघकी सेवा करने तथा सद्धर्म सुननेसे तृप्त नहीं हुआ। श्रेष्ठतर-शीलको सीखता हुआ, सद्धर्म सुननेमें रत रहकर मैं हत्थक तीनों विषयोंमें अतृप्त रहकर अविहं (लोकको) गया।]

(१२६)

एक समय भगवान् वाराणसीके ऋषिपतन मृगदायमें विहार करते थे। तब भगवान् पूर्वान्ह समय (चीवर) पहन कर तथा पात्र-चीवर लेकर वाराणसीमें भिक्षाटनके लिये निकले। गो-योग-पिलक्ष स्थानपर भिक्षाटन करते समय भगवान्ने एक भिक्षुको देखा, जो (ध्यान-) सुखसे खाली था, जो (ध्यान-) सुखसे बाहर था, जो मूढ़-स्मृति था, जो अज्ञानी था, जो असमाहित था, जो भ्रान्त-चित्त था तथा जो असंयत-इन्द्रिय था। उस भिक्षुको देखकर भगवान्ने यह कहा—

"भिक्षु! तू अपने आपको जूठा-सड़ा हुआ न बना। भिक्षु! यह असम्भव है कि तू अपने आपको जूठा-सड़ा हुआ बनाये, उसमेंसे दुर्गन्ध निकले और उस पर मक्खियाँ न बैठें, न मण्डरायें।"

भगवान्का यह उपदेश सुना तो उस भिक्षुके मनमें संवेग पैदा हुआ। तब भगवानने वाराणसीमें भिक्षाटन कर, भोजनके अनन्तर, भिक्षाटनसे लौट चुकने पर, भिक्षुओंको आमंत्रित किया—

"भिक्षुओ। मैं ने पूर्वान्ह समय (चीवर) पहन, पात्र-चीवर वे ले वाराणसीमें भिक्षाटनके लिये प्रवेश किया। भिक्षुओ! मैंने गो-योग पिलक्षमें भिक्षाटनके लिये घूमते समय एक भिक्षुको देखा, जो (ध्यान-) सुखसे हीन था, जो (ध्यान-) सुखसे बाहर था, जो मूढ़-स्मृति था, जो अज्ञानी था, जो असमाहित था, जो भ्रान्त-चिन्त था, जो असंयत-इन्द्रिय था। उस भिक्षु को देखकर मैं ने कहा—

"भिक्षु! तू अपने आपको जूठा सड़ा हुआ न बना। भिक्षु! यह असम्भव है कि तू अपने आपको जूठा सड़ा हुआ बनाये, उसमें दुर्गन्ध निकले और उसपर मक्खियाँ न बैठें, न मण्ड़रायें।"

भिक्षुओ, मेरे इस उपदेशसे उस भिक्षुके मनमें संवेग पैदा हो गया।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने भगवानसे कहा—

"भन्ते! जूठन किसे कहते हैं? सड़ाँघ किसे कहते हैं? मक्खियाँ किसे कहते हैं?"

"भिक्षुओ! लोभ जूठन है, क्रोध सड़ाँघ है, पापी अकुशल-वितर्क मक्खियाँ हैं। यह असम्भव है कि भिक्षु अपने आपको जूठा बनाये, उसमेंसे दुर्गन्ध न निकले और उस पर मक्खियाँ न बैठें, न मण्डरायें।"

अगुत्तं चक्खु सोतस्मिं इन्द्रियेसु असंवुतं
मक्खिकानुपतिस्सन्ति संकापा रागनिस्सिता
कटु वियकतो भिक्खु आमगन्धे अवस्सुतो
आरका होति निब्बाना विघातस्सेव भागवा
गामे वा यदि वा रञ्जे वा अलद्धा सम्मत्तनो
परेति बालो दुम्मेधो मक्खिकानि पुरक्खतो
ये च सीलेन सम्पन्ना पञ्ञायूपसमे रता
उपसन्ता सुखं सेन्ति नासयित्वान मक्खिका

[जब चक्षु तथा श्रोत इन्द्रियां अरक्षित रहती हैं, जब इन्द्रियां असंयत रहती हैं तब सराग संकल्प रूपी मक्खियाँ मण्डराती हैं। जब भिक्षु 'जूठा' हो जाता है, जब सड़ाँद पैदा होती है तो वह निर्वाणसे दूर हो जाता है और विनाशका ही हिस्सेदार होता है। जो मूर्ख होता है, जो दुर्बुद्धि होता है, वह सम्यकत्वको बिना प्राप्त किये, मक्खियोंसे घिरा हुआ, गाँव या अरण्यमें विचरता रहता है। जो सदाचारी हैं, जो प्रज्ञावान हैं वे मक्खियोंका नाश कर शान्त हो सुखपूर्वक रहते हैं।]

(१२७)

उस समय आयुष्मान अनुरुद्ध जहाँ भगवान थे वहाँ गये। पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान अनुरुद्धने भगवान से यह कहा—

"भन्ते। मैं अमानुषी, विशुद्ध, दिव्य-चक्षुसे देखता हूँ कि स्त्रियाँ शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर अधिकांशमें दुर्गतिको प्राप्त होती हैं, नरकमें उत्पन्न होती हैं। भन्ते ! किन-किन धर्मोंसे युक्त होनेपर स्त्रियाँ शरीर छूटनेपर मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होती हैं, नरकमें जन्म ग्रहण करती हैं ?"

"अनुरुद्ध। तीन धर्मोंसे युक्त होने पर स्त्री शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होती है, नरकमें उत्पन्न होती है। कौनसे तीन ?

"अनुरुद्ध ! स्त्री पूर्वान्हमें मात्सर्य रूपी मल-युक्त चित्तसे घरमें निवास करती है, मध्यान्हमें ईर्षारूपी मल-युक्त चित्तसे घरमें निवास करती है, शामके समय काम-राग रूपी मल-युक्त चित्तसे घरमें निवास करती हैं। अनुरुद्ध ! इन तीन बातोंसे

युक्त होनेपर स्त्री शरीर छूटनेपर मरनेके अनन्तर, दुर्गतिको प्राप्त होती है, नरकमें जन्म ग्रहण करती है।"

(१२८)

उस समय आयुष्मान अनुरुद्ध जहाँ आयुष्मान सारिपुत्र थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर आयुष्मान सारिपुत्रके साथ कुशल-क्षेमकी बातचीत की। कुशल-क्षेमकी बातचीत समाप्त कर आयुष्मान अनुरुद्ध एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान अनुरुद्धने आयुष्मान् सारिपुत्रको कहा—

"सारिपुत्र! मैं अमानुषी, विशुद्ध, दिव्य चक्षुसे सहस्रों लोकोंको देखता हूँ। मेरा आलस्य-रहित प्रयत्न आरम्भ है। उपस्थित-स्मृति-मूढ़ता विहीन है। शान्त-शरीर उत्तेजना-रहित है। समाहित-चित्त एकाग्र है। लेकिन तब भी मेरा चित्त उपादान रहित होकर आस्रवोंसे विमुक्त नहीं होता।"

"आयुष्मान! अनुरुद्ध! तेरे मनमें जो यह होता है कि मैं अमानुषी, विशुद्ध, दिव्य चक्षुसे सहस्रों लोकोंको देखता हूँ—यह तेरा मान है। आयुष्मान अनुरुद्ध! तेरे मनमें जो यह होता है कि मेरा आलस्य-रहित प्रयत्न आरम्भ है, उपस्थित स्मृति मूढ़ता-विहीन है, शान्त-शरीर उत्तेजना-रहित है, समाहित चित्त एकाग्र है—यह तेरा उद्धतपन है। आयुष्मान अनुरुद्ध! तेरे मनमें जो यह होता है कि मेरा चित्त उपादान रहित होकर आस्रवोंसे विमुक्त नहीं होता—यह तेरा कौकृत्य है। आयुष्मान अनुरुद्ध! अच्छा होगा यदि आप इन तीनों बातोंको छोड़कर इन तीनों धर्मोंको मनसे निकालकर चित्तको अमृत-धातु (=निर्वाण) की ओर उन्मुख करें।"

"तब आगे चलकर आयुष्मान अनुरुद्धने इन तीनों बातोंको छोड़कर, इन तीनों धर्मोंको मनसे निकालकर, चित्तको अमृत-धातुकी ओर उन्मुख किया। तब (उन धर्मोंसे) हट जानेसे, अप्रमादी होकर प्रयत्न करनेसे, यत्नवान होकर विहार करनेसे आयुष्मान अनुरुद्धने अचिर-कालमें ही, जिसके लिये कुल-पुत्र घरका त्यागकर बे-घर हो जाते हैं, उस ब्रह्मचर्य-मय सर्वश्रेष्ठ (पद) को इसी शरीरमें, स्वयं जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार किया। उन्होंने जान लिया कि जन्म (का कारण) क्षीण हो गया, ब्रह्मचर्य-वास पूरा हो गया, करणीय समाप्त हो गया और यहाँके लिये कुछ शेष नहीं रहा। आयुष्मान अनुरुद्ध एक अर्हत हुए।

(१२९)

"भिक्षुओ, ये तीन छिपे-छिपे रहते हैं, खुले नहीं। कौन तीन ?

"भिक्षुओ, स्त्रियाँ छिपी-छिपी (ढकी-ढकी) रहती हैं, खुली नहीं; भिक्षुओ, ब्राह्मणोंके मन्त्र छिपे-छिपे (ढके-ढके) रहते हैं, खुले नहीं, भिक्षुओ, मिथ्या-मत छिपे छिपे (ढके-ढके) रहते हैं; खुले नहीं।

"भिक्षुओ, ये तीन खुले चमकते हैं, ढके नहीं। कौन तीन ?

"भिक्षुओ, चन्द्र-मण्डल खुला चमकता है, छिपा नहीं, भिक्षुओ, सूर्यमण्डल खुला चमकता है, छिपा नहीं; इसी प्रकार तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म खुला चमकता है, छिपा नहीं।

"भिक्षुओ, ये तीन खुले चमकते हैं, ढके नहीं।"

(१३०)

"भिक्षुओ, संसारमें तीन तरहके आदमी हैं। कौनसी तीन तरहके ?

"पत्थर पर खिंची रेखाके समान आदमी, पृथ्वीपर खिंची रेखाके समान आदमी, पानीपर खिंची रेखाके समान आदमी।

"भिक्षुओ, पत्थर पर खिंची रेखाके समान आदमी कैसा होता है ? भिक्षुओ, एक आदमी प्रायः क्रोधित होता है। उसका वह क्रोध दीर्घकाल तक रहता है। जैसे भिक्षुओ, पानीपर खिंची रेखा शीघ्र नहीं मिटती, न हवासे न पानीसे, चिरस्थायी होती है, इसी प्रकार भिक्षुओ, यहाँ एक आदमी प्रायः क्रोधित होता है। उसका वह क्रोध दीर्घकाल तक रहता है। भिक्षुओ, ऐसा व्यक्ति 'पत्थर पर खिंची रेखा समान आदमी' कहलाता है।

"भिक्षुओ, पृथ्वी पर खिंची रेखाके समान आदमी कैसा होता है ? भिक्षुओ, एक आदमी प्रायः क्रोधित होता है। उसका वह क्रोध दीर्घकाल तक नहीं रहता। जैसे भिक्षुओ, पानीपर खिंची रेखा शीघ्र मिट जाती है, हवा से वा पानीसे, चिरस्थायी नहीं होती। इसी प्रकार भिक्षुओ, यहाँ एक आदमी प्रायः क्रोधित होता है। उसका क्रोध दीर्घकालतक नहीं रहता। भिक्षुओ, ऐसा व्यक्ति 'पृथ्वी पर खिंची रेखा समान आदमी' कहलाता है।

"भिक्षुओ, पानीपर खिंची रेखाके समान आदमी कैसा होता है ? भिक्षुओ, कोई कोई आदमी ऐसा होता है कि यदि कड़ुवा भी बोला जाय, कठोर भी बोला जाय,

अप्रिय भी बोला जाय तो भी वह जुड़ा ही रहता है, मिला ही रहता है, प्रसन्न ही रहता है। जिस प्रकार भिक्षुओ, पानीपर खिंची रेखा शीघ्र विलीन हो जाती है, चिरस्थायी नहीं होती; इसी प्रकार भिक्षुओ, कोई कोई आदमी ऐसा होता है जिसे यदि कडुवा भी बोला जाय, कठोर भी बोला जाय, अप्रिय भी बोला जाय तो भी वह जुड़ा ही रहता है, मिला ही रहता है, प्रसन्न ही रहता है। भिक्षुओ, ऐसा व्यक्ति 'पानी पर खिंची रेखा समान आदमी' कहलाता है।

"भिक्षुओ, संसारमें ये तीन तरहके लोग हैं।

(१३१)

"भिक्षुओ, तीन अंगोंसे युक्त योधा राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, राजाका अंग ही कहलाता है। कौनसे तीन अंगोंसे ?

"भिक्षुओ, जो ऐसा योधा होता है वह दूर तक तीर फेंकने वाला होता है, क्षण-वेधी होता है तथा बड़े (तखतोंके) समूहको बींधनेवाला होता है। भिक्षुओ, इन तीन बातोंसे युक्त योधा राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, राजाका अंग ही कहलाता है।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, तीन अंगोंसे युक्त भिक्षु आदरणीय होता है... लोगोंके लिये सर्वश्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है। कौनसे तीन अंगोंसे ?

"भिक्षुओ, ऐसा भिक्षु दूर गिराने वाला होता है, क्षणवेधी होता है तथा बड़े समूहको बींधने वाला।

"भिक्षुओ, भिक्षु दूर गिराने वाला कैसे होता है ?

"भिक्षुओ, वह भिक्षु जितना भी रूप है—चाहे भूत कालका हो, चाहे वर्तमानका, चाहे भविष्यत्का, चाहे अपने अन्दरका हो, अथवा बाहरका, चाहे स्थूल हो अथवा सूक्ष्म चाहे बुरा हो अथवा भला, चाहे दूर हो अथवा समीप, इस सारे रूपको यथार्थ रूप से प्रज्ञासे इसी प्रकार देखता है कि "यह न मेरा है, न यह मैं हूँ और न यह मेरा आत्मा है।"

"भिक्षुओ, वह भिक्षु जितनी भी वेदना है—चाहे भूत-काल की हो, चाहे वर्तमान की, चाहे भविष्यत की, चाहे अपने अन्दर की हो, अथवा बाहर की, चाहे स्थूल हो अथवा सूक्ष्म, चाहे बुरी हो अथवा भली, चाहे दूर हो अथवा समीप, इस सारी वेदना को यथार्थ रूपसे प्रज्ञासे इसी प्रकार देखता है कि "यह न मेरा है, न यह मैं हूँ और न यह मेरा आत्मा है।"

" भिक्षुओ, वह भिक्षु जितनी भी संज्ञा है—चाहे भूतकालकी हो, चाहे वर्तमानकी, चाहे भविष्यत्‌की, चाहे अपने अन्दरकी हो, अथवा बाहरकी, चाहे स्थूल हो अथवा सूक्ष्म, चाहे बुरी हो अथवा भली, चाहे दूर हो अथवा समीप, इस सारी संज्ञाको यथार्थ रूपसे प्रज्ञासे इसी प्रकार देखता है कि "यह न मेरा है, न यह मैं हूँ और न यह मेरा आत्मा है।"

" भिक्षुओ, वह भिक्षु जितने भी संस्कार हैं—चाहे भूत-काल के हों, चाहे वर्तमान के, चाहे भविष्यत् के, चाहे अपने अन्दर के हों, अथवा बाहर के, चाहे स्थूल हों अथवा सूक्ष्म, चाहे बुरे हों अथवा भले, चाहे दूर हों अथवा समीप, इन सारे संस्कारों को यथार्थ रूप से प्रज्ञा से इसी प्रकार देखता है कि " यह न मेरा है, न यह मैं हूँ और न यह मेरा आत्मा है।"

" भिक्षुओ, वह भिक्षु जितना भी विज्ञान है—चाहे भूत काल का हो, चाहे वर्तमान का, चाहे भविष्यत् का, चाहे अपने अन्दर का हो, अथवा बाहर का, चाहे स्थूल हो अथवा सूक्ष्म, चाहे बुरा हो अथवा भला, चाहे दूर हो अथवा समीप, इस सारे विज्ञान को यथार्थरूप से प्रज्ञा से इसी प्रकार देखता है कि " यह न मेरा है, न यह मैं हूँ और न यह मेरा आत्मा है।" इस प्रकार भिक्षुओ, भिक्षु दूर फेंकने वाला होता है।"

" भिक्षुओ, भिक्षु क्षण-वेधी कैसे होता है?

" भिक्षुओ, भिक्षु यह दुःख है इसे यथार्थ रूप से जानता है......यह दुःख निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है, इसे यथार्थ रूप से जानता है। भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु क्षण-वेधी होता है।"

" भिक्षुओ, भिक्षु किस प्रकार बड़े समूह का बींधने वाला होता है?

" भिक्षुओ, भिक्षु महान-अविद्या-स्कन्ध को चीर डालता है। भिक्षुओ इन तीन अंगों से युक्त भिक्षु आदरणीय होता है............लोगों के लिये सर्व-श्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है।"

(१३२)

" भिक्षुओ, तीन तरह की परिषद् होती है। कौन सी तीन तरह की?

" दुर्विनीत और प्रश्नोत्तर (द्वारा भी) अविनीत[1]; प्रश्नोत्तर द्वारा विनीत और सुविनीत; आशय द्वारा विनीत।

" भिक्षुओ, यह तीन तरह की परिषद् है।

[1] देखो (२१, ५/६)

(१३३)

"भिक्षुओ, तीन अंगों से युक्त मित्र की संगति करनी चाहिये। कौन से तीन अंगों से?

"भिक्षुओ, जो मित्र कठिनाई से दी जा सकने योग्य वस्तु देता है, कठिनाई से किया जा सकने वाला कार्य्य करता है, कठिनाई से सहन की जा सकने वाली बात सहन करता है। भिक्षुओ, इन तीन अंगों से युक्त मित्र की संगति करनी चाहिये।

(१३४)

"भिक्षुओ, चाहे तथागत उत्पन्न हों, चाहे तथागत उत्पन्न न हों, यह धर्म-स्थिति, यह धर्म-नियम यूँ ही रहता है—सभी संस्कार अनित्य हैं। इस नियम को तथागत जान जाते हैं, ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं, जानकर, ज्ञान प्राप्त करके कहते हैं, उपदेश देते हैं, प्रज्ञापित करते हैं, स्थापित करते हैं, उघाड़ते हैं, व्याख्या करते हैं, प्रकट करते हैं कि सभी संस्कार अनित्य हैं।

"भिक्षुओ, चाहे तथागत उत्पन्न हों, चाहे तथागत उत्पन्न न हों, यह धर्म-स्थिति, यह धर्म-नियम यूँ ही रहता है—सभी संस्कार दुःख हैं। इस नियम को तथागत जान जाते हैं, ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं, जानकर, ज्ञान प्राप्त करके कहते हैं, उपदेश देते हैं, प्रज्ञापित करते हैं, स्थापित करते हैं, उघाड़ते हैं, व्याख्या करते हैं, प्रकट करते हैं कि सभी संस्कार दुःख हैं।

"भिक्षुओ, चाहे तथागत उत्पन्न हों, चाहे तथागत उत्पन्न न हों, यह धर्म-स्थिति, यह धर्म-नियम यूँ ही रहता है—सभी धर्म (= संस्कृत धर्म+असंस्कृत धर्म) अनात्म हैं। इस नियम को तथागत जान जाते हैं, ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं, जानकर, ज्ञान प्राप्त करके कहते हैं, उपदेश देते हैं, प्रज्ञापित करते हैं, उघाड़ते हैं, व्याख्या करते हैं, स्पष्ट करते हैं कि सभी धर्म अनात्म हैं।

(१३५)

"भिक्षुओ, जितने भी धागों से बने वस्त्र हैं उनमें बालोंसे बना कम्बल निकृष्ठ कहलता है। भिक्षुओ! बालों से बना कम्बल ठण्ड में ठण्डा, गरमी में गरम, दुर्वर्ण, दुर्ग्रहण, अप्रिय-स्पर्श वाला होता है; इसी प्रकार भिक्षुओ जितने भी श्रमण-मत हैं उनमें मक्खली-मत निकृष्ठ-तम कहा जाता है। भिक्षुओ!

मूर्ख मक्खली का यह वाद है, यह मत है—'न कर्म है, न क्रिया है, न पराक्रम है।'

"भिक्षुओ, भूत-काल में जितने भी अर्हत सम्यक्-सम्बुद्ध हुए हैं, वे सभी भगवान् कर्म-वादी थे, क्रिया-वादी थे, पराक्रम-वादी थे। भिक्षुओ, मूर्ख मक्खली उनका भी खण्डन करता है—'न कर्म है, न क्रिया है, न पराक्रम है।'

"भिक्षुओ, भविष्य में भी जो अर्हत, सम्यक् सम्बुद्ध होंगे, वे सभी भगवान् कर्म-वादी, क्रिया-वादी तथा पराक्रम-वादी होंगे। भिक्षुओ, मूर्ख मक्खली उनका भी खण्डन करता है—'न कर्म है, न क्रिया है, न पराक्रम है।'

"भिक्षुओ, मैं भी इस समय अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध हूँ। मैं भी कर्म-वादी हूँ, क्रिया-वादी हूँ, पराक्रम-वादी हूँ। भिक्षुओ, मूर्ख मक्खली मेरा भी खण्डन करता है—'न कर्म है, न क्रिया है, न पराक्रम है।'

"भिक्षुओ, जैसे नदी के मुँह पर जाल बाँधा जाये, बहुत सी मछलियों के अहित के लिये, दुःख के लिये, दुर्भाग्य के लिये तथा विनाश के लिये। इसी प्रकार भिक्षुओ, मूर्ख मक्खली लोक में पैदा हुआ है, मानो लोक में आदमियों का जाल पैदा हुआ है, बहुत प्राणियों के अहित के लिये, दुःख के लिये, दुर्भाग्य के लिये तथा विनाश के लिये।"

(१३६)

"भिक्षुओ, सम्पत्तियाँ तीन हैं। कौन सी तीन?

"श्रद्धा-सम्पत्ति, शील-सम्पत्ति, प्रज्ञा-सम्पत्ति। भिक्षुओ, ये तीन सम्पत्तियाँ हैं।"

"भिक्षुओ, ये तीन वृद्धियाँ हैं। कौन सी तीन?

"श्रद्धा-वृद्धि, शील-वृद्धि तथा प्रज्ञा-वृद्धि। भिक्षुओ, ये तीन वृद्धियाँ हैं।"

(१३७)

"भिक्षुओ, तीन अश्व-कुमार (=बछेरों) का उपदेश देता हूँ, तीन मनुष्य- कुमारों का। यह सुनो, अच्छी तरह मन में करो, कहता हूँ। "भन्ते! अच्छा" कहकर उन भिक्षुओं ने भगवान् को प्रति-वचन दिया। भगवान् ने यह कहा—

"भिक्षुओ, तीन प्रकारके बछेरे कौन से होते हैं?

"भिक्षुओ, एक अश्व-कुमार गति-युक्त होता है, किन्तु न वर्ण-युक्त होता है और न चढ़ने योग्य। भिक्षुओ एक अश्व-कुमार गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है किन्तु चढ़ने-योग्य नहीं होता। भिक्षुओ, एक अश्व-कुमार गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है और चढ़ने-योग्य। भिक्षुओ, ये तीन प्रकार के बछेरे होते हैं ?

"भिक्षुओ, तीन प्रकार के मनुष्य-कुमार कौन से होते हैं ?

"भिक्षुओ, एक मनुष्य-कुमार (=तरुण) गति-युक्त होता है, किन्तु न वर्ण युक्त होता है और न चढ़ने योग्य। भिक्षुओ, एक तरुण गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है किन्तु चढ़ने योग्य नहीं होता है। भिक्षुओ, एक तरुण गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है और चढ़ने योग्य भी होता है।

"भिक्षुओ, मनुष्य-कुमार (=तरुण) कैसे गति-युक्त होता है, किन्तु न वर्ण-युक्त और न चढ़ने-योग्य ?

"भिक्षुओ, भिक्षु (=तरुण) यह दुःख है, इसे यथार्थ रूप से जानता है... ....यह दुःख निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है इसे यथार्थ रूप से जानता है। यह उस में 'गति' होना कहता हूँ। धर्म और विनय के बारे में प्रश्न पूछे जाने पर कतरा जाता है, उत्तर नहीं देता। यह उस में 'वर्ण' का न होना कहता हूँ। वह चीवर-पिण्डपात-शयनासन-ग्लान-प्रत्यय-भैषज्य आदि चीजों को प्राप्त करने वाला नहीं होता। यह उस में 'चढ़ने योग्य' न होना कहता हूँ।

"भिक्षुओ, मनुष्य-कुमार (=तरुण) कैसे गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है किन्तु 'चढ़ने योग्य' नहीं होता ?

"भिक्षुओ, भिक्षु (=तरुण) यह दुःख है इसे यथार्थ रूप से जानता है... ....यह दुःख निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है इसे यथार्थ रूप से जानता है। यह उस में 'गति' होना कहता हूँ। धर्म और विनय के बारे में प्रश्न पूछे जाने पर कतराता नहीं है, उत्तर देता है। यह उस में वर्ण का होना कहता हूँ। वह चीवर-पिण्डपात-शयनासन-ग्लानप्रत्यय-भैषज्य आदि चीजों को पाने वाला नहीं होता। यह उस में 'चढ़ने योग्य न होना' कहता हूँ।

"भिक्षुओ, मनुष्य-कुमार (=तरुण)कैसे 'गति' युक्त होता है, 'वर्ण'-युक्त होता है और 'चढ़ने योग्य' भी होता है ?

"भिक्षुओ, भिक्षु (= तरुण) यह दुःख है इसे यथार्थ रूप से जानता है... ....यह दुःख निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है इसे यथार्थ रूप से जानता है। यह उस में 'गति' होना कहता हूँ। धर्म और विनय के बारे में प्रश्न पूछे जाने पर कतराता नहीं, उत्तर देता है। यह उस में वर्ण का होना कहता हूँ। चीवर-पिण्डपात-शयनासन-ग्लानप्रत्यय-भैषज्य आदि चीजों का पाने वाला होता है। यह उस में 'चढ़ने योग्य' होना कहता हूँ। भिक्षुओ, इस प्रकार मनुष्य-कुमार (= तरुण) गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है और चढ़ने योग्य भी होता है। भिक्षुओ, ये तीन प्रकार के मनुष्य-कुमार (= तरुण) हैं।"

(१३८)

"भिक्षुओ, तीन प्रकार के श्रेष्ठ-अश्वों का उपदेश करता हूँ, तीन प्रकार के श्रेष्ठ-पुरुषोंका। वह सुनो, अच्छी तरह मन में धारण करो, कहूँगा।

"अच्छा भन्ते" कहकर उन भिक्षुओं ने भगवान् को प्रति-वचन दिया। भगवान् ने यह कहा—

"भिक्षुओ! तीन प्रकार के श्रेष्ठ-अश्व कौन से हैं?

"भिक्षुओ, एक श्रेष्ठ-अश्व 'गति' युक्त होता है, न 'वर्ण' युक्त और न 'चढ़ने योग्य'। भिक्षुओ, एक श्रेष्ठ-अश्व गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है, किन्तु न चढ़ने-योग्य। भिक्षुओ! एक श्रेष्ठ-अश्व गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है और 'चढ़ने-योग्य' होता है।

"भिक्षुओ! तीन प्रकार के श्रेष्ठ-पुरुष कौन से होते हैं?

"भिक्षुओ, एक श्रेष्ठ-पुरुष 'गति' युक्त होता है; न 'वर्ण' युक्त और न चढ़ने योग्य। भिक्षुओ, एक श्रेष्ठ-पुरुष गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है किन्तु न चढ़ने-योग्य। भिक्षुओ, एक श्रेष्ठ-पुरुष गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है और 'चढ़ने-योग्य' होता है।

"भिक्षुओ, किस प्रकार श्रेष्ठ पुरुष 'गति' युक्त होता है, किन्तु न 'वर्ण' युक्त होता है और न चढ़ने-योग्य।

"भिक्षुओ, भिक्षु पाँच निम्न-स्तर के संयोजनों का क्षय करके न जन्म लेने वाला होता है, वहीं परिनिर्वृत्त होने वाला—उस लोक से न लौटने वाला। यह उस में 'गति' होना कहता हूँ। धर्म और विनय के बारे में प्रश्न पूछे जाने पर

कतराता है, उत्तर नहीं देता। यह उस में 'वर्ण' का न होना कहता हूँ। वह चीवर-पिण्डपात-शयनासन-ग्लानप्रत्यय-भैषज्य आदि चीजों का पाने वाला नहीं होता। यह उसका 'चढ़ने योग्य' न होना कहता हूँ। भिक्षुओ, इस प्रकार श्रेष्ठ पुरुष 'गति' युक्त होता है, किन्तु न 'वर्ण' युक्त है और न 'चढ़ने योग्य।'

"भिक्षुओ, श्रेष्ठ पुरुष (= भिक्षु) किस प्रकार 'गति' युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है, किन्तु 'चढ़ने योग्य' नहीं।

"भिक्षुओ, भिक्षु निम्न-स्तर के पाँच संयोजनों का क्षय कर जन्म न लेने वाला होता है, वहीं परिनिर्वृत्त होने वाला, उस लोक से न लौटने वाला। यह उस में 'गति' का होना कहता हूँ। धर्म और विनय के बारे में प्रश्न पूछने पर कतराता नहीं है, उत्तर देता है। यह उस में 'वर्ण' का होना कहता हूँ। वह चीवर......चीजों को पाने वाला नहीं होता। यह उस का 'चढ़ने-योग्य' न होना कहता हूँ। इस प्रकार भिक्षुओ, श्रेष्ठ पुरुष 'गति' युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है; किन्तु 'चढ़ने-योग्य' नहीं।

"भिक्षुओ, श्रेष्ठ पुरुष किस प्रकार 'गति' युक्त होता है, वर्ण युक्त होता है और चढ़ने योग्य होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु निम्न-स्तर के पाँच........न लौटने वाला। यह उस में 'गति' का होना कहता हूँ। धर्म और विनय के बारे में प्रश्न पूछने पर कतराता नहीं, उत्तर देता है। यह उस में 'वर्ण' का होना कहता हूँ। वह चीवर ....चीजों का पाने वाला होता है। यह उस का 'चढ़ने योग्य' होना कहता हूँ। भिक्षुओ, ये तीन श्रेष्ठ-पुरुष हैं।"

(१३९)

"भिक्षुओ, तीन श्रेष्ठ-अश्वों का उपदेश करता हूँ और तीन श्रेष्ठ-पुरुषों का। वह सुनो। अच्छी तरह मन में धारण करो। कहता हूँ।

"भिक्षुओ, तीन श्रेष्ठ-अश्व कैसे होते हैं?

"भिक्षुओ, एक श्रेष्ठ अश्व 'गति' युक्त है, न वर्ण-युक्त होता है.... .....गति युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है, 'चढ़ने योग्य' होता है। भिक्षुओ, ये तीन श्रेष्ठ-अश्व हैं।

"भिक्षुओ, ये तीन श्रेष्ठ-अश्व हैं।

"भिक्षुओ, तीन श्रेष्ठ-पुरुष कैसे होते हैं?

"भिक्षुओ, एक श्रेष्ठ-पुरुष ....गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है और चढ़ने योग्य होता है।

"भिक्षुओ, एक श्रेष्ठ पुरुष कैसे गति युक्त होता है, वर्ण युक्त होता है और 'चढ़ने योग्य' होता है।

"भिक्षुओ, भिक्षु आस्रवों का क्षय करके अनास्रव चित्त-विमुक्ति प्रज्ञा-विमुक्ति को इसी शरीर में स्वयं जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर विचरता है। भिक्षुओ, यह उस में 'गति' का होना कहता हूँ। धर्म और विनय के बारे में पूछने पर कतराता नहीं है, उत्तर देता है, यह उस में 'वर्ण' का होना कहता हूँ। वह चीवर-पिण्डपात-शयनासन ग्लान प्रत्यय-भैषज्य आदि चीजों का पाने वाला होता है। यह उस का 'चढ़ने योग्य' होना कहता हूँ। इस प्रकार भिक्षुओ! श्रेष्ठ-पुरुष गति-युक्त होता है, वर्ण-युक्त होता है और चढ़ने योग्य होता है।

"भिक्षुओ, ये तीन श्रेष्ठ पुरुष हैं।"

(१४०)

एक समय भगवान् राजगृह के मोर-निदाप नाम के परिव्राजकाराम में विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया—"भिक्षुओ!"

"भदन्त" कहकर उन भिक्षुओं ने भगवान् को प्रति-वचन दिया। भगवान् ने यह कहा—

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त भिक्षु पूर्ण (=अत्यन्त) निष्ठावान् होता है, पूर्ण योग-क्षेमी होता है, पूर्ण ब्रह्मचारी होता है, पूर्ण-उद्देश्य होता है तथा देव-मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है। कौन से तीन धर्मों से युक्त?

"अशैक्ष शील-स्कन्ध से युक्त होता है, अशैक्ष समाधि-स्कन्ध से युक्त होता है, अशैक्ष प्रज्ञा-स्कन्ध से युक्त होता है। भिक्षुओ, इन तीन धर्मों से युक्त भिक्षु, पूर्ण (=अत्यन्त) निष्ठावान् होता है, पूर्ण योग-क्षेमी होता है, पूर्ण ब्रह्मचारी होता है, पूर्ण-उद्देश्य होता है तथा देव-मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है।

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त भिक्षु पूर्ण निष्ठावान ....देव-मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है। कौन से तीन धर्मों से?

"ऋद्धि-प्रातिहारी से युक्त, देशना-प्रातिहारी से युक्त, अनुशासन-प्रातिहारी से युक्त। भिक्षुओ, इन तीन धर्मों से युक्त भिक्षु पूर्ण निष्ठावान् होता है, र्ण योग-क्षेमी होता है, पूर्ण ब्रह्मचारी होता है, पूर्ण-उद्देश्य होता है तथा देव-मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है।

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त भिक्षु पूर्ण निष्ठावान्......देव-मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है। कौन से तीन?

"सम्यक्-दृष्टि से, सम्यक्-ज्ञान से और सम्यक् विमुक्ति से। भिक्षुओ, इन धर्मों से युक्त भिक्षु, पूर्ण निष्ठावान........देव-मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है।

(१४१)

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त प्राणी ऐसा होता है जैसे लाकर नरक में डाल दिया गया हो। कौन से तीन धर्मों से?

"अकुशल काय-कर्म से, अकुशल वाणी के कर्म से, अकुशल मानसिक-कर्म से। भिक्षुओ, इन तीन धर्मों से युक्त प्राणी ऐसा होता है जैसे लाकर नरक में डाल दिया गया हो।

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त प्राणी ऐसा होता है, जैसे लाकर स्वर्ग में डाल दिया गया हो। कौन से तीन धर्मों से?

"कुशल काय-कर्म से, कुशल वाणी के कर्म से, कुशल मानसिक-कर्म से। भिक्षुओ, इन तीन धर्मों से युक्त प्राणी ऐसा होता है जैसे लाकर स्वर्ग में डाल दिया गया हो।"

(१४२)

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त प्राणी ऐसा होता है, जैसे लाकर नरक में डाल दिया गया हो। कौन से तीन धर्मों से?

"सदोष काय-कर्म से, सदोष वाणी के कर्म से, सदोष मानसिक-कर्म से। भिक्षुओ, इन तीन धर्मों से युक्त प्राणी ऐसा होता है, जैसे लाकर नरक में डाल दिया गया हो।

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त प्राणी ऐसा होता है जैसे लाकर स्वर्ग में डाल दिया गया हो। कौन से तीन धर्मों से? निर्दोष काय-कर्म से, निर्दोष वाणी के कर्म से, निर्दोष मानसिक कर्म से। भिक्षुओ इन धर्मों से युक्त.......डाल दिया गया हो।

(१४३)

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त...... विषम काय-कर्म से, विषम वाणी के कर्म से, विषम मानसिक कर्म से। भिक्षुओ, इन धर्मों से युक्त...... नरक में लाकर डाल दिया गया हो।"

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त...... अ-विषम काय-कर्म से, अविषम वाणी के कर्म से, अ-विषम मानसिक कर्म से।

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त...... स्वर्ग में डाल दिया गया हो।"

(१४४)

"...... अपवित्र काय-कर्म से, अपवित्र वाणी के कर्म से, अपवित्र मानसिक कर्म से.......।

"...... पवित्र काय-कर्म से, पवित्र वाणी के कर्म से, पवित्र मानसिक कर्म से। भिक्षुओ, इन तीन धर्मों से युक्त प्राणी ऐसा होता है जैसे लाकर स्वर्ग में डाल दिया गया हो।"

(१४५)

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त मूर्ख, अपण्डित, असत्पुरुष अपने आप को आघात पहुँचाता है, विज्ञों की दृष्टि में छोटे-बड़े दोष करने वाला होता है और बहुत अपुण्य पैदा करता है। कौन से तीन धर्मों से युक्त ?

"अकुशल-काय-कर्म से, अकुशल वाणी के कर्म से, अकुशल मानसिक कर्म से। भिक्षुओ, इन तीन धर्मों से युक्त मूर्ख, अपण्डित, असत्पुरुष अपने आप को आघात पहूँचाता है, विज्ञों की दृष्टि में छोटे-बड़े दोष करने वाला होता है और बहुत अपुण्य पैदा करता है।

"भिक्षुओ, तीन धर्मों से युक्त बुद्धिमान्, पण्डित, सत्पुरुष अपने आपको आघात नहीं पहुँचाता, विज्ञों की दृष्टि में छोटे बड़े दोषों का न करने वाला होता है और बहुत पुण्य पैदा करता है। कौन से तीन धर्मों से युक्त ?

"कुशल कार्य-कर्म से, कुशल वाणी के कर्म से, कुशल मानसिक कर्म से.....

(१४६)

"....... सदोष काय-कर्म से, सदोष वाणी के कर्म से, सदोष मानसिक कर्म से.........

"".............निर्दोष काय-कर्म से, निर्दोष वाणी के कर्म से, निर्दोष मानसिक कर्म से............"

(१४७)

"......विषम काय-कर्म से, विषम वाणी के कर्म से, विषम मानसिक कर्म से.............

"......अविषम काय-कर्म से, अविषम वाणी के कर्म से, अविषम मानसिक कर्म से............"

(१४८)

"......अपवित्र काय-कर्म से, अपवित्र वाणी के कर्म से, अपवित्र मानसिक कर्म से...........

"......पवित्र काय-कर्म से, पवित्र वाणी के कर्म से, पवित्र मानसिक कर्म से। भिक्षुओ, इन तीन धर्मों से युक्त बुद्धिमान, पण्डित, सत्पुरुष अपने को आघात नहीं पहुँचाता, विज्ञ पुरुषों की दृष्टि में छोटे-मोटे दोष करने वाला नहीं होता और बहुत पुण्य पैदा करता है।

(१४९)

"भिक्षुओ, ये तीन वन्दना हैं। कौन सी तीन?

"काय-वन्दना, वाणी की वन्दना, मन की वन्दना। भिक्षुओ! ये तीन वन्दना हैं।"

(१५०)

"भिक्षुओ, जो प्राणी पूर्वान्ह के समय शरीर से सदाचरण करते हैं, वाणी से सदाचारण करते हैं, मन से सदाचरण करते हैं, भिक्षुओ, उन प्राणियों का वह सुपूर्वान्ह है। भिक्षुओ जो प्राणी मध्यान्ह में शरीर से सदाचरण करते हैं...... मन से सदाचरण करते हैं, भिक्षुओ, उन प्राणियों का वह सुमध्यान्ह है। भिक्षुओ, जो प्राणी शाम के समय शरीर से सदाचरण करते हैं...... मन से सदाचरण करते हैं, भिक्षुओ, उन प्राणियों का वह सु-सायान्ह है।"

सुनक्खत्तं सुमंगलं सुप्पभातं सुवुट्ठितं
सुखणो सुमुहुत्तो च सुयिट्ठं ब्रह्मचारिसु
पदक्खिणं कायकम्मं वाचा कम्मं पदाक्खिणं

पदक्खिणं मनोकम्मं पनिधीयो पदक्खिणा
पदक्खिणानि कत्वान लभतत्थे पदक्खिणे
ते अत्थलद्धा सुखिता विरूळहा बुद्धसासने
आरोगा सुखिता होथ सह सब्बेहि ञातिभि

"[वही) सुनक्षत्र है, सुमंगल है, सुप्रभात है, सु-उत्थान है, सु-क्षण है, सु-मुहूर्त है, ब्रह्मचारियों के साथ सु-यज्ञ है। (शुभ) काय-कर्म ही प्रदक्षिणा है, वाणी का कर्म ही प्रदक्षिणा है, मानसिक-कर्म प्रदक्षिणा है, प्रणिधान प्रदक्षिणा है। प्रदक्षिणा करने से यहाँ प्रदक्षिण (उन्नति) की प्राप्ति होती है। उन अर्थों को प्राप्त करके सभी सम्बन्धियों के साथ बुद्ध-शासन में वस्तु-बहुल हों, निरोग हों, सुखी हों।]

(१५१)

"भिक्षुओ, तीन मार्ग हैं। कौन से तीन ?

"शिथिल (= अगाळह) मार्ग ; कठोर (= निज्झाम)-मार्ग, मध्यम मार्ग।

"भिक्षुओ, शिथिल-मार्ग कौन सा है ?

"भिक्षुओ, किसी किसी का ऐसा मत होता है, ऐसी दृष्टि होती है— काम-भोगों में दोष नहीं है। वह काम-भोगों में जा पड़ता है। भिक्षुओ, यह शिथिल-मार्ग कहलाता है।

"भिक्षुओ, कठोर (= निज्झाम) मार्ग कौन सा है !

"भिक्षुओ, कोई कोई नग्न होता है, शिष्टाचार-शून्य, हाथ चाटने वाला, 'भदन्त आयें' कहने पर न आने वाला, 'भदन्त खड़े रहें' कहने पर खड़ा न रहने वाला, लाया हुआ न खाने वाला, उद्देश्य से बनाया हुआ न खाने वाला और निमन्त्रण भी न स्वीकार करने वाला होता है। वह न घड़े में से दिया हुआ लेता है, न ऊखल में से दिया हुआ लेता है, न किवाड़ की ओट से दिया हुआ लेता है, न मेढ़े के बीच में आ जाने से दिया हुआ, न दण्ड के बीच में पड़ जाने से लेता है, न मूसल के बीच में आ जाने से लेता है। वह दो जने खाते हों, उन में से एक के उठकर देने पर नहीं लेता है, न गर्भिणी का दिया लेता है, न बच्चे को दूध पिलाती हुई का दिया लेता है, न पुरुष के पास गई हुई का दिया लेता है, न संग्रह किये हुए अन्न में से पकाया हुआ लेता है, न जहाँ कुत्ता खड़ा हो वहाँ से लेता है, न जहाँ मक्खियाँ उड़ती हों वहाँ से

लेता है। वह न मछली खाता है, न माँस खाता है। न सुरा पीता है, न मेरय पीता है, न चावल का पानी पीता है। वह या तो एक ही घर से लेकर खाने वाला होता है या एक ही कौर खाने वाला; दो घरों से लेकर खाने वाला होता है या दो ही कौर खाने वाला......सात घरों से लेकर खाने वाला होता है या सात कौर खाने वाला। वह एक ही छोटी-प्लेट से भी गुजारा करने वाला होता है... ....सात छोटी प्लेटों से भी गुजारा करने वाला होता है। वह दिन में एक बार भी खाने वाला होता है, दो दिन में एक बार भी खाने वाला होता है.... .....सात दिन में एक बार भी खाने वाला होता है; इस प्रकार वह पन्द्रह दिन में एक बार खाकर भी रहता है। वह शाक खाने वाला भी होता है, स्यामाक (१) खाने वाला भी होता है, नीवार (धान) खाने वाला भी होता है, ददुल (धान) खाने वाला भी होता है, हट (शाक) खाने वाला भी होता है, कणाज-भात खाने वाला भी होता है, आचाम खाने वाला भी होता है, खली खाने वाला भी होता है, तिनके (घास) खाने वाला भी होता है, गोबर खाने वाला भी होता है, जंगल के पेड़ों से गिरे फल-मूल को खाने वाला भी होता है। वह सन के कपड़े भी धारण करता है, सन-मिश्रित कपड़े भी धारण करता है, शव-वस्त्र (कफन) भी पहनता है, फेंके हुए वस्त्र भी पहनता है, वृक्ष-विशेष की छाल के कपड़े भी पहनता है, अजिन (-मृग) की खाल भी पहनता है, अजिन (-मृग) की चमड़ी से बनी पट्टियों से बुना वस्त्र भी पहनता है, कुश का बना वस्त्र भी पहनता है, छाल (वाक) का वस्त्र भी पहनता है, फलक (छाल) का वस्त्र भी पहनता है, केशों से बना कम्बल भी पहनता है, पुंछ के बालों का बना कम्बल भी पहनता है, उल्लु के परों का बना वस्त्र भी पहनता है। वह केश-दाढ़ी का लुंचन करने वाला भी होता है। वह बैठने का त्याग कर निरन्तर खड़ा ही रहने वाला भी होता है। वह उकड़ूँ बैठ कर प्रयत्न करने वाला भी होता है, वह काँटों की शैय्या पर सोने वाला भी होता है। प्रातः, मध्यान्ह, सायं—दिन में तीन बार पानी में जाने वाला होता है। इस तरह, वह नाना प्रकार से शरीर को कष्ट पीड़ा पहुँचाता हुआ विहार करता है। भिक्षुओ यह कठोर-मार्ग कहलाता है।

"भिक्षुओ, मध्यम-मार्ग कौन सा है?

"भिक्षुओ, भिक्षु शरीर के प्रति जागरूक रहकर विचरता है। वह प्रयत्न-शील, ज्ञान-युक्त, स्मृति-मान हो लोक में जो लोभ और दौर्मनस्य है उसे हटाकर

विहरता है, वेदनाओं के प्रति......चित्त के प्रति......धर्मों के प्रति जागरूक रहकर विचरता है। वह प्रयत्न-शील, ज्ञान-युक्त, स्मृतिमान हो लोक में जो लोभ और दौर्मनस्य है उसे हटाकर विहरता है। भिक्षुओ, यह मध्यम-मार्ग कहलाता है। भिक्षुओ, ये तीन मार्ग हैं।"

(१५२)

"भिक्षुओ, तीन मार्ग हैं। कौन से तीन ?

"शिथिल (=अगाळह मार्ग), कठोर (=निज्झाम) मार्ग, मध्यम-मार्ग।

"भिक्षुओ, शिथिल-मार्ग कौन सा है ? (पृ० ३०३) भिक्षुओ, यह शिथिल मार्ग कहलाता है।

"भिक्षुओ, कठिन मार्ग कौन सा है ?

"..... (पृ० ३०३) भिक्षुओ, इसे कठिन मार्ग कहते हैं।

"भिक्षुओ, मध्यम-मार्ग क्या है ?

"भिक्षुओ, भिक्षु अनुत्पन्न पापी अकुशल-धर्मों को उत्पन्न न होने देने के लिये संकल्प करता है, प्रयत्न करता है, जोर लगाता है, मन को काबूमें रखता है, उत्पन्न पापी अकुशल-धर्मों का प्रहाण करने के लिये संकल्प करता है, प्रयत्न करता है जोर लगाता है, मन को काबू में रखता है, अनुत्पन्न कुशल धर्मों को उत्पन्न करने के लिये संकल्प करता है, प्रयत्न करता है, जोर लगाता है, मन को काबू में रखता है, अनुत्पन्न कुशल धर्मों को उत्पन्न करने के लिये संकल्प करता है, प्रयत्न करता है, जोर लगाता है, मन को काबू में रखता है; उत्पन्न कुल धर्मों की स्थिति के लिये, लोप न होने देने के लिये, अधिकाधिक बढ़ानेके लिये संकल्प करता है, प्रयत्न करता है, जोर लगाता है, मन को काबू में रखता है।.......छन्द-प्रयत्न-संस्कार युक्त ऋद्धि-पथ का अभ्यास करता है, वीर्य्य-समाधि, चित्त-समाधि, वीमंसा-समाधि और प्रधान (=प्रयत्न) तथा संस्कार से युक्त ऋद्धि-पथ का अभ्यास करता है..... श्रद्धा-इन्द्रिय का अभ्यास करता है, वीर्य्य इन्द्रिय का अभ्यास करता है, स्मृति-इन्द्रिय का अभ्यास करता है, समाधि इन्द्रिय का अभ्यास करता है, प्रज्ञा इन्द्रिय का अभ्यास करता है......श्रद्धा-बल का अभ्यास करता है, वीर्य्य-बल का अभ्यास करता है, स्मृति-बल का अभ्यास करता है समाधि-बल का अभ्यास करता है, प्रज्ञा-बल का अभ्यास करता है, स्मृति सम्बोधि-

अंग का अभ्यास करता है, धर्म-विचय (=विचार) सम्बोधि-अंग का अभ्यास करता है, वीर्य सम्बोधी–अंगका अभ्यास करता है, प्रीति सम्बोधि–अंगका अभ्यास करता है, प्रश्रब्धि (शान्ति) सम्बोधि अंगका अभ्यास करता है, समाधि सम्बोधि–अंगका अभ्यास करता है, उपेक्षा सम्बोधि–अंगकी भावना करता है, सम्यक्-दृष्टिका अभ्यास करता है, सम्यक् संकल्पका अभ्यास करता है, सम्यक् वाणीका अभ्यास करता है, सम्यक् कर्मान्तका अभ्यास करता है, सम्यक् आजीविका का अभ्यास करता है, सम्यक् व्यायाम (=प्रयत्न) का अभ्यास करता है, सम्यक् स्मृतिका अभ्यास करता है तथा सम्यक् समाधि का अभ्यास करता है,। भिक्षुओ, यह मध्यम-मार्ग कहलाता है,। भिक्षुओ, ये तीन मार्ग हैं।"

(१५३)

"भिक्षुओ, तीन धर्मोंसे युक्त प्राणी ऐसा होता है जैसे लाकर नरकमें डाल दिया गया हो। कौनसे तीन ? स्वयं प्राणी हिंसा करता है, दूसरेको प्राणी हिंसाकी ओर घसीटता है और प्राणी हिंसाका समर्थन करता है। भिक्षुओ, तीन धर्मोंसे युक्त प्राणी ऐसा ही होता है जैसे लाकर नरकमें डाल दिया गया हो।

"भिक्षुओ तीन धर्मोंसे युक्त प्राणी ऐसा होता है जैसे लाकर स्वर्गमें डाल दिया गया हो। कौनसे तीन ?

"स्वयं प्राणी-हिंसासे विरत रहता है, दूसरेको प्राणी-हिंसाकी ओर नहीं घसीटता और प्राणी-हिंसाका समर्थन नहीं करता......"

(१५४)

"......स्वयं चोरी करता है, दूसरेको चोरीकी ओर घसीटता है और चोरीका समर्थन करता है..........स्वयं चोरीसे विरत रहता है, दूसरेको चोरीकी ओर नहीं घसीटता है और चोरीका समर्थन नहीं करता है....."

(१५५)

".......स्वयं काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचार करने वाला होता है, दूसरेको काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचारकी ओर घसीटता है और काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचारका समर्थन करता है........"

".....स्वयं काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत होता है, दूसरेको काम-भोग सम्यबन्धी मिथ्याचारकी ओर नहीं घसीटता है और काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचार से विरत रहनेका समर्थन नहीं कराता है......"

(१५६)

"....स्वयं झूठ बोलता है, दूसरेको झूठ बोलनेकी ओर घसीटता है और झूठ बोलनेका समर्थन करता है.....स्वयं झूठ बोलनेसे विरत रहता है, दूसरेको झूठ बोलनेकी ओर नहीं घसीटता है और झूठ बोलनेसे विरत हो रहनेका समर्थन करता है..............."

(१५७)

"....स्वयं चुगली खाता है, दूसरेको चुगली खानेकी ओर घसीटता है और चुगली खानेका समर्थन करता है.......स्वयं चुगली खानेसे विरत रहता है, दूसरेको चुगली खानेकी ओर नहीं घसीटता और चुगली खानेसे विरत रहनेका समर्थन करता है...."

(१५८)

"....स्वयं कठोर बोलता है, दूसरे को कठोर बोलने की ओर घसीटता है और कठोर बोलने का समर्थन करता है···स्वयं कठोर बोलने से विरत रहता है, दूसरे को कठोर बोलने की ओर नहीं घसीटता है और कठोर बोलने से विरत रहने का समर्थन करता है...."

(१५९)

"...स्वयं व्यर्थ बोलनेवाला होता है, दूसरे को व्यर्थ बोलने की ओर घसीटता है और व्यर्थ बोलने का समर्थन करता है...."

"...स्वयं व्यर्थ बोलने से विरत रहता है, दूसरे को व्यर्थ बोलने की ओर नहीं घसीटता है और व्यर्थ बोलने से विरत रहने का समर्थन करता है..."

(१६०)

"...स्वयं लोभी होता है, दूसरे को लोभ की ओर घसीटता है और लोभ का समर्थन करता है..."

"...स्वयं लोभ से विरत रहता है, दूसरे को लोभ की ओर नहीं घसीटता है और लोभ से विरत रहने का समर्थन करता है...."

(१६१)

"...स्वयं क्रोधी होता है, दूसरे को क्रोध की ओर घसीटता है और क्रोध का समर्थन करता है।..."

Buddhist Research Library
Budah. Vihar ... Sardar Park,
LUCKNOW-226001.

"स्वयं क्रोध से विरत रहता है, दूसरे को क्रोध की ओर नहीं घसीटता है और क्रोध से विरत रहने का समर्थन करता है।"

(१६२)

"...स्वयं मिथ्या दृष्टि होता है, दूसरे को मिथ्या-दृष्टि की ओर घसीटता है और मिथ्या-दृष्टि का समर्थन करता है..."

"...स्वयं मिथ्या-दृष्टि से विरत रहता है, दूसरे को मिथ्या-दृष्टि की ओर नहीं घसीटता है और मिथ्या-दृष्टि से विरत रहने का समर्थन करता है..."

(१६३)

"भिक्षुओ, राग की पहचान के लिये इन तीन धर्मों की भावना (=अभ्यास) करना चाहिये।

"किन तीन धर्मों का?"

"शुन्यता-समाधि का, अनिमित्त-समाधि का तथा अप्रणिहित-समाधि का।"

"भिक्षुओ, राग की पहचान के लिये इन तीन धर्मों की भावना (=अभ्यास) करनी चाहिये।"

"भिक्षुओ, राग के क्षय के लिये, परिक्षय के लिये, प्रहाण के लिये, व्यय के लिये, वैराग्य के लिये, निरोध के लिये, त्याग के लिये तथा प्रतिनिसर्ग के लिये तीन धर्मों की भावना करनी चाहिये।

"भिक्षुओ, द्वेष के ··· मोह के, क्रोध के, उपनाह के, म्राक्ष के, प्रदास के, ईर्षा के, मात्सर्य्य के, माया के, शठता के, जड़ता के, सारम्भ के, मान के, अतिमान के, मद के तथा प्रमाद के क्षय के लिये, परिक्षय के लिये, प्रहाण के लिये, व्यय के लिये, वैराग्य के लिये, निरोध के लिये, त्याग के लिये तथा प्रतिनिसर्ग के लिये तीन धर्मों की भावना (=अभ्यास) करना चाहिये।"

भगवानने यह कहा। उन भिक्षुओंने संतुष्ट होकर भगवान के भाषण का अभिनंदन किया।

पहला, दूसरा तथा तीसरा निपात समाप्त


